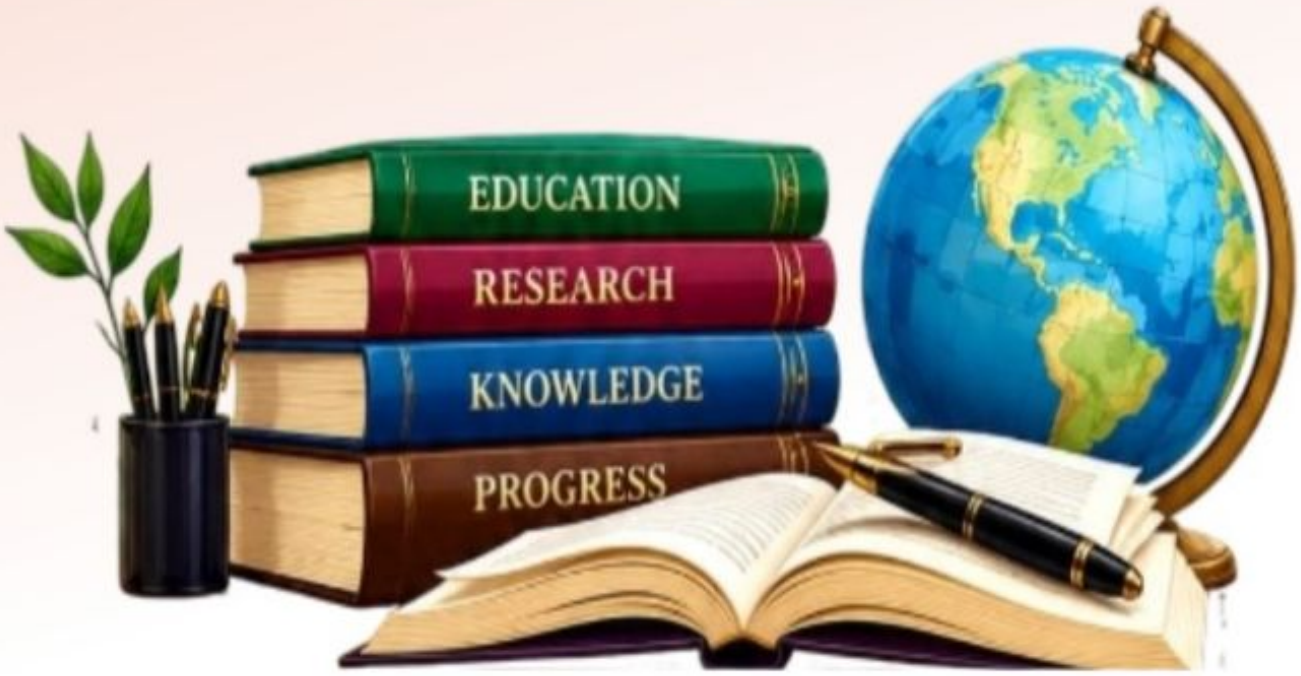
देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
Oct. 2026
Vol.-24, Issue-4

Impact Factor
8.642

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL




Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*Publisher :*
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

**Vol. 24 I SSUE-4(part-one) (अक्टूबर 2026) ISSN : 2395-7115**

*प्रेरणा :*

**चौ. एम. सिहाग**

*सम्पादक :*

**डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट**

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

**प्रकाशक :**

**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)**

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

**सम्पादकीय सम्पर्क :**
**डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट**
**202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,**
**भिवानी-127021 (हरियाणा)**
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

*Published by :*
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

*Disclaimer :*
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

*Printed by :* Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

# बोहल शोध मंजूषा परिवार*


## मानद संरक्षक

**डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'**
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

**डॉ. विश्वबंधु शर्मा**
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

**डॉ. विनोद तनेजा**
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

## सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
**डॉ. रेखा सोनी**
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
**डॉ. सुशीला आर्या**
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
**समुन्द्र सिंह**
भिवानी, हरियाणा।

## विधि विशेषज्ञ

**डॉ. रामफल दलाल**, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

**अजीत सिहाग**, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

**चरणवीर सिंह**, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

## विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

**डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

**डिल्लीराम शर्मा संग्रौला**
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

**डॉ. संजय एल. मादार**
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

**डॉ. गीता दहिया**, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

**डॉ. इस्पाक अली**
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

**डॉ. मो. रियाज़ खान**
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

**डॉ. वनिता कुमारी**
च. दादरी (हरियाणा)

**श्री सहदेव समर्पित**
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

**डॉ. अंजली उपाध्याय**
उत्तर प्रदेश

**डॉ. लता एस. पाटिल**
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

**प्रो. अमनप्रीत कौर**
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

**डॉ. वर्षा रानी**
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

**प्रो. कमलेश चौधरी**
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

**डॉ. परमजीत कौर**
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

**डॉ. बी. संतोषी कुमारी**
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

**डॉ. करमजीत कौर**
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

**डॉ. मनमीत कौर**
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

**डॉ. शबाना हबीब**
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

**डॉ. मानसिंह दहिया**
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

**प्रो. नरेन्द्र सोनी**
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

**पठान चिन्ना जानी**
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

**डॉ. किरण गिल**
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

**डॉ. राजकुमारी शर्मा**
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

**श्री राकेश ग्रेवाल**
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

**श्री राकेश शंकर भारती**
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

**डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी**
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

**डॉ. शिवकरण निमल**
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

**डॉ. नीलम आर्या**
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

**डॉ. रोहतास**
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

**डॉ. वैशाली सिंह**
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

**डॉ. सविता घुड़केवार**
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

**डॉ. श्रीविद्या एन.टी.**
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

**डॉ. पंडित बन्ने**
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

**डॉ. उमा सैनी**
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

**डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां**
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

**डॉ. राधाकृष्णन गणेशन**
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

**डॉ. रवि सुण्डयाल**
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

**प्रो. सत्यबीर कालोहिया**
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

**डॉ. रेखा रानी**
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

**डॉ. के.के. मल्होत्रा**
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

# शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्दीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

## नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

| | | |
|---|---|---|
| बैंक का नाम | : | पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा) |
| खाता धारक का नाम | : | गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी |
| बैंक खाता संख्या | : | 1182000109078119 |
| IFSC Code | : | PUNB0118200 |
| MICR CODE | : | 127024003 |

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)



**Table 2**

**Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score**

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc.,)

| S.N. | Academic/Research Activity | Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences | Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines |
|---|---|---|---|
| 1. | **Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals** | 08 per paper | 10 per paper |
| 2. | **Publications (other than Research papers)** | | |
| | **(a) Books authored which are published by ;** | | |
| | International publishers | 12 | 12 |
| | National Publishers | 10 | 10 |
| | Chapter in Edited Book | 05 | 05 |
| | Editor of Book by International Publisher | 10 | 10 |
| | Editor of Book by National Publisher | 08 | 08 |
| | | | |
| | | | |
| | **(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties** | | |
| | Chapter or Research paper | 03 | 03 |
| | Book | 08 | 08 |
| 3. | **Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula** | | |
| | **(a) Development of Innovative pedagogy** | 05 | 05 |
| | **(b) Design of new curricula and courses** | 02 per curricula/course | 02 per curricula/course |

# अनुक्रमणिका अक्टूबर 2026


| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| 1. | संपादकीय | डॉ० नरेश सिहग | 10-10 |
| 2. | सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क का शासन एवं प्रशासन : अवध राज्य के सुदृढ़ीकरण का अध्ययन | प्रोफेसर अरुण कुमार सिंह | 11-15 |
| 3. | सूरदास के काव्य में सामाजिक अभिव्यक्ति | डॉ० सतकुमार | 16-19 |
| 4. | श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 2020 | सोनू शुक्ला | 20-26 |
| 5. | प्रमुख भारतीय सूफी कवि : प्रेम कथानकों की परम्परा और दर्शन | सुमित उपाध्याय | 27-32 |
| 6. | “सावित्रीबाई फुले और महिला शिक्षा का संघर्ष: सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध ऐतिहासिक प्रतिरोध” | Dr. Rashmi | 33-37 |
| 7. | कम्बोडिया के दो दुर्लभ संस्कृत शिलालेख | सुनील कुमार पाठक, प्रो. प्रह्लाद पांडे. | 38-40 |
| 8. | प्रेमचन्द के साहित्य में नारी का स्थान | डॉ० सतकुमार | 41-43 |
| 9. | माध्यमिक स्तर एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन | प्रो. श्रीकान्त भारतीय, निधि शर्मा | 44-48 |
| 10. | “ममता कालिया की कहानियों में मनोवैज्ञानिक द्वंद्व : एक मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन” | डॉ. रेनू जोशी, सरिता रावत | 49-53 |
| 11. | ਚੜ੍ਹਦੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਖ਼ਾਲਸਾ ਰਾਜ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਤੇ ਮੌਜੂਦਾ ਸਥਿਤੀ | ਡਾ. ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ | 54-58 |
| 12. | ANTHROPOGENIC FOOD AND FEEDING RESPONSES OF BIRDS IN THE HARSH HILL LANDSCAPE, SIKAR, RAJASTHAN: A FIELD-BASED OBSERVATIONAL STUDY | Abhishek Rollan, Dr. A. K.Siroya | 59-69 |
| 13. | माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों की भूमिका: एक अध्ययन | डॉ. श्याम मनोहर गौतम, अनिता सुमन | 70-75 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 14. | ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਾਮ, ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕੋ ਦਾ ਫਲਸਫਾ | ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ | 76-81 |
| 15. | लोक परंपरा से राष्ट्रीय सम्मान तक: पारंपरिक भारतीय कलाओं के संरक्षण में कलाकारों और पद्म पुरस्कारों की भूमिका | डॉ. गायत्री के | 82-90 |
| 16. | क्षमा | डॉ० सरला जागिड़ | 91-96 |
| 17. | ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ : ਸਮਾਜਿਕ ਸਮਾਨਤਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਮੂਲਭੂਤ ਬਦਲਾਅ | ਡਾ. ਰਾਗਿਨੀ ਸ਼ਰਮਾ, | 97-101 |
| 18. | शेखावाटी की भौगोलिक-सामाजिक पृष्ठभूमि एवं लोक-धर्म का उद्भव: एक समाजशास्त्रीय अंतर्संबंध | डॉ.कमल महला | 102-107 |
| 19. | भारत-पाकिस्तान संबंधों के संदर्भ में ऑपरेशन सिंदूर : सैन्य कार्रवाई , रणनीतिक स्थिरता और संकट-प्रबंधन का विश्लेषण | डॉ० नीरज सौंलकी | 108-113 |
| 20. | EDUCATION AND SOCIAL CHANGE IN SOCIETY | Dr. Johnny Techi | 114-117 |
| 21. | 21 वीं सदी में भारत-अमेरिका रणनीतिक संबंधों का हिंद महासागर क्षेत्र में क्षेत्रीय शक्ति-संतुलन पर प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन | राजेन्द्र प्रसाद मिश्र | 118-122 |
| 22. | पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास में महिलाओं की भूमिका | डॉ० पूनम भूषण | 123-126 |
| 23. | Developed India and Women Empowerment | DR MICHAEL KHINDO | 127-129 |
| 24. | समकालीन प्रवासी स्त्री कथाकारों का यथार्थ-बोध | ममता कुमारी | 130-134 |
| 25. | 21 वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में अभिव्यक्त किसान जीवन | दीपशिखा आनंद | 135-139 |
| 26. | ‘मल्लिका : आत्मनिर्वासित स्त्री का आख्यान’ | सृष्टि | 140-142 |
| 27. | भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय: संवैधानिक आधार, चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ | श्री सायसिंग अवास्या | 143-147 |
| 28. | अशोक चक्रधर के काव्य संसार में स्त्री विमर्श के विविध आयाम | नितिश | 148-153 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 29. | हिन्दी साहित्य का डिजिटलीकरण : परंपरा से आधुनिकता की ओर | अंजली पटेल<br>प्रो.एस.वी.एस.एस. नारायणराजू | 154-158 |
| 30. | चंद्रकिशोर जायसवाल के कथा-साहित्य में बाल-मन की मनोवैज्ञानिक परिवेश | नितीश कुमार | 159-163 |
| 31. | पंकज मल्लिक का हिंदी एवं बंगाली चित्रपट संगीत में योगदान: रवींद्र संगीत के प्रसार एवं संगीतात्मक प्रयोगों का अध्ययन | Shraboni Bhattacharya,<br>Dr. Ravjot Kaur Malhi | 164-167 |
| 32. | इक्कीसवीं सदी की स्त्री आत्मकथाएँ और भारतीय समाज | सुमन ठाकुर,<br>डॉ. पूजा गुप्ता | 168-171 |
| 33. | हिन्दी भक्ति काव्य में लोकचेतना | राजकुमार सिंगौर | 172-174 |
| 34. | “जमुई जिले के संथालों में सामाजिक संगठन और न्याय व्यवस्था” | प्यारे लाल कुमार | 175-178 |
| 35. | ਸਾਕਾ ਚਮਕੌਰ ਸਾਹਿਬ: ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਦੀ ਸ਼ਹਾਦਤ | ਡਾ. ਪਾਲਜੀਤ ਕੌਰ | 179-184 |
| 36. | बलौदाबाजार-भाटापारा जिले का महिला नेतृत्व: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन | सनत कुमार | 185-190 |
| 37. | Svabhāva and *Prōtē Ousia*: Taking a Logical Route to the Real | Dr Raj Verma Sinha | 191-195 |
| 38. | महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन | डॉ. सुषमा भट्ट थलेडी | 196-207 |
| 39. | “Development and Experimental Testing of Eco-Friendly Chemicals through Green Chemistry” | Mrs. Parul Singh | 208-212 |
| 40. | नारी चिन्तन का नया रूप - कोहली के उपन्यासों में | डॉ.रीजा.आर.एस | 213-216 |
| 41. | भारतीय संविधान के अंतर्गत धर्म निरपेक्षता का सिद्धांत: मूल सरंचना, राज्य की धार्मिक निष्पक्षता एवं संवैधानिक चुनौतियाँ | रत्ना श्रीवास्तव,<br>डॉ. अजीम खान,<br>डॉ. भूपेंद्र करवंदे | 217-219 |
| 42. | पावन माँ गंगा का मानव जीवन के विभिन्न आयामों में महत्व | डॉ.विनय कुमार श्रीवास्तव | 220-226 |
| 43. | "यशपाल के उपन्यासों में राजनितिक चिंतन एवं विश्लेषण" | तेज प्रकाश जोशी | 227-231 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| **44.** | **साहित्य और सोशल मीडिया: बदलते स्वरूप एवं नवीन आयाम** | **सरबजीत कौर** | **232-235** |
| **45.** | **संजीव जायसवाल के बाल साहित्य में नैतिक मूल्यों का अध्ययन** | **निर्मल कौर** | **236-238** |
| **46.** | **उदय प्रकाश की काव्य-संवेदना और वर्त्तमान स्थिति में सांस्कृतिक परिवेश** | **अलिका कुमारी** | **239-243** |
| **47.** | **हिन्दी कहानी का विकास तथा महिला लेखन** | **ममता कुमारी,<br>प्रो० (डॉ०) सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह** | **244-250** |

# संपादकीय





– **शोध से समाज तक : ज्ञान, संवेदना और सृजन की नई दिशाएँ**

– प्रिय शोधार्थियों, प्राध्यापकों, विद्वानों, साहित्यकारों एवं सुधी पाठकों!

– सादर नमस्कार,

– **'बोहल शोध मंजूषा'** के **अक्टूबर 2027** अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें विशेष प्रसन्नता हो रही है। किसी भी शोध पत्रिका का उद्देश्य केवल शोध-पत्रों का प्रकाशन करना नहीं होता, बल्कि वह ज्ञान, विचार, विमर्श और समाज के बीच एक सार्थक सेतु का निर्माण करती है। शोध तब अधिक सार्थक बनता है, जब वह पुस्तकालयों और शोध-संगोष्ठियों की सीमाओं से निकलकर समाज, शिक्षा, संस्कृति और मानव जीवन के प्रश्नों से जुड़ता है।

– शोध-पत्रिका शोधार्थी के लिए केवल प्रकाशन का माध्यम नहीं, बल्कि अकादमिक संवाद का मंच भी है।

– एक शोध-पत्र का महत्त्व केवल उसके उद्धरणों की संख्या से निर्धारित नहीं होना चाहिए। उसका सामाजिक प्रभाव, ज्ञान-विस्तार में योगदान और भविष्य के शोध के लिए उसका उपयोग भी महत्त्वपूर्ण है।

– **'बोहल शोध मंजूषा' की प्रतिबद्धता**

– 'बोहल शोध मंजूषा' शोधार्थियों, प्राध्यापकों, साहित्यकारों और विभिन्न विषयों के विद्वानों को एक साझा मंच उपलब्ध कराने के उद्देश्य से निरंतर प्रयासरत है। हमारा प्रयास है कि पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में विषयगत विविधता के साथ अकादमिक गंभीरता भी बनी रहे।

– हम अपने सभी लेखकों से अपेक्षा करते हैं कि वे मौलिक, प्रमाणिक और शोध-पद्धति के अनुरूप सामग्री प्रस्तुत करें। इसी प्रकार पाठकों और समीक्षकों से प्राप्त रचनात्मक सुझाव पत्रिका को अधिक समृद्ध बनाने में सहायक होंगे।

– हमारा विश्वास है कि शोध की यात्रा अकेले व्यक्ति की यात्रा नहीं है। शोधकर्ता, समीक्षक, संपादक और पाठक—सभी मिलकर ज्ञान की एक ऐसी परंपरा का निर्माण करते हैं जिसमें प्रश्न पूछना, विचार करना और सत्य की खोज करना निरंतर जारी रहता है।

– अक्टूबर 2027 का यह अंक केवल शोध-पत्रों का संग्रह न होकर ज्ञान और संवेदना के बीच संवाद का एक प्रयास है। हमारा समय परिवर्तनशील है, लेकिन शोध की मूल आत्मा आज भी वही है—**सत्य की खोज, ज्ञान का विस्तार और समाज के प्रति उत्तरदायित्व।**

– 'बोहल शोध मंजूषा' अपने सभी शोधार्थियों, प्राध्यापकों, समीक्षकों, लेखकों एवं पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करती है। आपके विचार, शोध और सहयोग ही इस यात्रा की वास्तविक शक्ति हैं।

– शोध जीवित रहे, विचार जीवित रहें और ज्ञान समाज के लिए उपयोगी बनता रहे—इसी शुभकामना के साथ।

– **सादर,**

– **डॉ. नरेश सिहाग**

– **संपादक**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 11-15
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क का शासन एवं प्रशासन : अवध राज्य के सुदृढ़ीकरण का अध्ययन

**प्रोफेसर अरुण कुमार सिंह**
इतिहास विभाग, डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, आजमगढ़
(सम्बद्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़), पिन कोड – 276001

**सारांश**

अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मुगल साम्राज्य की केंद्रीय शक्ति के क्रमिक ह्रास ने भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किया। इसी परिवर्तित परिस्थिति में अवध एक महत्त्वपूर्ण प्रादेशिक शक्ति के रूप में उभरकर सामने आया। सन् 1722 ई. में सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क को अवध का सूबेदार नियुक्त किया जाना इस परिवर्तन की निर्णायक घटना थी। उन्होंने अपने प्रशासनिक कौशल, राजनीतिक विवेक और सैन्य क्षमता के माध्यम से अवध की शासन-व्यवस्था को संगठित स्वरूप प्रदान किया। प्रस्तुत शोध-पत्र में सआदत खाँ के शासनकाल को अवध राज्य के सुदृढ़ीकरण की आधारभूत प्रक्रिया के रूप में देखा गया है। अध्ययन में उनकी प्रशासनिक क्षमता, न्यायिक एवं कानून-व्यवस्था, राजस्व एवं वित्तीय सुधार, सैन्य संगठन तथा मुगल दरबार के साथ उनके संबंधों का विश्लेषण किया गया है। सआदत खाँ ने मुगल सम्राट की औपचारिक वैधता को स्वीकार करते हुए अवध के आंतरिक प्रशासन में निर्णय लेने की पर्याप्त स्वतंत्रता विकसित की। इस संतुलित नीति के कारण वे केंद्रीय सत्ता से सीधे टकराव से बचते हुए क्षेत्रीय शक्ति का निर्माण कर सके। उनकी राजस्व नीति ने राज्य की आर्थिक स्थिति को मजबूत किया, जबकि सैन्य संगठन ने प्रशासनिक नियंत्रण तथा आंतरिक सुरक्षा को प्रभावी बनाया। न्यायिक और प्रशासनिक व्यवस्था में अनुशासन स्थापित करने से शासन की विश्वसनीयता बढ़ी।

**मुख्य शब्द**-सआदत खाँ, बुरहान-उल-मुल्क, अवध, नवाबी शासन, प्रशासन, राजस्व व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, सैन्य संगठन, मुगल दरबार, प्रांतीय स्वायत्तता।

**प्रस्तावना**

अठारहवीं शताब्दी का आरम्भ भारतीय इतिहास में राजनीतिक पुनर्गठन का ऐसा काल था, जिसमें पूर्ववर्ती साम्राज्यवादी संरचनाएँ धीरे-धीरे कमजोर हो रही थीं और उनके स्थान पर क्षेत्रीय शक्तियों के उभरने की प्रक्रिया तेज हो रही थी। औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य की केंद्रीय शक्ति पर उत्तराधिकार संघर्षों, दरबारी गुटबंदी, प्रांतीय असंतोष और प्रशासनिक शिथिलता का प्रभाव बढ़ता गया। परिणामस्वरूप दिल्ली की सत्ता का प्रांतीय क्षेत्रों

पर प्रत्यक्ष नियंत्रण पहले की तुलना में कम प्रभावी होने लगा। इस परिस्थिति में प्रांतीय सूबेदारों के सामने एक ओर अपने क्षेत्रों में शांति और प्रशासनिक व्यवस्था बनाए रखने की चुनौती थी, तो दूसरी ओर मुगल सम्राट के प्रति औपचारिक निष्ठा बनाए रखने की आवश्यकता भी थी। अवध इसी राजनीतिक संक्रमण के बीच ऐसी प्रादेशिक शक्ति के रूप में विकसित हुआ, जिसने आगे चलकर उत्तर भारत की राजनीति में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। आपकी पुस्तक में इस व्यापक परिवर्तन को अठारहवीं शताब्दी के राजनीतिक पुनर्गठन के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में सन् 1722 ई. में सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क को अवध का सूबेदार नियुक्त किया गया। उनका आगमन अवध के इतिहास में सामान्य प्रशासनिक परिवर्तन नहीं था, इस क्षेत्र में एक संगठित नवाबी शासन के विकास की शुरुआत थी। सआदत खाँ ने ऐसी परिस्थिति में शासन की बागडोर संभाली जब प्रशासनिक व्यवस्था में अनेक कठिनाइयाँ थीं, राजस्व-संग्रह में अनियमितताएँ थीं तथा स्थानीय शक्तियाँ अपनी प्रभावशीलता बनाए हुए थीं। उन्होंने इन समस्याओं को केवल तत्कालीन प्रशासनिक संकट के रूप में नहीं देखा, राज्य को दीर्घकालीन आधार देने की आवश्यकता को समझा।

उनकी प्रशासनिक क्षमता, सैन्य योग्यता और राजनीतिक दूरदर्शिता ने अवध को एक अधिक संगठित प्रादेशिक शक्ति बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। सआदत खाँ की शासन-दृष्टि का महत्त्व इस बात में था कि उन्होंने प्रशासन को केवल आदेशों और अधिकारियों की व्यवस्था तक सीमित नहीं रखा। उनके लिए राज्य की शक्ति का संबंध राजस्व, न्याय, कानून-व्यवस्था, सेना और राजनीतिक नियंत्रण से था। इसलिए उन्होंने शासन के विभिन्न अंगों को एक-दूसरे से जोड़ते हुए ऐसी व्यवस्था विकसित करने का प्रयास किया जिसमें प्रशासनिक निर्णयों को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके। उनके द्वारा विकसित संस्थागत ढाँचे ने आगे चलकर सफदरजंग और शुजाउद्दौला जैसे उत्तराधिकारियों को भी एक संगठित प्रशासनिक आधार प्रदान किया। पुस्तक में इसी कारण सआदत खाँ के प्रशासनिक पुनर्गठन को अवध के दीर्घकालीन राजनीतिक स्थायित्व की आधारभूत उपलब्धियों में माना गया है। सआदत खाँ की प्रशासनिक नीति में राजस्व व्यवस्था का विशेष स्थान था। किसी भी राज्य की वास्तविक शक्ति उसके आर्थिक संसाधनों पर निर्भर करती है। पर्याप्त राजस्व के बिना न तो प्रशासनिक अधिकारियों का संचालन संभव था और न ही सेना तथा सुरक्षा व्यवस्था को प्रभावी बनाया जा सकता था। अवध कृषि की दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र था, इसलिए भूमि से प्राप्त आय राज्य के वित्तीय संसाधनों का प्रमुख आधार बनी।

**सआदत खाँ की प्रशासनिक दृष्टि एवं शासन-व्यवस्था**

सन् 1722 ई. में सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क को अवध का सूबेदार बनाए जाने के समय राजनीतिक परिस्थितियाँ अत्यंत जटिल थीं। मुगल साम्राज्य की केंद्रीय शक्ति कमजोर पड़ रही थी और प्रांतों में स्थानीय शक्तियों का प्रभाव बढ़ रहा था। ऐसी स्थिति में अवध को केवल मुगल प्रशासन की परंपरागत पद्धति से संचालित करना पर्याप्त नहीं था। सआदत खाँ ने इस चुनौती को समझते हुए प्रशासन में नियंत्रण, अनुशासन और उत्तरदायित्व को प्राथमिकता दी। उनकी शासन-पद्धति का उद्देश्य ऐसा प्रशासन तैयार करना था जिसमें निर्णय लेने की शक्ति स्पष्ट रूप से केंद्रित हो और विभिन्न अधिकारी अपने निर्धारित कार्यों के लिए उत्तरदायी रहें। इसी कारण उनके शासन को अवध में संगठित नवाबी प्रशासन की आधारशिला माना जा सकता है। आपकी पुस्तक में भी सआदत खाँ को कुशल प्रशासक और दूरदर्शी राजनीतिक व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है।**1** सआदत खाँ की प्रशासनिक व्यवस्था में नवाब सर्वोच्च अधिकारी था। उसके अधीन दीवान, बख्शी, फौजदार, काजी, कोतवाल, आमिल तथा अन्य पदाधिकारी कार्य करते थे। इस प्रकार प्रशासन के विभिन्न विभागों के लिए अलग-अलग उत्तरदायित्व निर्धारित किए गए। दीवान वित्त और राजस्व का प्रमुख अधिकारी था, जबकि बख्शी सेना तथा सैनिकों से संबंधित व्यवस्था देखता था। फौजदार कानून-व्यवस्था और सैन्य नियंत्रण का दायित्व संभालता था। काजी न्यायिक कार्यों से तथा कोतवाल नगर की सुरक्षा और व्यवस्था से संबंधित कार्य करता था। इस कार्य-विभाजन से प्रशासन में अनावश्यक

हस्तक्षेप कम हुआ और अधिकारियों की जवाबदेही स्पष्ट बनी।**2** इस प्रशासनिक केंद्रीकरण का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि अवध में शासन की वास्तविक शक्ति नवाब के हाथों में केंद्रित होने लगी। मुगल सम्राट से नियुक्ति-पत्र और उपाधियाँ प्राप्त होने के बावजूद दैनिक प्रशासन में दिल्ली का हस्तक्षेप सीमित रहा। नवाब अधिकारियों की नियुक्ति, कर नीति, सैन्य संगठन तथा राज्य की सुरक्षा से जुड़े निर्णय स्वयं लेने लगा। इस स्थिति ने अवध को व्यवहार में अधिक स्वायत्त बनाया। सआदत खाँ की विशेषता यह थी कि उन्होंने इस स्वायत्तता को अचानक स्वतंत्रता की घोषणा के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, अपितु मुगल वैधता को बनाए रखते हुए धीरे-धीरे अपनी वास्तविक शक्ति को मजबूत किया।**3** उनकी प्रशासनिक नीति में स्थानीय शक्तियों के साथ संतुलन भी दिखाई देता है। जमींदारों और अन्य स्थानीय प्रभुत्वशाली वर्गों को पूरी तरह समाप्त करने के बजाय उन्हें प्रशासनिक ढाँचे में नियंत्रित ढंग से समायोजित किया गया। जो स्थानीय शक्तियाँ शासन के प्रति सहयोगी थीं, उनके साथ व्यावहारिक संबंध बनाए गए, जबकि विरोध अथवा राजस्व-संग्रह में बाधा उत्पन्न करने वालों पर नियंत्रण स्थापित किया गया। इससे शासन को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाने में सहायता मिली। इस प्रकार सआदत खाँ का प्रशासन केवल ऊपर से नीचे आने वाले आदेशों पर आधारित नहीं था, स्थानीय सामाजिक शक्तियों के साथ निरंतर समायोजन की प्रक्रिया भी था।सआदत खाँ की प्रशासनिक क्षमता का वास्तविक मूल्यांकन इस बात से किया जा सकता है कि उनके द्वारा निर्मित व्यवस्था उनके निधन के बाद भी समाप्त नहीं हुई। आगे आने वाले नवाबों को एक ऐसा प्रशासनिक ढाँचा मिला जिसमें अधिकारी-विभाजन, राजस्व-संग्रह, सैन्य व्यवस्था और कानून-व्यवस्था के लिए निश्चित संस्थाएँ मौजूद थीं। इस दृष्टि से उनका शासन अवध के राजनीतिक इतिहास में संस्थागत निर्माण का प्रारंभिक चरण था। उनकी उपलब्धि केवल तत्कालीन समस्याओं का समाधान करने में नहीं थी, उन्होंने ऐसी व्यवस्था तैयार की जिसने आगे की नवाबी सत्ता के विस्तार को संभव बनाया।

**न्यायिक व्यवस्था, कानून-व्यवस्था एवं राजस्व सुधार**

सआदत खाँ के शासन की सफलता को समझने के लिए न्यायिक और राजस्व व्यवस्था का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। किसी भी राज्य में प्रशासन की विश्वसनीयता इस बात पर निर्भर करती है कि जनता के विवादों का समाधान किस प्रकार होता है और राज्य अपनी आय को कितनी प्रभावी ढंग से एकत्रित करता है। अवध में सआदत खाँ ने इन दोनों क्षेत्रों को प्रशासन की स्थिरता से जोड़कर देखा। न्यायिक व्यवस्था में काजी तथा अन्य स्थानीय अधिकारियों की भूमिका निर्धारित थी। दीवानी और फौजदारी विवादों के निपटारे के लिए अलग प्रक्रियाएँ अपनाई जाती थीं। धार्मिक कानूनों के साथ स्थानीय परंपराओं और सामाजिक मान्यताओं को भी ध्यान में रखा जाता था। इससे न्याय व्यवस्था को स्थानीय समाज के अनुरूप व्यावहारिक स्वरूप मिला।**4** न्याय व्यवस्था के साथ कानून-व्यवस्था को प्रभावी बनाए रखना भी आवश्यक था। नगरों और प्रमुख व्यापारिक मार्गों पर कोतवाल की नियुक्ति की जाती थी। उसका कार्य केवल अपराध रोकना नहीं था, बाजार की व्यवस्था, सार्वजनिक सुरक्षा और नगर में सामान्य शांति बनाए रखना भी था। इस प्रकार पुलिस और न्यायिक तंत्र ने आर्थिक गतिविधियों के लिए अपेक्षाकृत सुरक्षित वातावरण तैयार किया। व्यापारियों, कृषकों और सामान्य जनता के लिए सुरक्षा का वातावरण राज्य की आर्थिक शक्ति के विस्तार में भी सहायक बना। आपकी पुस्तक में नवाबी प्रशासन की न्यायिक एवं कानून-व्यवस्था को उसकी प्रमुख प्रशासनिक उपलब्धियों में शामिल किया गया है।**5** राजस्व व्यवस्था सआदत खाँ की प्रशासनिक नीति का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष थी। अवध की आर्थिक शक्ति मुख्यतः कृषि और भूमि-राजस्व पर आधारित थी। इसलिए भूमि से प्राप्त आय को नियमित करना राज्य के लिए अनिवार्य था। सआदत खाँ ने राजस्व अधिकारियों की कार्यप्रणाली पर निगरानी बढ़ाई और कर-संग्रह में होने वाली अनियमितताओं को नियंत्रित करने का प्रयास किया। राजस्व अधिकारियों की नियमित समीक्षा तथा जिन क्षेत्रों में कर-संग्रह में बाधाएँ थीं वहाँ विशेष अभियान चलाने से राज्य की आय में सुधार हुआ। राजस्व नीति में केवल कठोरता ही नहीं, व्यावहारिकता भी

दिखाई देती थी। जिन जमींदारों ने शासन के प्रति सहयोगपूर्ण व्यवहार किया, उनके साथ प्रशासनिक सहयोग की नीति अपनाई गई। इसके विपरीत राजस्व व्यवस्था को बाधित करने वाले तत्वों पर नियंत्रण किया गया। इस संतुलन ने शासन को ग्रामीण समाज से जोड़ने और राजस्व-संग्रह को अधिक प्रभावी बनाने में सहायता की। इस प्रकार सआदत खाँ की वित्तीय नीति को केवल कर बढ़ाने की नीति नहीं कहा जा सकता; उसका उद्देश्य राज्य की आर्थिक क्षमता और प्रशासनिक नियंत्रण दोनों को मजबूत करना था।राजस्व-सुधारों का सीधा प्रभाव अवध की राजनीतिक शक्ति पर पड़ा। नियमित आय के कारण सेना को बनाए रखना, अधिकारियों को वेतन देना, सुरक्षा व्यवस्था संचालित करना तथा प्रशासनिक कार्यों को निरंतर चलाना संभव हुआ।

**सैन्य संगठन एवं सुरक्षा व्यवस्था**

अठारहवीं शताब्दी में राजनीतिक सत्ता को बनाए रखने के लिए सैन्य संगठन अत्यंत आवश्यक था। मुगल साम्राज्य की केंद्रीय शक्ति कमजोर हो रही थी और मराठों, रुहेलों, जाटों, सिखों तथा अन्य क्षेत्रीय शक्तियों का प्रभाव बढ़ रहा था। ऐसी स्थिति में अवध की सुरक्षा केवल प्रशासनिक उपायों से संभव नहीं थी। सआदत खाँ ने इस आवश्यकता को समझते हुए सैन्य संगठन को शासन-व्यवस्था का अभिन्न अंग बनाया। उनकी दृष्टि में सेना का कार्य केवल बाहरी आक्रमणों का सामना करना नहीं था, राज्य के भीतर कानून-व्यवस्था बनाए रखना और स्थानीय शक्तियों पर नियंत्रण स्थापित करना भी था।**6** सआदत खाँ ने सूबेदारी संभालने के बाद सेना की वास्तविक स्थिति का आकलन कराया। सैनिकों की संख्या, उनकी व्यवस्था और उपलब्ध संसाधनों की समीक्षा के बाद सैन्य संगठन को अधिक प्रभावी बनाने की दिशा में कदम उठाए गए। सेना को अनुशासन, संगठन और नियंत्रण के आधार पर मजबूत करने का प्रयास किया गया। इससे राज्य को आंतरिक विद्रोहों और सीमावर्ती असुरक्षा से निपटने में सहायता मिली। सैन्य संगठन और प्रशासन के बीच यह संबंध अवध की नवाबी व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं में से एक था।सेना के सर्वोच्च नियंत्रण का अधिकार नवाब के पास था। बख्शी सैन्य संगठन और सैनिकों के वेतन आदि की व्यवस्था देखता था, जबकि फौजदार स्थानीय कानून-व्यवस्था तथा सैन्य नियंत्रण से संबंधित कार्य करता था। इस प्रकार सैन्य और नागरिक प्रशासन पूरी तरह अलग-अलग न होकर एक-दूसरे के पूरक थे।**7** सैन्य शक्ति ने अवध के व्यापारिक मार्गों और सीमाओं की सुरक्षा में भी योगदान दिया। सुरक्षित मार्गों के कारण व्यापारिक गतिविधियों को प्रोत्साहन मिला और कृषि उत्पादन तथा बाजारों की व्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। इस प्रकार सैन्य संगठन का आर्थिक प्रभाव भी था।

**मुगल दरबार से संबंध एवं अवध की प्रांतीय स्वायत्तता**

सआदत खाँ की राजनीतिक नीति का सबसे सूक्ष्म पक्ष मुगल दरबार के साथ उनके संबंधों में दिखाई देता है। उन्होंने यह समझ लिया था कि केंद्रीय सत्ता की शक्ति कमजोर होने के बावजूद मुगल सम्राट की वैधानिक प्रतिष्ठा तत्काल समाप्त नहीं हुई थी। इसलिए उन्होंने मुगल सत्ता से खुला संघर्ष करने के बजाय उसकी औपचारिक अधीनता को स्वीकार किया और उसी राजनीतिक वैधता का उपयोग अवध में अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए किया। यह नीति उनके राजनीतिक विवेक और कूटनीतिक समझ का परिचायक थी।अवध की स्थिति को समझने के लिए यह ध्यान देना आवश्यक है कि उस समय क्षेत्रीय स्वायत्तता का अर्थ तत्काल पूर्ण स्वतंत्रता नहीं था। सआदत खाँ ने मुगल प्रशासनिक परंपराओं को पूरी तरह अस्वीकार नहीं किया। इसके बजाय उन्होंने उसी ढाँचे के भीतर अपने अधिकारों का विस्तार किया। मुगल सम्राट से नियुक्ति और उपाधियाँ प्राप्त होती रहीं, लेकिन दैनिक शासन में दिल्ली का हस्तक्षेप सीमित रहा। राज्य की कर नीति, सैन्य संगठन, अधिकारियों की नियुक्ति और सुरक्षा संबंधी निर्णय अवध में ही लिए जाने लगे। इससे राजनीतिक स्वायत्तता धीरे-धीरे व्यवहारिक रूप ग्रहण करने लगी। सआदत खाँ की नीति में अवसर और उत्तरदायित्व दोनों का संतुलन दिखाई देता है। उन्होंने मुगल साम्राज्य के कमजोर होते ढाँचे का लाभ उठाया, लेकिन केंद्रीय सत्ता से पूर्ण विच्छेद की जल्दबाजी नहीं की। यह राजनीतिक संतुलन अवध के लिए

अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ। एक ओर उसे मुगल वैधता से राजनीतिक प्रतिष्ठा मिलती रही, दूसरी ओर प्रांतीय शासन में नवाब की वास्तविक शक्ति बढ़ती गई। इस प्रकार अवध की स्वायत्तता क्रमिक रूप से विकसित हुई। इतिहासकारों ने सआदत खाँ की इसी नीति को राजनीतिक विवेक, आर्थिक सुदृढ़ता और प्रशासनिक अनुशासन के समन्वय के रूप में देखा है। प्रांतीय स्वायत्तता को मजबूत करने में आर्थिक संसाधनों का भी महत्त्व था। यदि अवध की आय दिल्ली पर निर्भर रहती, तो उसकी राजनीतिक स्वतंत्रता सीमित रहती।

**निष्कर्ष**

सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क का शासन अवध के इतिहास में एक निर्णायक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है। सन् 1722 ई. में सूबेदार के रूप में उनकी नियुक्ति के बाद अवध की शासन-व्यवस्था में जिस प्रकार का संगठन और अनुशासन विकसित हुआ, उसने आगे चलकर इस क्षेत्र को एक प्रभावशाली प्रादेशिक शक्ति बनाने में आधारभूत भूमिका निभाई। उनकी प्रशासनिक नीति में सत्ता का केंद्रीकरण, अधिकारियों के बीच स्पष्ट कार्य-विभाजन और स्थानीय शक्तियों के साथ व्यावहारिक संबंध प्रमुख थे। न्यायिक एवं कानून-व्यवस्था को मजबूत करके उन्होंने प्रशासन के प्रति विश्वास का वातावरण तैयार किया, जबकि राजस्व-सुधारों ने राज्य की आर्थिक क्षमता को बढ़ाया। राजस्व व्यवस्था से प्राप्त संसाधनों ने प्रशासन और सेना दोनों को स्थिर आधार दिया।सैन्य संगठन उनकी शासन-व्यवस्था का दूसरा महत्त्वपूर्ण आधार था। उन्होंने सेना को केवल बाहरी सुरक्षा का साधन न मानकर प्रशासनिक नियंत्रण और आंतरिक स्थिरता का आवश्यक उपकरण बनाया। संगठित सेना, सुरक्षित मार्ग और प्रभावी कानून-व्यवस्था ने अवध की आर्थिक गतिविधियों को भी सहारा दिया।

**संदर्भ ग्रंथ**


1. आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब, पृ. 92।
2. सतीश चन्द्र, मध्यकालीन भारत : राजनीति, समाज और संस्कृति, नव-आनंद प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ. 392।
3. मुजफ्फर आलम, अवध सूबा : मुगल साम्राज्य से क्षेत्रीय राज्य तक, पृ. 119।
4. सतीश चन्द्र, मध्यकालीन भारत : राजनीति, समाज और संस्कृति, नव-आनंद प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ. 391।
5. आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब, पृ. 96।
6. चेतन सिंह, अठारहवीं शताब्दी का उत्तर भारत : समाज, अर्थव्यवस्था और राज्य, पृ. 147।
7. सतीश चन्द्र, मध्यकालीन भारत : राजनीति, समाज और संस्कृति, नव-आनंद प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ. 390।



ई-मेल - arunnsingh99@gmail.com, मोबाइल नंबर – 8318225375

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 16-19
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# सूरदास के काव्य में सामाजिक अभिव्यक्ति

**डॉ0 सतकुमार**
एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),
छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

सूरदास का जीवन अकबर द्वारा मुगल साम्राज्य की अभिव्यक्ति की स्थापना के साथ हुआ। सूरदास का मुख्य ध्येय श्री बल्लभाचार्य द्वारा प्रेम और भक्ति का सन्देश लोगों तक पहुँचाना था। इस प्रकार सूरदास ने कृष्ण की भक्ति को फैलाने में योगदान दिया। सूरदास वर्णव्यवस्था को समाज का आधार मानकर चलते है और इससे समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अप्रत्यक्ष रूप में वर्णन करते है। इसलिए सूरदास कलियुग को तुलसीदास के समान एक वर्ण द्वारा दूसरे वर्ण के कर्त्तव्यों और अधिकारों में हस्तक्षेप को नहीं मानते। सूरदास के कलियुग में न कोई यज्ञ करता है और न श्राद्ध और किसी को भी धर्म के प्रति आस्था नहीं रहती। सूरदास के मन में कलियुग का मुख्य लक्षण है कि पुरूष वृषली स्त्री संसर्ग में रहकर सुरापान करते, बधिक के घर जाते, अनेक प्रकार का भक्षाभक्ष करते, जुआ खेलते हुए हरि विमुख हो जाते है।

यह द्रष्टव्य है कि सूरदास तुलसीदास और अपने काल के अन्य विद्वानों के समान धर्म हो वर्णाश्रम से नहीं जोड़ते। सूरदास के लिए प्रेम या माद्युर्य भाव भक्ति ही धर्म है, जो सब प्रकार की नैतिक सीमाओं को समेटती है। वे राधा के कृष्ण के प्रति समर्पण भाव को वेद,गीता और पुराणों का सार मानते है। एक सच्चे भक्त के लिए वर्ण, जाति या अन्य भेदभाव को महत्त्व नहीं देते।

''जाति गोतकुल नाम गनत नहीं रंग होई के रानों।।
जातिपाँति कुलकानि न मानत वेद पुराननि साखें।।''
ऊँच नीच हरि के इकसार (सूरसागर 427)

इसकी पुष्टि एवं प्रशंसा सूर कृष्ण के उस प्रसंग से करते है जब वे पांडवों के वनवास की अवधि पूरी होने पर उनकों राज्याधिकार लौटा देने के लिए दूत बनकर दुर्योधन के पास जाते है। कृष्ण विदुर के घर भोजन करते है तो विदुर को दासी पुत्र कहकर अपमानित किया जाता है।

दुर्योधन द्वारा उलाहना देने पर श्रीकृष्ण स्वीकार करते है कि अपने भक्त के लिए वे खरीदे हुए दास बन जाते है। वे स्पष्ट रूप से स्वीकार करते है कि हरि की भक्ति से स्वपथ भी ब्राह्मण से श्रेष्ठ पदवी को प्राप्त करता है।

'' स्वचयुह श्रेष्ठ होत पदसेवत
बिनु गोपाल द्विज जनम न भावै'' (सूरसागर 233)

फिर भी सूर की रचनाओं में वर्ण व्यवस्था को मानने वाले सामाजिक मूल्यों और भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। इसीलिए सूरदास ब्राह्मणों का आदर सत्कार, भोजन और उनकों अनेक प्रकार के गाय और गाँवों को दान का वर्णन करते है। सूरदास के अनुसार उच्च जाति के लोगों को निम्न वर्ण या जाति के लोगों के साथ बैठकर भोजन तथा विवाह नहीं करना चाहिए।

'' जैस काग हंस की संगति लहसुन संग कपूर
जैसे कंचन काँच बराबर, गेरू मांग सिन्दुर
भोजन साथ शूद्र बांमन के वैसों उनकों साथ'' (सूर 3770)

सूरदास क्षत्रिय और राजपूत दोनों शब्दों का प्रयोग करते है। वे राजपुत शब्द का संम्बोधन 'ध्रुव' के लिए करते है जो राजपुत्र था (सूर. 11) 'ठाकुर' शब्द एक क्षत्रिय राजा या स्वामी के लिए प्रयुक्त होता था और एक आदरसूचक शब्द माना जाता था, उन्होने नंद को जो जाति में अहीर थे, 'ठाकुर' नाम से सम्बोधित किया है।

सूरदास व्यापार करने के संदर्भ में बनिक शब्द का प्रयोग करते है। वे उस कृष्ण की आलोचना करते है जो न खाना जानता है और न धन का व्यय करना। इस प्रकार सूर के अनुसार ब्राह्मणों के लिए धनार्जन करना, क्षत्रियों के लिए देश की रक्षा करना, वैश्य जाति के लिए व्यापार करना और शुद्र के लिए काम तथा अन्य सेवा के कार्य करना है।

**नगर और ग्राम जीवन**

सूरदास सामान्यतः शहरों को नगर या पूर कहते है। नँदगाँव और गोकुल की तुलना में मथुरा, वृंदावन, द्वारिका, काशी, बडे शहर माने जाते थे। द्वारिका और मथुरा में स्थित अनेक महलों को देखने के लिए सिर उठाकर देखना पड़ता था। इमारतें बड़े–बड़े कलशों से सुशोभित थी। कुछ पारम्परिक रूप में वर्णन करते हुए वे कहते है कि द्वारिका सोने से सुशोभित शहर था। महल के चबूतरे हीरे और मोतियों से सज्जित थे। यह वर्णन तदयुगीन विश्वासों के अनुकूल प्रतीत होता है, जो राजाओं एंव राजकीय परिवार के ऐश्वर्यशाली जीवन पर प्रकाश डालता है। 'सूरदास ने द्वारिका में कृष्ण और अनेक राजकुमारों का भिन्न–भिन्न नसलों के घोड़ो पर चढ़कर चौगान (पोलो) खेलने का वर्णन किया है। इस प्रकार सूरदास के पदों में समयुगीन तुर्कों और मुगल बादशाहों के मनोरंजन के तरीकों पर प्रकाश पड़ता है। सूरदास ने नंदगाँव को शहर की संज्ञा दी है। उस जमाने में परगने का शासन केन्द्र किसी एक छोटे शहर में हुआ करता था, जिसे कुरा या कस्बा कहा जाता था। यह कहा गया कि कस्बा या कुरा एक ऐसा गाँव होता था जहाँ एक छोटा–सा बाजार लगता था। लोग अनाज का क्रय–विक्रय वहाँ पर करते थे। अतः सूरदास का ब्रज एक ग्राम की इकाई के रूप में मिलता है, जिसमें गाँव व शहर दोनों आते थे। जहाँ किसान व मुखिया उसके सहयोगी परिवार जन तथा राज्याधिकारी भी रहते थे।

**गाँव में रहने वाले सामान्य लोग**

1. गाँव के शिल्पकार और निम्न जाति के लोग :– ग्रामीण समाज पारंपरिक रूप में दो श्रेणियों में विभक्त होता था– किसान और शिल्पकार/शिल्पकारों को बलूतेदार भी कहा जाता था। उनको फसल का एक हिस्सा या बलूता भी दिया जाता था जिसमें प्रायः बारह प्रकार के लोग–बढ़ई, लुहार, चमड़े का काम करने वाला, लकड़हारा आदि आते थे। सुनार एंव ज्योतिष और गाँव का पुरोहित भी इसी श्रेणी में आते थे। लेकिन उनकी जाति अन्य लोगों से ऊँची थी। इस प्रकार सूरदास ने कृष्ण के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में ब्रज में मालिन, सुनारिन, नाइन, बढ़ई, कुम्हारिन आदि का वर्णन किया है।

   मालिन बाधै तौरना (रे) आँगन रोपै केरि
   अनगढ़ सोना ढोलना (गढ़) तपाए सुनार
   नाइन बोलहु नवरंगी (हो) टयाउ महाबर नेग
   लाख टका सा झुमका (देहू) सारी दाई को नेग (सूर 658)

2. चरवाहेः–

पशुपालन और खेती करना दोनों एक–दूसरे के बराबर थे। सूरदास ने अपने काव्य में ग्वालों एंव ग्वालिनों का वर्णन किया है। जो जाति के अहीर और पशुपालन उनका मुख्य कार्य व्यापार है। उनका मुख्य धन पशु धन है। जिनके पास अधिक गाय होती थी, उसी को अमीर समझा जाता था। इसीलिए कृष्ण पर घमण्ड़ी होने का आरोप लगाया गया, क्योंकि उनके दत्तक पिता नंद के पास दस अधिक गाय थी।

दस गायीन करि को बड़ो, अहीर जाति सब एक (सूर 1908)

ग्वाले प्राय बुद्धिहीन समझे जाते थे (सूरसागर 1507, 1525, 1541) फिर भी उनमें गहरी समानता की भावना विद्यमान थी। एक ग्वाले ने उत्तर देते हुए कहा कि किसी के पास कितनी भी गाय क्यों न हो, अहीर जाति के लोग सब एक समान है। कृष्ण अपने बाल सखाओं के साथ जँगल में गाय चराने जाते थे, उनको अपनी काली व सफेद दोनों गायों की पहचान जल्द हो चुकी थी। भागवत में ग्वालों के रहने के स्थान को नगर या घोष की संज्ञा दी गई है, सूर ने भी उसी शब्द का प्रयोग किया है (सूर 3965.1537)। इन गांवों में से ग्वालों और ग्वालिनें निकटवर्ती शहरों में मक्खन, दही और घी बेचने जाती थी। (सूर 930–931)

सूरदास मुख्यतः ग्रामीण जीवन के चितेरे थे। हालाँकि उनकी रचनाओं में उच्च वर्ग के लोगों की निम्न वर्ग के प्रति भावनाओं की अभिव्यक्ति मिलती है। सूरदास के लिए ब्रज एक आदर्शात्मक चरागाह प्रदेश है, जहाँ भ्रातृभाव, प्रेम और समानता का साम्राज्य फैला है। वहाँ के निवासी प्राकृतिक आपदाओं से भी ग्रस्ति है। कृष्ण के वियोग में गोपियाँ ग्रसित है।

3. किसान :–

सूरदास ने किसान के लिए खेतिहर, हलधर या हाँकनहारा शब्दों का प्रयोग किया है। वह ऐसा व्यक्ति है जो खेती करने का कार्य करता है। तत्कालीन फारसी ग्रन्थों में किसान के स्थान पर रैयत शब्द का प्रयोग हुआ है। सूर ने किसान और रैयत दोनों का समान अर्थों में प्रयुक्त किया है। सूर के समय में किसान स्वयं भी खेती करते थे। सूर द्वारा वर्णित फसलों में मुख्य गन्ना (ईख) धान और धनिया है। गांव में कुम्हड़ा की फसल होती थी तथा खांड और गुड़ बनाया जाता था। (सूर 422, 2473) सूर की रचनाओं से यह ज्ञात होता है कि सूर को सभी खेती करने की प्रक्रियाओं का ज्ञान था। सबसे पहले भूमि को समतल बनाया जाता था, ताकि वर्षा में खेत में कोई खड्डा न रह सके, जो फसल को नुकसान पहुँचा सके। सभी किसान खेत से खरपतवार निकालते थे, सूरदास ने हल में एक नली (नल) जोड़कर बीज को बोने (छितराने) का वर्णन भी किया है। (सूर 197, 117) सूर ने बंजर भूमि का वर्णन भी किया है (सूर 185) बंजर उस भूमि को कहा गया है जो खेती करने के योग्य है, लेकिन शोरे की अधिकता के कारण खेती के लिए सर्वथा अयोग्य है। सूरदास द्वारा वर्णित किसान के जीवन से प्रतीत होता है कि उसका जीवन कठिनाई से भरा था। उसको सूखा व बाढ़ का सामना करना पड़ता था। वह प्रायः स्थानीय अधिकारियों पटवारी, अमीन, मुस्तौफा तथा महाजन और ठाकुर के द्वारा सताया जाता है। सूरदास के इन स्थानीय अधिकारियों को यम की उपाधि दी है। सूरदास कहते है कि गाँव का पटवारी भी कपटी है, जो बही में झूठा हिसाब लिखता है और किसान के ऊपर बकाया (बाकी) दिखाता है। इसलिए निरीह किसान को कानकटाई उठानी होती है। किसान यही प्रार्थना करते है कि उसे किसी भी प्रकार गाँव में ही ठीक तरह से रहने दिया जाए।

'धरम जमानत मिल्यौ न चहिं ताते ठाकुर लूटौ।
अहंकार पटावरी कपटी झूठी लिखत बही।
लागै धरम बतावै अधरम, बाकि सबै रही।। (सूर. 185)

**शासन अधिकारी और उच्च वर्ग**

सूरदास को गाँव या परगने में होने वाली जमांबदी और वसूली सम्बंधी प्रक्रिया का भी पूरा ज्ञान था। जो कुछ पटवारी कहता है। वह सच हो जाता है। पटवारी किसान की जमीन की कीमत तय करता है। वह प्रत्येक किसान पर लगान तय करता है। किसानों को यही प्रार्थना रहती है कि पटवारी उनसे कोई और मांग

न करें। वह जमा खर्च का जोड़ सही रूप में करके बही में असल रूप में लिख दे और अपने ऊपर के अधिकारी के पास भेज दे। (सूर 142) सूरदास द्वारा ग्रामीण चित्रण में अनेक अन्तर्विरोध दिखाई देते है। एक और स्थानीय अधिकारीगण अत्याचारी व रिश्वत खोर होने के कारण निंदनीय है। गांव में उच्च वर्ग व निम्न वर्ग में भी भेदभाव था। नंदबाबा के घर में कृष्ण का लालन–पालन बड़ी खुशहाली में हुआ। बचपन में उनका पालना चंदन का था और स्वर्ण मण्डित था। जिसमें रेशमी झालर लगी थी। वे मोतियों, लाल और फिरोजे से गुँथे थे। जब कृष्ण युवा हुए तो उनके पहनने के कपड़े रेशमी थे, जिसमें जरी के धागे थे। (सूर 656, 666, 702) कृष्ण बहुमूल्य आभूषणों से सुसज्जित रहते थे। उनके गले, नाक, हाथ–पैरों पर आभूषण उसी प्रकार सुशोभित रहते थे जो उच्चवर्गीय बच्चों द्वारा पहनने की प्रथा थी। यह सच है कि कृष्ण ग्वाल–बालों के बच्चों से समानता के स्तर पर मेल मिलाप रखते थे और उनके साथ पशुओं को चराने जाते थे, किन्तु उनके जीवन स्तर के अन्तर को किसी प्रकार मिटाया नहीं जा सकता। कृष्ण कलेवे (सवेरे के नाश्ते) पर अपना प्रिय व्यंजन मक्खन और रोटी नहीं खाते वरन् उसमें सुखे मेवे, बादाम, किशमिश आदि तथा अन्य प्रकार की मिठाइयाँ और फल भी होते थे और अन्त में वे पान चबाते थे।

इन्द्र देवता की पूजा के उपलक्ष्य में सभी अहीर अर्थात ब्रज में रहने वाले निवासियों, जो नंद के टोले (नस्ल) के थे, ज्यौनार में बुलाया गया। (1510, 18) इस प्रकार के ज्यौनार (दावतें) किसी एक व्यक्ति द्वारा अपना स्थान उँच्चा दिखाने के लिए दी जाती थी। सूरदास इसी तत्त्व की पुष्टि करने के लिए कहते है कि वहाँ ज्यौनार में (1700) प्रकार के भोजन पकाए गए और प्रत्येक अतिथि को खाना परोसा गया। (सूर 1014, 1526, 1517)

**निष्कर्ष :–** सूर ने समयुगीन यथार्थ के अनुकूल की सूर सागर में गाँव और शहरों के आपसी सम्बंधों के दर्शाया है। ऐतिहासिक स्त्रोतों से ज्ञात होता है कि मुगल काल में मुगल बादशाहों के द्वारा उतरी भारत में राजनीतिक समीकरण के कारण व्यापार तेजी से बढ़ रहा था। यह भी सही है कि ग्रामीण जीवन के चितेरे सूरदास ने मनुष्य को भगवान के समीप पहुँचा दिया। इससे यह भी प्रतीत होता है के जिन भोजन और वस्त्रों का सूरदास ने वर्णन किया वह साधारण किसानों जिनका जीवन कष्टप्रद और अभावों में दुखी है मेल नहीं खाता। ब्रज के चरागाहों में रहने वाले ग्वालों एंव स्वामियों के जीवन में काफी भेदभाव है। उच्च वर्ग के लोगों का जीवन रोमांचकारी था। सामान्य लोगो से भिन्न उनके दरवाजों पर नौबत बजती थी अपना क्षोभ व्यक्त करते हुए सूर कहते है :– हट अन्याय अधर्म सूर नित नौबत द्वार (सूर 14) एक सच्चे भक्त के लिए कृष्ण भक्ति में कृष्णमय होकर जीना ही मुक्ति का सर्वोत्तम साधन है। ब्रज का प्रदेश सूर का काल्पनिक कृष्ण–राज्य है। जहाँ गोप गोपिकाओं के माधुर्य प्रेम का वर्णन हुआ है। साथ ही किसानों के अभाव मय जीवन और शोषण का भी चित्र खींचा गया है।

**संदर्भ-सूची**


1. सूरदास
2. सुरसरावली
3. साहित्य लहरी

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 20-26
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020

**सोनू शुक्ला**
शोध छात्र, (शिक्षाशास्त्र)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ.प्र.) 210204

**सार**

शिक्षा, जो मानव विकास का एक महत्वपूर्ण आधार है जिसमें समाज की मानसिकता को बदलने की ताकत विद्यमान होती है। वह दिव्यांगों को सशक्त ही नहीं बनाती बल्कि उनके लिए एक ऐसे समाज का निर्माण करती है, जिसमें समावेशी, संवेदनशील और सुलभ शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था विद्यमान हो। इस दृष्टि से श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा एक महत्वपूर्ण शैक्षिक और सामाजिक विषय है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के सामने शिक्षा प्राप्त करते समय मुख्य चुनौती उनकी सीखने की क्षमता नहीं, बल्कि संचार और भाषा तक समान पहुँच की होती है। यदि शिक्षण मौखिक रूप से ही किया जाता है और विद्यार्थी उसे सुन या समझ नहीं पाता, तो वह कक्षा में उपस्थित होते हुए भी वास्तविक शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से बाहर रह सकता है।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (NEP–2020) ने शिक्षा में समानता और समावेशन को विशेष महत्व दिया है। नीति में दिव्यांग विद्यार्थियों को मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ने तथा उनकी आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण–सुविधाएँ उपलब्ध कराने पर बल दिया गया है। विशेष रूप से श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language—ISL) के विकास, शैक्षिक सामग्री, शिक्षक–प्रशिक्षण तथा सहायक तकनीक के उपयोग को महत्व दिया गया है। प्रस्तुत शोध–पत्र में श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं, सहायक उपकरणों, नवीन तकनीकों और NEP–2020 के प्रावधानों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि नीतिगत स्तर पर महत्वपूर्ण प्रयास हुए हैं, किंतु प्रशिक्षित शिक्षकों, सुलभ शिक्षण–सामग्री, तकनीकी सुविधाओं और प्रभावी क्रियान्वयन से जुड़ी चुनौतियाँ अभी बनी हुई हैं। अतः नीति और व्यवहार के बीच की दूरी को कम करने के लिए समावेशी शिक्षण, तकनीकी सहायता और प्रभावी शिक्षक–प्रशिक्षण को मजबूत करना आवश्यक है।

**मुख्य शब्दावली:** श्रवण दिव्यांग विद्यार्थी, समावेशी शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020, भारतीय सांकेतिक भाषा (ISL), सहायक तकनीक, शिक्षक–प्रशिक्षण, सुलभ शिक्षण–सामग्री, शैक्षिक समानता।

## 1. प्रस्तावना

शिक्षा प्रत्येक बच्चे का बुनियादी अधिकार है और उसके बौद्धिक, सामाजिक तथा व्यावसायिक विकास का महत्वपूर्ण आधार है। शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य केवल विद्यालय में प्रवेश देना नहीं, बल्कि प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी क्षमता और आवश्यकता के अनुसार समान एवं गुणवत्तापूर्ण सीखने के अवसर प्रदान करना है।

श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों को सामान्य विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करते समय मुख्यतः भाषा, संचार और शिक्षण–सामग्री से संबंधित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यदि शिक्षण मुख्य रूप से मौखिक माध्यम से होता है, तो वे शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में पूर्ण रूप से सहभागी नहीं हो पाते। इसलिए इनके लिए भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language—ISL), दृश्य एवं लिखित सामग्री, सहायक उपकरण तथा आधुनिक तकनीक आधारित शिक्षण–सुविधाएँ आवश्यक हैं।

भारत सरकार द्वारा वर्ष 2020 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (NEP–2020) लागू की गई, जिसमें सभी विद्यार्थियों के लिए समान, समावेशी और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर बल दिया गया है। दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षण–सुविधाओं, सहायक तकनीक और सुलभ शैक्षिक सामग्री की व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया गया है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के संदर्भ में भारतीय सांकेतिक भाषा के विकास और शैक्षिक उपयोग को भी महत्व दिया गया है **(भारत सरकार, 2016)**।

प्रस्तुत शोध–पत्र में NEP–2020 के संदर्भ में श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं, भारतीय सांकेतिक भाषा, सहायक उपकरणों, आधुनिक तकनीक तथा शिक्षक–प्रशिक्षण का विश्लेषण किया गया है। साथ ही, नीति के प्रभावी क्रियान्वयन में आने वाली प्रमुख चुनौतियों और उन्हें दूर करने के संभावित उपायों पर विचार किया गया है।

## 2. श्रवण दिव्यांगता और शिक्षा की अवधारणा

श्रवण दिव्यांगता को सामान्यतः सुनने की क्षमता में कमी या बाधा के रूप में समझा जाता है। शैक्षिक दृष्टि से इसे केवल चिकित्सकीय स्थिति न मानकर विद्यार्थी की भाषा, संचार, कक्षा में सहभागिता तथा शिक्षण–सामग्री तक पहुँच से जोड़कर समझना आवश्यक है। प्रत्येक श्रवण दिव्यांग विद्यार्थी की आवश्यकताएँ समान नहीं होतीं। कुछ विद्यार्थी hearing aids एवं अन्य सहायक उपकरणों का उपयोग करते हैं, जबकि कुछ के लिए Indian Sign Language अधिक प्रभावी संचार माध्यम हो सकती है। अतः शिक्षा व्यवस्था को विद्यार्थी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप लचीला और समावेशी होना चाहिए।

दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 में शिक्षा से संबंधित प्रावधान किए गए हैं। इसकी धारा 16 में शैक्षणिक संस्थानों के कर्तव्यों तथा धारा 17 में समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के उपायों का उल्लेख है। इस प्रकार श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा को अधिकार–आधारित, समावेशी और विद्यार्थी–केंद्रित दृष्टिकोण से समझना आवश्यक है **(भारत सरकार, 2016)**।

## 3. भारत में श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताएँ

श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा में प्रमुख चुनौती उनकी सीखने की क्षमता से अधिक शिक्षण–सामग्री, संचार तथा सूचना तक पहुँच से संबंधित होती है। यदि शिक्षक केवल मौखिक रूप से शिक्षण करता है और विद्यार्थी सुनने में कठिनाई के कारण उसे ठीक से समझ नहीं पाता, तो पाठ्यवस्तु तक उसकी पहुँच प्रभावित होती है। इसी प्रकार, ऑनलाइन शिक्षण सामग्री में कैप्शन या सांकेतिक भाषा उपलब्ध न होने पर डिजिटल शिक्षा भी उनके लिए पूर्णतः सुलभ नहीं रह जाती। UNESCO dh State of the Education Report for India 2019: Children with Disabilities में भी दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा में ICT के उपयोग, शिक्षक–प्रशिक्षण, पर्याप्त वित्तीय संसाधनों तथा समावेशी शिक्षण–पद्धतियों की आवश्यकता पर बल दिया गया है (UNESCO, 2019)।

अतः श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित सुविधाएँ आवश्यक हैं–

- भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language)
- लिखित एवं दृश्य शिक्षण सामग्री
- कैप्शन युक्त शैक्षिक वीडियो
- प्रशिक्षित एवं संवेदनशील शिक्षक
- आवश्यकता के अनुसार सांकेतिक भाषा दुभाषिया (Interpreter)
- सहायक उपकरण (Assistive Devices)
- सुलभ डिजिटल शिक्षण सामग्री (Accessible Digital Content)

- उपयुक्त एवं लचीली मूल्यांकन व्यवस्था
- सहपाठियों के साथ समान सहभागिता एवं समावेशी वातावरण

इन सुविधाओं के माध्यम से श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों को शिक्षा में समान अवसर प्रदान करने तथा उनकी प्रभावी सहभागिता सुनिश्चित करने में सहायता मिलती है **(भारत सरकार, 2020)**।

## 4. NEP–2020 में श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए प्रावधान

### 4.1 भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language) को बढ़ावा

NEP–2020 में बधिर विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए भारतीय सांकेतिक भाषा (ISL) के उपयोग और विकास को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। नीति में भारतीय सांकेतिक भाषा के लिए मानकीकृत पाठ्यक्रम एवं शिक्षण–सामग्री विकसित करने की बात कही गई है, जिससे श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षा अधिक सुलभ और प्रभावी बनाई जा सके।

### 4.2 समावेशी शिक्षा (Inclusive Education)

NEP–2020 में दिव्यांग विद्यार्थियों को समान शैक्षिक अवसर प्रदान करने तथा उन्हें समावेशी शिक्षा व्यवस्था का हिस्सा बनाने पर बल दिया गया है। इसके लिए विद्यालयों में आवश्यक संसाधन, सहायक उपकरण, विशेष शिक्षकों तथा अन्य आवश्यक सहायता उपलब्ध कराने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। इसका उद्देश्य दिव्यांग विद्यार्थियों की सामान्य विद्यार्थियों के साथ समान सहभागिता सुनिश्चित करना है।

### 4.3 शिक्षक प्रशिक्षण

NEP–2020 में शिक्षकों के निरंतर व्यावसायिक विकास और प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया गया है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के प्रभावी शिक्षण के लिए शिक्षकों को भारतीय सांकेतिक भाषा, समावेशी शिक्षण–पद्धतियों तथा सहायक तकनीकों के उपयोग का प्रशिक्षण देना महत्वपूर्ण है। इससे शिक्षक विद्यार्थियों की विविध शैक्षिक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा कर सकेंगे।

### 4.4 मातृभाषा एवं भाषा–अनुकूल प्रारंभिक शिक्षा

NEP–2020 में जहाँ तक संभव हो, कम–से–कम कक्षा 5 तक तथा आवश्यकता और संभवता के अनुसार कक्षा 8 तक बच्चों की मातृभाषा, स्थानीय भाषा या क्षेत्रीय भाषा को शिक्षण के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है। साथ ही, बच्चों की भाषा और शिक्षण के माध्यम के बीच उत्पन्न अंतर को कम करने तथा द्विभाषी शिक्षण–सामग्री के उपयोग को प्रोत्साहित किया गया है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के संदर्भ में भाषा–अनुकूल शिक्षण, दृश्य सामग्री तथा भारतीय सांकेतिक भाषा जैसे माध्यमों का उपयोग उनकी समझ और शैक्षिक सहभागिता को अधिक प्रभावी बनाने में सहायक हो सकता है।

### 4.5 डिजिटल शिक्षा और सहायक तकनीक

NEP–2020 में शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल तकनीक और ICT के उपयोग को बढ़ावा दिया गया है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए कैप्शन युक्त वीडियो, लिखित एवं दृश्य सामग्री, डिजिटल पाठ्य–सामग्री तथा अन्य सहायक तकनीकों का उपयोग शिक्षण को अधिक सुलभ बना सकता है। इस प्रकार डिजिटल शिक्षा और सहायक तकनीक श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया और शैक्षिक सहभागिता को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं **(भारत सरकार, 2020)**।

## 5. NEP–2020 में भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language) का स्थान

श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा के संदर्भ में भारतीय सांकेतिक भाषा (Indian Sign Language–ISL) का महत्वपूर्ण स्थान है। NEP–2020 में भारतीय सांकेतिक भाषा के विकास और शैक्षिक उपयोग को बढ़ावा देने पर विशेष बल दिया गया है। नीति में भारतीय सांकेतिक भाषा के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण शिक्षण–सामग्री एवं पाठ्यक्रम विकसित करने की दिशा में प्रयासों का उल्लेख किया गया है। इसके अंतर्गत NIOS द्वारा माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए विभिन्न विषयों में ISL आधारित वीडियो सामग्री विकसित करने तथा PM e–VIDYA के माध्यम से ISL कार्यक्रमों के प्रसारण की पहल की गई है। इससे श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षण–सामग्री तक पहुँच को अधिक सुलभ बनाने में सहायता मिलती है। इस प्रकार, ISL को केवल संचार के साधन के रूप में नहीं, बल्कि श्रवण

दिव्यांग विद्यार्थियों की शैक्षिक पहुँच, सहभागिता और समावेशिता को बढ़ाने वाले महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में देखा जा सकता है **(भारत सरकार, 2020)**।

**6. श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए आवश्यक सहायक उपकरण**

श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए उन्हें समय पर उपयुक्त सहायक उपकरण (Assistive Devices) उपलब्ध कराना आवश्यक है। इन उपकरणों के माध्यम से विद्यार्थियों को शिक्षण, संचार और सूचना तक पहुँचने में सहायता मिलती है। वर्तमान समय में सहायक श्रवण तकनीक के क्षेत्र में निरंतर विकास हो रहा है। इसके बावजूद इन उपकरणों की उपलब्धता, लागत, रखरखाव तथा ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँच जैसी अनेक चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं।

**6.1 आवश्यक उपकरण एवं सुविधाएँ**

• **श्रवण यंत्र (Hearing Aid)—** BTE (Behind–the–Ear), ITE (In–the–Ear) तथा Open–Fit जैसे श्रवण यंत्र ध्वनि को बढ़ाकर सुनने में सहायता करते हैं **(Apollo Hospitals, 2023)**।

• **कॉक्लियर इम्प्लांट (Cochlear Implant)–** जिन बच्चों को हियरिंग एड से पर्याप्त लाभ नहीं मिलता, उनके लिए चिकित्सकीय प्रक्रिया द्वारा लगाया जाने वाला कॉक्लियर इम्प्लांट उपयोगी हो सकता है (Care Hospitals, n.d.; MSD Manual Consumer Version, 2026)।

• **एफ.एम. सिस्टम/साउंडफील्ड सिस्टम –** ये उपकरण शिक्षक की आवाज को विद्यार्थी तक अधिक स्पष्ट रूप से पहुँचाने में सहायता करते हैं, जिससे शोर युक्त कक्षा में भी सुनने में सुविधा होती है।

• **दृश्य एवं कंपन आधारित संकेत उपकरण –** कंपन करने वाली घड़ी या अलार्म तथा प्रकाश संकेत देने वाली घंटी जैसे उपकरण ध्वनि के स्थान पर स्पर्श या दृश्य संकेत प्रदान करते हैं।

• **कैप्शनिंग एवं उपशीर्षक (Captioning/Subtitles)–** शैक्षिक वीडियो और ऑनलाइन कक्षाओं में लिखित उपशीर्षक विद्यार्थियों को शिक्षण सामग्री समझने में सहायता करते हैं।

• **संकेत भाषा दुभाषिया (Sign Language Interpreter)–** कक्षा शिक्षण तथा परीक्षा के दौरान आवश्यकता के अनुसार संकेत भाषा दुभाषिया उपलब्ध कराया जाना उपयोगी है।

• **टेक्स्ट–टू–स्पीच एवं स्पीच–टू–टेक्स्ट ऐप –** ये तकनीकें लिखित पाठ को आवाज में तथा बोली गई बात को लिखित रूप में परिवर्तित करने में सहायता करती हैं।

**6.2 वर्तमान में उपलब्ध नई तकनीक**

हाल के वर्षों में सहायक श्रवण तकनीक के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। डिजिटल, रिचार्जेबल तथा ब्लूटूथ–सक्षम हियरिंग एड उपलब्ध हैं, जिन्हें मोबाइल फोन और अन्य डिजिटल उपकरणों से जोड़ा जा सकता है **(Apollo Hospitals, 2023)**। कॉक्लियर इम्प्लांट तकनीक में भी निरंतर विकास हो रहा है **(Cochlear Limited, 2026)**। इसके अतिरिक्त, मोबाइल ऐप–आधारित सुनने की सहायता, स्वचालित उपशीर्षक (Auto–Captioning) तथा अन्य डिजिटल सुविधाएँ श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को अधिक सुलभ बनाने में सहायक हो रही हैं।

**6.3 वर्तमान में विद्यमान कमियाँ**

तकनीकी प्रगति के बावजूद श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों तक सहायक उपकरणों की पहुँच में अभी भी अनेक चुनौतियाँ बनी हुई हैं–

• **उच्च लागत –** आधुनिक डिजिटल हियरिंग एड और कॉक्लियर इम्प्लांट की लागत अधिक होने के कारण सभी परिवार इन्हें आसानी से वहन नहीं कर पाते हैं।

• **सरकारी सहायता की सीमाएँ –** सरकारी योजनाओं के अंतर्गत उपलब्ध सहायता कई बार आधुनिक उपकरणों की वास्तविक लागत को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती है (Department of Empowerment of Persons with Disabilities, 2024)।

• **ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित उपलब्धता –** गाँवों और छोटे शहरों में उपकरणों की उपलब्धता तथा उनकी फिटिंग और कैलिब्रेशन के लिए प्रशिक्षित विशेषज्ञों की कमी रहती है।

• **विद्यालयों में एफ.एम./साउंडफील्ड सिस्टम का अभाव –** अनेक सामान्य विद्यालयों में अभी भी कक्षा–आधारित श्रवण सहायता प्रणालियाँ पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हैं।

• **रखरखाव एवं मरम्मत की समस्या** – बैटरी, मरम्मत तथा नियमित जाँच जैसी सेवाएँ विशेष रूप से दूर–दराज के क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध नहीं होती हैं।

• **जागरूकता की कमी** – अनेक अभिभावकों को सरकारी योजनाओं के अंतर्गत उपलब्ध सहायक उपकरणों और सहायता सुविधाओं की पर्याप्त जानकारी नहीं होती है (Department of Empowerment of Persons with Disabilities, 2024)।

**7. समावेशी शिक्षा में शिक्षक की भूमिका**

समावेशी शिक्षा की सफलता में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षक के पास केवल विषय का ज्ञान होना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसे प्रभावी संचार रणनीतियों (Communication Strategies), दृश्य शिक्षण विधियों (Visual Teaching Methods) तथा सुलभ शिक्षण–सामग्री (Accessible Learning Material) की भी जानकारी होनी चाहिए **(भारत सरकार, 2020)**।

NEP–2020 में शिक्षक शिक्षा के अंतर्गत दिव्यांग विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए आवश्यक क्षमताओं के विकास पर बल दिया गया है। इसी प्रकार, ISLRTC द्वारा बधिर व्यक्तियों को भारतीय सांकेतिक भाषा के शिक्षण और व्याख्या (Interpretation) के क्षेत्र में प्रशिक्षित करने के लिए DTISL कार्यक्रम संचालित किया जाता है (ISLRTC, n.d.)।

श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षकों में निम्नलिखित क्षमताएँ उपयोगी हैं–

• भारतीय सांकेतिक भाषा (ISL) की आधारभूत समझ

• दृश्य शिक्षण–पद्धति (Visual Pedagogy) का ज्ञान

• कैप्शन आधारित शिक्षण (Caption&based Teaching)

• सुलभ डिजिटल शिक्षण–सामग्री का उपयोग

• विद्यार्थियों की व्यक्तिगत सीखने की आवश्यकताओं की पहचान

• समावेशी कक्षा प्रबंधन (Inclusive Classroom Management)

• मूल्यांकन में आवश्यक अनुकूलन (Assessment Accommodation) की जानकारी

इसलिए शिक्षक–प्रशिक्षण को केवल सैद्धांतिक ज्ञान तक सीमित न रखकर व्यावहारिक, कौशल–आधारित और समावेशी बनाया जाना आवश्यक है।

**8. जमीनी स्तर पर आने वाली अन्य चुनौतियाँ**

• **प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी** – भारतीय सांकेतिक भाषा का ज्ञान रखने वाले प्रशिक्षित शिक्षक अभी भी सीमित संख्या में विद्यालयों में उपलब्ध हैं।

• **ग्रामीण–शहरी असमानता** – ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे शहरों में विशेष शिक्षा, सहायक उपकरण तथा विशेषज्ञ सेवाओं की उपलब्धता अपेक्षाकृत सीमित है।

• **सामाजिक भेदभाव** – श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों को कई बार सामाजिक पूर्वाग्रह, भेदभाव और असमान व्यवहार का सामना करना पड़ता है।

• **नीति और क्रियान्वयन के बीच अंतर** – नीतिगत स्तर पर विभिन्न प्रावधान उपलब्ध होने के बावजूद उनका प्रभावी क्रियान्वयन सभी विद्यालयों तक समान रूप से नहीं पहुँच पाया है।

(भारत सरकार, 2020; Department of Empowerment of Persons with Disabilities, 2024)

**9. सुझाव**

• प्रत्येक जिले में पर्याप्त संख्या में शिक्षकों को भारतीय सांकेतिक भाषा में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

• सरकारी विद्यालयों में एफ.एम./साउंडफील्ड सिस्टम तथा आवश्यक आधुनिक श्रवण उपकरण निःशुल्क या सस्ती दर पर उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

• ADIP जैसी योजनाओं के अंतर्गत उपलब्ध सहायता को समय–समय पर वर्तमान उपकरणों की लागत के अनुरूप संशोधित किया जाना चाहिए।

• ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल ऑडियोलॉजी शिविर तथा उपकरणों की मरम्मत एवं रखरखाव के लिए केंद्र नियमित रूप से संचालित किए जाने चाहिए।

• अभिभावकों और समाज में सरकारी योजनाओं, सहायक उपकरणों तथा श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के शैक्षिक अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाई जानी चाहिए।

• सरकारी एवं निजी संस्थानों के सहयोग से श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए स्थानीय भाषाओं तथा भारतीय सांकेतिक भाषा में गुणवत्तापूर्ण शिक्षण–सामग्री विकसित की जानी चाहिए।

• नीतियों और योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए नियमित निगरानी एवं मूल्यांकन (Monitoring and Evaluation) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

## 10. निष्कर्ष

NEP–2020 ने श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा के संबंध में एक सकारात्मक दिशा प्रस्तुत की है, विशेष रूप से भारतीय सांकेतिक भाषा को बढ़ावा देने और समावेशी शिक्षा को प्रोत्साहित करने के संदर्भ में। साथ ही, तकनीकी क्षेत्र में हुई प्रगति, जैसे स्मार्ट कॉक्लियर इम्प्लांट और डिजिटल हियरिंग एड, इन विद्यार्थियों के लिए नई संभावनाएँ प्रस्तुत कर रही है। हालांकि, नीति की वास्तविक सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि इसका विद्यालय स्तर पर कितनी प्रभावशीलता और पर्याप्त संसाधनों के साथ क्रियान्वयन किया जाता है। शिक्षक–प्रशिक्षण, सुलभ एवं किफायती सहायक तकनीक तथा समाज की सोच में सकारात्मक बदलाव–ये तीनों मिलकर श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए समान शैक्षिक अवसर, प्रभावी सहभागिता और आत्मनिर्भर भविष्य सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

## संदर्भ सूची (References)


1. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय। (2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (National Education Policy 2020). भारत सरकार। https://www.education.gov.in
2. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय। (2022)। Two Years of NEP 2020: Implementation and Achievements.भारत सरकार। https://dsel.education.gov.in/sites/default/files/2022-11/Nep_2020.pdf
3. भारत सरकार। (2016)। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 (The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016). भारत सरकार।
4. Department of Empowerment of Persons with Disabilities.(n.d.). Rights of Persons with Disabilities Act, 2016. Government of India. https://depwd.gov.in
5. Indian Sign Language Research and Training Centre. (n.d.). Diploma in Teaching Indian Sign Language (DTISL). Government of India. https://islrtc.nic.in/dtisl/
6. Department of Empowerment of Persons with Disabilities. (2024). Scheme of Assistance to Persons with Disabilities for Purchase/Fitting of Aids/Appliances (ADIP Scheme). Government of India. https://depwd.gov.in/en/adip-scheme/
7. Department of Empowerment of Persons with Disabilities. (2024). Comprehensive List of Aids and Assistive Devices under ADIP Scheme. Government of India. https://depwd.gov.in/en/adip/
8. Apollo Hospitals.(2023). श्रवण यंत्रों में तकनीकी विकास. https://www.apollohospitals.com/hi/health&library/technological-development&in-hearing-aids
9. Care Hospitals. (n.d.). हैदराबाद में बहरापन का इलाज: श्रवण बाधित सर्जरी. https://www.carehospitals.com/hi/treatment/impaired-hearing
10. MSD Manual Consumer Version. (2026). त्वरित तथ्य: श्रवण क्षमता की क्षति का इलाज. https://www.msdmanuals.com/hi/home/quick-facts-ear-nose-and-throat-disorders/hearing-loss-and-deafness/treatment-of-hearing-loss
11. Cochlear Limited. (2026, March 2). इस विश्व श्रवण दिवस पर कॉक्लियर भारत में स्मार्ट हियरिंग इम्प्लांट प्रणाली लेकर आया. PR Newswire. https://www.prnewswire.com/in/news-releases/

12. Composite Regional Centre, Imphal. (n.d.). ADIP योजना https://crcimphal.nic.in/hi/योजनाएं/
13. Drishti IAS. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020: क्रियान्वयन योजना. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-editorials/implementation-plan-to-help-nep-2020-work
14. Drishti IAS. (2020b). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत पहल. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-news-analysis/initiatives-under-national-education-policy-2020
15. Drishti IAS. (2020c). राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-news-analysis/national-education-policy-2020
16. MP GK. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020). https://www.mpgkpdf.com/2020/07/2020-i-new-education-policy-2020.html
17. Rajasthan Exam. (2024). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP): PDF, उद्देश्य, सिद्धांत, नियम, गुण और दोष. https://www.rajasthanexam.org/national-education-policy-2020-in-hindi/
18. शैक्षिक उन्मेष। (2020)। नई शिक्षा नीति–2020. https://sites.google.com/view/shaikshikunmesh-khs/
19. विकलांगता डॉट कॉम। (2023)। ADIP योजना: विकलांगजन हेतु सहायक उपकरण की ख़रीद. https://viklangta.com/adip-scheme-hindi/
20. UNESCO. (2019). N for Nose: State of the Education Report for India 2019: Children with Disabilities. UNESCO New Delhi.

**ईमेलः** sonushukla78642@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 27-32
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# प्रमुख भारतीय सूफी कवि : प्रेम कथानकों की परम्परा और दर्शन

**सुमित उपाध्याय**
शोध छात्र, हिंदी
महाराजा सुहेल देव विश्वविद्यालय, आज़मगढ़

**बीज शब्द – भारतीय सूफी, सूफीवाद, रहस्यवाद, अद्वैतवाद, सूफी काव्य, प्रेम कथानक**

**सार-** हिंदुस्तान बहुत सी संस्कृतियों का मिलन बिंदु है। संसार की अनेक कलाएं, साहित्य कब यहां परम्परा बन जाती हैं, इसकी मिटटी में समा जाती हैं, पता ही नहीं चलता। सूफी साहित्य भी इसका एक बहुत बड़ा प्रमाण है। जिस समय इस्लाम भारत आया वो महावीर स्वामी और बुद्ध का काल था। ब्राह्मणवाद के अत्याचार से त्रस्त हो एक बड़ी जनसंख्या ने बुद्ध की नीतियों का स्वागत किया था। पर बाद में सिद्धों, जो हीनयानी ही थे और नाथों के वाममार्गी साधना पद्धति से लोगों की रूचि कम होने लगी। सिद्ध और नाथ साहित्य एक बड़ी मात्रा में लिखा गया और इसने पूर्वी हिंदी के साहित्य पर अपना प्रभाव भी डाला। इन साहित्यों में करामातों, चमत्कारों का उल्लेख था। इस्लामी रहस्यवाद के साधकों ने इस क्षेत्र में फैली बहुत सी लोक कथाओं का इस्तेमाल कर साहित्य निर्माण शुरू किया। और इससे सूफी साहित्य के प्रेमाख्यानों की ऐसी नयी परंपरा चल पड़ी जिसने न केवल साहित्य बल्कि दर्शन और भक्ति आन्दोलन के लिए भी एक बड़ी ज़मीन तैयार कर दी।

डॉ रामधारी सिंह दिनकर अपने ग्रन्थ " संस्कृति के चार अध्याय" की भूमिका में भारतीय संस्कृति में चार क्रांतियों का वर्णन करते हैं। इसमें पहली क्रांति आर्यों का भारत आना, दूसरी क्रांति महावीर और बुद्ध द्वारा धर्म की स्थापना, तीसरी क्रांति इस्लाम का प्रवेश और चौथी क्रांति अंग्रेजो का आगमन है।

**"लगभग दो वर्षों के अध्ययन के पश्चात् मेरे मामने यह सत्य उद्भाषित हो उठा कि भारतीय संस्कृति मे चार बडी क्रान्तियाँ हुई है और हमारी संस्कृति का इतिहास उन्हीं चार क्रान्तियों का इतिहास है। पहली क्रांति तब हुई, जब आर्य भारतवर्ष में आये अथवा जब भारतवर्ष मे उनका आर्येतर जातियों से सम्पर्क हुआ। आर्यों ने आर्येतर जातियों से मिलकर जिम समाज की रचना की वही आर्यों अथवा हिन्दुओ का बुनियादी समाज हुआ और आर्य तथा आर्येतर सस्कृतियों के मिलन से जो संस्कृति उत्पन्न हुई, वही भारत की बुनियादी**

**संस्कृति बनो। इस बुनियादी भारतीय संस्कृति के लगभग आधे उपकरण आर्यो के दिये हुए हे और उसका दूसरा आधा आर्येतर जातियों का अंशदान है।**

**दूसरी क्रान्ति तब हुई, जब महावीर और गौतम बुद्ध ने इस स्थापित धर्म या संस्कृति के विरुद्ध विद्रोह किया तथा उपनिषदो की चिन्ताधारा को खीच कर वे अपने मनोवांछित दिशा की ओर ले गये। इस क्रान्ति ने भारतीय संस्कृति की अपूर्व सेवा की...।"**[1]

तीसरी क्रांति के सन्दर्भ में विचार करते हुए दिनकर जी इस्लाम के आधार, दर्शन और उसके योगदान पर प्रकाश डालते हैं।

**" तीसरी क्रान्ति उरा समय हुई, जब इस्लाम, विजेताओं के धर्म के रूप में, भारत पहुंचा और इस देश में हिन्दुत्व के साथ उसका सम्पर्क हुआ।"**[2]

इस्लाम धर्म आक्रान्ता के रूप में भारत आने से पूर्व भी भारत से, इसकी संस्कृति से परिचित था।

इस्लाम के उदय के बाद भी भारतीय विद्या खलीफा मनसूर के समय (हिजरी 154, ईसवी सन् 701) में अरब में प्रचलित थी, इसका प्रमाण मिलता है। खलीफा हारून रशीद ने अपनी चिकित्सा के लिए भारत से वैद्य बुलवाया था जिसने अरब में वैद्यक शास्त्र की धाक जमा दी थी। भारत की विद्या के लिए अरबों में कितना अधिक आदर भाव उत्पन्न हुआ था, इस विषय में मौलाना नदवी ने तीन अरब लेखकों के प्रमाण दिये है। इनमे पहला बसरे का निवासी जाहिब है, जिसकी मृत्यु सन् 255 हिजरी में हुई थी। इसने लिखा है कि "**भारतवासी ज्योतिष और गणित में बहुत बढ़े हुए है और उनकी एक विशेष लिपि है। चिकित्सा-शास्त्र में भी वे आगे हैं और वे इसके कई विलक्षण भेद जानते है। उनके पास बड़े-बड़े रोगों की विशेष औषधियाँ होती है। मूर्तियाँ बनाने, रंगों से चित्र बनाने और भवन-निर्माण-कला में वे बहुत चतुर है। शतरंज का खेल उन्ही का निकाला हुआ है। वे तलवारें बहुत अच्छी बनाते है और उनके चलाने के करतब जानते हैं। उनका संगीत भी बहुत मनोहर है। उनके यहाँ सब प्रकार का नाच भी है। उनके यहाँ अनेक प्रकार की लिपियाँ है और कविता का भी भंडार है। दर्शन, साहित्य और नीतिशास्त्र भी उनके पास हैं। उनमें विचार और वीरता भी है और कई ऐसे गुण है जो चीनियों में भी नहीं हैं। उनमें स्वच्छता और पवित्रता के भी गुण हैं। उनके पास सुन्दरताई, सुघराई, लावण्य और सुगन्धि भी है। विचार और चिन्तन की विद्या भी उन्हीं के पास से आयी है। वे ऐसे मंत्र जानते हैं, जिनके पढ देने से विष उतर जाता है।" इत्यादि।"**[3]

इस्लामी आक्रमणकारियों से पूर्व भी ईरान, मिस्र से साहित्य, उद्योग सम्बन्धी व्यापार भारत से होते थे। ऐसे में इस्लामी साधक हिंदुस्तान में व्याप्त धार्मिक नीतियों, सिद्धांतों से भी परिचित रहे होंगे। इस्लाम जब भारत आया तो उसका सामना सिद्धों और नाथों की साधना पद्धति से हुआ। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस मध्ययुग को करामातों का युग कहते हैं। " **मध्ययुग बहुत कुछ करामातों का युग था। उस युग के प्रत्येक साधु-संत के नाम पर दो-चार करामाती किस्से मिल ही जाते हैं। इन करामातों और उनकी ख्याति से लोग परस्पर एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। दोनों ज्यों-ज्यों निकट आते गए त्यों-त्यों अधिकाधिक अनुभव करते गए कि दोनों में तात्त्विक मतभेद बहुत कम है। कबीर आदि संतों ने इस बात पर बहुत जोर दिया। इन्होंने हिंदुत्व और मुसलमानत्व के बाह्य उपकरण को हटाकर उनका असली रहस्य पहचानने की चेष्टा की। मुसलमानों की ओर से यह काम प्रेम-कहानियाँ लिखकर सूफी संतों ने किया।"**[4]

इस्लाम धर्म में ईश्वर की कल्पना बहुत कठोर रूप में हुई है। मनुष्य उस परमशक्ति के सामने आँख उठाकर देखने का भी अधिकारी नहीं है। ऐसी कठोर विचारधारा में मोतज़ली संप्रदाय के साधकों ने बुद्धि और तर्क के प्रयोग के द्वारा ईश्वर का पता लगाने का प्रयास किया। अलगज़ाली इनमे सर्वश्रेष्ठ थे, इस निर्मुक्त विचारशैली से इसके संत नास्तिकता के समीप जा पहुंचे और कुछ दिनों तक इस दशा में रहने के बाद उनके भीतर रहस्यवाद जन्मा। यही मार्ग शंकराचार्य का भी था। एकेश्वरवाद से लेकर अद्वैतवाद तक की यह दार्शनिक यात्रा इस्लामी साधकों को उस के बिंदु तक ले आयी जहाँ ईश्वर से प्रेम किया जा सकता था। ऐसा नहीं है कि यह प्रेम भावना इस्लाम में एकदम नहीं थी। डॉ रामधारी सिंह दिनकर जी अपने ग्रन्थ " संस्कृति के चार अध्याय" में इसका उल्लेख करते हुए कहते हैं, "**और कुरान की ईश्वर कल्पना में चाहे जितनी भी कठोरता रही हो, किन्तु, उसमें भी, जगह-जगह, ऐसे संकेत मिलते हैं कि ईश्वर और जीव के बीच प्रेम का सम्बन्ध हो सकता है। "वह (ईश्वर) उन्हें (बन्दों को) प्यार करता है और वे उसे प्यार करते हैं ; इसीलिए, उसका एक नाम बहूद (प्रेमी) भी है।" यह कुरान का ही वचन है।"**[5]

भारत में सूफी साधकों ने लोक कथा साहित्य की एक विशाल संपदा देखी। ऐसी लोक प्रचलित कहानियों का वर्णन और उनपर रचित किसी विशेष उद्देश्यपरक रचनायें प्रचार सामग्री के रूप में प्रयुक्त होती रहीं हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "**सूफ़ी कवियों द्वारा निबद्ध प्रेम-कथानक : भारतवर्ष के सूफी कवियों ने अपने आध्यात्मिक सिद्धांतों के प्रचार के लिए इन कहानियों का उपयोग किया। यह कोई नई बात नहीं है। प्राचीन काल में भी लोक-प्रचलित कहानियों का धार्मिक तथा आध्यात्मिक उद्देश्य से प्रयोग किया गया है। महाभारत और पुराणों में, जातक कथाओं में तथा बौद्धों के अवदान - साहित्य में, जैन कवियों द्वारा लिखित चरित-काव्यों में इस पद्धति का पूरा उपयोग किया गया है। यदि सूफी कवियों ने भी इस पद्धति को अपनाया तो यह कोई नई बात नहीं थी।"**[6]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी निर्गुणधारा में सूफी साधकों को रखते हैं, अपने इतिहास ग्रन्थ "हिंदी साहित्य का इतिहास" के प्रकरण 3 का नाम उन्होंने प्रेममार्गी (सूफी ) शाखा रखा है। शुक्ल जी लिखते हैं, **" इस काल के निर्गुणोपासक भक्तों की दूसरी शाखा उन सूफी कवियों की है जिन्होंने प्रेमगाथाओं के रूप में उस प्रेमतत्त्व का वर्णन किया है जो ईश्वर को मिलानेवाला है तथा जिसका आभास लौकिक प्रेम के रूप में मिलता है।"**[7]

ये सूफी कवि शास्त्रों के बहुत बड़े जानकार तो नहीं थे। पर प्रेम का एक अद्भुत रूप इन्होने चित्रित किया। द्विवेदी जी कहते हैं, **"निर्गुण भाव के शास्त्र-निरपेक्ष साधनों की भाँति इन कवियों में भी अधिकतर शास्त्र-ज्ञान-विरहित थे, पर निस्संदेह पहुँचे हुए प्रेमी थे। इन्होंने प्रेम के जिस ऐकांतिक रूप का चित्रण किया है, वह भारतीय साहित्य में नई चीज है। प्रेम की इस पीर के सामने ये लोकाचार की कुछ परवाह नहीं करते। भारतीय काव्य-साधना में प्रेम की ऐसी उत्कट तन्मयता दुर्लभ थी। विरह का वर्णन करने में ये कवि कमाल करते हैं। ये कथा कथा के लिए नहीं कहते, इनका लक्ष्य सदा भगवत्प्राप्ति रहता है।"**[8]

अपने इसी एकाकार भावना के कारण इन सूफी साधकों ने अत्यंत संघर्ष भी किये। प्रेम और यह निर्भीकता सूफी साधना की अन्यतम उपलब्धि है। मंसूर हल्लाज जिस "अनलहक" की घोषणा की वजह से मारे गये वह "अहम् ब्रह्मास्मि" के रूप में वेदांत दर्शन में उपलब्ध था। परन्तु प्रेम को आधार बना सिद्धान्तों और रहस्य के गूढ़ मतों का विधान कर रची गयी रचनायें जनता के हृदय के करीब जा पहुंची।

यहाँ डॉ रामस्वरुप चतुर्वेदी और डॉ नगेन्द्र का एक विरोध स्वर भी सुनने योग्य है। इन विद्वानों ने काफी दृढ आधार पर यह बात रखी है की सभी प्रेमाख्यान सूफियों द्वारा रचित नहीं हैं, अतः आचार्य शुक्ल द्वारा प्रेमाख्यानों को

सूफी मार्ग मात्र से प्रभावित मानना सही नहीं है। डॉ नगेन्द्र कहते हैं, "**आचार्य शुक्ल के युग तक इस परंपरा के आठ आख्यान ही उपलब्ध हुए थे, जिनमें से छह के रचयिता मुस्लिम थे, जबकि अब इस परंपरा से संबंधित तिरपन कवियों के प्रेमाख्यान उपलब्ध हो चुके हैं, जिनमें से छत्तीस हिंदू हैं तथा आरंभिक ग्यारह कवियों में से भी आठ हिंदू हैं अतः सांप्रदायिक आधार पर भी इन्हें फ़ारसी-मसनवियों की देन बताना निरर्थक है।**"[9]
सभी प्रेमाख्यान सूफी न हों पर भारतीय सूफियों ने प्रेमपरक लोक कथाओं को ही अपना आधार बनाया यह तो स्पष्ट है। उनकी भाषा लोक प्रचलित अवधी थी।

यहाँ तक की मुल्ला दाऊद विरचित चन्द्रावती को अवधी भाषा की प्रथम रचना होने का गौरव प्राप्त है। आचार्य द्विवेदी कहते हैं, " **सूफी कवियों की लिखी हुई इन प्रेम कहानियों में बहुत कुछ साम्य है।ये सभी बा-शरा या शास्त्र सम्मत श्रेणी के थे। सबमे ईश्वर-वंदना, मुहम्मद साहब की स्तुति आदि बातें समान रूप से पाई जाती हैं। सबकी भाषा अवधी है, सबमें फारसी प्रेम गाथाओं की भांति पुरुष की आसक्ति पहले दिखायी जाती है और सबसे बड़ी बात यह की सबमे प्रस्तुत कथा के साथ अप्रस्तुत परोक्ष सत्ता की ओर इशारा किया गया है।**"[10]
प्रेम-कथानकों पर आश्रित काव्य को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तीन श्रेणियों में रखते हैं -
1. आध्यात्मिक सिद्धांतों के प्रचार के लिए लिखे गए काव्य।
2. विशुद्ध लौकिक प्रेम-काव्य।
3. अर्द्ध-ऐतिहासिक प्रेम गाथाएँ।
इस वर्गीकरण के पहले भाग अर्थात, आध्यात्मिक सिद्धांतों के प्रचार के लिए लिखे गए काव्य के अधीन सूफी काव्य और कथानक आते हैं।

हिंदी साहित्य में अवधी भाषा में लिखी प्रमुख रचनायें मुल्ला दाऊद रचित "चंदायन", कुतुबन की "मृगावती"( संवत 1558, हिजरी 909), मलिक मुहम्मद जायसी की "पद्मावत", मंझन की "मधुमालती", नूर मुहम्मद की इन्द्रावती ( संवत 1801, हिजरी 1157), कासिमशाह की हंसजवाहीर, उस्मान की चित्रावली (संवत 1613, हिजरी 1022 ), शेख निसार की युसूफ जुलेखा प्रमुख हैं।

आचार्य द्विवेदी कुछ नयी रचनाओं पर प्रकाश डालते हुए ख्वाजा अहमद की नूरजहाँ, शेख रहीम का भाषा प्रेमरस, कवि नसीर का प्रेमदर्पण (1917 ई ) सूफी प्रेमाख्यानों की इस श्रृंखला को आधुनिक काल तक छिटपुट रूप में ले आते हैं।
मृगावती नाम की कहानी कुतुबन द्वारा रचित है जिसमें चन्द्रनगर के राजा गणपतिदेव के राजकुमार और कंचनपुर के राजा रूपमुरारी की कन्या मृगावती की प्रेम कथा है। आचार्य शुक्ल लिखते हैं, **"इस कहानी के द्वारा कवि ने प्रेममार्ग के त्याग और कष्ट का निरूपण करके साधक के भगवत्प्रेम का स्वरूप दिखाया है। बीच-बीच में सूफियों की शैली पर बड़े सुंदर रहस्यमय आध्यात्मिक आभास हैं।"**[11]
यही आभास रचना के स्तर पर सभी प्रेम कथाओं की विशेषता है।
भाषा के जिस रूप का चयन सूफी कवियों ने किया और दोहों, चौपाईयों में जो अद्भुत रचनायें की उसने सम्पूर्ण साहित्य को नयी ऊँचाई दी।
लोक और अभिजात तत्वों के संयोग के प्रयोग पर ध्यान दिलाते हुए दो दोहों के बीच सत अर्धालियों की भाषिक क्षमता जायसी को अद्वितीय बना देती है।

डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं, "**उदाहरण के लिए सिंहल द्वीप में अमराई का प्रसंग लिया जा सकता है। दो दोहों के बीच सात अर्द्धालियों में कवि अमराई में बैठने वाले विविध पक्षियों का वर्णन करता है :**

***बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाखा। करहिं हुलास देखि कै साखा ॥***

***भोर होत बोलहिं चुहचूही बोलहिं पाँडुक 'एकै तूही' ॥***

**और इस क्रम को पूरा करने के बाद अंत में कहता है**

***जावत पंखी जगत के भरि बैठे अमराउँ।***

***आपनि आपनि भाषा लेहिं दई कर नाउँ।***

**इन सारे पक्षियों के ध्वनि-वैविध्य को कवि एक बिंब में ढालता है कि मानों वे सब अपनी अपनी भाषा में एक ही दैव या परम तत्व का नाम जप कर रहे हों। इस बिंब में पहुँच कर जैसे पिछले समूचे वर्णन को एक निष्पत्ति मिल जाती हो। और तब पिछले इतिवृत्त में भी कविता चुपके से परिव्याप्त हो जाती है।"**[12]

भाषा, संस्कृति और साहित्य की दो बिलकुल अलग परम्पराओं का जितने शानदार तरीके से मेल इस सूफी युग में हुआ वैसा अन्य कहीं मिलना दुर्लभ है। सूफी साधकों ने इराक, ईरान से हिंदुस्तान तक भौगोलिक यात्रा तो की ही साथ ही साथ एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक यात्रा पर भी वो अपने साधकों और उपासकों के साथ आम जन को भी ले गये। इस्लाम के कठोर एकेश्वरवाद से चल कर सात समन्दर पार करता हुआ जायसी का नायक उस यात्रा में साधना के चरणों को पार करता हुआ साधक भी है। और यही साधना सूफीवाद को प्रेम के उस विराट और अद्भुत रूप से मिलाती है जहाँ भाषा, संस्कृति सब एक हो उस परम में मिल जाता है। जायसी कहते भी हैं, इन कथाओं को जो बूझ गया वो पार हो गया।

**प्रेम कथा एहि भांति विचारहु।**
**बुझी लेउ जौ बूझै पारहू**

**संदर्भ सूची :**


1. दिनकर रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, तीसरा संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. दिनकर रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, तीसरा संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
3. दिनकर रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, तीसरा संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
4. द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद, हिंदी साहित्य की भूमिका, भक्तों की परम्परा, संस्करण 1991, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
5. दिनकर रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, तीसरा संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य उद्भव और विकास, प्रेम कथानकों का साहित्य, छठा राजकमल संस्करण , 1990, नयी दिल्ली
7. शुक्ल आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रथम संस्करण 2011, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
8. द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद, हिंदी साहित्य की भूमिका, भक्तों की परम्परा, संस्करण 1991, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
9. डॉ नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, उनतालीसवां संस्करण 2011 मयूर पेपर बैक्स, नॉएडा

10. द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद, हिंदी साहित्य की भूमिका, भक्तों की परम्परा, संस्करण 1991, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
11. शुक्ल आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रथम संस्करण 2011, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
12. चतुर्वेदी रामस्वरूप, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, बाईसवां संस्करण 2011, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद

(Gmail-sumit.upadhyay19899@gmail.com, Mob-8175800809)

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 33-37
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# "सावित्रीबाई फुले और महिला शिक्षा का संघर्ष: सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध ऐतिहासिक प्रतिरोध"

**Dr. Rashmi,**
Assistant Professor,
History Department, Hindu Kanya Mahavidyalaya Jind,

**सारांश :**
19वीं सदी में भारतीय समाज जाति और लिंग के आधार पर गहराई से विभाजित था, जिसमें ऊपरी जाति के पुरुषों को ही शिक्षा का अधिकार था और स्त्री-शिक्षा को शक तथा घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। ऐसे बेहद माहौल में सवित्रीबाई फुले ने अपने पति ज्योतिराव फुले के साथ मिलकर 1848 में पुणे के भिड़े वाडा में देश का पहला लड़कियों का स्कूल खोला, जो उस समय की पूरी सामाजिक व्यवयस्था को खुली और सीधी चुनौती थी। यह शोध पत्र प्रस्तुत करता हैं कि उनका सघर्ष केवल शिक्षा-प्रसार तक ही सीमित नहीं था बल्कि उन्होंने जमीनी स्तर पर समाज में रहकर हर अपमान और विरोध को सहते हुए लगातार काम किया, वही वैचारिक स्तर पर अपनी लेखनी के जरिए रुडिवादी लोगों की दकियानूसी सोच पर गहरे सवाल उठाते हुए, खुद को एक जागरूक विचारक के रूप में साबित किया, यही नहीं संस्थागत स्तर पर 18 से अधिक विद्यालय स्थापित करने के साथ-साथ 'शिशु-हत्या निरोधक गृह' और 'महिला सेवा मंडल' जैसी व्यवहारिक संस्थाएं खड़ी करके निंदनीय कुप्रथाओ पर जोरदार प्रहार किया। अंतत: आज के युग की आधुनिक नीतियों जैसे कि 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) 2009' और 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020' कहीं न कहीं उनकी दूरगामी सोच और उसूलों पर टिकी हुई हैं, लेकिन एक सच आज भी यहीं है कि जिस सामाजिक न्याय और बराबरी के लिए वे जीवनभर लड़ती रही, उसे पूरी तरह हासिल करना आज भी हमारा एक अधूरा लक्ष्य है।

**मुख्य बिन्दु :-** महिला शिक्षा, सामाजिक रूढ़ियाँ, सामाजिक सुधार, दलित शिक्षा, नारीवादी शिक्षाशास्त्र, जाति और लिंग।

**प्रस्तावना :-**

19वीं सदी के औपनिवेशिक भारत में शिक्षा पर लिंग और वर्ग का विशेषाधिकार था। मनु के चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) के आधार पर बने सामाजिक ढांचे ने शूद्रों को शिक्षा का कोई अधिकार नहीं दिया, और शूद्र जातियों से अलग पहचान बनाने वाले समूहों को "पाँचवाँ वर्ण" या अछूत कहा गया; मुस्लिम काल में भी ऊपरी जाति के हिंदुओं को शिक्षा की स्वतंत्रता मिलती रही, जबकि निचली जाति के लोगों को शिक्षा, संपत्ति और

मानवीय जीवन के अधिकार नहीं मिलते थे। इस व्यवस्था में स्त्री का स्थान इससे भी महत्वपूर्ण था; वह बाल विवाह, सती प्रथा, विधवा-मुंडन और शिक्षा से वंचित हो गयी थी। यही कारण है कि सावित्रीबाई फुले को भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण व्यक्तित्व माना जाता है, जो देश की पहली महिला शिक्षिका बनीं और स्त्रियों और वंचित समुदायों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया।

**सावित्रीबाई फुले: जीवन और शैक्षिक यात्रा :-**

नायगांव (अब सातारा जिला) में खांडोजी नेवसे पाटिल और लक्ष्मी की ज्येष्ठ पुत्री सावित्रीबाई का जन्म 3 जनवरी 1831 को हुआ था। 1840 में, नौ वर्ष की उम्र में उन्होंने बारह वर्ष के ज्योतिराव फुले से शादी की, जो उस समय प्रचलित बाल विवाह था। विवाह के बाद ही वे पढ़ाई करने लगे; ज्योतिराव ने पढ़ने की उनकी तीव्र इच्छा को देखते हुए स्वयं उन्हें पढ़ाया। वह एक अनपढ़ बालवधू से एक प्रामाणिक शिक्षिका और एक प्रकाशित कवि बन गई। यह उनकी आत्म-लेखन का एक स्पष्ट और निरंतर प्रयास था, जिसने उनकी सामाजिक हिस्सेदारी को नैतिक और बौद्धिक अधिकार में बदल दिया।

**महिला शिक्षा की संस्थागत नींव :-**

पुणे में 1848 में पहला लड़कियों का विद्यालय खोला गया, जो एक क्रांतिकारी कदम था क्योंकि उस समय समाज ने स्त्री-शिक्षा को शक और घृणा से देखा था। विद्यालय की शुरुआत में नौ विभिन्न जातियों की लड़कियों को शामिल किया और सावित्रीबाई ने रूढ़िवादी स्थानीय निवासियों के लगातार उत्पीड़न के बावजूद अपना मिशन निडरता से पूरा किया। 1851 तक, सावित्रीबाई और ज्योतिराव ने पुणे में 18 विद्यालय खोले, तीन लड़कियों और लगभग 150 विद्यार्थियों के साथ। उन्होंने श्रमिकों और किसानों को साक्षरता देने के लिए रात्रि-विद्यालय स्थापित किए, 1852 में स्त्रियों के अधिकारों पर केंद्रित महिला सेवा मंडल की स्थापना की, और विधवाओं के सिर मुंडन की परंपरागत प्रथा के खिलाफ नाइयों की हड़ताल तक आयोजित की। महिला सेवा मंडल ने स्त्रियों को मानव अधिकारों, सामाजिक समस्याओं और जीवन की गरिमा के बारे में शिक्षित किया, और उनके नेतृत्व में महाराष्ट्र के पुणे में विधवाओं के सिर मुंडन की क्रूर प्रथा के खिलाफ सफल नाई-हड़ताल की गई। साथ ही, उन्होंने 1853 में विधवाओं के लिए बालहत्या प्रतिबंधक गृह बनाया था।

**सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध प्रतिरोध: तीन स्तरों पर विश्लेषण :-**

**शारीरिक प्रतिरोध का स्तर -**

उन्हें स्कूल जाते समय पत्थर, कीचड़ और अपमानजनक गाली-गलौज का सामना करना पड़ा; ऊपरी जातियों के लोगों ने गोबर और कचरा फेंक दिया क्योंकि वे सहन नहीं कर पाते थे कि एक स्त्री, विशेषकर दलितों और शूद्रों को पढ़ाने वाली एक स्त्री, सार्वजनिक स्थानों पर शिक्षिका के रूप में उपस्थित हो। गालियों के बाद हिंसा का पूर्वानुमान करते हुए सावित्रीबाई अपने साथ एक और साड़ी रखती थीं। उनकी ऐतिहासिक महत्ता का बहुत कुछ यह साधारण कृत्य बताता है: न वे पीछे हटीं, न मौन रही; उन्होंने योजना बनाई, सहा और चली गईं। दैनिक रूप से विद्यालय तक पहुंचने का उनका यह रास्ता केवल एक आवागमन नहीं था; यह बार-बार दोहराया गया लक्ष्य और नाम था।

**विचारधारात्मक प्रतिरोध का स्तर -**

सावित्रीबाई ने शिक्षा को मुक्ति का एक शक्तिशाली उपकरण मानते थे, जो दमित और हाशिए पर धकेले गए लोगों को, खासकर स्त्रियों और सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को, अज्ञानता और अधीनता से मुक्त कर सकती थी। उनका दृष्टिकोण पारंपरिक पाठ्यक्रम से अलग था; वे एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहती थीं जो बौद्धिक आलोचनात्मकता, सामाजिक सुधार की मानसिकता और लैंगिक संवेदनशीलता को प्रोत्साहित करे।

**सामाजिक कार्यों का स्तर -**

उन्होंने बाल-विवाह और सती प्रथा के खिलाफ आवाज उठाई, विधवा पुनर्विवाह का समर्थन किया और विधवाओं को शिक्षित और सशक्त बनाने के लिए बहुत कुछ किया। उन्हें जाति और लिंग आधारित भेदभाव को दूर करने के लिए सक्रिय रूप से छुआछूत के खिलाफ अभियान चलाया और महाराष्ट्र में सामाजिक सुधार के आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1876 के अकाल में, उन्होंने ज्योतिबा के साथ कई जगहों पर भोजन दिया।

**साहित्यिक योगदान:, पत्र और आत्म-लेखन :-**

सावित्रीबाई केवल शिक्षिका नहीं थीं, बल्कि आज की मराठी कवयित्रियों में से एक थीं। उन्होंने अपने काव्य संग्रह कव्य फुले (1854) में मनु की असमान समाज-रचना की आलोचना की; "जा, शिक्षा लो" कविता में वे कहती हैं कि ज्ञान के बिना मनुष्य पशु बन जाता है, ज्ञान सभी धन से बड़ा है, और आत्मनिर्भर होने के लिए अंग्रेजी सीखना। उनके लेखन, रिपोर्ट, भाषण और अभिलेखों में विद्यालयों की दैनिक कार्यप्रणाली, नामांकित विद्यार्थियों की संख्या और चुनौतियों का उल्लेख है; इस तरह, वे अध्यापन को एक "स्वाभाविक स्त्रीय कर्तव्य" से सार्वजनिक, बौद्धिक श्रम में बदल देती हैं जो विश्लेषण और प्रलेखन के योग्य है।

**दलित शिक्षा और जाति-प्रश्न :-**

सावित्रीबाई का विरोध जाति-प्रश्न से अलग नहीं है। स्वयं दलित समुदाय से आई सावित्रीबाई ने दलित स्त्रियों और महिलाओं की चेतना बढ़ाकर उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाने की कोशिश की; शिक्षा प्राप्त करने के बाद उपनिवेशित लोगों ने ब्राह्मणवादी वर्चस्व, अपनी स्थिति और मुक्ति के रास्ते पर सोचा। उन्होंने ब्राह्मण स्त्रियों द्वारा किए गए हर अपमान और अपमानजनक व्यवहार का साहस से सामना किया, जो शूद्र स्त्रियों के "आक्रमण" से आक्रोशित थीं, क्योंकि अध्यापन तब तक पूरी तरह से ब्राह्मणवादी पितृसत्ता के अधीन था।

**वर्तमान प्रासंगिकता :-**

**नीतिगत प्रभाव**

सावित्रीबाई फुले की विरासत भारत की शिक्षा नीति में स्पष्ट है। 2009 के RTE अधिनियम ने 6 से 14 वर्ष के बच्चों को जाति, लिंग या आर्थिक स्थिति की परवाह किए बिना निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार देने से उनकी विरासत काफी प्रभावित हुई। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (1992 में संशोधित) और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP) दोनों में समावेशी शिक्षा और लैंगिक समानता को प्राथमिकता देते हैं। NEP 2020 ने, उदाहरण के लिए, सामाजिक-भावनात्मक अधिगम पर बल देने, क्षेत्रीय भाषाओं को प्राथमिकता देने और स्कूल-उपस्थिति में लैंगिक असमानताओं को कम करने की वकालत की है। सावित्रीबाई फुले के सिद्धांतों के अनुरूप, ऐसे कार्यक्रमों जैसे "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ" लड़कियों की शिक्षा के महत्व को बढ़ाते हैं और स्त्री-शिक्षा के खिलाफ जड़ें जमाए गए पूर्वाग्रहों को दूर करते हैं।

**शैक्षणिक प्रभाव**

सावित्रीबाई का पाठ्यक्रम क्रांतिकारी था क्योंकि उसने हाशिए की स्त्रियों और समुदायों की विशिष्ट आवश्यकताओं को समझा; यह विधि सांस्कृतिक रूप से अनुकूलित शिक्षण प्रणालियों से मेल खाती है, जो विद्यार्थियों की सांस्कृतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के अनुरूप संदर्भित अधिगम को प्राथमिकता देते हैं।

**निरंतर चुनौतियाँ**

लैंगिक समानता की सावित्रीबाई की समझ अधूरी है, शैक्षणिक और नीतिगत बदलावों के बावजूद। निर्धनता, सांस्कृतिक अपेक्षाओं और लैंगिक आधारित हिंसा अभी भी ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में लड़कियों की स्कूल-शिक्षा और निरंतरता को प्रभावित करते है। पुरुषों की शिक्षा को अनेक परिवारों में अभी भी सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है, जबकि लड़कियों पर अक्सर घरेलू काम की जिम्मेदारी होती है, जिससे उनके पास पढ़ाई के लिए समय कम होता है।

**सावित्रीबाई फुले से सीख: लड़कियों की शिक्षा की पुनर्कल्पना**

भारत को सावित्रीबाई फुले की समान शिक्षा की दृष्टि को पूरी तरह से साकार करने के लिए इन संरचनात्मक चुनौतियों को हल करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर ध्यान देना होगा।

सामुदायिक जागरूकता और वकालत का पहला क्षेत्र है: लड़कियों की शिक्षा के प्रति समाज का दृष्टिकोण बदलने के लिए समुदाय एकजुट होना चाहिए।

नीति-प्रवर्तन की स्थिरता का दूसरा क्षेत्र है: RTE अधिनियम जैसी नीतियाँ मजबूत नींव बनाती हैं, लेकिन यह सुनिश्चित करने के लिए कि सभी लड़कियाँ स्कूल में रहें, अधिक कठोर प्रवर्तन उपायों की जरूरत है।

तीसरा क्षेत्र आदर्शों का प्रचार है: महिला शिक्षक युवा लड़कियों के लिए प्रेरक उदाहरण हैं, जो शिक्षा की क्षमता और मूल्यों को दिखाते हैं; सावित्रीबाई फुले के तरीके से भारत में शिक्षा के लिए लड़कियों की एक नई पीढ़ी को प्रेरित किया जा सकता है।

**निष्कर्ष (Conclusion)**

इस प्रकार सावित्रीबाई फुले का शैक्षिक कार्य सिर्फ शिक्षा का प्रसार नहीं था; वह सामाजिक मान्यताओं, जातिगत व्यवस्था और पितृसत्ता के खिलाफ एक स्पष्ट, संस्थागत और निरंतर ऐतिहासिक संघर्ष था। उन्हें शारीरिक हिंसा के बावजूद सार्वजनिक जगह बनाया गया, शिक्षा को दमितों की मुक्ति का दार्शनिक हथियार बनाया, विधवा पुनर्विवाह से लेकर बाल-हत्या निरोधक गृह तक के सामाजिक कार्यक्रमों से कुरीतियों को चुनौती दी। शिक्षा में उनका योगदान केवल प्रशंसनीय नहीं, बल्कि क्रांतिकारी है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, जो समानता पर आधारित है, उनके शैक्षिक योगदान से बहुत ऋणी है।

**संदर्भ सूची :-**


- भेसेरा, एच., कुमारी, एम., एवं गोहेन, एन. बी. (2024). *सावित्रीबाई फुलेज़ एजुकेशनल कंट्रीब्यूशंस टू गर्ल्स एजुकेशन इन इंडिया: ए कंटेम्परेरी डिसकशन*. यूएस-चाइना एजुकेशन रिव्यू ए, 14(11), 773–777 https://doi.org/10.17265/2161-623X/2024.11.010
- दास, ए., एवं बनर्जी, एम. (2025). *एजुकेशनल कंट्रीब्यूशंस ऑफ सावित्रीबाई फुले एंड इट्स प्रेजेंट रेलेवेंस इन इंडियन एजुकेशन सिस्टम*. ज़ेनोडो. https://doi.org/10.5281/zenodo.15185825
- धायल, एस., एवं मीणा, एच. (2026). *वीमेन, एमैन्सिपेशन एंड इक्वालिटी: द कंट्रीब्यूशन ऑफ सावित्रीबाई फुले इन द लैटर हाफ ऑफ द नाइनटीन्थ सेंचुरी*. आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज़ एंड सोशल साइंस. https://doi.org/10.9790/0837-3101026267
- गरैन, एस. सी., एवं सेन, एस. (2021). *सावित्रीबाई फुले द फर्स्ट लेडी टीचर एंड सोशल रिफॉर्मर इन नाइनटीन्थ सेंचुरी ऑफ इंडिया*. एपीआरए इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, 7(6), 326–329. https://doi.org/10.36713/epra7439

- कुमार, पी., एवं बब्ली. (2024). *द विज़नरी वर्क ऑफ सावित्रीबाई फुले: ट्रांसफॉर्मिंग इंडियन सोसायटी*. ज़ेनोडो. https://doi.org/10.5281/zenodo.14505415
- मिश्रा, एल. (2026). *सावित्रीबाई फुले: एजेंसी, अथरशिप एंड फेमिनिस्ट पेडागॉजी*. इंटरनेशनल जर्न फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च,8(1) https://doi.org/10.36948/ijfmr.2026.v08i01.65774
- मंडल, ए., एवं अल फ़राबी, आर. (2023). *सावित्रीभाई फुलेज़ कंट्रीब्यूशन टू एजुकेशन विद स्पेशल रेफरेंस टू दलित एजुकेशन*. इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, 5(3). https://doi.org/10.36948/ijfmr.2023.v05i03.4040
- पाल, ए. (2024). *सावित्रीबाई फुले: पायनियर ऑफ वीमेन एजुकेशन एंड सोशल रिफॉर्म*. एपीआरए इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च. https://doi.org/10.36713/epra18391
- पॉल, एस. (2025). *सावित्रीबाई फुलेज़ कंट्रीब्यूशन इन एजुकेशन: सम कंसीडरेशंस इन रिलेशन टू वीमेन एम्पावरमेंट*. इंडियन जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, 2(1), 430–434. https://doi.org/10.70798/IJOMR/020040048
- पुजारी, ए. एस. (2025). *सावित्रीबाई फुले कंट्रीब्यूशन टुवर्ड्स वीमेन सोशल रिफॉर्मर इन इंडिया: द मेजर एजुकेशन एंड सोशल इश्यूज़*. ज़ेनोडो.https://doi.org/10.5281/zenodo.17297454
- सालुंके, एन. (2021). *रिक्लेमिंग सावित्रीबाई फुले*. इन *द रूटलेज हैंडबुक ऑफ द अदर बैकवर्ड क्लासेज़ इन इंडिया* (पृ. 54–69). रूटलेज. https://doi.org/10.4324/9781003152873-6
- तळेकर, पी. आर. (2024). *सावित्रीबाई फुलेज़ रोल इन वीमेन एजुकेशन*. ज़ेनोडो. https://doi.org/10.5281/zenodo.12165764
- अहीर, आर. (2017). *अ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया* (23वाँ संस्करण). स्पेक्ट्रम बुक्स. ("सत्यशोधक समाज और ज्योतिबा या ज्योतिराव फुले" खंड, पृ. 237–238)
- ओ'हनलोन, आर. (1985). *कास्ट, क्लास एंड आइडियोलॉजी: महात्मा ज्योतिराव फुले एंड लो कास्ट प्रोटेस्ट इन नाइनटीन्थ सेंचुरी वेस्टर्न इंडिया*. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.
- कीर, धनजय. *सावित्री बाई फुले*. मातृभारती.


Email: rashmiashok4@gmail.com, Contact- 9812532133

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 38-40
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# कम्बोडिया के दो दुर्लभ संस्कृत शिलालेख

**सुनील कुमार पाठक**
शोधार्थी,
संस्कृत विभाग, यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर
**प्रो. प्रह्लाद पांडे.,**
शोध निर्देशक

**शोध सार:**
प्राचीन काल में कम्बोडिया को भारतीय ग्रन्थों में कंबुज देश कहा जाता था। वहाँ संस्कृत राजभाषा थी और दरबार की साहित्यिक भाषा थी। कम्बोडिया में अब तक 1300 से अधिक संस्कृत शिलालेख प्राप्त हुए हैं। प्रस्तुत आलेख में बारहवीं शताब्दी के दो प्रमुख शिलालेखों - ब्राह्मण दिवाकर भट्ट और विदुषी महारानी इंद्रा देवी के शिलालेखों का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विश्लेषण किया गया है। ये शिलालेख भारत और कम्बोडिया के गहरे सांस्कृतिक संबंधों के प्रमाण हैं।

**बीज शब्द:** कंबुज, खमेर साम्राज्य, संस्कृत शिलालेख, दिवाकर भट्ट, इंद्रा देवी, बेयोन मंदिर, अंगकोर।

**मूल आलेख:**

प्राचीन भारतीय इतिहास का गौरव केवल भारत की सीमाओं तक सीमित नहीं था। पहली से तेरहवीं शताब्दी तक भारतीय व्यापारी, ब्राह्मण और बौद्ध भिक्षु सुदूर पूर्व में गए। कम्बोडिया के खमेर साम्राज्य (802-1431 ई.) ने भारत से अपनी धार्मिक और राजनीतिक प्रेरणा ली। वहाँ के राजाओं ने 'वर्मन' उपाधि धारण की और संस्कृत को राजभाषा बनाया। जनभाषा खमेर संस्कृत शब्दावली से सम्पन्न है। आज भी सूर्य को 'सोर्या', सप्ताह को 'सपदा' कहा जाता है।

**1. दिवाकर भट्ट का शिलालेख -**

बारहवीं शताब्दी के इस शिलालेख में मथुरा निवासी ब्राह्मण दिवाकर भट्ट का उल्लेख है। वे मथुरा से कम्बोडिया गए। वहाँ राजा राजेन्द्र वर्मन ने अपनी पुत्री इन्द्रलक्ष्मी का विवाह उनसे किया। पति-पत्नी ने विष्णु-महेश्वर मंदिर स्थापित किया। उसी के द्वार पर यह शिलालेख उत्कीर्ण है। इसमें उन्होंने अपने जन्मस्थान मथुरा का गर्व से उल्लेख किया है।

मूल श्लोक:

कालिन्दी यत्र रम्या क्रतुभिरतिरम्यं द्विजेन्द्रैः,

षट्त्रिंशद्भिस्सहस्रैरनुसवनं कृत ऋग्यजुस्साम शब्दैः।

कृष्णः कृष्णाहिमर्दी क्षितिजकुहुरीरः क्रीडितो यत्र बाल्ये,

तत्रैवाभूत् स देवो दिवसकर इति ख्यात भट्टस्सुकीर्तिः।।

भावार्थ: जिस मथुरा में रम्य यमुना बहती है, जिसके तट छत्तीस हजार वेदपाठी ब्राह्मणों के यज्ञों और वेद-मंत्रों से निनादित हैं, जहाँ कृष्ण ने बाल्यावस्था में कालिया नाग का मर्दन किया, उसी मथुरा में यशस्वी दिवाकर भट्ट ने जन्म लिया। यह प्रवासी भारतीय के मातृभूमि प्रेम का प्रमाण है।

**2. महारानी इंद्रा देवी का शिलालेख (1190-1200 ई.) -**

महारानी इंद्रा देवी खमेर सम्राट जयवर्मन सप्तम (1181-1218 ई.) की प्रधान महिषी थीं। जयवर्मन सप्तम ने अंगकोर थोम और बेयोन मंदिर बनवाया। इंद्रा देवी संस्कृत-पाली की कवयित्री, खगोल विज्ञानी, चिकित्सा विशेषज्ञ, रणनीतिकार और दार्शनिक थीं। बेयोन मंदिर की दीवारों पर उनकी मूर्तियाँ हैं।

सम्राट ने उन्हें राज्य के समस्त बौद्ध विश्वविद्यालयों और हिन्दू शिक्षण केंद्रों की प्रमुख नियुक्त किया। जब शिक्षा केवल पुरुषों तक सीमित थी, तब उन्होंने ऐसे मठ खोले जहाँ बिना लिंग-भेद के बालक-बालिकाओं को शिक्षा दी जाती थी। यह उस समय की सामाजिक क्रांति थी। वे स्वयं संस्कृत पढ़ाती थीं। बेयोन मंदिर की भित्ति पर रानी इंद्रा देवी और उनकी बहन जयराज देवी को छात्रों को पढ़ाते हुए दिखाया गया है।

यह रचना सिएम रीप प्रांत के फिमेनाकस मंदिर के शिलाखंड पर उत्कीर्ण है। यह उच्च साहित्यिक संस्कृत का नमूना है। शिलालेख का अनुवाद: "धैर्य के मंदिर के नाम से विख्यात अंगकोर शहर में एक कुलीन ब्राह्मण कन्या राजा जयवर्मन की प्रिय बन गई। जैसे गंगा शिव के मस्तक से निकलती है, वैसे वह विनम्र रानी राजा के चरणों में नत रहती थी। विद्या-प्रेमी उस रानी ने ज्ञान के अमृत को प्रजा में बाँटा। स्वभाव से बुद्धिमान और पवित्र उस रानी ने अपने पति को समर्पित इस काव्य की रचना कर यश प्राप्त किया।"

**निष्कर्ष:**

दोनों शिलालेख सिद्ध करते हैं कि प्राचीन कम्बोडिया में संस्कृत जीवन के हर क्षेत्र में परिव्याप्त थी। ये भारत-कम्बोडिया के अटूट सांस्कृतिक बंधन के प्रमाण हैं, जो आज भी अंगकोर वाट के रूप में जीवित है।

**संदर्भ:**


1. पुरी, बैजनाथ - सुदूर पूर्व में भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास।
2. मून इन्द्रा - इतिहासविद, कम्बोडिया का आलेख।
3. Chandler, David - A History of Cambodia.



पता: शिव सिटी कालोनी, तीन पानी डैम रोड, फुलसुंगा, रुद्रपुर, जिला ऊधमसिंह नगर-263153 (उत्तराखंड),

Email: Pthk09@gmail.com,

Mob: 9411216425

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 41-43
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# प्रेमचन्द के साहित्य में नारी का स्थान

**डॉ0 सतकुमार**
एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),
छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

हिन्दी जगत में साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचन्द का स्थान सर्वोपरि है। प्रेमचन्द को उपन्यास–सम्राट जैसी उपाधि दी गई है। कहानी जगत में भी प्रेमचन्द को सर्वश्रेष्ठ कहानीकार के नाम से पहचाना जाता है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक संसार की सभी भाषाओं के साहित्य में स्त्री की प्रस्तुति मिलती है। हिन्दी साहित्य में अनेक कालों में स्त्री के विभिन्न रूप मिलते है, कहीं उसे स्वंत्रताहीन बनाया गया है, तो कहीं उसे वेश्या कहकर उसका मान–समान लूटा गया है। भक्तिकाल में उसे कहीं माया, कामिनी कहा है, तो रीतिकाल में राजा के महल की रमणी बन गई है। हिन्दी–साहित्य के आधुनिक काल में आते–आते स्त्री शिक्षा एंव आर्थिक स्वावलम्बन के कारण पुरूष के समान सभी क्षेत्रों में अपना योगदान कर रही है।

साहित्य में प्रेमचन्द युग संक्रान्ति का युग था, जब पुरानी परम्पराओं, मान्यताओं और सौन्दर्य भावनाओं का अन्त हो रहा था। प्रेमचन्द ने अपने 'आदर्शोन्मुख यथार्थ को नारी की समस्याओं के चित्रण में विशेष रूप से प्रयुक्त किया है, क्योंकि हिन्दी का सामाजिक उपन्यास नारी–जीवन के महत्वपूर्ण प्रश्नों को लेकर जन्मा था। बाल–विवाह, आशिक्षा, पर्दा, आभूषण प्रेम, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति आदि नारी की विभिन्न समस्याएं हिन्दी उपन्यासों की विषयवस्तु बनी और उन पर लेखकों ने गंभीरता से विचार किया।

नारी के सर्वांगिण विकास के लिए सर्वप्रथम प्रेमचन्द उसे पूर्ण शिक्षित देखना चाहते है :– 'जब तक सभी स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होगी और सब कानून अधिकार उनको बराबर न मिल जाऐंगें, तब तक महज, बराबर काम करने से ही काम नहीं चलेगा।

शिक्षा के अभाव के कारण नारी कानूनी अधिकारों से वंचित है। इसी कारण पुरूष वर्ग इसकी कमाई को ऐंठता रहेगा, शिक्षा के अभाव में वह अपने अधिकारों की सुरक्षा भी नहीं कर पाएगी। इसीलिए प्रेमचन्द स्त्री के लिए अनिवार्य शिक्षा के पक्षपती है। 'गबन उपन्यास में पं0 इंद्रभूषण, जो कि हाईकोर्ट के एडवोकेट भी है, चाहते है कि स्त्रियों के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था होनी ही चाहिए। इसी प्रकार 'गोदान' उपन्यास में 'बीमेन्स लीग' के समारोह में प्रो0 मेहता ने जो भाषण दिया, उसमें भी उन्होंने स्त्री शिक्षा की व्यवस्था पर बल दिया है। वे पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों के लिए शिक्षा को अधिक उपयोगी समझते है, इसी के साथ स्त्रियों

के लिए जिस शिक्षा की अनिवार्यता के वे पक्षधर है वह भावों को उदात करने वाली होनी चाहिए। मुंशी प्रेमचन्द स्त्री को अस्तित्ववान चेतन प्राणी स्वीकरते है। स्त्री न धन–दौलत है और न पशु है (संसार में जितना महत्त्व पुरूष का है, उससे कहीं अधिक स्त्री का है। फिर भी हमारे धर्मों ने स्त्री को बन्धनों में बाँध रखा है।

गाँव की नारी को खेतों में पुरूष के बराबर अधिकार प्राप्त है, वह पुरूष से शासित होकर भी अबला नहीं रहती। गोदान उपन्यास की नायिका धनिया, होरी की आत्मा है वह अपने पति के पूरक रूप में सामने आती है। उसका दाम्पत्य जीवन स्वस्थ है। धनिया के बिना 'होरी' का जीवन अधूरा है। वह अपने पति के लिए विद्रोह भी करती है। उनके शब्दों में क्रान्ति का स्वर है। धनिया एक और पटवारी और महाजन को गाली देती है तो दूसरी और प्रचलित अन्धविश्वास भरी रूढ़ि के विरोध में झुनिया और सिलिया को अपने घर में आश्रय देकर नैतिक साहस का परिचय देती है।

शहर की नारी की समस्या ग्रामीण आँचल की अपेक्षा भिन्न है। उसमें नैतिक साहस है, जैसे प्रेमचन्द लिखित 'गबन' की जालपा, 'सेवासदन' की सुमन 'कर्मभूमि' की मुन्नी, सुखदा आदि। वे अपनी पराधीनता व समस्याओं के प्रति सजग भी है, किन्तु अन्त में वह प्रायः अपने संस्कारों से दब जाती है, विद्रोह नहीं करती। प्रेमचन्द तथा उनके समकालीन लेखक ऐसे विद्रोह में विश्वास नहीं रखते। प्रतिज्ञा की सुमित्रा यह कहकर भी कि बेचारी और कमा नहीं सकती, इसलिए उसकी वह दुर्गत है। (2) कमाने का उधोग नहीं करती (3) प्रेमचन्द जी की दृष्टि में विवाह में दहेज से वर व कन्या दोनों के घरों की बर्बादी होती है। 'एक आँच की कसर' कहानी में उन्होने दहेज की माँग को अनुचित बतलाया – दहेज बुरा रिवाज है, बेहद बुरा।(4)

अनमोल विवाह को प्रेमचन्द सामाजिक मर्यादा के खिलाफ मानते है। इस समस्या पर अनेक पात्रों की सृजना की है। 'शांति की शांति' 'कुसुम की कुसुम' 'कन्या–विवाह' की आशा, 'गृहदाह की देवप्रिया, 'स्त्री–पुरूष की आशा 'निर्मला' उपन्यास की निर्मला, 'सेवासदन' की सुमन तथा 'प्रतिज्ञा' की सुमित्रा आदि ऐसे ही नारी पात्र है, जिनका विवाह उनके माता–पिता सगे–सम्बधियों ने लालची प्रवृत्ति के कारण अयोग्य वर के साथ करवा दिया है, जिससे नारी पात्रों को कुंठा का शिकार होना पड़ता है।

प्रेमचन्द ने स्त्री सौन्दर्य को भी स्वीकार किया है। 'गबन' में इसके विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है।

बाल्यकाल की प्रवृत्तियाँ, माँ–बाप का लाड़ प्यार, सामाजिक परिवेश, पुरूषों का ढ़ोग तथा स्त्रियों का सीमित संसार ही इस भावना का जनक है। देवदीन के शब्दों में – 'सब घरों का यही हाल है। जहाँ देखों हाय गहने, हाय गहने, गहने के पीछे जान दे दे, घर के आदमियों को भूखा मारें, घर की चीजें और कहाँ तक कहूँ अपनी आबरू तक बेच दें। छोटे–बड़े, अमीर–गरीब यही रोना लगा हुआ है।.....

'गहनों का मरज बुरा मरज है, बहुत ही बुरा।' (5)

'गोदान' उपन्यास में मेहता विवाह को सामाजिक समझौता मानते है। उन्हे अभीप्सित है कि उसे विवाह तोड़ने का अधिकार न पुरूष को है न स्त्री को। समझौता करने से पहले आप स्वाधीन है, समझौता हो जाने के बाद आपके हाथ कट जाते है – (6) यदि कोई दम्पति सुखी होना चाहते है, तो उसे एक–दुसरे के लिए गुंजाइश रखनी चाहिए।

प्रेंमचन्द जी नारी के विधवा पूर्ण जीवन से दुःखी है। उन्होने विधवा समस्या के कारणों में दहेज के कारण अनमेल विवाह, सामाजिक कुरूचि के प्रतीक बाल–विवाह, वृद्ध–विवाह तथा पौष्टिक आहार एवं दवाई के अभाव में अकाल मृत्यु आदि को पहचाना है।

प्रेंमचन्द नारी के कुशल जीवन को स्वीकारते है। वे किसी भी वर्ग या जाति की स्त्री की चरित्रहीनता सहन नहीं कर पाते। पतिव्रता लेखक के लेखन का मूल स्वर है। अतः 'त्यागी का प्रेम' की आंनदीबाई तथा कायाकल्प की गायत्री ने जब इस सीमा का अतिक्रमण किया, प्रेमचन्द ने जीवन के अन्तिम दिनों तक

उन्हे रूलाकर उनसे उनकी इस दुर्बलता का प्रायश्चित करवाया है। अपने पतिव्रत पर मिध्या कंलक लगते देख राजा हरदौला की कुलीन सोचती है, तुम्हारे पतिव्रत पर संदेह किया जा रहा है और तुम्हें इस सन्देह को मिटाना होगा। यदि तुम्हारी जान जोखिम में होती, तो कुछ हर्ज न था, अपनी जान देकर हरदौल को बचा लेती, पर इस समय तुम्हारें पतिव्रत पर आँच आ रही है, इसीलिए तुम्हें यह पाप करना ही होगा। प्रेंमचन्द जी पारिवारिक कलह को भी सास–बहु, ननद–भावज के लिए निदन्नीय मानते है। उन्होनें उक्त समस्या का समाधान सभी के त्याग, तप, सेवा–सुश्रावा जैसे सात्विक गुणों के साथ–साथ मध्यस्था करने वाले पुरूष के निष्पक्ष विवेक एवं उसकी अनूठी सूझ–बूझ में खोजा है। भारतीय नारी के प्रसंग में संतति–निरोध पर भी विचार व्यक्त किया है। रंगभूमि में बिनायुसह कहते है – हमारी जननी संतान वृद्धिभार को अब नहीं संभाल सकती। अधिक बच्चे पैदा करने वाली के प्रति दया द्रवित होकर प्रेमचन्द कहते है – इस बेचारी को जीवन का क्या सुख। (8) भारत में अनुदित अनियंत्रित होने वाली इस जनवृद्धि को देखकर प्रेमचन्द ने लिखा – मुबारक हो वह दिन जब भारत में इस नाशिनी प्रथा का अन्त हो जाएगा, स्त्री का मरण, बच्चों का मरण और जिस समाज का जीवन ऐसी सन्तानों पर आधारित हो, उसका मरण। इस समस्या का समाधान करने के लिए मुंशी–प्रेमचन्द समाज को जागरूक देखना चाहते है।

**निष्कर्षः–** प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों एंव उपन्यासों में नारी–पात्रों का चित्रण गहनता के साथ किया है। उनके उपन्यास एंव कहानियों में स्त्री के विविध रूप देखने को मिलते है, जैसे विधवा, वेश्या, वृद्धाएँ, माँ, बहन, बेटी आदि। निर्मला, धनिया, मालती आदि के द्वारा उन्होने नारी–समस्याओं के विविध पक्षों पर प्रकाश डालने का पूरा प्रयास किया है। अन्ततः यह कहना अनुचित नहीं होगा कि प्रेमचन्द नारी–विषयक आदर्शोन्मुख यथार्थवाद को अपनाते हुए नारी के पक्ष में झुके हुए दिखाई देते है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :–**


1. प्रेमचन्द घर में, पृ0 265
2. हिन्दी उपन्यासों में नारी डॉ0 बिन्दु अग्रवाल पृ0 171
3. हिन्दी उपन्यासों में नारी डॉ0 शैलेश रस्तोगी, पृ0 38
4. प्रतिज्ञा पृ0 185
5. मानसरोवर
6. गोदान
7. कायाकल्प
8. गोदान

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 44-48
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# माध्यमिक स्तर एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन

**प्रो. श्रीकान्त भारतीय**
शोध पर्यवेक्षक
**निधि शर्मा**
शोधार्थी
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

**सारांश**
शोधपत्र में विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। अध्ययन में वर्णानात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श हेतु कोटा के विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। पर्यावरणीय अभिवृत्ति के लिये प्रदत्तों का संकलन डॉ. हसीन ताज द्वारा तैयार ''पर्यावरणीय अभिवृत्ति मापनी'' द्वारा किया गया। संकलित प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। प्रदत्तों के विश्लेषण के फलस्वरूप पाया गया कि विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है।

## 1. प्रस्तावना –

पर्यावरण अभिवृत्ति का अर्थ पर्यावरण के प्रति हमारा दृष्टिकोण, सोच और व्यवहार है। यह दो शब्दों से मिलकर बना है पर्यावरण (हमारे चारों ओर का आवरण या प्रकृति) और अभिवृत्ति (किसी वस्तु के प्रति हमारी धारणा या मनोवृत्ति)।

हम प्रकृति, पेड़–पौधो, जीव–जन्तुओं और अपने आस–पास के वातावरण को किस नजरिये से देखते है और उनके संरक्षण के प्रति संवेदनशील है, इसे ही पर्यावरण अभिवृत्ति कहते है।

एक सकारात्मक पर्यावरण अभिवृत्ति समाज में पर्यावरण संरक्षण की भावना को बढ़ावा देती है। जब व्यक्तियों एवं समाज का नजरिया प्रकृति के प्रति सकारात्मक होता है, तब वे सब पर्यावरण के अनुकूल व्यवहार को अपनाते है, इस अवस्था में प्रदूषण कम होता है तथा आने वाली पीढ़ियों के लिए पृथ्वी सुरक्षित रहती है।

यह अध्ययन इसलिए आवश्यक है कि हमें हमारे विद्यार्थियों को पर्यावरण और उससे सम्बन्धित समस्याओं के विषय में कितनी जानकारी है या समझ है। प्रकृति के प्रति हमारा जुड़ाव, प्रेम या चिंता का स्तर कितना है। प्रदूषण ग्लोबल वार्मिंग, पेड़ों का कटना, वन क्षेत्रों का घटना, पानी की बचत, कचरा प्रबंधन इत्यादि के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति को ज्ञात करने हेतु यह अध्ययन किया गया।

## 2. अध्ययन के उद्देश्य –

1. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

**3. मुख्य पदों की व्याख्या–**

**पर्यावरण अभिवृति** – ''पर्यावरण अभिवृत्ति प्रभाव तथा अनुभव करने की क्षमता या ज्ञान शब्द अन्तपरिवर्तनीय है। एक व्यक्ति जो पर्यावरण के साथ सकारात्मक प्रभाव या अनुभव की क्षमता रखता है वह उस पर्यावरण को पसंद करने वाला कहा जाता है, अथवा वह पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति रखता है।''

**4. अध्ययन की सीमा –**

1. प्रस्तुत अध्ययन में केवल कोटा शहर में अध्ययनरत विद्यार्थियों का चयन किया गया।
2. प्रस्तुत अध्ययन में केवल माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का चयन किया गया।

**5. साहित्यावलोकन –**

1. **शर्मा, नीतू (2018),** ने माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पर्यावरणीय अभिवृत्ति एवं पर्यावरणीय जागरुकता का अध्ययन किया। शोध हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। राजस्थान राज्य के उदयपुर शहर के माध्यमिक विद्यालयों से यादृच्छिक विधि से छात्रों का चयन किया गया। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पर्यावरणीय अभिवृत्ति एवं पर्यावरणीय जागरूकता के मापन हेतु स्वनिर्मित मापनियों का प्रयोग किया गया। प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। निष्कर्ष के रूप में पाया गया कि माध्यमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता में सार्थक अन्तर होता है। अतः ग्रामीण तथा शहरी छात्रों को पर्यावरणीय जागरूकता का ज्ञान प्रदान कर उनके पर्यावरणीय दृष्टिकोण में सुधार किया जा सकता है।
2. **शुक्ला, गणेश (2021)** ने विद्यार्थियों, अभिभावकों एवं शिक्षकों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया। शोध हेतु वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। केंद्रीय विद्यालय व परिषदीय विद्यालय के छात्र–छात्राओं में कोई सार्थक अंतर नहीं है। सभी छात्र–छात्रओं में समान रूप से जागरूक हैं।

   केंद्रीय तथा परिषदीय विद्यालय के छात्रों के अभिभावकों में पर्यावरण के प्रति जागरुकता में कोई सार्थक अंतर नहीं है अर्थात सभी समान रूप से जागरुक हैं।
3. **कुमार, मुकेश (2022)** ने उच्चतर माध्यमिक व स्नातक स्तर के छात्र–छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया। शोध हेतु वर्णनात्मक विधि का प्रयोग किया गया। व्यक्तियों को पर्यावरण व पर्यावरण समस्याओं के प्रति जागरूक व संवेदनशील बनाना, उनमें समस्याओं को समझने की सोच विकसित करना, समस्याओं के समाधान हेतु कौशलों का विकास करना एवं शैक्षिक पर्यावरणीय कार्यक्रमों का निष्पक्ष मूल्यांकन करना आदि पर्यावरणीय शिक्षा के मुख्य उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं। शिक्षा, जागरूकता व पर्यावरण शिक्षा विश्वविद्यालय का अभाव, पाठ्यक्रम एवं अनुसंधान की समस्याएं, पर्यावरण शिक्षा के लिए किसी अभिशाप से कम नहीं है।

**6. न्यादर्श –**

1. शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में 60 विद्यार्थियों का चयन किया गया।
2. प्रस्तुत अध्ययन में केवल माध्यमिक स्तर के 30 एवं उच्च माध्यमिक स्तर के 30 विद्यार्थियों का चयन किया गया।

**7. शोध उपकरण –**

पर्यावरणीय अभिवृत्ति के लिए प्रदत्तों का संकलन डॉ. हसीन ताज द्वारा निर्मित ''पर्यावरणीय अभिवृत्ति मापनी'' द्वारा किया गया।

**8. अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी –**

1. मध्यमान।

2. मानक विचलन।
3. टी–परीक्षण।

**9. व्याख्या एवं विश्लेषण –**

**परिकल्पना 1 – माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।**

**सारणी 1**

**माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति की सार्थकता**

| Students | Sample | Mean | Standard Deviation | Obtained value (t-value) | Freedom Degree | Signification Level | Table Value | Signification |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Male | 15 | 171.51 | 22.150 | 0.089 | 28 | 0.05 | 2.01 | Significant |
| Female | 15 | 170.81 | 20.650 | | 28 | 0.01 | 2.68 | |

**व्याख्या –**

माध्यमिक स्तर के 15 पुरुष विद्यार्थियों और 15 महिला विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों की तुलना करने पर टी का मान 0.089 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता स्तर 0.05 के सारणीमान 2.01 तथा सार्थकता स्तर 0.01 के सारणीमान 2.68 दोनों मानों से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की गई है।

**परिकल्पना 2 – उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।**

**सारणी 2**

**उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति की सार्थकता**

| Students | Sample | Mean | Standard Deviation | Obtained value (t-value) | Freedom Degree | Signification Level | Table Value | Signification |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Male | 15 | 165.31 | 16.65 | 0.385 | 28 | 0.05 | 2.01 | Significant |
| Female | 15 | 167.51 | 16.81 | | 28 | 0.01 | 2.68 | |

**व्याख्या –**

उच्च माध्यमिक स्तर के 15 पुरुष विद्यार्थियों और 15 महिला विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों की तुलना करने पर टी का मान 0.385 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता स्तर 0.05 के सारणीमान 2.01 तथा सार्थकता स्तर 0.01 के सारणीमान 2.68 दोनों मानों से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की गई है।

**परिकल्पना 3 – माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।**

सारणी 3

माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति की सार्थकता

| Students | Sample | Mean | Standard Deviation | Obtained value (t-value) | Freedom Degree | Signification Level | Table Value | Signification |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Secondary | 30 | 171.15 | 22.95 | 0.857 | 28 | 0.05 | 2.01 | Significant |
| Higher Secondary | 30 | 166.45 | 19.30 | | 28 | 0.01 | 2.68 | |

**व्याख्या –**

माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के 30 पुरुष विद्यार्थियों और 30 महिला विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों की तुलना करने पर टी का मान 0.857 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता स्तर 0. 05 के सारणीमान 2.01 तथा सार्थकता स्तर 0.01 के सारणीमान 2.68 दोनों मानों से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की गई है।

## 10. निष्कर्ष –

1. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति व उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सार्थक अन्तर है।
2. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्ति का मान उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक है।

## 11. अध्ययन की उपयोगिता –

विद्यार्थियों में पर्यावरण की समस्याओं एवं उसके संरक्षण की अभिवृत्ति उत्पन्न करने में, पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने के लिये प्रेरित करने एवं पर्यावरण संरक्षण में सक्रिय रूप से भाग लेने में। महिला एवं पुरुष विद्यार्थियों में प्रमुख पर्यावरणीय समस्याओं को स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर परखकर उसे हल करने हेतु प्रेरित करने में ही इस अध्ययन की उपयोगिता है।

## 12. संदर्भ ग्रंथ सूची –


1. सिंह, अल्का (2013), दूरस्थ शिक्षा प्रणाली एवं परम्परागत शिक्षा प्रणाली में बी.एड. प्रशिक्षार्थियों की पर्यावरण अवबोध, पर्यावरणीय शिक्षा के सन्दर्भ में अभिवृत्ति तथा प्रशिक्षण आवश्यकता का तुलनात्मक अध्ययन. International Journal of Arts & Education Research (IJAER), Vol-2 (Issue-6), Oct-Nov-2013
2. शर्मा, नीतू (2018), माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पर्यावरणीय अभिवृत्ति एवं पर्यावरणीय जागरूकता का अध्ययन TTMA Tracks, International Journal for Multidisciplinary Studies, Vol-1 (Issue-38) January 2018.
3. देवी, सुमन (2020), उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की पर्यावरण जागरूकता व सूचना तकनीकी के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन, पीएच.डी. शोध प्रबंध, Tantia University, Ganganagar.

4. शुक्ला, गणेशा (2021) प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों, अभिभावकों एवं शिक्षकों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता का अध्ययन, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies, Online ISSN 2278-8808, SJIF 2021. 7-380, www-srjis-com Peer Reviewed & Referred Journal, May & June, 2021- Vol&8/65
5. कुमार, मुकेश (2022), उच्चतर माध्यमिक व स्नातक स्तर के छात्र–छात्राओं की पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूकता एक अध्ययन Academic Social Research: (P), (E) ISSN: 2456-2645 Impact Factor: 5.128, 7(4).

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 49-53
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# "ममता कालिया की कहानियों में मनोवैज्ञानिक द्वंद्व : एक मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन"

**डॉ. रेनू जोशी**
हिंदी विभाग
एम०बी०राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हल्द्वानी, कुमाऊँ विश्वविद्यालय
**सरिता रावत**
शोधार्थी (हिंदी)
राजकीय महाविद्यालय लमगड़ा
एस.एस. जे. अल्मोड़ा विश्वविद्यालय

**शोध सारांश**

हिंदी साहित्य में ममता कालिया एक ऐसा विशिष्ट नाम है, जो लगातार सात दशकों से साहित्य का कोश बढ़ाती आई हैं| जिन्होंने शहरी एवं मध्यवर्गीय पात्रों के अंतर्मन की जटिलताओं को गहराई तक अपनी कहानियों में उकेरा है | उनकी कहानियों में कामकाजी स्त्रियों की दमित इच्छाएं, निम्न-मध्यवर्ग की विडंबनाएं, दांपत्य-संबंधों की कड़वाहट, अकेलापन, मानसिक अंतर्द्वंद्व एवं स्त्री की उन्नति देखकर पुरुष मनोविज्ञान की कुंठाएं उनके लेखन का केंद्रीय विषय रहा है | उनकी कहानियों के पात्र बाहरी परिस्थितियों से संघर्ष नहीं करते, बल्कि वे अपने अंतर्मन में उठते अंतर्विरोधों और मानसिक ग्रंथियों से लड़ते नज़र आते है | जिनमें स्त्री पात्रों के साथ-साथ पुरुष पात्रों में भी अहं, कुंठा, असुरक्षा तथा मानसिक तनाव की स्थिति बनी रहती है | श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' के शब्दों में– "ममता रूमानी या काल्पनिक कहानियाँ नहीं लिखतीं, उसकी कहानियाँ ठोस जीवन के धरातल पर टिकी हैं | निम्न-मध्यवर्गीय जीवन के छोटे-छोटे ब्योरों का गुम्फन, नश्तर का-सा काटता तीखा व्यंग्य और चुस्त-चुटीले जुमले उसकी कहानियों के प्रमुख गुण रहे हैं |"[1] वह आधुनिक युग की ऐसी संवेदनशील लेखिका है, जिनका सृजन क्षेत्र महानगरों की चकाचौंध से होता हुआ, छोटे तबके की समस्त स्त्रियों के अंतर्मन को छूता है |

**बीज शब्द – मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, कुंठा, अहंग्रस्त, अंतर्द्वंद्व, अचेतन, हीनता ग्रंथि**

**प्रस्तावना**

वर्तमान समय की बदलती परिस्थितियों ने मानव जीवन को गहराई तक प्रभावित किया है, जिसके कारण मनुष्य के व्यवहार में चिंता, निराशा, अवसाद, कुंठा और आत्म ग्लानि आदि अनेक विकृतियों का जन्म हुआ है, इन मानसिक विकृतियों और ग्रंथियों के निराकरण न होने पर व्यक्ति में अनैतिक व्यवहार, अंतर्द्वंद्व, अपराध प्रवृत्ति आदि अनेक प्रकार के मनोरोग होने की संभावना बढ़ जाती है, जो न केवल समाज के लिए, बल्कि स्वयं उसके व्यक्तित्व के लिए भी हानिकारक है | आज मानव जीवन अति बौद्धिकता एवं भौतिकता के कारण दिन-प्रतिदिन जटिल-से-जटिलत्तर होता जा रहा है | वह हर क्षण दैनिक जीवन की अनेक समस्याओं से घिरा रहता है| जिनके निराकरण के लिए हमें मनोविश्लेषण की आवश्यकता का अनुभव होता है | "मनोविश्लेषणात्मक पद्धति के अनुसार व्यक्ति का असंतोष, उसकी पीड़ाएँ, निराशा आदि कुंठाजन्य परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होती है| ये कुंठाएं व्यक्ति के अचेतन में संग्रहित रहती है और मानव जीवन को संचालित करती है | यह अचेतन मन की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होती है मनुष्य इसलिए इसके हाथों में अवश सा जीवन में गतिशील होता है | मनुष्य के आंतरिक जगत का अध्ययन ही साहित्य में मनोविश्लेषणवाद कहलाता है |"[2] अत: स्वस्थ समाज का निर्माण करने एवं साहित्य के क्षेत्र में उसकी सही दिशा निर्धारित करने में मनोविश्लेषण की महत्वपूर्ण भूमिका रही है | ममता कालिया की कहानियों में मानव मस्तिष्क के विभिन्न पहलुओं का उल्लेख उनके पात्रों के माध्यम से परिलक्षित होता है, जिसमें कुंठा, दमन, हीन भावना तथा दमित इच्छाओं एवं मानसिक द्वंद्व जैसे अनेक मनोवैज्ञानिक तथ्यों को उनकी कहानियों में देखा जा सकता है| उन्होंने अपनी कहानियों में स्त्री लेखन को केवल स्त्री देह तक ही सीमित रखने के बजाय, स्त्री के अंतर्मन में उठने वाले भावों, विचारों तथा अंतर्द्वंद्वों और उनकी चुभन को वास्तविकता के धरातल तक पहुँचाया है| वस्तुतः लेखिका ने अपनी कहानियों के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन के कटु अनुभवों का सजीव अंकन किया है | उनकी कहानियों में पात्रों की मनोग्रंथि एवं मानसिक अंतर्द्वंद्व का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है | जहाँ एक ओर लेखिका ने प्रामाणिक वृहत्तर मूल्यों को अपने लेखन का आधार बनाया है, वहीं दूसरी ओर उनकी दृष्टि मनोविश्लेषण से प्रभावित रही है |

**मनोविश्लेषण और साहित्य**

"मनोविज्ञान साहित्य के लिए नई वस्तु नहीं है, वह आदिकवि वाल्मीकि से लेकर आज तक के सभी कवियों और साहित्यकारों की कृति में लक्षित होता है, किंतु मनोविश्लेषणवाद अपने सीमित अर्थ में आधुनिक चीज़ है| मनोविश्लेषणवाद मस्तिष्क के चेतन, उपचेतन और अचेतन तीन विभाग कर अचेतन को विशेष महत्त्व प्रदान करता है| यही अचेतन हमारे व्यक्तित्व, हमारे सारे कार्य-व्यापारों, हमारे सारे नैतिक आचारों का निर्माता और नियंता है|"[4] मनोविश्लेषण ने हिंदी साहित्य को नवीन दृष्टिकोण दिया है, जिसने साहित्य को एक नया आयाम देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है| इससे साहित्यकारों को पात्रों के आतंरिक जीवन की गहराई से जुड़ने में सफलता मिली है| मनोविश्लेषण के क्षेत्र में 'सिगमंड फ्रायड' का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है | जिन्होंने बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में इस सिद्धांत का प्रतिपादन करके पहली बार यह बताया कि मानव जीवन और उसका व्यवहार चेतन मन के बजाय अचेतन मन की दमित इच्छाओं, बचपन के अनुभवों और अंतर्द्वंद्वों से संचालित होता है |

फ्रायड की अहं तथा दमित काम वासना के समान ही 'अल्फ्रेड एडलर' ने मानव के व्यक्तित्व-विकास में हीनता-बोध एवं श्रेष्ठता की इच्छा को अधिक महत्त्व दिया है | उनके अनुसार व्यक्ति में हीनता की भावना तभी उत्पन्न होती है जब वह जीवन के किसी क्षेत्र में अभाव एवं अपूर्णता पाता है | इसी हीनता की भावना से मुक्ति के लिए व्यक्ति श्रेष्ठता की

ओर अग्रसर होता है| व्यक्ति में श्रेष्ठता की भावना का विकास हीनता की मुक्ति के फलस्वरूप होता है | एडलर की श्रेष्ठता का अर्थ व्यक्ति के स्वयं की योग्यता एवं क्षमता के संदर्भ से है |

इसी प्रकार युंग ने जीवनेइच्छा को मूल प्रेरक-शक्ति माना है- "जीवनेइच्छा में लोक, वित्त और पुत्र तीनों ऐषणाए समाविष्ट हो जाती हैं | मनुष्य जीना चाहता है | वह चाहता है कि उसका अस्तित्व अमर रहे, इसी इच्छा की पूर्ति के लिए वह अनेक प्रयत्न करता है | साहित्य-निर्माण उन प्रयत्नों में प्रमुख है क्योंकि साहित्य द्वारा हम अपने को भली-भाँति व्यक्त कर सकते हैं और व्यक्त करना जीवनेइच्छा का ही रूप है |"[4] युंग ने मानव व्यक्तित्व को अंतर्मुखी और बहिर्मुखी दो प्रवृत्तियों के आधार पर पात्रों के व्यवहार, उनकी मानसिकता तथा सामाजिक सहभागिता को समझने का प्रयास किया है |

**ममता कालिया की कहानियों में मनोवैज्ञानिक द्वंद्व**

1. **दमित इच्छाएं एवं अंतर्द्वंद-** फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धांत में दमित इच्छाओं को विशेष महत्त्व दिया गया है | व्यक्ति की ऐसी दबी हुई भावनाएं या इच्छाएं जिन्हें वह नैतिकता या असहजता के डर से अचेतन मन के किसी कोने में धकेल देता है, ये इच्छाएं 'दमित इच्छाएं' कहलाती है | ममता कालिया की कहानियों में ऐसे कई पात्र है, जो अपनी इच्छाओं के दमन की पीड़ा सहते नज़र आते है| **'दर्पण'** कहानी में बानी एक ऐसी पात्र है, जो शादी से पहले माँ के कठोर अनुशासन, तथा शादी के बाद पति की वर्चस्व मानसिकता के कारण अपनी हर छोटी-बड़ी ज़रूरतों और इच्छाओं का दमन करती नज़र आती है | वह हमेशा से अपने रूप के लावण्य को आदमकद दर्पण (ड्रेसिंग टेबल) में देखना चाहती थी, जिसे उसके उपयोगितावादी पति ने फिजूलखर्ची जैसी अनेक घुड़कियां देकर दबा दिया था- "जाने कितनी बार जीवन में बानी इस ऊँचे, लंबे दर्पण के लिए तरसी थी! जाने कितनी बार उसने अपनी कल्पना एक सौंदर्य सम्राज्ञी के रूप में की थी | जिस रात वह लाल साड़ी में वधू-वेश में सजी थी, उस रात भी आस-पास कहीं कोई बड़ा दर्पण नहीं था जिसमें एक झलक वह अपने को देख ले |"[5] **'बोलने वाली औरत'** कहानी में शादी के बाद से ही शिखा के भीतर अंतर्द्वंद उठने लगा था, उसने विवाह के बाद जीवन की एक अलग तस्वीर देखी थी, जहाँ वे एक-दूसरे के मौलिक विचारों की कद्र करते नज़र आते है, पर शादी होते ही "शिखा ने पाया, परिवार में परिवार की शर्तों पर रहते-रहते न सिर्फ़ वह अपनी शक्ल खो बैठी है वरन अभिव्यक्ति भी | उसे लगा वह ठूँस ले अपने मुँह में कपड़ा या सी डाले इसे लोहे के तार से | उसके शरीर से कहीं कोई आवाज़ न निकले | बस, उसके हाथ-पाँव परिवार के काम आते रहें | न निकलें इस वक़्त मुँह से बोल लेकिन शब्द उसके अंदर पड़े रहेंगे, खौलते और खदकते | जब मृत्यु के बाद उसकी चीर-फाड़ होगी, तो ये शब्द निकल भागेंगे शरीर से और शीतल-जागती इबारत बन जाएंगे |"[6]

2. **अहं और व्यक्तित्व संघर्ष- 'मनोविज्ञान'** कहानी में नवीन अपने पुरुषवादी **अहंप्रवृत्ति** से ग्रसित तथा व्यक्तित्व संघर्ष करता दिखाई देता है | "नवीन के अंदर प्रतिभा और संवेदनशीलता की कोई कमी नहीं थी | जब वह कुतर्क करता उससे खूब पता रहता कि वह गलत है लेकिन हार मानना उसे नापसंद था| हर समय अपने तूफानी व्यक्तित्व का सिक्का जमाने की उसकी ललक का कोई ओर-छोर न था| कविता जिस नियम से अपनी दिनचर्या निभा लेती थी, नवीन को उस नियमितता और कुशलता पर एतराज़ था| उसका ख्याल था ये कुंद दिमाग लोगों के गुण होते हैं | हर हाल में कविता को अपने से एक सीढ़ी नीचे खड़ा देखना उसे पसंद था जबकि कविता कदम-से-कदम मिला कर चलने में यकीन रखती थी |"[7]**'एक अदद औरत'** कहानी की नायिका अपने अहं को ठेस लगने पर अपने व्यक्तित्व के लिए संघर्ष दिखाई देती है- "कई बार सोचती हूँ मैं कितनी बेवकूफ वज़हों से सुखी-दु:खी होती रहती हूँ | मेरा अपना कोई करार, कोई वजूद, कोई

इकाई नहीं | कहाँ चली जाती है मेरी टक्कर लेने की अकड़! मूर्खो की तरह मैं उसके पीछे-पीछे चलने में सार्थकता क्यों अनुभव करती हूँ, आगे-आगे चलने में क्यों नहीं?"[8]

3. **हीनता ग्रंथि-** ममता कालिया की कहानियों के अधिकतर पात्र इस मनोग्रंथि से पीड़ित दिखाई देते है, जिसके माध्यम से लेखिका यह बताना चाहती है कि कई बार शारीरिक-मानसिक अथवा अन्य किसी अक्षमता के कारण व्यक्ति की आकांक्षाएँ-इच्छाएँ पूर्ण नहीं हो पाती है जिसके कारण व्यक्ति में हीन ग्रंथि जन्म लेने लगती है, इस हीन ग्रंथि से पीड़ित व्यक्ति निराश होकर स्वार्थी, ईर्ष्यालु और अविश्वासी तक हो जाता है, जैसे **'इरादा'** कहानी का पात्र- 'शंकर'| "दुबला,पतला, सूखा सा नौजवान था शंकर| पिछले साल उसे टायफायड हुआ था, तबसे उसके सिर के बाल भी काफी कम हो गए थे, इससे वह दुबला और पतला लगता था| कमजोर होने के कारण वह अपनी उम्र से ज्यादा का दिखाई देता था, जबकि शांति आज भी बहुत सलौनी लगती| जब कभी वे साथ-साथ बाहर निकलते, लोग यही समझते कि शांति अपने पति से दस साल छोटी है,जबकि वह सिर्फ दो साल छोटी थी| उनके बीच अभी तक कोई हँसता-खेलता शिशु नहीं था, यह बात भी लोगों के बीच शंकर को उपहास का पात्र बनाती थी| इस मुद्दे पर शंकर काफी हद तक शक्की और तुनक्कू बन गया था|"[9]

4 . **यौन मनोवृति और दमित कामवासना**- फ्रायड के मनोविश्लेषण में काम शक्ति को मानव व्यवहार की मूल प्रवृत्ति माना गया है| ममता कालिया ने अपनी कथा रचनाओं में यौन मनोवृति का चित्रण अश्लीलता के लिए नही बल्कि मानव मन की वास्तविक परिस्थितियों को समझने के लिए किया है |'**आपकी छोटी लड़की'** कहानी में रामजी अकेले में टुनिया के सामने अपनी कामवासना का परिचय देता है- "टुनिया ने एक बार और नल खोलने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि रामजी ने अपने पजामे की ओर इशारा किया, और अश्लील ढंग से मुस्कुराकर कहा, "लो इससे भर लो |" टुनिया कुछ समझ नहीं पाई, पर जो कुछ उसने देखा उससे घबराकर वह दहशत से चीखती भाग खड़ी हुई |"[10]

5. **दांपत्य जीवन में संवादहीनता और अकेलापन** – ममता कालिया ने दांपत्य संबंधों की भावात्मक दूरियों और उनके बीच पनपते अकेलेपन तथा संवादहीनता का यथार्थवादी चित्रण किया है| **'उत्तर-अनुराग'** कहानी में मि० खन्ना और उनकी पत्नी बीस वर्षों से एक ही छत के नीचे रहते हुए वे दोनों अलग-अलग ध्रुवों की तरह जीते है | बिजनेस की व्यस्तता के कारण दोनों में बातचीत का अभाव रहने लगा था | जिसकी वजह से रेनू खन्ना हर सुख-सुविधा के होते हुए एक उदास जीवन जीने को मजबूर थी | "उनके सभी बच्चे हॉस्टल में थे, फिर भी खन्ना साब उनसे कटे-कटे रहते थे | रात में बिस्तर पर करवट पलट कर सो जाते और सबेरे देर तक सोते रहते | उठते तो नहा धोकर दिल्ली जाने की हड़बड़ी मच जाती | वे कभी नहीं पूछते कि पत्नी की तबियत या मूड कैसा है | पति-पत्नी के बीच संवाद का सेतु बस बच्चों की बाते थीं | बच्चों को फ़ोन करते समय वे साथ बैठते |"[11]

**निष्कर्ष** –

ममता जी की कहानियों पर मनोवैज्ञानिकों विचारधाराओं का गहरा प्रभाव रहा है | उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से मानव मन के भीतर छिपी उस दरार को दिखाया है, जिसे अक्सर आधुनिकता की चकाचौंध में पीछे छिपा दिया जाता है | उनकी कहानियां शहरी मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते हुए यह साबित करती है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता तब तक अधूरी है, जब तक वह अपने आंतरिक द्वंद्वों और मानसिक गुलामी से पूरी तरह मुक्त नहीं हो जाता | ये कहानियां आज व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य एवं उसकी उलझनों को सुलझाने के लिए एक बेहतरीन दस्तावेज़ है | जिसमें मनुष्य जीवन के विविध तथ्यों को परत-दर-परत खोलने के लिए, इस वर्ग के लोगों की सोच, उनकी संवेदनाएं,

मानसिक उथल-पुथल, झुंझलाहट, असहनीय घुटन, संत्रास पीड़ा, अलगाव तथा उनकी दमित इच्छाएं आदि को प्रत्यक्ष करने के लिए लेखिका ने मनोविज्ञान के विविध रूपों का सहारा लिया है, जिसमें वे पूरी तरह सफल रही है |

**संदर्भ**


1. ममता कालिया, ख़ुशकिस्मत (कहाँ मैं, कहाँ मेरी कहानियां), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2013, पृ०सं०-6
2. डॉ. सुरेश सिन्हा, हिंदी कहानी : उद्भव और विकास, अशोक प्रकाशन, पृ०सं०- 469
3. रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, पृ०सं – 82
4. रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति-2008, पृ०सं०-84
5. ममता कालिया, उसका यौवन (दर्पण), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2016, पृ०सं०-126-127
6. मधुरेश, प्रतिनिधि कहानियां- ममता कालिया (बोलने वाली औरत), संस्करण-2022, पृ०सं०-83
7. ममता कालिया, उसका यौवन (मनोविज्ञान), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2016, पृ०सं०-90
8. ममता कालिया, खुशक़िस्मत (एक अदद औरत), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2013, पृ०सं-115
9. ममता कालिया, जांच अभी जारी है (इरादा), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2016, पृ०सं०-156
10. मधुरेश, प्रतिनिधि कहानियाँ-ममता कालिया (आपकी छोटी लड़की), संस्करण-2022, पृ०सं-23
11. ममता कालिया, मुखौटा (उत्तर-अनुराग), लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2005, पृ०सं०-52

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 54-58
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ਚੜ੍ਹਦੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਖ਼ਾਲਸਾ ਰਾਜ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਤੇ ਮੌਜੂਦਾ ਸਥਿਤੀ

**ਡਾ. ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ**
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,
ਮਾਤਾ ਸੁੰਦਰੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਗਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ ਮਾਨਸਾ

ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਅਤੇ ਸ਼ੇਰੇ-ਏ- ਪੰਜਾਬ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਸ਼ਾਨਾਮੱਤੇ ਇਤਿਹਾਸ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਅਕਸਰ ਸਾਡੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਲਾਹੌਰ ਦੇ ਕਿਲੇ ਜਾਂ ਪਿਸ਼ਾਵਰ ਦੀਆਂ ਬਰੂਹਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਰਹਿ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਤਿਹਾਸ ਦੀਆਂ ਪੈੜ੍ਹਾਂ ਇਹ ਤਸਦੀਕ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਸਿਆਸਤ, ਜ਼ਰਨੈਲੀ ਅਤੇ ਨਿੱਜੀ ਜੀਵਨ ਦੇ ਅਹਿਮ ਅਧਿਆਏ ਅੱਜ ਦੇ ਚੜ੍ਹਦੇ ਪੰਜਾਬ ਭਾਰਤੀ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਵਿੱਚ ਵੀ ਡੂੰਘੇ ਰਚੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਬਡਰੁੱਖਾਂ ਦੇ ਮਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਮਾਲਵਾ ਦੇ ਪਿੰਡਾਂ ਤੱਕ ਅਤੇ ਬਟਾਲਾ ਦੀਆਂ ਗਲੀਆਂ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਰੋਪੜ ਦੇ ਸਤਲੁਜ ਦੇ ਕੰਢੇ ਤੱਕ ਫੈਲੀਆਂ ਇਹ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਸਿਰਫ ਇੱਟਾਂ ਅਤੇ ਪੱਥਰਾਂ ਦੀਆਂ ਇਮਾਰਤਾਂ ਹੀ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਇਹ ਉਸ ਯੁੱਗ ਦੀਆਂ ਗਵਾਹ ਹਨ ਜਦੋਂ ਪੰਜਾਬ ਨੇ ਇੱਕ ਅਜਿਹਾ ਸ਼ਾਸਕ ਵੇਖਿਆ ਜਿਸਨੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਮਿਸਲਾਂ ਅਤੇ ਰਿਆਸਤਾਂ ਨੂੰ ਇੱਕ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦੇ ਸੂਤਰ ਵਿੱਚ ਪਰੋਇਆ। ਚੜ੍ਹਦੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਖ਼ਾਲਸਾ ਰਾਜ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਸਥਾਨ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੁੱਝ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨਾਲ ਸਿੱਧੇ ਤੌਰ ਤੇ ਅਤੇ ਕੁਝ ਅਸਿੱਧੇ ਤੌਰ ਤੇ ਸਬੰਧਿਤ ਹਨ।

**ਬਡਰੁੱਖਾਂ**

ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸੰਗਰੂਰ ਜ਼ਿਲ੍ਹੇ ਵਿੱਚ ਸਥਿਤ ਪਿੰਡ ਬਡਰੁੱਖਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਬਹੁਤ ਹੀ ਮਾਣਮੱਤਾ ਤੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਮਹੱਤਤਾ ਵਾਲਾ ਹੈ। ਇਹ ਪਿੰਡ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਅਤੇ ਜੀਂਦ ਰਿਆਸਤ ਨਾਲ ਸਬੰਧਾਂ ਕਰਕੇ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਰਾਜਾ ਗਜਪਤ ਸਿੰਘ ਨੇ 1760 ਈਸਵੀ ਦੇ ਦਹਾਕੇ ਵਿੱਚ ਇਸ ਖੇਤਰ ਤੇ ਆਪਣਾ ਕਬਜ਼ਾ ਮਜ਼ਬੂਤ ਕੀਤਾ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਮਾਤਾ ਰਾਜ ਕੌਰ ਜਿਨਾਂ ਨੂੰ ਮਾਈ 'ਮਲਵੈਣ' ਵੀ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਬਡਰੁੱਖਾਂ ਦੇ ਸਰਦਾਰ ਗਜਪਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਸਪੁੱਤਰੀ ਸਨ। ਜਿਆਦਾਤਰ ਇਤਿਹਾਸਕਾਰ ਬਡਰੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਹੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਜਨਮ ਸਥਾਨ

ਮੰਨਦੇ ਹਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਸਮੇਂ ਪਹਿਲੇ ਬੱਚੇ ਦਾ ਜਨਮ ਨਾਨਕੇ ਘਰ ਹੀ ਹੁੰਦਾ ਸੀ। ਅਸੀਂ ਇਸ ਬਹਿਸ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਪੈਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਕਿ ਬਡਰੁੱਖਾਂ ਪਿੰਡ ਰਿਆਸਤ ਜੀਂਦ ਦੀ ਰਾਜਧਾਨੀ ਵੀ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਇੱਕ ਪੁਰਾਣਾ ਕਿਲ੍ਹਾ ਵੀ ਮੌਜੂਦ ਹੈ ਜੋ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੀ ਸ਼ਾਨੇ ਸ਼ੌਕਤ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਭਰਦਾ ਹੈ, ਹਾਲਾਂਕਿ ਹੁਣ ਇਸ ਦਾ ਕਾਫੀ ਹਿੱਸਾ ਖੰਡਰ ਬਣ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।

**ਬਾਲਿਆਂਵਾਲੀ**

ਬਾਲਿਆਂ ਵਾਲੀ ਪਿੰਡ ਬਠਿੰਡਾ ਜ਼ਿਲ੍ਹੇ ਵਿੱਚ ਸਥਿਤ ਹੈ। ਇਹ ਪਿੰਡ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਨਾਨਕਾ ਪਰਿਵਾਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਇਤਿਹਾਸਕ ਹਵਾਲਿਆਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਇਲਾਕੇ ਵਿੱਚ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦੀਆਂ ਰਿਹਾਇਸ਼ਾਂ ਅਤੇ ਕਿਲੇ ਸਨ। ਬਾਲਿਆਂਵਾਲੀ ਦੇ ਕਿਲ੍ਹੇ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ 18ਵੀਂ ਸਦੀ ਦੇ ਮੱਧ ਵਿੱਚ ਲਗਭਗ 1750 ਤੋਂ 1770 ਈਸਵੀਂ ਦੇ ਦਰਮਿਆਨ ਹੋਇਆ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਕਿਲਾ ਜੀਂਦ ਰਿਆਸਤ ਦੇ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਦੁਆਰਾ ਬਣਾਇਆ ਗਿਆ ਸੀ। ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਇਸ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਰਾਜਾ ਗਜਪਤ ਸਿੰਘ ਨਾਲ ਜੋੜਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਕਿਲ੍ਹਾ ਜੀਂਦ ਰਿਆਸਤ ਦੀ ਪੱਛਮੀ ਸਰਹੱਦ ਦੀ ਰਾਖੀ ਅਤੇ ਪ੍ਰਸ਼ਾਸਨਿਕ ਕੰਟਰੋਲ ਲਈ ਇੱਕ ਮਜਬੂਤ ਚੌਂਕੀ ਵਜੋਂ ਵਰਤਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਇਹ ਕਿਲ੍ਹਾ ਛੋਟੀਆਂ ਨਾਨਕਸ਼ਾਹੀ ਇੱਟਾਂ ਦਾ ਬਣਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਕਿਲ੍ਹੇ ਦੇ ਖੁੱਲ੍ਹੇ ਹਿੱਸਿਆਂ ਜਾਂ ਵੇਹੜਿਆਂ ਨੂੰ ਅਕਸਰ ਖੇਤੀਬਾੜੀ ਦੇ ਸੰਦ, ਪਸ਼ੂ ਬੰਨਣ ਜਾਂ ਹੋਰ ਨਿੱਜੀ ਕੰਮਾਂ ਲਈ ਵਰਤਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਸਰਕਾਰੀ ਸਾਂਭ ਸੰਭਾਲ ਦੀ ਘਾਟ ਕਾਰਨ ਕਿਲ੍ਹੇ ਦੀਆਂ ਕੰਧਾਂ ਤੇ ਬੁਰਜ ਕਾਫ਼ੀ ਹੱਦ ਤੱਕ ਢੈਹ-ਢੇਰੀ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਹਨ। ਸਾਂਭ ਸੰਭਾਲ ਨਾ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਇਹ ਇਮਾਰਤ ਹੁਣ ਆਮ ਪੇਂਡੂ ਰਿਹਾਇਸ਼ ਵਿੱਚ ਬਦਲ ਚੁੱਕੀ ਹੈ।

**ਬਟਾਲਾ**

ਬਟਾਲਾ ਸ਼ਹਿਰ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਕਨ੍ਹਈਆ ਮਿਸਲ ਨਾਲ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਮਿਸਲਾਂ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਕਨ੍ਹਈਆ ਮਿਸਲ ਇੱਕ ਅਹਿਮ ਮਿਸਲ ਸੀ। ਜਿਸ ਦੀ ਨੀਂਹ ਜੈ ਸਿੰਘ ਕਨ੍ਹਈਆ ਨੇ ਰੱਖੀ ਸੀ। ਸ਼ੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਪਹਿਲਾ ਵਿਆਹ ਬਟਾਲਾ ਵਿਖੇ ਹੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਦੀ ਪੁੱਤਰੀ ਮਹਿਤਾਬ ਕੌਰ ਨਾਲ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਬਟਾਲਾ ਵਿੱਚ ਮਹਾਰਾਜਾ ਸ਼ੇਰ ਸਿੰਘ ਦਾ ਸ਼ਾਹੀ ਮਹਿਲ ਮੌਜੂਦ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਕਨ੍ਹਈਆ ਮਿਸਲ ਦੇ ਮੋਢੀ ਜੈ ਸਿੰਘ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਸਪੁੱਤਰ ਗੁਰਬਖਸ਼ ਸਿੰਘ ਦੀਆਂ ਸਮਾਧਾਂ ਵੀ ਬਟਾਲੇ ਵਿੱਚ ਹੀ ਹਨ। ਇਹ ਸਮਾਧਾਂ ਹੰਸਲੀ ਨਾਲੇ ਦੇ ਪੁੱਲ ਕੋਲ ਬਾਲਕ ਨਾਥ ਦੇ ਮੰਦਰ ਕੋਲ ਸਨ। ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਸਦਾ ਕੌਰ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਅਤੇ ਸਹੁਰੇ ਦੀਆਂ ਸਮਾਧਾਂ ਕੋਲ ਖੂਬਸੂਰਤ ਤਲਾਬ ਅਤੇ ਬਾਗ ਬਣਵਾਇਆ। 80 ਦੇ ਦਹਾਕੇ ਤੱਕ ਇਹ ਸਮਾਧਾਂ ਮੌਜੂਦ ਸਨ। ਪਰ ਹੁਣ ਇਹ ਸਮਾਧਾਂ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਲੋਪ ਹੋ ਚੁੱਕੀਆਂ ਹਨ। ਸਮਾਧਾਂ ਵਾਲੀ ਜਗ੍ਹਾ ਤੇ ਨਾਨਕਸ਼ਾਹੀ ਇੱਟਾਂ ਦੇ ਨਿਸ਼ਾਨ ਜਰੂਰ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਕੋਲ ਬਣਿਆ ਤਲਾਬ ਵੀ ਨੁਕਸਾਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸ ਦੀਆਂ ਪੌੜੀਆਂ ਵੀ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਚੁੱਕੀਆਂ ਹਨ।

**ਰਾਉਕੇ ਕਲਾਂ**

ਪਿੰਡ ਰਾਉਕੇ ਕਲਾਂ ਜ਼ਿਲਾ ਮੋਗਾ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਬਹੁਤ ਹੀ ਗੌਰਵਮਈ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਇਸਦਾ ਸਬੰਧ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਤੇ ਦੂਰ ਅੰਦੇਸ਼ੀ ਮਹਿਲਾ ਸਰਦਾਰਨੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਜੀ ਨਾਲ ਹੈ। ਰਾਉਕੇ ਕਲਾ ਸਰਦਾਰਨੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਜੀ ਦਾ ਪੇਕਾ ਪਿੰਡ ਅਤੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਪਹਿਲੀ ਰਾਣੀ ਮਹਿਤਾਬ ਕੌਰ ਦਾ ਨਾਨਕਾ ਪਿੰਡ ਹੈ। ਰਾਉਕੇ ਕਲਾਂ ਪਿੰਡ ਮੋਗਾ ਬਰਨਾਲਾ ਮੁੱਖ ਸੜਕ ਦੇ ਬਿਲਕੁਲ ਨਜ਼ਦੀਕ ਹੈ। ਸਰਦਾਰਨੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਦਾ ਜਨਮ 1762 ਈਸਵੀ ਨੂੰ ਇਸ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਸਰਦਾਰ ਦਸੌਂਧਾ ਸਿੰਘ ਦੇ ਘਰ ਹੋਇਆ। ਇਸ ਬਹਾਦਰ ਅਤੇ ਅਣਖੀ ਸਰਦਾਰਨੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਦੇ ਪੇਕਾ ਪਿੰਡ ਨੂੰ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਅਜੇ ਤੱਕ ਉਹ ਸਥਾਨ ਤੇ ਮਾਨ ਸਨਮਾਨ ਨਹੀਂ ਮਿਲ

ਸਕਿਆ ਜੋ ਮਿਲਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਸੀ। ਸਰਦਾਰਨੀ ਸਦਾ ਕੌਰ ਦੀ ਪੇਕਾ ਘਰ ਦੀ ਅੱਠਵੀਂ ਅਤੇ ਨੌਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਇਸ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਰਹੀ ਹੈ। ਸਰਦਾਰਨੀ ਦੀ ਯਾਦ ਵਿੱਚ ਪਿੰਡ ਦੀ ਫਿਰਨੀ ਵਾਲੇ ਪਾਸੇ ਇੱਕ ਗੇਟ ਬਣਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪੇਕਾ ਘਰ ਦੀ ਨੌਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦੇ ਸਰਦਾਰ ਅਜੈਪਾਲ ਸਿੰਘ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਯਾਦ ਵਿੱਚ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਕਿਲ੍ਹਾ ਬਣਵਾਇਆ ਹੈ। ਕਿਲ੍ਹੇ ਦੇ ਬਾਹਰ ਗੇਟ ਵਾਲੀ ਕੰਧ ਦੇ ਨਾਲ ਇੱਕ ਬੰਸਾਵਲੀ ਵੀ ਤਿਆਰ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਸਰਦਾਰ ਦਸੌਂਧਾ ਸਿੰਘ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਹੁੱਣ ਤੱਕ ਦੇ ਸਾਰੇ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਮੈਂਬਰਾਂ ਦੇ ਨਾਮ ਹਨ। ਇਹ ਪਰਿਵਾਰ ਦੁਆਰਾ ਚੁੱਕਿਆ ਗਿਆ ਬਹੁਤ ਹੀ ਸ਼ਲਾਘਾਯੋਗ ਕਦਮ ਹੈ।

**ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ**

ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਦਾ ਸਬੰਧ ਬਹੁਤ ਡੂੰਘਾ ਤੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ 1805 ਈਸਵੀਂ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਤੇ ਜਿੱਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਭੰਗੀ ਮਿਸਲ ਦੇ ਸ਼ਾਸਕ ਨੂੰ ਹਰਾ ਕੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਰਾਜ ਵਿੱਚ ਮਿਲਾਇਆ। ਇਸ ਜਿੱਤ ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਜ਼ਮ-ਜ਼ਮਾ ਤੋਪ ਅਤੇ ਲੋਹਗੜ੍ਹ ਦਾ ਕਿਲਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਇਆ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਆਲੀਸ਼ਾਨ ਬਾਗ ਬਣਵਾਇਆ। ਜਿਸ ਦਾ ਨਾਮ ਗੁਰੂ ਰਾਮਦਾਸ ਜੀ ਦੇ ਨਾਮ ਤੇ 'ਰਾਮ ਬਾਗ' ਰੱਖਿਆ। ਬਾਗ ਦੇ ਵਿਚਕਾਰ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣਾ ਗਰਮੀਆਂ ਦਾ ਮਹਿਲ ਬਣਵਾਇਆ। ਜਿੱਥੇ ਉਹ ਅਕਸਰ ਰੁਕਦੇ ਸਨ। ਹੁੱਣ ਇੱਥੇ ਇੱਕ ਅਜਾਇਬ ਘਰ ਬਣਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਦੇ ਲਾਗੇ ਹੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਨੇ ਇੱਕ ਪੁੱਲ ਬਣਵਾਇਆ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਕੰਜਰੀ ਪੁੱਲ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਕੱਲ ਇਸ ਨੂੰ ਪੁਲ ਮੋਰਾਂ ਵਜੋਂ ਸਤਿਕਾਰ ਨਾਲ ਯਾਦ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਨੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਸ਼ਹਿਰ ਦੇ ਆਲੇ ਦੁਆਲੇ ਇੱਕ ਮਜਬੂਤ ਕੰਧ ਤੇ 12 ਦਰਵਾਜ਼ੇ ਬਣਵਾਏ ਸਨ, ਤਾਂ ਜੋ ਸ਼ਹਿਰ ਦੀ ਸੁਰੱਖਿਆ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕੇ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਤੇ ਖਾਲਸਾ ਰਾਜ ਦਾ ਡੂੰਘਾ ਸੰਬੰਧ ਰਿਹਾ ਹੈ।

**ਦੀਨਾਨਗਰ**

ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਸੁਨਹਿਰੀ ਪੰਨਿਆਂ ਨੂੰ ਫਰੋਲੀਏ ਤਾਂ ਦੀਨਾ ਨਗਰ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਵਿੱਚ ਅੱਜ ਵੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਘੋੜਿਆਂ ਦੀ ਟਾਪਾਂ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸ਼ਾਹੀ ਦਰਬਾਰਾਂ ਦੀ ਗੂੰਜ ਸੁਣਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਉਹ ਸਥਾਨ ਸੀ ਜਿੱਥੇ ਰਾਜਸੀ ਫੈਸਲੇ ਵੀ ਹੁੰਦੇ ਸਨ ਅਤੇ ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਗੋਦ ਵਿੱਚ ਬੈਠ ਕੇ ਸ਼ੇਰ-ਏ- ਪੰਜਾਬ ਆਪਣੀ ਥਕਾਵਟ ਵੀ ਲਾਹੁੰਦੇ ਸਨ। ਦੀਨਾ ਨਗਰ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਦੀ ਗਰਮੀਆਂ ਦੀ ਰਾਜਧਾਨੀ ਵਜੋਂ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਅਕਸਰ ਮਈ ਅਤੇ ਜੂਨ ਦੇ ਮਹੀਨਿਆਂ ਵਿੱਚ ਲਾਹੌਰ ਦੀ ਭਿਆਨਕ ਗਰਮੀ ਤੋਂ ਬਚਣ ਲਈ ਦੀਨਾ ਨਗਰ ਵਿੱਚ ਆ ਕੇ ਰਹਿੰਦੇ ਸਨ। ਇਥੋਂ ਦੀ ਹਰਿਆਵਲ, ਨਹਿਰਾਂ ਅਤੇ ਕੁਦਰਤੀ ਵਾਤਾਵਰਨ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਪਸੰਦ ਸੀ। ਮੈਕਨਾਟਨ ਮਿਸ਼ਨ ਅਤੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਨਾਲ ਹੋਈਆਂ ਕਈ ਅਹਿਮ ਮੁਲਾਕਾਤਾਂ ਅਤੇ ਸੰਧੀਆਂ ਦੀ ਗੱਲਬਾਤ ਇਸੇ ਧਰਤੀ 'ਤੇ ਹੋਈ ਸੀ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੀਆਂ ਕੁਝ ਇਮਾਰਤਾਂ ਨੂੰ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਸਰਕਾਰੀ ਕੰਮਾਂ ਲਈ ਵਰਤਿਆ ਜਾਣ ਲੱਗਾ। ਰਾਣੀਆਂ ਦੇ ਰਿਹਾਇਸ਼ੀ ਹਿੱਸੇ ਨੂੰ ਇਸ ਸਮੇਂ ਮਿਊਸੀਪਲ ਕਮੇਟੀ ਦੇ ਦਫਤਰ ਵਜੋਂ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜਰਨੈਲ ਵੈਨਤੂਰਾ ਦੀ ਰਿਹਾਇਸ਼ ਨੂੰ ਵੀ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਸਰਕਾਰੀ ਰੈਸਟ ਹਾਊਸ ਵਜੋਂ ਵਰਤਿਆ ਗਿਆ। ਦੀਨਾ ਨਗਰ ਵਿੱਚ ਦੋ ਮੰਜ਼ਿਲਾਂ ਮਹਿਲ ਹੈ। ਇਹ ਉਹ ਥਾਂ ਹੈ ਜਿੱਥੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਗਰਮੀ ਵਿੱਚ ਰਿਹਾ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਹੁਣ ਇਹ ਇਮਾਰਤ ਢਹਿ ਢੇਰੀ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਹਾਲਾਂਕਿ ਪੰਜਾਬ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਉਸ ਨੂੰ ਸੁਰੱਖਿਅਤ ਸਮਾਰਕ ਐਲਾਨਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਪਰ ਸਾਂਭ ਸੰਭਾਲ ਦੀ ਘਾਟ ਕਾਰਨ ਇਸ ਦੀ ਹਾਲਤ ਚਿੰਤਾਜਨਕ ਹੈ।

**ਫਿਲੌਰ**

ਸਤਲੁਜ ਦਰਿਆ ਦੇ ਕੰਢੇ ਸਥਿਤ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਫਿਲੌਰ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਰਾਜ ਦੀ ਦੱਖਣੀ ਸਰਹੱਦ ਦਾ ਇੱਕ ਅਹਿਮ ਹਿੱਸਾ ਸੀ। ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਗਤੀਵਿਧੀਆਂ ਤੇ ਨਜ਼ਰ ਰੱਖਣ ਲਈ ਇਹ ਇੱਕ ਫੌਜੀ ਟਿਕਾਣਾ ਸੀ। 1809 ਈਸਵੀਂ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਦੀ ਸੰਧੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਜਦੋਂ ਸਤਲੁਜ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਅਤੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਇਲਾਕੇ ਵਿਚਕਾਰ ਸਰਹੱਦ ਮੰਨ ਲਿਆ ਗਿਆ ਤਾਂ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਇੱਥੇ ਇੱਕ ਮਜਬੂਤ ਕਿਲ੍ਹੇ ਦੀ ਲੋੜ ਮਹਿਸੂਸ ਕੀਤੀ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਭਰੋਸੇਮੰਦ ਜ਼ਰਨੈਲ ਦੀਵਾਨ ਮੋਹਕਮ ਚੰਦ ਨੇ ਇੱਕ ਮੁਗਲ ਸਰਾਂ ਨੂੰ ਆਧੁਨਿਕ ਫੌਜੀ ਕਿਲੇ ਵਿੱਚ ਤਬਦੀਲ ਕੀਤਾ ਸੀ। ਇਹ ਕਿਲ੍ਹਾ ਅੱਜ ਵੀ ਸ਼ਹਿਰ ਦੀ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਇਮਾਰਤ ਹੈ। ਇਸ ਦੀਆਂ ਕੰਧਾਂ ਅਤੇ ਬੁਰਜ ਸਿੱਖ ਫੌਜ ਦੀ ਤਾਕਤ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਭਰਦੇ ਹਨ। ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਇਸ ਕਿਲ੍ਹੇ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬ ਪੁਲਿਸ ਦੀ ਅਕੈਡਮੀ ਸਥਿਤ ਹੈ। ਕਿਲ੍ਹੇ ਅੰਦਰ ਇੱਕ ਮਿਊਜ਼ੀਅਮ ਵੀ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹਥਿਆਰ ਵਰਦੀਆਂ ਅਤੇ ਹੋਰ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਵਸਤਾਂ ਰੱਖੀਆਂ ਹੋਈਆਂ ਹਨ। ਦਰਿਆ ਸਤਲੁਜ ਦਾ ਕਿਨਾਰਾ ਭਾਵੇਂ ਇਹ ਕੋਈ ਇਮਾਰਤ ਨਹੀਂ ਹੈ ਪਰ ਅੱਜ ਵੀ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦੀ ਫੌਜ ਇੱਥੇ ਅੰਗਰੇਜ਼ਾਂ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਡਟੀ ਹੋਈ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੀ ਹੈ।

**ਰੋਪੜ**

ਰੋਪੜ (ਹੁੱਣ ਰੂਪਨਗਰ) ਸ਼ਹਿਰ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਖ਼ਾਸ ਕਰਕੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਬਹੁਤ ਹੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਸਥਾਨ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਉਹ ਥਾਂ ਹੈ ਜਿੱਥੇ ਏਸ਼ੀਆ ਦੀਆਂ ਦੋ ਵੱਡੀਆਂ ਤਾਕਤਾਂ ਵਿੱਚਕਾਰ ਇੱਕ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸੰਧੀ ਹੋਈ ਸੀ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਬ੍ਰਿਟਿਸ਼ ਭਾਰਤ ਦੇ ਗਵਰਨਰ ਜਨਰਲ ਲਾਰਡ ਵਿਲੀਅਮ ਬੈਂਟਿੰਗ ਵਿਚਕਾਰ 26 ਅਕਤੂਬਰ 1831 ਨੂੰ ਸਤਲੁਜ ਦਰਿਆ ਦੇ ਕੰਢੇ ਰੋਪੜ ਵਿਖੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਮੁਲਾਕਾਤ ਹੋਈ ਸੀ। ਸਤਲੁਜ ਦੇ ਕੰਡੇ ਜਿਸ ਸਥਾਨ ਤੇ ਮੀਟਿੰਗ ਹੋਈ ਸੀ। ਉੱਥੇ ਸੁੰਦਰ ਬਾਗ ਵਿੱਚ ਯਾਦਗਾਰੀ ਪੱਥਰ ਲੱਗਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਉੱਪਰ 1831 ਈਸਵੀਂ ਦੀ ਉਸੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸੰਧੀ ਅਤੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਵਿਲੀਅਮ ਬੈਟਿੰਕ ਨਾਲ ਹੋਈ ਮੁਲਾਕਾਤ ਦਾ ਵੇਰਵਾ ਲਿਖਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਸਥਾਨ ਤੇ ਇੱਕ ਧਾਂਤ ਦਾ ਬਣਿਆ ਹੋਇਆ ਨਿਸ਼ਾਨ ਸਾਹਿਬ ਵੀ ਹੈ ਜੋ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਭਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸਥਾਨ ’ਤੇ 1831 ਈਸਵੀਂ ਵਿੱਚ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਸ਼ਾਹੀ ਦਰਬਾਰ ਲਗਾਇਆ ਗਿਆ ਸੀ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਮਹਾਰਾਜਾ ਨੇ ਆਪਣੀ ਸ਼ਾਨੇ ਸ਼ੌਕਤ, ਫੌਜੀ ਤਾਕਤ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਦੀ ਅਮੀਰੀ ਦਾ ਪ੍ਰਦਰਸ਼ਨ ਕਰਨ ਲਈ ਬਹੁਤ ਵੱਡਾ ਦਰਬਾਰ ਲਗਾਇਆ ਸੀ।

**ਅਟਾਰੀ**

ਅਟਾਰੀ ਪਿੰਡ ਦਾ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਤੇ ਸਿੱਖ ਸਾਮਰਾਜ ਨਾਲ ਗਹਿਰਾ ਤੇ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸੰਬੰਧ ਹੈ। ਇਹ ਸੰਬੰਧ ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਸਰਦਾਰ ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀ ਵਾਲਾ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਰਾਹੀਂ ਜੁੜਦਾ ਹੈ। ਜੋ ਮਹਾਰਾਜਾ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਭਰੋਸੇਮੰਦ ਜ਼ਰਨੈਲਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਇੱਕ ਸਨ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੇ ਪੋਤਰੇ ਕੰਵਰ ਨੌਨਿਹਾਲ ਸਿੰਘ ਦਾ ਵਿਆਹ ਸਰਦਾਰ ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀਵਾਲਾ ਦੀ ਬੇਟੀ ਬੀਬੀ ਨਾਨਕੀ ਨਾਲ 1837 ਈਸਵੀਂ ਵਿੱਚ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਇਹ ਵਿਆਹ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਸ਼ਾਨਦਾਰ ਸਮਾਗਮਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਇੱਕ ਸੀ। ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀਵਾਲਾ ਨੇ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨਾਲ ਸਾਰੀਆਂ ਅਹਿਮ ਮੁਹਿੰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਹਿੱਸਾ ਲਿਆ। ਮਹਾਰਾਜਾ ਦੀ ਮੌਤ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਵੀ ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀਵਾਲਾ ਨੇ ਸਭਰਾਵਾਂ ਦੀ ਜੰਗ 1846 ਈਸਵੀਂ ਵਿੱਚ ਬਹਾਦਰੀ ਨਾਲ ਸ਼ਹਾਦਤ ਪਾਈ, ਜੋ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਖ਼ਾਲਸਾ ਰਾਜ ਪ੍ਰਤੀ

ਵਫਾਦਾਰੀ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਹੈ। ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਅਟਾਰੀ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਸਰਦਾਰ ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀਵਾਲਾ ਦੀ ਸਮਾਧ ਅਤੇ ਹਵੇਲੀ ਆਦਿ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਮੌਜੂਦ ਹਨ।

ਸੋ ਇਹ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਸਿਰਫ ਭੂਤਕਾਲ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਰਦੀਆਂ ਬਲਕਿ ਮੌਜੂਦਾ ਪੀੜ੍ਹੀ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਵਿਰਾਸਤ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦਾ ਸਾਧਨ ਵੀ ਹਨ। ਕੁਝ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਅਣਗਹਿਲੀ ਕਾਰਨ ਅਲੋਪ ਹੋ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸੰਭਾਲਣ ਦੀ ਸਖਤ ਲੋੜ ਹੈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਦੀ ਸਾਂਭ ਸੰਭਾਲ ਲਈ ਸਰਕਾਰਾਂ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਦੋਵਾਂ ਨੂੰ ਸਾਂਝੇ ਯਤਨ ਕਰਨੇ ਚਾਹੀਦੇ ਹਨ।

**ਹਵਾਲੇ**


1) ਬਾਬਾ ਪ੍ਰੇਮ ਸਿੰਘ ਹੋਤੀ, ਸਿੱਖ ਦਾ ਸਮਾਜਿਕ ਇਤਿਹਾਸ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ, ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਸਾਲ 2001, ਪੰਨਾ ਨੰ.149
2) ਵਿਲੀਅਮ ਜੀ. ਆਮਸਟਰਾਂਗ, ਐੱਪੀ ਰੌਖਿਬ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦਾ ਦਰਬਾਰ ਅਤੇ ਫੌਜ, ਅਨੁਵਾਦ ਜਸਪਾਲ ਸਿੰਘ ਘਈ, ਮਨ ਬੁੱਕ ਸਟੋਰ ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ (ਬਠਿੰਡਾ), ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਸਾਲ 2023, ਪੰਨਾ ਨੰ.133
3) ਰਣਜੀਤਸਿੰਘ ਸਿੰਘ (ਡਾ.), ਸਰਦਾਰ ਸ਼ਾਮ ਸਿੰਘ ਅਟਾਰੀਵਾਲਾ ਜੀਵਨ ਚਰਿੱਤਰ ਤੇ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ, ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਕ ਡਾ. ਚਤਰ ਸਿੰਘ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਅਕਤੂਬਰ 2021, ਪੰਨਾ ਨੰ.31
4) ਬਲਦੇਵ ਸਿੰਘ, ਸੁਰਜ ਦੀ ਅੱਖ, ਲੋਕ ਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, 2017, ਪੰਨਾ ਨੰ.1465



ਮੋ: 95929-17259

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 59-69
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ANTHROPOGENIC FOOD AND FEEDING RESPONSES OF BIRDS IN THE HARSH HILL LANDSCAPE, SIKAR, RAJASTHAN: A FIELD-BASED OBSERVATIONAL STUDY

**Abhishek Rollan**
Scholar, Department of zoology, S.P.C. Govt. College, Ajmer (Rajasthan)
**Dr. A. K.Siroya**
Professor, Department of zoology, S.P.C. Govt. College, Ajmer (Rajasthan)
Affiliated to Maharshi Dayanand Saraswati University Ajmer (Rajasthan)

## ABSTRACT
The increasing availability of anthropogenic food resources to natural environments that's cause effects on wildlife behaviour through human activity. Opportunistic bird species consume processed food sources that available from religious tourism and visitor activities. This study in covered the consumption of anthropogenic food resources by avian fauna of the HARSH Hill sacred landscape, Rajasthan, India. Field observations were conducted during 12 visits from April to June 2026. My research study included 60 hours of observation. Visitor-generated food and religious offerings feeding behaviour was recorded by direct observation and photographic documentation. A total of 41 recorded anthropogenic feeding events. The most commonly observed species were Red-vented Bulbul *(Pycnonotus cafer)* (36.6% of all feeding records), followed by Brahminy Starling *(Sturnia pagodarum)* (24.4%), Common Babbler (*Argya caudata*) (14.6%), Cinereous Tit *(Parus cinereus)* (9.8%), Rufous Treepie *(Dendrocitta vagabunda)* (7.3%) and Brown Rock Chat (*Oenanthe fusca*) (7.3%). Birds were observed feeding on the biscuits, remnants of banana, sugar crystals, grains and other food materials associated with human activities. Feeding activity was concentrated around temple premises, visitor congregation sites and parking areas. The findings human-derived food resources have become a persistent part of the local foraging environment for many bird species. The study indicates interaction between religious tourism and avian feeding behaviour in a semi-arid hill ecosystem. The availability of anthropogenic food has caused birds choose the processed food not depend on insect.
**Keywords:** Avian feeding, Foraging ecology, Anthropogenic feeding, sacred landscapes, HARSH Hill, Rajasthan, Birds behaviour, Human-derived food, Religious tourism

## 1. INTRODUCTION

The presence of food is a basic factor affecting the distribution, abundance and behaviour of birds. Frequent changes in resource availability induce immediate behavioural responses, especially in species with a broad spectrum of food sources. When humans move into wild areas, animals end up finding new things and food sources that aren't naturally part of their environment. Anthropogenic foods have received growing attention in ecological research among various forms of human influence. These types of human-derived food originate from tourism, recreational activities, religious practices and waste disposal. These resources may provide predictable feeding opportunities and can influence habitat use, species interactions, and foraging strategies. Sacred landscapes are a unique ecological niche where biodiversity and human cultural practices occur. In many parts of India temple complexes are visited by a large number of people who regularly distribute food as part of religious traditions. Grains, sweets, fruits, biscuits and processed food items are generally deposited inside the temple premises or thrown in the surrounding areas. Birds live in these sites have access to food resources that are very different from their natural diet.

One such sacred landscape is HARSH HILL, in Sikar District of Rajasthan. There are many different types of birds on the site and throughout the year there is frequent visitor activity. While this ecosystem is ecologically and culturally significant, little is known about the effects of anthropogenic food resources on avian behaviour.

The present study was initiated to record the bird species using human derived food resources in HARSH HILL and to explore the behavioural responses associated with supplementary feeding opportunities provided by tourism and religious activities.

## 2. REVIEW OF LITERATURE

Human activities have increasingly altered the availability of food resources for wild animals. Food discarded or unintentionally provided by people can create predictable feeding opportunities, particularly for species that are able to exploit novel resources. (Oro et al., 2013) described these resources as predictable anthropogenic food subsidies and argued that their ecological effects can extend beyond individual feeding behaviour. Regular access to such food may improve the fitness of opportunistic species and contribute to changes in their population size, while also influencing competition and other interactions within ecological communities. The authors further suggested that persistent food subsidies can favour adaptable species and may reduce variation in their populations, with possible consequences for community diversity. These observations indicate that anthropogenic food should be considered not merely as an additional food source but as a factor capable of influencing ecological relationships at broader scales.

This perspective is relevant to sacred landscapes such as Harsh Hill, where food associated with religious offerings and visitor activities is repeatedly available around human-use areas. However, the present study does not attempt to measure population-level or community-level effects; it focuses specifically on documenting observed feeding interactions between birds and human-derived food resources.

Anthropogenic food subsidies are a topic of major interest in avian behavioural ecology due to their ecological implications. Previous studies have mostly been conducted in urban environments, where the birds often benefit from refuse dumps, food waste and supplementary feeding stations. More recent studies have shown that similar patterns are present in non-urban settings such as pilgrimages sites, protected areas and recreational landscapes**.**

Studies in Europe and North America have demonstrated that predictable food subsidies have the ability to alter the movement patterns and foraging behaviour of birds.(Robb et

al., 2008) reported that supplementary feeding may influence habitat choice and decrease the time spent by bird species in searching for natural food availability. These changes often select for species that are behaviourally flexible and dietary generalists.

This research emphasised that feeding wild birds is one of the most common forms of human-wildlife interactions around the world. Supplementary feeding has the potential to provide energetic benefits, but can also alter ecological processes by increasing local bird densities and changing species composition (Jones & James Reynolds, 2008).

Experimental evidence has provided further support for the idea that supplementary food can influence bird communities. (Galbraith et al., 2015) examined the effects of bird feeding on urban bird assemblages and found that feeding practices could alter community structure, with some species responding more strongly than others. Their findings are particularly relevant to the concept of behavioural flexibility because species capable of exploiting predictable human-associated resources may gain an advantage in modified environments. Urban studies cannot be expected to accurately reflect semi-arid hill ecosystems. The landscape, natural food availability and human activity in these environments differ significantly. Behavioural flexibility is also considered an important factor in the ability of birds to persist in human-modified environments. (Sol et al., 2013), in a review of behavioural responses to urbanization, showed that behavioural adjustment can facilitate the use of novel resources and help some species cope with human disturbance. Such responses may partly explain why adaptable and generalist species are often conspicuous in human-influenced habitats. At the same time, behavioural flexibility alone does not demonstrate that a species has become dependent on anthropogenic resources.

The consequences of supplementary feeding are not uniformly positive. (Wilcoxen et al., 2015) using a multi-year study of wild birds, reported that access to supplementary food was associated with improvements in several measures of individual physiological condition, but they also detected higher disease prevalence at feeding sites. Their findings illustrate the contrasting outcomes that can arise from the same human activity. Food may provide an energetic advantage. While concentrate feeding can also create conditions favourable to disease transmission.

Sacred and religious sites can create distinctive opportunities for human–bird interactions because food is sometimes provided to birds as part of local cultural practices. In an urban study from (Sutariya & Bhatt, 2025) documented regular pigeon feeding at religious sites, where temple priests and visitors provided grains to birds. Their study also showed that feeding hotspots were associated with differences in pigeon abundance and distribution. Such observations suggest that religious feeding practices can influence the spatial use of human-dominated areas by birds.

Semi-arid ecosystems such as in Rajasthan are ecologically more complex. The availability of natural food can vary widely with season which might make predictable food subsidies more appealing. However, information regarding the anthropogenic feeding in the Aravalli hill systems is still scanty.

The present investigation fills this gap by using field-based observations from the HARSH HILL sacred landscape where multiple bird species were seen foraging on food resources related to human activities.

This case study anthropogenic food resource may alter bird communities by selecting for adaptable species rather than others. They found that supplementary feeding often increases the abundance of generalist birds, with limited benefits to specialist species.

Their ecological consequences are still debated. Some have argued that additional food may also have improved survival during times of natural resource scarcity. Others have

identified possible dangers such as nutritional imbalance, disease transmission, behavioural dependence and changes in competitive interactions between species**.**

## 3. OBJECTIVE

1. To identify bird species that utilizes anthropogenic food resources at HARSH HILL.
2. To document feeding behaviour associated with visitor-generated food materials.
3. To examine the relationship between bird activity and food availability around temple infrastructure.
4. To discuss potential ecological implications of anthropogenic feeding in a semi-arid sacred landscape.
5. To suggest management measures that may reduce ecological disturbance while maintaining cultural practices.

## 4. MATERIALS AND METHODS

### STUDY AREA

The field survey was conducted at HARSH HILL, Sikar District, Rajasthan. The landscape is an integral part of the northeastern extension of the Aravalli hill system. The landscape consists of rocky terrain, scrub vegetation, scattered trees, temple infrastructure, pathways, parking zones and visitor congregation areas. The site regularly experiences an influx of pilgrims and tourists due to its religious significance.




**Figure 1. Study area map HARSH HILL (Sikar, Rajasthan) showing spatial distribution and anthropogenic food consumption of observed bird's species.**

## FIELD SURVEYS

Field surveys were conducted from April to June 2026. A total of 12 visits were undertaken during the study period. Surveys were conducted in the early morning hours from 05:00 to 10:00 h, which corresponds to the peak of bird activity. The observation time was about 60 hours in all.

## DATA COLLECTION

Birds were observed by direct visual surveys and photographic records using canon r50 camera. The study area map is generated using QGIS software. Feeding events on anthropogenic food resources were noted when encountered. Data collected during observations included species identity, food type, feeding location and behavioural responses. The food resources observed during the study included biscuits, banana remains, sugar crystals (mishri), grains associated with religious offerings, bread fragments and other visitor Generated food remains.

## Data Analysis

The study followed a qualitative observational approach. Feeding observations were recorded according to bird species, type of anthropogenic food resource, and feeding location. A total of **41 anthropogenic feeding events** involving six bird species were documented during the 12 field visits. The relative frequency of feeding observations was calculated for each species to describe its contribution to the total number of recorded feeding events.

The relative frequency of feeding observations was calculated using the following formula:

**Relative frequency (%) = (Number of feeding observations of a species / Total number of feeding observations) × 100**

For the present study, the total number of feeding observations was **41**. For example, the Red-vented Bulbul was recorded in 15 feeding observations; therefore, its relative frequency was calculated as **(15/41) × 100 = 36.6%**. The same calculation was applied to the other recorded species. Feeding events were also grouped according to the food resources consumed and the locations where feeding occurred. The findings were summarized using observation frequencies, percentages, tables, and photographic records. As the study was observational in nature and focused on documenting feeding interactions, no inferential statistical tests were applied.

# 5. Results

## 5.1 Observation Summary

A total of 41 anthropogenic feeding events were recorded during the study period.

Table 1. Frequency of Anthropogenic Feeding Observations Recorded at Harsh Hill (April-June 2026)

| S. No. | Bird Species | Scientific Name | Number of Observation(n) | Relative Frequency (%) |
|---|---|---|---|---|
| 1 | Red-vented Bulbul | *Pycnontus cafer* | 15 | 36.6 |
| 2 | Rufous Treepie | *Dendrocitta Vagabunda* | 3 | 7.3 |
| 3 | Cinereous Tit | *Parus cinereus* | 4 | 9.8 |
| 4 | Common Babbler | *Argya caudata* | 6 | 14.6 |
| 5 | Brown Rock Chat | *Oenanthe fusca* | 3 | 7.3 |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 6 | Brahminy Starling | *Sturnia pagodarum* | 10 | 24.4 |
| | **Total** | | 41 | 100.0 |

A total of 41 anthropogenic feeding observations involving six resident birds' species were recorded during the study period. Red-vented Bulbul (*Pycnonotus cafer*) was the most frequently observed species, accounting for 36.6% of all feeding records, followed by Brahminy Starling (*Sturnia pagodarum*) (24.4%), Common Babbler (*Argya caudata*) represented 14.6% of the observations, while Cinereous Tit (*Parus cinereus*) contributed 9.8%.

Rufous Treepie (*Dendrocitta vagabunda*) and Brown Rock Chat (*Oenanthe fusca*) were each recorded in 7.3% of the feeding observations (Table 1).

## 5.2 Feeding Locations and Food Resources

| S.No. | Site | Species Observed | Natural Dietary Guild /Food type | Anthropogenic Food Consumed |
|---|---|---|---|---|
| **1** | Temple Entrance | Red-vented Bulbul (*Pycnonotus cafer*) | Frugivorus/ Insectivorus | Banana, Biscuit crumbs |
| **2** | Temple Courtyard | Red-vented Bulbul (*Pycnonotus cafer*) | Frugivorus/ Insectivorus | Sugar crystals(mishri), Biscuits |
| **3** | Prasad Distribution Area | Red-vented Bulbul (*Pycnonotus cafer*) | Frugivorus/ Insectivorus | Banana, biscuit crumbs |
| **4** | Temple Road Along | Rufous Treepie *(Dendrocitta vagabunda)* | Insectivorus/ Frugivorus/scavenger / Carnivorous | Roti crumbs, paratha |
| **5** | Temple Road | Cinereous Tit*(Parus cinereus)* | Omnivorous/ Insectivorous | Paratha crumbs, roti |
| **6** | Visitor Resting Area | Common Babbler*(Argya caudata)* | Herbivorous/ Insectivorus | Human-provided grains, churma |
| **7** | Southern Rocky Trail | Brown Rock Chat*(Oenanthe fusca)* | Insectivorus | Puri, Fried crumbs |
| **8** | Western Temple Complex | Brahminy Starling*(Sturnia pagodarum)* | Omnivorous/ Frugivorus/ Necterfeeders | Churma, Bread Crumbs |

Table 2. Bird species, anthropogenic food items, and feeding locations recorded in the HARSH Hill sacred landscape during April-June 2026.

### 5.3 Photographic Documentation of Feeding Behaviour

Figure 2. Composite photographic plate (A-G)



A. **Red-vented Bulbul** (*Pycnonotus cafer*) feeding on banana



B. **Red-vented Bulbul** (*Pycnonotus cafer*) feeding on sugar crystal



C. **Brown Rock chat***(Oenanthe fusca)* feeding on fried food



D. **Cinereous Tit***(Parus cinereus)* feeding on bread crumbs



E. **Common Babbler***(Argya caudata)* consuming churma



F. **Rufous Treepie***(Dendrocitta vagabunda)* feeding on discarded food item



G. **Brahminy Starling** *(Sturnia pagodarum)*feeding oil fried food

## 6. Discussion

The observations from HARSH HILL show that human-associated food has become a noticeable part of the feeding environment used by several resident bird species. During 12 field visits, 41 anthropogenic feeding observations were recorded. Feeding activity mainly associated with temple premises, visitor congregation areas, and parking spaces. The repeated occurrence of birds at these locations suggests that food left through religious offerings, visitor feeding, and food remains provides accessible foraging opportunities within areas of regular human use.

The feeding records were evenly distributed among the six species. Feeding activity was concentrated in many observations around human-use areas. The higher frequency recorded for certain species may be related to their ability to exploit readily available food in disturbed or human-modified surroundings. The observed frequencies represent the relative occurrence of feeding activity among the recorded bird species during the survey period. These observations provide useful information on species-specific feeding responses to anthropogenic food resources within the study area.

The type of food available at the site is also relevant. Birds were observed consuming biscuits, banana remains, sugar crystals, grains, and other food materials associated with visitors and religious offerings. Such resources differ from the naturally available foods of

birds and can be encountered in concentrated patches around places where people gather. Earlier research on supplementary feeding has similarly shown that predictable human-provided food can influence the foraging behaviour and habitat use of birds (Robb et al., 2008).

The concentration of feeding activity around temple and visitor-use areas is particularly important in the context of Harsh Hill. The site is not simply a natural habitat separated from human activity; religious use, movement of visitors, food offerings, and associated waste occur alongside the existing hill vegetation and rocky landscape. Birds can exploit these anthropogenic food resources while continuing to use the surrounding landscape.

The observations also indicate that anthropogenic feeding may be associated with repeated use of particular locations. Birds were recorded returning to areas where food materials were available. Processed foods such as biscuits should also be considered separately from naturally occurring food resources. Their nutritional composition is different from the fruits, seeds, nectar, and invertebrates available through natural foraging. Birds were repeatedly observed feeding on processed foods or discarded by visitors. Where birds are regularly interact with people.

Religious tourism can create localized feeding opportunities for birds within the Harsh Hill landscape. The ecological significance of these interactions will depend on how frequently food is provided, the availability of such resources changes natural foraging behaviour over time.

## 7. Conservation and Management Implications

The observations from HARSH HILL suggest that bird's conservation at the site should consider not only habitat protection but also the way food is provided and discarded by visitors. Because feeding activity was concentrated around temples, visitor areas, and parking locations, relatively simple management measures could reduce unnecessary dependence on human-derived food without interfering with the religious importance of the site.

Visitors should be encouraged to avoid providing biscuits and other processed foods directly to birds. Where feeding as part of religious practice is culturally important, awareness programmes can promote more appropriate food practices and discourage the accumulation of food waste around temple premises.

Improved disposal of food remains would also help reduce the formation of concentrated feeding patches. Clearly designated waste bins, regular removal of discarded food, and cleanliness around parking and congregation areas could reduce the availability of unwanted food while maintaining the normal functioning of the site.

Conservation planning should also retain the natural vegetation and other habitat features used by birds for feeding and shelter. Human-derived food should not be regarded as a substitute for naturally available resources. Maintaining the existing ecological features of the hill landscape would provide birds with opportunities to continue using natural foraging resources.

These measures do not require the removal of religious practices. Aim to reduce unnecessary food waste and encourage a form of visitor behaviour that is compatible with the ecological character of HARSH HILL.

## 8. Conclusion

The present study documents repeated use of anthropogenic food resources by birds at the HARSH HILL sacred landscape of Rajasthan. Across 12 field visits and approximately 60 hours of observation, 41 feeding events involving six resident bird species were recorded. Red-vented Bulbul was the most frequently recorded species, followed by Brahminy Starling and Common Babbler.

Feeding observations were concentrated around temple premises, visitor congregation areas, and parking locations, where birds encountered biscuits, banana remains, sugar crystals, grains, and other food materials associated with human activity. These observations indicate that visitor-generated food has become a recurring component of the local foraging environment for several bird species.

The study does not establish population-level or long-term health effects, but it identifies a clear human–bird feeding interaction that deserves further attention. Managing food waste, improving visitor awareness, and maintaining natural habitat resources could help reduce unnecessary alteration of feeding opportunities while retaining the cultural importance of HARSH HILL.

## 9. References


1. Galbraith, J. A., Beggs, J. R., Jones, D. N., & Stanley, M. C. (2015). Supplementary feeding restructures urban bird communities. *Proceedings of the National Academy of Sciences, 112*(20). https://doi.org/10.1073/pnas.1501489112
2. Jones, D. N., & James Reynolds, S. (2008). Feeding birds in our towns and cities: A global research opportunity. *Journal of Avian Biology, 39*(3), 265–271. https://doi.org/10.1111/j.0908-8857.2008.04271.x
3. Oro, D., Genovart, M., Tavecchia, G., Fowler, M. S., & Martínez-Abraín, A. (2013). Ecological and evolutionary implications of food subsidies from humans. *Ecology Letters, 16*(12), 1501–1514. https://doi.org/10.1111/ele.12187
4. Robb, G. N., McDonald, R. A., Chamberlain, D. E., & Bearhop, S. (2008). Food for thought: Supplementary feeding as a driver of ecological change in avian populations. *Frontiers in Ecology and the Environment, 6*(9), 476–484. https://doi.org/10.1890/060152
5. Sol, D., Lapiedra, O., & González-Lagos, C. (2013). Behavioural adjustments for a life in the city. *Animal Behaviour, 85*(5), 1101–1112. https://doi.org/10.1016/j.anbehav.2013.01.023
6. Sutariya, U., & Bhatt, N. (2025). Comparative study of feral pigeon abundance in relation to feeding inputs across urban and rural landscapes. *Discover Animals, 2*(1), 80. https://doi.org/10.1007/s44338-025-00134-2
7. Wilcoxen, T. E., Horn, D. J., Hogan, B. M., Hubble, C. N., Huber, S. J., Flamm, J., Knott, M., Lundstrom, L., Salik, F., Wassenhove, S. J., & Wrobel, E. R. (2015). Effects of bird-feeding activities on the health of wild birds. *Conservation Physiology, 3*(1), cov058. https://doi.org/10.1093/conphys/cov058



**Corresponding author:** 1. Abhishek Rollan | Email: abhishekrolla143@gmail.com
2. Dr. Ashok Kumar Siroya | Email: dr.ashoksiroya@yahoo.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 70-75
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों की भूमिका: एक अध्ययन

**डॉ. श्याम मनोहर गौतम**
शोध पर्यवेक्षक (पीएच.डी.),
(कोटा विश्वविद्यालय,कोटा)
**अनिता सुमन**
शोधार्थी,
(कोटा विश्वविद्यालय,कोटा)

## 1. प्रस्तावना

भारतवर्ष के सभी समाजों में परिवार को एक मजबूत संगठन माना गया है। मनुष्य हो या पशुपक्षी सभी अपने - लिए परिवार को आवश्यक मानते हैं। परिवार ही वह धुरी है जिसके इर्द - गिर्द सम्पूर्ण सृष्टि के मानव वपशु पक्षी घूमते हैं। परिवार ही वह संस्था है जो मनुष्य की हर प्रकार की आवश्यकताओं को पूर्ण कर उसे सुखी व सम्पन्न जीवन यापन में सहायता करती है। परिवार में रहकर ही मनुष्य सृष्टि का श्रेष्ठतम प्राणी बनता है। क्योंकि मनुष्य जब जन्म लेता है तो वह केवल एक सामाजिक प्राणी होता है न उसमें समझ होती है और न ही अन्य भाव, वह केवल एक नासमझ प्राणी होता है। परिवार में रहकर ही वह स्वयं को प्रेम, संस्कार व समन्वय द्वारा शोधित करता है। व्यक्ति समाज में रहकर, उनके अनुसार ढलकर उनके द्वारा प्रदत्त गुणों को ग्रहण कर स्वयं को सर्वश्रेष्ठ घोषित कर सकता है। जन्म से वृद्धावस्था तक मनुष्य विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ करता है, गलतियाँ भी करता है और उन गलतियों से बहुत कुछ सीखता भी है। परिवार ही मनुष्य को सही व गलत की पहचान करना सिखाता है। परिवार में समायोजित व्यक्ति समाज में भी भली प्रकार से समायोजित हो जाता है। यही समायोजन व्यक्ति को जीवन जीने में मदद करता है। यदि व्यक्ति के पारिवारिक सम्बन्ध अच्छे होते हैं तो वह जीवन में आगे सभी स्थानों पर आसानी से समायोजित हो जाता है। जीवन में आगे बढ़ने के लिए व्यक्ति में प्रेम, साहस, धीरता, समन्वय, रचनात्मकता आदि गुण होना आवश्यक है। यदि परिवार निराशा से ग्रस्त है कुंठित है तो ऐसा परिवार स्वस्थ व्यक्तित्व का निर्माण नहीं कर सकता है। परिवार का वातावरण मनुष्य के

जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। सर्वप्रथम वह अपने परिवार से सुनना, बोलना, पढ़ना, और लिखना आदि कौशल अर्जित करता है, फिर वह पाठशाला की ओर अग्रसर होकर धीरेधीरे शिक्षा अर्जित कर स्वयं को श्रेष्ठ - बनाकर समाज में प्रतिष्ठित करता है। परिवार मानव जीवन की प्रथम पाठशाला है जो मानव स्वभाव का पोषण करती है। **सी-एचकुले** के अनुसार"परिवार मानव जीवन की प्राथमिक पाठशाला है जो मानव स्वभाव का पोषण करती है।" इस प्रकार परिवार से आशय है, ऐसे व्यक्तियों का समूह जो विवाह, रक्त या माने गये रिश्तों का समूह है ये सभी रिश्तों में बंधकर एक परिवार बनाते हैं। परिवार ही व्यक्ति को सामाजिक व आर्थिक सुरक्षा देता है।

**2. समस्या का औचित्य-**

परिवार ही बालक की प्रथम पाठशाला व माता ही प्रथम शिक्षक होते है। जैसे-जैसे बालक की आयु बढ़ती जाती है, माता-पिता का ध्यान कम होता जाता है, यदि इस उम्र में ध्यान न दिया जाए, तो वह स्वयं को भावात्मक रूप से असुरक्षित महसूस करता है। माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अग्रसर होते ही सबसे पहली समस्या विषय चयन की होती है। ऐसे में परिवार ही सही निर्णय लेने में बालक की मदद कर सकता है। जो बालक पारिवारिक तौर पर सुरक्षित महसूस करते हैं, वे जीवन में आने वाली कठिनाइयों को आसानी से पार कर पाते हैं। नई उम्र, नए सपने, नई आशा व उम्मीद के साथ इस स्तर के बालकों में कई शारीरिक बदलाव भी हो रहे होते हैं, जिनकी जानकारी परिवार प्रदान कर बच्चे को सुरक्षित महसूस करवा सकता है। विद्यालय स्तर की कठिनाइयों का समाधान भी समय रहते करने से बालक पढ़ाई में स्वयं को ज्यादा बेहतर बना सकता है।

**3.शोध के उद्देश्य-**

1.विद्यार्थियों (छात्र- छात्राओं) के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों का अध्ययन करना।

2.विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति का अध्ययन करना।

3.विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों और भावात्मक स्थिरता के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

**4.शोध परिकल्पनाएँ-**

1.विद्यार्थियों (छात्र- छात्राओं) के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों के सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं होता है।

2.विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

3.विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व भावात्मक स्थिरता के मध्य में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं होता है।

**5.साहित्य की समीक्षा-**

**1. डॉ.पाटिल, योजना (2013)**: "समाज में पारिवारिक संबन्ध एवं मूल्य आधारित शिक्षा की भूमिका।"

उद्देश्य-1.बालको के परिवार के संबंधों का अध्ययन।

2.बालको में मूल्य आधारित शिक्षा की भावना का अध्ययन।

**निष्कर्ष-** प्रस्तुत शोध में पाया कि समाज में अभिभावकों के पारिवारिक संबन्ध बच्चों के साथ अनुकूल है तो उनमें मूल्य आधारित शिक्षा का स्तर ठीक पाया गया, किंतु एकल परिवार में रहने वाले बच्चों की मूल्य आधारित शिक्षा पर बल दिया गया।

2.**भाटिया, गुंजन 2012)**: "किशोर बालकों में भावनात्मक एवं पारिवारिक संबंधों का एक अध्ययन।"

उद्देश्य-1. किशोर बालकों की भावनात्मकता का अध्ययन करना।

2. किशोरों में पारिवारिक संबन्धों का अध्ययन करना।

**निष्कर्ष-** शोध में पाया गया कि अच्छे पारिवारिक वातावरण में ही किशोर बालक अच्छे संस्कार सीखते हैं एवं भावनाओं को नियंत्रित कर पाने में सक्षम होते है।

**3.पुरोहित (2010):** "कॉलेज विद्यार्थियों के पारिवारिक परिवेश एवं सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन।"

उद्देश्य- 1. कॉलेज छात्रों-छात्राओं में पारिवारिक परिवेश का अध्ययन करना।

5.कॉलेज छात्रों-छात्राओं में सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन करना।

**निष्कर्ष-** (गुजरात के बनासकांठा जिले में) के विद्यार्थियों पर किये शोध में पाया गया कि परिवारिक परिवेश के अतिरिक्त अन्य कारक जैसे- कॉलेज का वातावरण, मित्र मंडली, उनकी आर्थिक स्थिति सामाजिक प्रवृत्ति को प्रभावित करती है, यह भी देखा गया कि लड़कियों की अपेक्षा लड़के ज्यादा सामाजिक रूप से परिपक्व होते हैं।

**4.फेवेरेटो, ग्रेस (2010),** "पारिवारिक वातावरण का माध्यमिक स्तर के बच्चों पर प्रभाव का अध्ययन।"

**निष्कर्ष** – इन्होंने अपने शोध निष्कर्ष में कहा कि तलाकशुदा माता-पिता के बच्चों में लड़ाई-झगड़े होते रहते हैं और इन झगड़ों का सीधा प्रभाव उन माता-पिता की संतानों पर भी पड़ता है। ऐसे माता-पिता के बच्चे तनाव, चिंता, कुंठा से घिरे रहते हैं वे संतोषजनक जीवन यापन नहीं कर पाते हैं और यह सब प्रभाव उनके जीवन पर पड़ता है।

**6. तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण-**

**1.माध्यमिक स्तर(Secondary Level)**माध्यमिक स्तर शि -क्षा प्रणाली का वह महत्वपूर्ण चरण है, जिसमें कक्षा नवीं और दसवीं के विद्यार्थी शामिल होते है।

**2.)विद्यार्थीStudent)-** "विद्या चाहने वाला" विद्यार्थी वह बालक होता है जो ज्ञान प्राप्त करने के लिए औपचारिक रूप से किसी स्कूल, कॉलेज या संस्थान में नामांकित हो।

**3.पारिवारिक संबंध(Family Relationships)-** पारिवारिक संबन्ध उन सामाजिक और भावनात्मक संम्बन्धो को दर्शाता है जो एक परिवार के सदस्यों के बीच मौजूद होते हैं।

**4.सर्वांगीण विकास (Holistic Development)-** किसी व्यक्ति (विशेषकर बच्चे या विद्यार्थी) के जीवन के सभी पक्षों और अंगों का एक साथ, संतुलित और पूर्ण रूप से विकसित होना है।

**7.शोध विधि-** प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है।

**8.जनसंख्या एवं न्यादर्श-** शोध जनसंख्या के रूप में राजस्थान के झालावाड़ जिले की खानपुर तहसील के माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी है, तथा इस जनसंख्या में से यादृच्छिक विधि के माध्यम से 180 विद्यार्थियों (छात्र/छात्राएँ) को न्यादर्श के लिए चुना है।

**9.शोध में प्रयुक्त उपकरण-** पारिवारिक वातावरण पैमाना (Family Environment Scale - FES) डॉ. हरप्रीत भाटिया और डॉ. एन. के. चड्ढा के मानकीकृत उपकरण को उपयोग में लिया है।

**10.शोध सांख्यिकी विधियाँ-** आँकड़ो से शोध निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु मध्यमान, प्रमाप-विचलन, टी-परीक्षण एवं सहसंबंध सांख्यिकी का उपयोग किया है।

**11.सांख्यिकीय विश्लेषण एवं व्याख्या -**

1.विद्यार्थियों (छात्र- छात्राओं) के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों का अध्ययन करना।

**सारणी- 1**

विद्यार्थियों (छात्र- छात्राओं) के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबंधों के मध्य सांख्यिकीय विश्लेषण-

| चर | जनसँख्या | न्यादर्श | मध्यमान | प्रमाप विचलन | टी-मूल्य | सार्थकता स्तर |
|---|---|---|---|---|---|---|
| सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबंध | राजकीय विद्यालयों के छात्र | 90 | 98.56 | 12.5 | 4.10 | 0.01 पर अस्वीकृत |
| | राजकीय विद्यालयों की छात्राएँ | 90 | 104.22 | 12.2 | | |

$df = N_1 + N_2 - 2 = 90 + 90 - 2 = 178$

df=178 का 0.05 पर सारणी मान=1.96

df=178 का 0.01 पर सारणी मान=2.59

**विश्लेषण एवं व्याख्या-** उपर्युक्त सारणी- 1 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि राजकीय छात्र- छात्राओं के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों के मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन से प्राप्त टी-मूल्य 4.10 है, जो (df)178 के 0.01 के सारणीयन मान 2.59 से लगभग दुगना है। अतः शून्य परिकल्पना(Null Hypothesis) विद्यार्थियों (छात्र- छात्राओं) के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों के सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं होता है, को अस्वीकृत किया गया है। निष्कर्षतः छात्र- छात्राओं के सर्वांगीण विकास पर उनके पारिवारिक संबन्धों के सन्दर्भ में सार्थक अंतर पाया गया है।

2. विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति का अध्ययन करना।

**सारणी- 2**

विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति के मध्य सांख्यिकीय विश्लेषण-

| जनसंख्या | चर | न्यादर्श | मध्यमान | प्रमाप विचलन | टी-मूल्य | सार्थकता स्तर |
|---|---|---|---|---|---|---|
| माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी | पारिवारिक संबंध | 90 | 98.27 | 13.50 | 1.13 | 0.05 पर स्वीकृत |
| | संवाद की स्थिति | 90 | 100.38 | 11.40 | | |

$df = N_1 + N_2 - 2 = 90 + 90 - 2 = 178$

df=178 का 0.05 पर सारणी मान=1.97

df=178 का 0.01 पर सारणी मान=2.59

**विश्लेषण एवं व्याख्या-** उपर्युक्त सारणी- 2 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व संवाद की स्थिति के मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन से प्राप्त टी-मूल्य 1.13 है, जो (df) 178 के 0.05 के सारणीयन मान 1.97 से कम है। अतः परिकल्पना विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है, को स्वीकृत किया गया है। निष्कर्षतः विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और संवाद की स्थिति में अंतर नहीं है।

3.विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व भावात्मक स्थिरता के मध्य सार्थक सहसंबंध का अध्ययन करना।

**सारणी- 3**

विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व भावात्मक स्थिरता के मध्य प्रॉडक्ट मॉमेंट सह-संबंध गुणांक-

| जनसंख्या | चर | | सहसंबंध गुणांक 'r' | सार्थकता स्तर |
|---|---|---|---|---|
| | X | Y | | |
| माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थी | पारिवारिक संबंध | भावात्मक स्थिरता | 0.102 | 0.05 पर स्वीकृत |

df= N - 2 =180 - 2= 178

df= 178 पर 0.05 का मान= .139

df= 178 पर 0.01 का मान= .182

**विश्लेषण एवं व्याख्या-** उपर्युक्त सारणी- 3 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंध व भावात्मक स्थिरता के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक (df) 178 के सार्थकता स्तर 0.05 पर सारणीयन मान 0.139 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व भावात्मक स्थिरता के मध्य सार्थक सहसंबंध नहीं है, को स्वीकृत किया है। परिणामतः विद्यार्थियों के पारिवारिक संबन्धों व भावात्मक स्थिरता के मध्य सांख्यिकीय रूप से सह-संबंध (No significant statistical correlation) नहीं पाया गया है।

**12.निष्कर्ष-**

1. परिकल्पना के अस्वीकृत होने से यह पूरी तरह सिद्ध होता है कि छात्र और छात्राओं के सर्वांगीण विकास में उनके पारिवारिक संबंध एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राजकीय विद्यालय के छात्रों की अपेक्षा छात्राओं के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबंध अधिक सुदृढ़, सकारात्मक और सहायक भूमिका निभा रहे हैं। यह परिणाम इंगित करता है कि माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्रों के पारिवारिक संबंध उनके सर्वांगीण विकास को छात्राओं की अपेक्षा अधिक प्रभावित करते है।

2. निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है कि माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों के स्तर और उनके बीच होने वाले संवाद (कम्युनिकेशन) की स्थिति में कोई वास्तविक रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। यह परिणाम बताता है कि माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के अच्छे पारिवारिक संबंधों से उनमें संवाद की स्थिति बेहतर होती है।

3. प्रस्तुत परिकल्पना के विश्लेषण से विद्यार्थियों के पारिवारिक संबंधों और उनकी भावात्मक स्थिरता के मध्य कोई सांख्यिकीय सार्थक संबंध नहीं पाया गया है, इससे निष्कर्ष मिलता है कि माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की

भावात्मक स्थिरता केवल पारिवारिक परिवेश पर निर्भर नहीं करती, बल्कि इसके लिए अन्य व्यक्तिगत और सामाजिक कारक भी उत्तरदायी हो सकते हैं।

**सन्दर्भ साहित्य**


- अजीव, एल. के. (1973), शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, जयपुर राजस्थान हिन्दी अकादमी।
- भार्गव, हरि प्रसाद (1989), विशिष्ट बालक, कचहरी घाट आगरा।
- उपाध्याय, देवेन्द्र (1992), नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, नई दिल्ली, बजरंग प्रकाशन।
- गुप्ता, एस.के.पी.एस. (2018), अनुसंधान संदर्शिका सम्प्रत्यय, कार्य विधि एवं प्रविधि, शारदा बुक भवन इलाहाबाद।
- NCERT. (2020), Psychology Textbook for Class XI New Delhi: National Council of Education.
- UNICEF (2019), Adolescent Development and Participation. New York: UNICEF Publications.
- Koul, L. (2019), Methodology of Educational Psychology Research Meerut: Vikas publishing. R. Lall House, New Delhi.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 76-81
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਾਮ, ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕੋ ਦਾ ਫਲਸਫਾ

**ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ**
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,
ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਡੀਏਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਮੋਢੀ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਇੱਕ ਨਵੇਂ,ਪੂਰਨ ਅਤੇ ਅਗ੍ਰਗਾਮੀ ਧਰਮ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਬਾਕੀ ਸਾਧੂ ਸੰਤਾਂ ਵਾਂਗ ਸਿਰਫ ਪ੍ਰਭੂ ਭਗਤੀ ਦੇ ਮਾਰਗ ਨੂੰ ਹੀ ਨਹੀਂ ਅਪਣਾਇਆ ਬਲਕਿ ਇੱਕ ਨਵੇਂ ਸਮਾਜ, ਸੱਭਿਆਚਾਰ, ਸੁਤੰਤਰ ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕੀਤਾ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਫਾਲਤੂ ਦੀਆਂ ਧਾਰਮਿਕ, ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਕੁਰੀਤੀਆਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕੀਤਾ। ਆਪ ਜੀ ਦੇ ਨਾਮ ਦਾ ਮਾਰਗ ਸੱਚ ਉੱਪਰ ਚੱਲਣਾ ਸੀ। ਜਿਸ ਦੇ ਪੈਰੋਕਾਰ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ, ਨਾਮ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਕਰਨ ਵਾਲੇ, ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਵਾਲੇ, ਪਰਉਪਕਾਰੀ ਮਨੁੱਖ ਸਨ। ਆਪ ਜੀ ਸੰਨਿਆਸ ਧਾਰਨ ਕਰਨ, ਤਿਆਗੀ ਪੁਰਸ਼, ਜੋਗੀਆਂ ਅਤੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਦੇ ਸਖਤ ਵਿਰੋਧੀ ਸਨ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ, ਨਾਮ ਜਪਣ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕਣ ਨੂੰ ਸਿੱਖੀ ਦਾ ਧੁਰਾ ਬਣਾਇਆ ਅਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ 'ਏਕ ਪਿਤਾ ਏਕਸ ਕੇ ਹਮ ਬਾਰਿਕ' ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਸੰਗਤ ਅਤੇ ਪੰਗਤ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਚਲਾਈ ਗਈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ 'ਨਾ ਕੋ ਹਿੰਦੂ ਨਾ ਮੁਸਲਮਾਨ' ਦਾ ਨਾਅਰਾ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤਾ। ਇਸ ਨਾਅਰੇ ਦੁਆਰਾ ਆਪ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੇ ਆਪਸੀ ਜਾਤ- ਪਾਤ ਦੇ ਵਿਤਕਰੇ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰਨ ਤੋਂ ਸਪਸ਼ਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਇਹੋ ਜਿਹੇ ਇੱਕ ਆਦਰਸ਼ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕਰਦੀ ਹੈ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪੇ ਅਤੇ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਨਾਲ ਜੋੜਦੀ ਹੋਈ ਪ੍ਰਭੂ ਦਾ ਸੱਚਾ ਮਾਰਗ ਦਿਖਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਜਿੱਥੇ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਾਮੰਤਵਾਦ ਦੀ ਕੱਟੜ ਨੀਤੀ ਅਤੇ ਆਰਥਿਕ ਲੁੱਟ -ਖਸੁੱਟ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਚੇਤਨ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਹੀ ਸਮੁੱਚੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਫਾਲਤੂ ਕਰਮਕਾਂਡ,ਧਾਰਮਿਕ ਆਡੰਬਰ ਅਤੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਦੀ ਇੱਕ ਸੱਚੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜੋੜਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਆਦਰਸ਼ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਲਈ ਕਿਰਤ ਕਰੋ, ਵੰਡ ਛਕੋ ਅਤੇ ਨਾਮ ਜਪੋ ਦੇ  ਤਿੰਨ ਮੁੱਖ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤੇ,ਜੋ ਸਮਾਜਿਕ ਅਰਥਚਾਰੇ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਕਿਰਤ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਹੀ ਸਨਮਾਨ ਪੂਰਵਕ ਸਥਾਨ ਬਖਸ਼ਦੇ ਹਨ। ਸਿੱਖੀ ਸਿਧਾਂਤ ਵਿੱਚ ਸ਼ਬਦ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਤਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਕਿਰਤ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਅਨਿੱਖੜਵਾਂ ਅੰਗ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਕੋਨੇ -ਕੋਨੇ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ ਸਭ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਸੇਧ ਦਿੰਦਿਆਂ ਸਿਮਰਨ ਅਤੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਸਮੁੱਚੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਸਫ਼ਲ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਬਿਤਾਉਣ ਲਈ ਕਿਰਤ ਦੀ ਅਵੱਸ਼ਕਤਾ ਉੱਪਰ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਖ਼ਾਸ ਤੌਰ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਕੁਕਰਮੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ,ਜਿਹੜੇ ਨੇਕ ਸਾਧਨਾ ਰਾਹੀਂ ਕੰਮ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਛਲ ਕਪਟ, ਫ਼ਰੇਬ, ਠੱਗੀ ਅਤੇ ਡਾਕੇ ਮਾਰ ਕੇ ਕਮਾਈ ਕਰਦੇ ਅਤੇ ਭੋਲੇ ਭਾਲੇ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਨੂੰ ਲੁੱਟਦੇ ਹਨ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਸੱਜਣ ਠੱਗ, ਕੌੜਾ ਰਾਕਸ਼ਸ, ਭੂਮੀਆ, ਡਾਕੂਆਂ ਅਤੇ ਲੁਟੇਰਿਆਂ ਨੂੰ ਭਲੇ ਆਦਮੀ ਬੁਣਾਉਣ ਲਈ ਨੇਕ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਫ਼ਿਲਾਸਫ਼ੀ ਹੱਕ ਸੱਚ ਦੀ ਕਮਾਈ ਵੱਲ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਹੱਕ ਸੱਚ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨੂੰ ਉੱਤਮ ਦੱਸਦਿਆਂ ਭਾਈ ਲਾਲੇ ਦੀ ਕੋਧਰੇ ਦੀ ਰੋਟੀ ਵਿੱਚੋਂ ਦੁੱਧ ਦੀਆਂ ਧਾਰਾਂ ਅਤੇ ਹੰਕਾਰੀ ਮਲਿਕ ਭਾਗੋ ਦੇ ਪਕਵਾਨਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਖ਼ੂਨ ਦੀਆਂ ਧਾਰਾਂ ਕੱਢ ਕੇ ਹੱਕ ਸੱਚ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰਨ,ਕਿਸੇ ਦਾ ਦਿਲ ਨਾ ਦੁਖਾਉਣ,ਪਰਾਏ ਧਨ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰਹਿਣ ਦਾ ਸੱਚਾ ਸੁੱਚਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਦੌਰਾਨ ਕਈ ਉਦਾਸੀਆਂ ਕੀਤੀਆਂ। ਜਿਹਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇੱਕ ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮਾਤਮਾ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਣ, ਕਿਰਤ ਕਰਨ, ਨਾਮ ਜਪਣ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।

"ਹੋਵੈ ਨਿਸ਼ਕਪਟ ਧਰਮ ਕ੍ਰਿਤ ਕਰੀਏ।।
ਗਰਬ ਰਿਦੈ ਕੋ ਸਭ ਪਰਹਰੀਏ'।। [1]

ਭਾਈ ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਜੀ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਇਹ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਸਾਹਿਬ ਵਿਖੇ ਖੇਤੀ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਗੁਰਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਇਹ ਕਹਿ ਕੇ ਨਿਵਾਜਿਆ ਸੀ।

"ਤੁਮਰੀ ਘਾਲ ਪਈ ਸਭ ਥਾਈ।।
ਜੋ ਗੁਰ ਕੇ ਹਿੱਤ ਕ੍ਰਿਤ ਕਮਾਈ'।। [2]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹਮੇਸ਼ਾ ਸੱਚੀ ਅਤੇ ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਲਈ ਕਿਹਾ। ਸੱਚਾ ਕਿਰਤੀ ਹਰ ਸਮੇਂ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਭਗਤੀ ਵਿੱਚ ਲੀਨ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਉਹ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਅਨਿੰਨ ਭਗਤ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਉਸ ਨੂੰ ਕੋਈ ਮੁਸੀਬਤ ਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਆਪ ਅੰਗ ਸੰਗ ਸਹਾਈ ਹੋ ਕੇ ਉਸ ਭਗਤ ਦੀ ਰੱਖਿਆ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਆਪ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਜ਼ਰੂਰਤਾਂ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਲਈ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਵੱਲ ਝਾਕਣ ਤੋਂ ਵਰਜਿਆ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾਲ ਇਹ ਵੀ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਉੱਪਰ ਆਸ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਕਦੇ ਵੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਇੱਜ਼ਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ।

ਕਈ ਤਪੱਸਵੀ ਸਾਧੂ- ਸੰਤ ਜਨਮ ਮਰਨ ਦੇ ਗੇੜ ਤੋਂ ਬਚਣ ਲਈ ਘਰ ਬਾਰ ਤਿਆਗ ਕੇ, ਜੰਗਲਾਂ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ ਤਪ ਕਰਨ, ਭਿੱਖਿਆ ਮੰਗ ਕੇ ਖਾਣ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਪਰੰਤੂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਗ੍ਰਹਿਸਤ ਜੀਵਨ ਜਿਉਂਦਿਆਂ ਸੱਚੀ ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਕਰਦਾ, ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਜਪਦਾ ਹੈ, ਉਹੀ ਆਵਾਗੌਣ ਦੇ ਚੱਕਰਾਂ

ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਦਾ ਹੱਕਦਾਰ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸੰਸਾਰੀ ਕਾਰ- ਵਿਹਾਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਰਹਿਣੀ ਨੂੰ ਮੁੱਖ ਰੱਖਦਿਆਂ ਸਮਝਾਉਂਦੇ ਹਨ।

"ਕਥਨੀ ਝੂਠੀ ਜਗੁ ਭਵੈ, ਰਹਿਣ ਸ਼ਬਦੁ ਸੁ ਸਾਰ'।। [3]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਦਰਸ਼ਕ ਕਿਰਤੀ ਨੂੰ ਇੱਕ 'ਸੰਤੋਖੀ' ਦੀ ਪਦਵੀ ਧਾਰਨ ਕਰਵਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਉਸ ਦੇ ਸੰਜਮੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਉਸਦੇ ਸੰਪੂਰਨ ਵਿਅਕਤੀਤਵ ਦਾ ਆਧਾਰ ਮੰਨਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਆਪ ਜੀ ਹਰੇਕ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੱਚੀ ਅਤੇ ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਉਹ ਸੰਮਮੀ ਜੀਵਨ ਦੁਆਰਾ ਆਪਣੀ ਕਿਰਤ ਵਿੱਚ ਸ਼ਕਤੀ ਅਤੇ ਸ਼ਰਮ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਪੈਦਾ ਕਰ ਸਕੇ। ਇੱਕ ਸੱਚਾ ਕਿਰਤੀ ਹਮੇਸ਼ਾ ਉਸ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦੇ ਨੇੜੇ -ਤੇੜੇ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਦੀ ਕਹਾਵਤ ਹੈ 'ਪੇਟ ਨਾ ਪਈਆਂ ਰੋਟੀਆਂ ਤਾਂ ਸੱਭੇ ਗੱਲਾਂ ਖੋਟੀਆਂ 'ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਨਾਮ ਵੀ ਜਪਿਆ ਫਲੀ ਭੂਤ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ। ਇਸ ਲਈ ਸਾਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਦੱਸੇ ਮਾਰਗ ਉੱਪਰ ਚੱਲਦਿਆਂ ਦਸਾਂ ਨਹੁਾਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਦਿਆਂ,ਵੰਡ ਛਕਦਿਆਂ, ਨਾਮ ਜਪਦਿਆਂ ਅਤੇ ਘਰ ਬਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਹੋਇਆ, ਮਨੁੱਖਾ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸਫਲ ਬਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਵੰਡ ਛਕਣ ਦੀ ਗੱਲ ਵੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਜਿਹੜਾ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਕਿਰਤ ਕਮਾਈ ਵਿੱਚੋਂ ਵੰਡ ਛਕਣ ਦੇ ਸਿਧਾਂਤ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਲੋੜਵੰਦ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਦੀ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਹੀ ਮਨੁੱਖ ਕਰਮਸ਼ੀਲ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਵੰਡ ਛਕਣ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਨਾਅਰਾ ਬੁਲੰਦ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰੋਂ ਹਉਮੈ ਅਤੇ ਹੰਕਾਰ ਨੂੰ ਸਦਾ ਲਈ ਬਾਹਰ ਕੱਢ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਵੰਡ ਛਕੋ ਦਾ ਮਤਲਬ ਆਪਣੀ ਕਮਾਈ ਵਿੱਚੋਂ ਲੋੜਵੰਦਾਂ ਦੀ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇਹ ਫ਼ਲਸਫ਼ਾ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਿਰਫ਼ ਆਪਣੇ ਲਈ ਹੀ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਸਮਾਜ ਦੀ ਭਲਾਈ ਵਾਸਤੇ ਵੀ ਕੰਮ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੀ ਕਮਾਈ ਵਿੱਚੋਂ ਦਸਵਾਂ ਦਸੌਂਧ ਕੱਢਣਾ, ਇਸ ਨਾਲ ਲੋੜਵੰਦਾਂ ਦੀ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰਨਾ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਤਮ ਕਿਰਤ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਇਹ ਸਿਧਾਂਤ ਸਮਾਨਤਾ ਤੇ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ। ਜਿਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਅਵਤਾਰ ਧਾਰਿਆ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜਿਕ ਹਾਲਾਤ ਬਹੁਤ ਖਰਾਬ ਸਨ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਅਮੀਰ ਲੋਕ ਹੋਰ ਅਮੀਰ ਬਣਨ ਦੀ ਚਾਹਤ ਵਿੱਚ ਝੂਠ ਫਰੇਬ ਠੱਗੀ ਲੁੱਟ-ਖਸੁੱਟ ਦਾ ਸਹਾਰਾ ਲੈਂਦੇ ਸਨ। ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂ ਵੀ ਆਪਣੀ ਪਵਿੱਤਰਤਾ ਗਵਾ ਕੇ ਸਧਾਰਨ ਤੇ ਭੋਲੀ ਭਾਲੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਧਰਮ ਦਾ ਡਰਾਵਾ ਦੇ ਕੇ ਆਪਣਾ ਪੇਟ ਪਾਲਦੇ ਅਤੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਆਮ ਜਨਤਾ ਬਹੁਤ ਵੱਡੇ ਖੌਫ,ਭੈ,ਜਾਤ -ਪਾਤ,ਛੂਤ ਛਾਤ ਅਤੇ ਵਰਨ ਵੰਡ ਵਿੱਚ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਲਝ ਕੇ ਰਹਿ ਗਈ ਸੀ। ਇਸੇ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਮਾਰਗ ਦਰਸ਼ਨ ਦੇਣ ਲਈ ਆਪਣੇ ਤਿੰਨ ਸੂਤਰੀ ਧੁਰੇ ਵਿੱਚੋਂ ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਬੜੀ ਦਲੇਰੀ ਅਤੇ ਬੇਬਾਕੀ ਨਾਲ ਲਾਗੂ ਕਰਕੇ ਦਿਖਾਇਆ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਗਰੀਬ ਲੋਕ ਆਪਣੀ ਦੋ ਵੇਲੇ ਦੀ ਰੋਟੀ ਤੋਂ ਵੀ ਮੁਥਾਜ ਸਨ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਉੱਚੀ ਜਾਤੀ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਇਹ ਧਾਰਨਾ ਸੀ ਕਿ ਨੀਵੀਂ ਜਾਤੀ ਅਤੇ ਗਰੀਬਾਂ ਨੂੰ ਪੈਰ ਦੀ ਜੁੱਤੀ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਰਹਿਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸਿਰਫ਼ ਸਾਡੀ ਸੇਵਾ ਕਰਨ ਲਈ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਆਪ ਵੱਡੇ ਘਰਾਣੇ ਵਿੱਚ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਪਟਵਾਰੀ ਦੇ ਪੁੱਤ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਕੋਲ ਸਭ ਕੁੱਝ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਧਾਰਮਿਕ ਵੰਡ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰ ਕਰਨ ਲਈ ਵੱਡਿਆਂ ਖਿਲਾਫ ਅਤੇ ਮਜਲੂਮਾਂ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ ਗਈ।

"ਜਿਥੈ ਨੀਚ ਸਮਾਲੀਅਨਿ ਤਿਥੈ ਨਦਰਿ ਤੇਰੀ ਬਖਸੀਸ"[4]

ਇਸ ਪੰਕਤੀ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਨੀਚ ਕਹੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਿਰੇ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦਿੰਦਿਆਂ ਇਹ ਨਸ਼ਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਜਿੱਥੇ ਗਰੀਬਾਂ ਦੀ ਸਾਰ ਲਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਲੋੜਵੰਦਾਂ ਨੂੰ ਵੰਡ ਕੇ ਬਰਾਬਰ ਰੱਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਤੇ ਬਖਸ਼ਿਸ਼ ਉੱਥੇ ਹੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਅਤੇ ਭਜਨ ਬੰਦਗੀ ਤੇ ਤਾਂ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਆਦਿ ਕਾਲ ਦੇ ਸਾਧੂਆਂ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਭਗਤੀ ਲਹਿਰ ਦੇ ਸੰਤਾਂ ਨੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਪਰੰਤੂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਨਾਲ ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਨੂੰ ਜੋੜ ਕੇ ਬਰਾਬਰੀ ਵਾਲੇ ਵੱਖਰੇ ਸਿਧਾਂਤ ਨੂੰ ਤਰਜੀਹ ਦਿੱਤੀ। ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਨਾਲ ਹਉਮੈਂ ਦੂਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇੱਕ ਵੱਖਰਾ ਮਾਨਸਿਕ ਸਕੂਨ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਭਾਈਚਾਰਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਾਂਝ ਵਿੱਚ ਵਧੇਰੇ ਪਕਿਆਈ ਆਉਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੇ ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਦੀ ਜਗਾਈ ਜੋਤ ਹੁਣ ਤੱਕ ਇੰਨੀ ਵੱਡੀ ਮਿਸਾਲ ਬਣ ਗਈ ਹੈ,ਜਿਸ ਨਾਲ ਸਮੁੱਚਾ ਵਿਸ਼ਵ ਰੁਸ਼ਨਾ ਕੇ ਚਕਾਚੌਂਧ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਹੈ ਕਿ ਕੋਈ ਵੀ ਵਰਗ ਭਾਵੇਂ ਉਹ ਨਿਰਗੁਣਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਵਾਲਾ ਹੋਵੇ ਜਾਂ ਸਰਗੁਣਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਵਾਲਾ ਨਾਮ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰੀ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦਾ। ਅਜਿਹਾ ਨਾਮ 'ਸਤਿ' ਹੈ ਜਿਸ ਦਾ ਵਰਣਨ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਵਿੱਚ ਹੋਇਆ ਹੈ।

"ਜੇਤਾ ਕੀਤਾ ਤੇਤਾ ਨਾਉ।।
ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਨਾਹੀ ਕੋ ਥਾਉ"।। [5]

ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦੁਬਾਰਾ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਦੀਆਂ ਸਿਖਰਾਂ ਛੂੰਹਦਾ ਹੈ। ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦਾ ਅੰਤਿਮ ਲਕਸ਼ ਪਰਮ ਸੱਤਾ ਨਾਲ ਅਭੇਦਤਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਚਿਆਰਾ ਹੋਣਾ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਬੇਸ਼ੱਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਸਿਫ਼ਤ ਸਲਾਹ, ਨਾਮ ਦਾ ਸਿਮਰਨ, ਧਿਆਨ,ਸਾਧਨਾ ਕਰਨਾ, ਸੁਣਨਾ, ਮੰਨਣਾ ਆਦਿ ਜਗਿਆਸੂਆਂ ਨੂੰ ਸਚਿਆਰਾ ਬਣਾਉਣ ਦੇ ਅਧਾਰ ਤੱਤ ਹਨ ਪਰੰਤੂ ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਵਿਅਕਤੀ ਉੱਪਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਮਿਹਰ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਸੁਵੱਲੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ,ਤਦੋਂ ਤੱਕ ਉਹ ਮੁਕਤੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਜੰਗਲਾਂ ਵਿੱਚ ਭਟਕਣ ਦੀ ਜ਼ਰੂਰਤ ਨਹੀਂ ਕਿਉਂਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਹਰੇਕ ਵਿਅਕਤੀ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵੱਸਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਜੀਵਨ ਜਿਉਂਦੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਅਤੇ ਮਨ ਨੂੰ ਪਵਿੱਤਰ ਰੱਖਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਆਪ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਘਰੇਲੂ ਕੰਮ ਕਾਜ ਕਰਕੇ ਰੋਜ਼ੀ ਰੋਟੀ ਲਈ ਆਹਰ ਕਰਦੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਬੰਦਗੀ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਅਤੇ ਉਸ ਵੇਲੇ ਕੁੱਝ ਅਖੌਤੀ ਧਾਰਮਿਕ ਮਖੌਟੇ ਵਾਲੇ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਅਤੇ ਆਮ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚਕਾਰ ਬਹੁਤ ਵੱਡੀ ਦਵਾਰ ਖੜੀ ਕਰ ਦਿੱਤੀ ਸੀ ਅਤੇ ਅਵਾਮ ਵਿੱਚ ਰੱਬ ਨੂੰ ਮਿਲਣਾ ਬਹੁਤ ਕਠਿਨਾਈ ਭਰਿਆ ਔਖਾ ਕਾਰਜ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਰੱਬ ਦੇ ਵਿਚਕਾਰ ਇੰਨੇ ਦੇਵੀ ਦੇਵਤੇ ਅਤੇ ਵਿਚੋਲੇ ਖੜੇ ਹੋ ਗਏ ਸਨ ਕਿ ਲੋਕ ਇਹਨਾਂ ਵਿੱਚ ਉਲਝ ਕੇ ਰਹਿ ਗਏ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਨੇ ਵੇਈਂ ਨਦੀ ਵਿੱਚ ਇਸ਼ਨਾਨ ਕਰਦਿਆਂ ਬਾਹਰ ਨਿਕਲ ਕੇ '੧ਓ ਸਤਿਨਾਮ' ਦਾ ਉਚਾਰਨ ਕੀਤਾ ਜਿਸ ਤੋਂ ਭਾਵ ਸੀ ਇਹ ਸਾਰੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਕੇਵਲ ਇੱਕ ਹੀ ਰਚਨਾ ਹੈ ਅਤੇ ਕੇਵਲ ਉਸ ਦੇ ਨਾਮ ਦੀ ਅਰਾਧਨਾ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ। ਕੇਵਲ ਉਸਦੇ ਨਾਮ ਦੀ ਅਰਾਧਨਾ ਹੀ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਤਮ ਕਾਰਜ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਉਸ ਇੱਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਨਾਵਾਂ ਨਾਲ ਸੰਬੋਧਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਪਰ ਸਾਰਿਆਂ ਦਾ ਸਾਰ ਅੰਸ ਇਹੀ ਨਿਕਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਇੱਕ ਦੀ ਯਾਦ ਦਾ ਅਭਿਆਸ ਕਰਨਾ ਹੀ ਨਾਮ ਹੈ, ਉਸ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਹੀ ਨਾਮ ਹੈ। ਉਸ ਦੇ ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਵਖਿਆਨ ਕਰਨਾ ਹੀ ਨਾਮ ਹੈ।

"ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਹੈ ਕਿਲਵਿਖ ਕਾਟਣਹਾਰਾ"।। [6]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਉਚਾਰਨ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇੱਕ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਦਾ ਨਾਮ 68 ਤੀਰਥਾਂ ਦਾ ਇਸ਼ਨਾਨ ਹੈ।ਇਥੇ ਸਾਰੇ ਪਾਪ ਨਾਸ਼ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੈ।

"ਸਚਾ ਵਖੁਰ ਨਾਮੁ ਹੈ ਸਚਾ ਵਾਪਾਰਾ "।।[7]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਜੀਵ ਵਣਜਾਰਾ ਜਗਤ ਹੱਟ ਵਿੱਚ ਵਪਾਰ ਕਰਨ ਆਇਆ ਹੈ। ਪਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਹਮੇਸ਼ਾ ਕਾਇਮ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਤੇ ਕਦੇ ਵੀ ਨਾਸ਼ ਨਾ ਹੋਣ ਵਾਲਾ ਹੈ। ਇਹੀ ਐਸਾ ਵਪਾਰ ਹੈ ਜੋ ਸਦਾ ਸਥਿਰ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

" ਮੂਤ ਪਲੀਤੀ ਕਪੜੁ ਹੋਇ।। ਦੇ ਸਾਬੂਣੁ ਲਈਐ ਓਹੁ ਧੋਇ।।
ਭਰੀਐ ਮਤਿ ਪਾਪਾ ਕੈ ਸੰਗਿ।। ਓਹੁ ਧੋਪੈ ਨਾਵੈ ਕੈ ਰੰਗਿ"।।[8]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਨਾਮ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਕਰਦਿਆਂ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜਿਵੇਂ ਕੋਈ ਕੱਪੜਾ ਮਲ ਮੂਤਰ ਦੇ ਨਾਲ ਗੰਦਾ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਸਾਬਣ ਲਾ ਕੇ ਉਸਨੂੰ ਧੋ ਲਈਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਹ ਸਾਫ਼ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬੁੱਧੀ ਪਾਪਾ ਨਾਲ ਮਲੀਨ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਉਨਾਂ ਪਾਪਾਂ ਤੇ ਗਲਤੀਆਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰੇਮ ਪਿਆਰ ਨਾਲ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦਾ ਨਾਮ ਜਪ ਕੇ ਹੀ ਧੋਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਨਾਮ ਜਪਣ ਨਾਲ ਖਿਆਲ ਚੰਗੇ ਤੇ ਉਸਾਰੂ ਬਣ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਅਜੋਕੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਮਨ ਬਿਮਾਰ ਹੈ,ਚਲਾਕ ਹੈ, ਕਹਿਣੇ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਹੈ। ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਲੋਭ ਮੋਹ ਹੰਕਾਰ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਹੇਠ ਕੰਮ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਗੁਲਾਮ ਹੈ,ਪਰ ਗੁਰਬਾਣੀ ਫੁਰਮਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ।

" ਮਨ ਕਾ ਤੋਸਾ ਹਰਿ ਨਾਮ ਹੈ।।
ਹਿਰਦੈ ਰਖਹੁ ਸਮਾਲਿ"।।[9]

ਇਸ ਲਈ ਨਾਮ ਜਪਣ ਦੇ ਫ਼ਲਸਫ਼ੇ ਤੇ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਉਚੇਚਾ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ। ਨਾਮ ਦਾ ਕੋਈ ਧਰਮ ਨਹੀਂ,ਨਾਮ ਦਾ ਕੋਈ ਮਜ਼ਹਬ ਨਹੀਂ, ਨਾਮ ਸਿਰਫ਼ ਉਸ ਇੱਕ ਹੋਂਦ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਜਾਮੇ ਵਿੱਚ ਹਰੀ ਦਾ ਨਾਮ ਜਪ ਕੇ ਮਨੁੱਖ ਆਵਗੌਣ ਦੇ ਚੱਕਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਆਤਮਾ ਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਮਿਲਾਉਣ ਵਾਲੀ ਪੌੜੀ ਸਿਰਫ਼ ਨਾਮ ਹੀ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਾਰੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਫੋਕੀਆਂ ਅਤੇ ਗਲਤ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਚੁਣੌਤੀ ਦਿੱਤੀ। ਸਮੁੱਚੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਸੱਚ ਦੇ ਮਾਰਗ ਉੱਪਰ ਚੱਲਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਤੇ ਭੁੱਲੇ ਭਟਕੇ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾਇਆ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਜੋ ਸੰਦੇਸ਼ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਦਿੱਤਾ,ਆਪ ਵੀ ਉਸ ਉੱਪਰ ਡੱਟ ਕੇ ਪਹਿਰਾ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਬਾਣੀ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਦਾ ਹੀ ਸੰਪੂਰਨ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਹੈ।

## ਹਵਾਲੇ


1. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਖਾਲਸਾ ਸਮਾਚਾਰ,1962 ਪੰਨਾ -1178
2. ਉਹੀ ਪੰਨਾ-1178
3. ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ, ਅੰਗ-56

4. ਸ੍ਰੀ ਰਾਗ ਮ:1, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ 15
5. ਜਪੁ ਮ:1, ਉਹੀ, ਅੰਗ -8
6. ਮਾਰੂ ਮ:1, ਉਹੀ, ਅੰਗ-1008
7. ਉਹੀ, ਅੰਗ-1008
8. ਜਪੁ, ਮ:1, ਉਹੀ, ਅੰਗ-4
9. ਸੂਹੀ ਮ:3, ਉਹੀ, ਅੰਗ755

ਮੋ 9464212113
ਈਮੇਲ lakhwinderbrar5775@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 82-90
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# लोक परंपरा से राष्ट्रीय सम्मान तक: पारंपरिक भारतीय कलाओं के संरक्षण में कलाकारों और पद्म पुरस्कारों की भूमिका

**डॉ. गायत्री के**
असिस्टेंट प्रोफेसर,
डिपार्टमेंट ऑफ अडीशनल लांगेजस निमित्त, पोंगम।

**सारांश**

भारतीय सांस्कृतिक विरासत की संरचना केवल स्मारकों, पुरातात्त्विक अवशेषों और संग्रहालयों में सुरक्षित वस्तुओं से नहीं होती, बल्कि जीवित सामाजिक परंपराओं, लोककलाओं, पारंपरिक शिल्पों, ज्ञान-प्रणालियों और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित कौशलों से भी होती है। UNESCO के अनुसार अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में वे प्रथाएँ, अभिव्यक्तियाँ, ज्ञान और कौशल सम्मिलित हैं जिन्हें समुदाय, समूह अथवा व्यक्ति अपनी सांस्कृतिक विरासत के रूप में स्वीकार करते हैं। यह विरासत पीढ़ियों के बीच हस्तांतरित होने के साथ-साथ निरंतर पुनर्सृजित भी होती रहती है।

प्रस्तुत शोध-लेख में परेश राठवा की पिठोरा चित्रकला, सुभद्रा देवी की पेपर-माशे कला तथा दिलशाद हुसैन की पीतल नक्काशी को केस-स्टडी के रूप में ग्रहण करते हुए पारंपरिक भारतीय कलाओं के संरक्षण, पुनर्सृजन और राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की प्रक्रिया का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का प्रमुख तर्क यह है कि पारंपरिक कलाकार केवल कला-उत्पाद के निर्माता नहीं होते, बल्कि वे सांस्कृतिक ज्ञान, सामुदायिक स्मृति और तकनीकी कौशल के **परंपरा-वाहक (tradition bearers)** होते हैं।

अध्ययन यह भी प्रतिपादित करता है कि पद्म पुरस्कारों जैसे राष्ट्रीय सम्मान पारंपरिक कलाकारों को व्यक्तिगत प्रतिष्ठा प्रदान करने के साथ-साथ उन कला-परंपराओं को भी व्यापक सांस्कृतिक विमर्श में स्थापित करते हैं। तथापि, सम्मान को संरक्षण का अंतिम लक्ष्य नहीं माना जा सकता। दीर्घकालिक संरक्षण के लिए कलाकारों की सक्रिय भागीदारी, ज्ञान का अंतरण, दस्तावेजीकरण, आर्थिक सशक्तीकरण, शैक्षणिक संस्थानों का सहयोग तथा डिजिटल माध्यमों का उत्तरदायी उपयोग आवश्यक है।

**प्रमुख शब्द:** अमूर्त सांस्कृतिक विरासत, लोककला, पारंपरिक शिल्प, पिठोरा चित्रकला, मधुबनी, पेपर-माशे, पीतल नक्काशी, सांस्कृतिक संरक्षण, पद्म पुरस्कार, परंपरा-वाहक।

**1. प्रस्तावना**

भारत की सांस्कृतिक पहचान उसकी बहुलता, विविधता और निरंतरता में निहित है। देश के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों, जनजातीय समुदायों और सामाजिक समूहों ने अपनी विशिष्ट कलात्मक एवं शिल्प परंपराओं का विकास किया है। इन परंपराओं में केवल सौंदर्यबोध ही नहीं, बल्कि धार्मिक विश्वास, सामाजिक संबंध, सामुदायिक स्मृतियाँ, जीवन-दृष्टि और स्थानीय ज्ञान भी अंतर्निहित होते हैं।

परंपरागत कलाओं का अध्ययन लंबे समय तक मुख्यतः 'लोककला' या 'हस्तशिल्प' के रूप में किया जाता रहा। किंतु समकालीन सांस्कृतिक अध्ययन में इन्हें **जीवित सांस्कृतिक विरासत** के रूप में देखने की प्रवृत्ति विकसित हुई है। UNESCO की 2003 की Convention for the Safeguarding of the Intangible Cultural Heritage इस दृष्टिकोण को संस्थागत आधार प्रदान करती है। इसके अनुसार अमूर्त सांस्कृतिक विरासत स्थिर एवं अपरिवर्तनीय नहीं है; वह समुदायों द्वारा निरंतर पुनर्सृजित होती रहती है और उन्हें पहचान तथा निरंतरता का बोध कराती है।

इस सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य में पारंपरिक कलाकारों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाती है। वे केवल किसी निश्चित तकनीक को दोहराने वाले व्यक्ति नहीं, बल्कि उस सांस्कृतिक ज्ञान के वाहक होते हैं जिसके माध्यम से किसी कला-परंपरा का अस्तित्व बना रहता है।

इसी संदर्भ में परेश राठवा, सुभद्रा देवी और दिलशाद हुसैन के योगदान का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है।

**2. शोध-समस्या**

वैश्वीकरण, औद्योगीकरण, बाजार-व्यवस्था और जीवन-शैली में परिवर्तन के कारण अनेक पारंपरिक कलाएँ संक्रमण के दौर से गुजर रही हैं। एक ओर पारंपरिक कलाकारों को नए बाजार और तकनीकी माध्यम प्राप्त हुए हैं, तो दूसरी ओर पारंपरिक प्रशिक्षण-व्यवस्था, सामुदायिक संदर्भ और युवा पीढ़ी की सहभागिता से जुड़े प्रश्न भी सामने आए हैं।

अतः इस शोध की मूल समस्या यह है कि—

**आधुनिक सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों के बीच पारंपरिक कलाकार किस प्रकार अपनी कला-परंपरा को संरक्षित, पुनर्सृजित और अगली पीढ़ी तक हस्तांतरित कर रहे हैं तथा राष्ट्रीय सम्मान इस प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित करता है?**

**3. शोध के उद्देश्य**

प्रस्तुत अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं—

1. अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की अवधारणा के संदर्भ में भारतीय पारंपरिक कलाओं का अध्ययन करना।
2. परेश राठवा, सुभद्रा देवी और दिलशाद हुसैन के कलात्मक योगदान का विश्लेषण करना।
3. पारंपरिक ज्ञान एवं कौशल के पीढ़ीगत अंतरण की प्रक्रिया का अध्ययन करना।
4. परंपरा और आधुनिकता के अंतर्संबंध का विश्लेषण करना।
5. डिजिटल माध्यमों की पारंपरिक कला के संरक्षण एवं प्रसार में भूमिका का अध्ययन करना।
6. पद्म पुरस्कारों के माध्यम से पारंपरिक कलाकारों को प्राप्त राष्ट्रीय सांस्कृतिक प्रतिष्ठा का मूल्यांकन करना।
7. पारंपरिक कलाओं के सतत संरक्षण के लिए संभावित उपायों की पहचान करना।

**4. शोध-प्रश्न**

इस अध्ययन में निम्नलिखित शोध-प्रश्न निर्धारित किए गए हैं—

1. पारंपरिक कलाकार अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में किस प्रकार की भूमिका निभाते हैं?
2. पारिवारिक एवं सामुदायिक प्रशिक्षण पारंपरिक कलाओं के अंतरण को किस प्रकार प्रभावित करता है?
3. आधुनिकता और बाजार पारंपरिक कलारूपों में किस प्रकार के परिवर्तन उत्पन्न करते हैं?
4. डिजिटल माध्यम पारंपरिक कलाओं के संरक्षण में अवसर और चुनौतियाँ किस प्रकार प्रस्तुत करते हैं?
5. पद्म पुरस्कार जैसे राष्ट्रीय सम्मान पारंपरिक कलाकारों तथा उनके कलारूपों की सामाजिक प्रतिष्ठा को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?
6. व्यक्तिगत कलाकार की उपलब्धि और सामुदायिक सांस्कृतिक पहचान के बीच क्या संबंध है?

**5. परिकल्पना**

इस अध्ययन की प्रमुख परिकल्पना है कि—

**"पारंपरिक कलाओं का वास्तविक संरक्षण केवल कलाकृतियों के भौतिक संरक्षण से संभव नहीं है; इसके लिए उन कलाकारों, समुदायों और ज्ञान-प्रणालियों का संरक्षण आवश्यक है जो इन कलारूपों को निरंतर पुनर्सृजित और हस्तांतरित करते हैं।"**

दूसरी परिकल्पना यह है कि—

**"राष्ट्रीय सम्मान, संस्थागत समर्थन और आधुनिक संचार माध्यम पारंपरिक कलाओं को व्यापक सामाजिक पहचान प्रदान कर सकते हैं, बशर्ते संरक्षण-प्रक्रिया में संबंधित समुदाय और कलाकार सक्रिय भागीदार बने रहें।"**

यह दृष्टिकोण UNESCO के उस सिद्धांत से भी संबद्ध है जिसमें समुदायों, समूहों और व्यक्तियों की सक्रिय भागीदारी को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के लिए आवश्यक माना गया है।

**6. शोध-पद्धति**

यह अध्ययन **गुणात्मक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति** पर आधारित है। इसमें केस-स्टडी पद्धति का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन के लिए प्राथमिक दृश्य-श्रव्य सामग्री तथा द्वितीयक स्रोतों—सरकारी प्रकाशन, पद्म पुरस्कार संबंधी आधिकारिक विवरण, UNESCO के दस्तावेज, समाचार एवं सांस्कृतिक प्रकाशनों—का उपयोग किया गया है।

तीन कलाकारों को केस-स्टडी के रूप में चुना गया है—

- परेश राठवा — पिठोरा चित्रकला
- सुभद्रा देवी — पेपर-माशे कला
- दिलशाद हुसैन — पीतल नक्काशी

इन तीनों के माध्यम से पारंपरिक कला के तीन प्रमुख पक्षों—**सामुदायिक परंपरा, सृजनात्मक अनुकूलन और तकनीकी कौशल के अंतरण**—का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

**7. अमूर्त सांस्कृतिक विरासत : सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य**

UNESCO के अनुसार अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में मौखिक परंपराएँ, प्रदर्शनकारी कलाएँ, सामाजिक प्रथाएँ, अनुष्ठान, प्रकृति से संबंधित पारंपरिक ज्ञान तथा पारंपरिक शिल्प-कौशल सम्मिलित हैं। इसके संरक्षण का अर्थ किसी परंपरा को अपरिवर्तित रूप में स्थिर कर देना नहीं, बल्कि उसकी **जीवंतता और निरंतरता सुनिश्चित करना** है।

UNESCO विशेष रूप से यह रेखांकित करता है कि अमूर्त सांस्कृतिक विरासत 'living heritage' है—अर्थात वह अतीत से प्राप्त होकर वर्तमान में अभ्यास की जाती है और प्रत्येक पीढ़ी उसे नए सामाजिक एवं पर्यावरणीय संदर्भों में पुनर्सृजित करती है।

इस अवधारणा के आधार पर पारंपरिक कला का मूल्य केवल उसके दृश्य परिणाम में नहीं, बल्कि उसके पीछे मौजूद ज्ञान, कौशल, विश्वास और सामुदायिक अर्थवत्ता में निहित है।

**8. परेश राठवा और पिठोरा चित्रकला**

गुजरात के छोटा उदयपुर क्षेत्र से संबंधित परेश राठवा पिठोरा चित्रकला के प्रमुख समकालीन कलाकारों में हैं। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित उनके आधिकारिक पद्म पुरस्कार प्रोफाइल के अनुसार उनका जन्म 17 अगस्त 1968 को हुआ। उन्होंने आर्थिक परिस्थितियों के कारण दसवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की और बचपन से ही गाँव के पिठोरा कलाकारों के साथ रहकर इस कला को सीखा। 22 वर्ष की आयु में उन्हें अपने समुदाय द्वारा पिठोरा कलाकार के रूप में मान्यता मिली।

1990 से उन्होंने गाँव-गाँव जाकर पिठोरा चित्रांकन किया तथा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियों, जनजातीय उत्सवों और अन्य सांस्कृतिक आयोजनों में भाग लिया। आधिकारिक प्रोफाइल के अनुसार उन्होंने विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से पिठोरा कला के संरक्षण और प्रसार में योगदान दिया तथा सात अलग-अलग देशों के कला-प्रेमियों को ऑनलाइन प्रशिक्षण भी दिया।

यहाँ पिठोरा को केवल 'चित्रकला' के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। यह जनजातीय सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भों से संबद्ध कला-परंपरा है। अतः इसका संरक्षण दृश्य आकृतियों को पुनरुत्पादित करने से अधिक व्यापक प्रक्रिया है।

परेश राठवा का कार्य यह दिखाता है कि जब कोई परंपरा स्थानीय संदर्भ से निकलकर राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच तक पहुँचती है, तब उसका स्वरूप बदल सकता है, किंतु यदि समुदाय और कलाकार उसके सांस्कृतिक अर्थों के वाहक बने रहें तो यह परिवर्तन संरक्षण का माध्यम भी बन सकता है।

**9. सुभद्रा देवी : परंपरा और सृजनात्मक पुनर्संरचना**

मधुबनी, बिहार की सुभद्रा देवी को 2023 में पेपर-माशे कला में उनके योगदान के लिए पद्म श्री प्रदान किया गया। सरकारी प्रकाशन के अनुसार वे छह दशकों से अधिक समय से इस कला का अभ्यास कर रही थीं तथा उनकी कला पर आधारित अनेक कार्यशालाएँ आयोजित की गई थीं। उन्होंने British Museum तथा International Indian Folk Art Gallery जैसे अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी भाग लिया था।

सुभद्रा देवी का उदाहरण पारंपरिक कला में **माध्यमगत एवं सृजनात्मक अनुकूलन** की संभावना को रेखांकित करता है। पारंपरिक कला तब अधिक प्रभावशाली ढंग से जीवित रहती है जब कलाकार उसके मूल सांस्कृतिक तत्वों को बनाए रखते हुए बदलते सामाजिक और कलात्मक परिवेश के साथ संवाद स्थापित करता है।

यहाँ महिला कलाकार की भूमिका भी विशेष महत्त्व रखती है। लोक एवं पारंपरिक कलाओं के अंतरण में महिलाओं ने घरेलू तथा सामुदायिक स्तर पर ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सुभद्रा देवी का राष्ट्रीय सम्मान इस योगदान को व्यापक सार्वजनिक एवं सांस्कृतिक पहचान प्रदान करता है।

**10. दिलशाद हुसैन और मुरादाबाद की पीतल नक्काशी**

मुरादाबाद की पीतल नक्काशी भारतीय पारंपरिक धातु-शिल्प की विशिष्ट परंपरा है। दिलशाद हुसैन इस कला के प्रमुख समकालीन कलाकारों में हैं। उपलब्ध स्रोतों के अनुसार उन्होंने बचपन में अपने दादा के कार्य को देखकर इस कला को सीखना शुरू किया और बाद में पारिवारिक परंपरा के माध्यम से अपने कौशल को विकसित किया।
उनका उदाहरण पारंपरिक कला में **अनौपचारिक एवं पारिवारिक प्रशिक्षण** के महत्त्व को स्पष्ट करता है। पारंपरिक शिल्पों में तकनीकी ज्ञान केवल पुस्तकों से नहीं सीखा जाता; वह अवलोकन, अभ्यास, अनुकरण और दीर्घकालीन प्रशिक्षण के माध्यम से अर्जित होता है।
अतः किसी पारंपरिक कलाकार के संरक्षण का अर्थ केवल उसके द्वारा निर्मित वस्तुओं को संरक्षित करना नहीं, बल्कि उस कलाकार के **ज्ञान और कौशल को अगली पीढ़ी तक पहुँचाना** भी है।

**11. परंपरा और आधुनिकता का अंतर्संबंध**

पारंपरिकता और आधुनिकता को परस्पर विरोधी अवधारणाओं के रूप में देखना उचित नहीं है। UNESCO भी अमूर्त सांस्कृतिक विरासत को पारंपरिक होने के साथ-साथ समकालीन और गतिशील मानता है।
इस दृष्टि से आधुनिक माध्यमों का उपयोग परंपरा के विघटन का कारण ही हो, यह आवश्यक नहीं। वे परंपरा के पुनर्संचार और विस्तार का माध्यम भी बन सकते हैं।
परेश राठवा द्वारा ऑनलाइन प्रशिक्षण, राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भागीदारी और पिठोरा को विभिन्न सार्वजनिक स्थलों तक ले जाना इसी प्रकार के अनुकूलन का उदाहरण माना जा सकता है।
हालाँकि यहाँ एक सावधानी आवश्यक है। जब किसी धार्मिक अथवा सामुदायिक कलारूप को बाजार के लिए पुनरुत्पादित किया जाता है, तब उसके मूल संदर्भ के विस्थापन की संभावना उत्पन्न होती है। इसलिए संरक्षण की प्रक्रिया में **सांस्कृतिक संदर्भ और समुदाय की स्वायत्तता** को प्राथमिकता देना आवश्यक है।

**12. डिजिटल माध्यम और सांस्कृतिक संरक्षण**

डिजिटल तकनीक ने पारंपरिक कलाकारों के लिए नई संभावनाएँ उत्पन्न की हैं। डिजिटल अभिलेख, ऑनलाइन प्रशिक्षण, सोशल मीडिया, वर्चुअल प्रदर्शनियाँ और डिजिटल संग्रहालय पारंपरिक ज्ञान को व्यापक दर्शक-वर्ग तक पहुँचाने में सहायक हो सकते हैं।

UNESCO के अनुसार दस्तावेजीकरण अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण का महत्त्वपूर्ण साधन है। इसमें जीवित परंपरा को उसके वर्तमान स्वरूप में रिकॉर्ड करना और संबंधित दस्तावेजों को संरक्षित करना शामिल है।
हालाँकि डिजिटल दस्तावेजीकरण को केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं माना जाना चाहिए। कलाकार और समुदाय की सहमति, सांस्कृतिक स्वामित्व तथा पारंपरिक ज्ञान के उपयोग से संबंधित नैतिक प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण हैं। UNESCO के नैतिक सिद्धांत समुदायों को अपने अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में प्राथमिक भूमिका देने तथा उनके नैतिक और भौतिक हितों की रक्षा करने पर बल देते हैं।

**13. पद्म पुरस्कार और सांस्कृतिक प्रतिष्ठा**

पद्म पुरस्कार भारतीय गणराज्य के प्रमुख नागरिक सम्मानों में शामिल हैं। 2023 में पारंपरिक एवं लोककलाओं से जुड़े अनेक कलाकारों को सम्मानित किया गया।
परेश राठवा को पिठोरा कला के लिए पद्म श्री प्रदान किया गया। भारत सरकार के आधिकारिक विवरण में उनके योगदान को पिठोरा कला के संरक्षण और प्रसार से जोड़ा गया है।

सुभद्रा देवी को पेपर-माशे कला में उनके दीर्घकालीन योगदान के लिए पद्म श्री प्रदान किया गया। सरकारी प्रकाशन ने विशेष रूप से उनके छह दशकों से अधिक के कलात्मक अभ्यास को रेखांकित किया है।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय सम्मान किसी कलाकार की व्यक्तिगत उपलब्धि को सार्वजनिक मान्यता देने के साथ-साथ उस कलाकार से संबद्ध सांस्कृतिक परंपरा को भी दृश्यता प्रदान कर सकता है।

अतः पद्म पुरस्कार को **व्यक्तिगत सम्मान और सामुदायिक सांस्कृतिक मान्यता के बीच सेतु** के रूप में देखा जा सकता है।

**14. संरक्षण की प्रमुख चुनौतियाँ**

14.1 पीढ़ीगत अंतरण का संकट

यदि युवा पीढ़ी पारंपरिक कला को आजीविका का पर्याप्त साधन नहीं मानती, तो पारंपरिक ज्ञान के अंतरण में बाधा उत्पन्न हो सकती है।

14.2 आर्थिक असुरक्षा

कलाकार की आर्थिक स्थिति कमजोर होने पर वह अपनी कला छोड़कर अन्य व्यवसाय अपनाने के लिए विवश हो सकता है।

14.3 बाजारवाद और वस्तुकरण

बाजार पारंपरिक कला को नए उपभोक्ताओं तक पहुँचाता है, किंतु अत्यधिक वस्तुकरण उसके धार्मिक या सामुदायिक संदर्भ को कमजोर कर सकता है।

14.4 दस्तावेजीकरण का अभाव

कई कलारूपों का तकनीकी एवं मौखिक ज्ञान अभी भी व्यक्तियों और परिवारों तक सीमित है।

14.5 सांस्कृतिक स्वामित्व

पारंपरिक ज्ञान को बाहरी संस्थाओं द्वारा बिना पर्याप्त सामुदायिक सहभागिता के व्यावसायिक रूप से उपयोग किए जाने का प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण है।

UNESCO के नैतिक सिद्धांत स्पष्ट रूप से इस बात पर बल देते हैं कि समुदायों को अपनी विरासत से संबंधित निर्णयों में सक्रिय भूमिका मिलनी चाहिए और उनके ज्ञान के उपयोग से उत्पन्न नैतिक एवं भौतिक हितों की रक्षा होनी चाहिए।

**15. संरक्षण के लिए सुझाव**

पारंपरिक कलाओं के संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय उपयोगी हो सकते हैं—

1. **समुदाय-केंद्रित संरक्षण:** संबंधित समुदायों और कलाकारों को संरक्षण-नीति के निर्माण में सक्रिय भागीदार बनाया जाए।
2. **गुरु-शिष्य प्रशिक्षण:** वरिष्ठ कलाकारों के माध्यम से युवा कलाकारों के लिए दीर्घकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए जाएँ।
3. **डिजिटल अभिलेखीकरण:** कलाकारों की जीवन-कथाओं, तकनीकों, उपकरणों और मौखिक परंपराओं का डिजिटल दस्तावेजीकरण किया जाए।
4. **शैक्षणिक समावेशन:** विद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर पर लोक एवं पारंपरिक कलाओं के अध्ययन को प्रोत्साहित किया जाए।

5. **आर्थिक सशक्तीकरण:** कलाकारों को उचित पारिश्रमिक, बाजार और प्रत्यक्ष बिक्री के अवसर उपलब्ध कराए जाएँ।
6. **डिजिटल साक्षरता:** कलाकारों को ऑनलाइन बाजार और डिजिटल प्रचार के लिए प्रशिक्षित किया जाए।
7. **बौद्धिक एवं सांस्कृतिक अधिकार:** पारंपरिक ज्ञान और सामुदायिक कला के अनधिकृत व्यावसायिक उपयोग से सुरक्षा प्रदान की जाए।
8. **राष्ट्रीय पुरस्कारों के बाद संस्थागत सहयोग:** पुरस्कार प्राप्त कलाकारों के माध्यम से प्रशिक्षण, कार्यशाला और कला-अभिलेख परियोजनाएँ विकसित की जा सकती हैं।

UNESCO की Convention भी शिक्षा, प्रशिक्षण, दस्तावेजीकरण, शोध तथा समुदायों की सक्रिय भागीदारी को संरक्षण की प्रमुख प्रक्रियाओं के रूप में स्वीकार करती है।

**16. तुलनात्मक विश्लेषण**

| कलाकार | कला-परंपरा | ज्ञान-संचरण | आधुनिक हस्तक्षेप | राष्ट्रीय पहचान |
|---|---|---|---|---|
| परेश राठवा | पिठोरा चित्रकला | सामुदायिक/परंपरागत प्रशिक्षण | ऑनलाइन प्रशिक्षण, प्रदर्शनियाँ | पद्म श्री |
| सुभद्रा देवी | पेपर-माशे | दीर्घकालीनकलात्मक अभ्यास | कार्यशालाएँ एवं अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शन | पद्म श्री |
| दिलशाद हुसैन | पीतल नक्काशी | पारिवारिक प्रशिक्षण | व्यापक प्रदर्शन एवं प्रसार | पद्म श्री |

तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तीनों कलाकारों की कला-यात्रा अलग-अलग सामाजिक एवं भौगोलिक संदर्भों से जुड़ी होने के बावजूद उनमें एक साझा तत्व है—**परंपरागत ज्ञान को जीवित रखना और उसे व्यापक सामाजिक क्षेत्र में पहुँचाना।**

**17. विमर्श**

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सांस्कृतिक संरक्षण को केवल 'अतीत की रक्षा' के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। अमूर्त सांस्कृतिक विरासत स्वभावतः गतिशील है और प्रत्येक पीढ़ी उसके पुनर्सृजन में योगदान देती है। UNESCO भी इस विरासत को निरंतर विकसित और पुनर्निर्मित होने वाली 'living heritage' के रूप में देखता है।

इसलिए किसी कला-परंपरा की प्रामाणिकता का निर्धारण केवल इस आधार पर नहीं किया जाना चाहिए कि वह अतीत के स्वरूप से कितनी समान है। अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या संबंधित समुदाय उस कला को अपनी विरासत के रूप में स्वीकार करता है, उसका अभ्यास करता है और उसे आगे हस्तांतरित करता है।

परेश राठवा, सुभद्रा देवी और दिलशाद हुसैन के उदाहरण इसी गतिशीलता को स्पष्ट करते हैं। इनके कार्य में परंपरा और परिवर्तन, स्थानीयता और वैश्विकता तथा व्यक्तिगत प्रतिभा और सामुदायिक पहचान के बीच निरंतर संवाद दिखाई देता है।

18. निष्कर्ष

भारतीय पारंपरिक कलाएँ भारतीय सांस्कृतिक विविधता की महत्त्वपूर्ण आधारशिलाएँ हैं। उनका संरक्षण केवल कलाकृतियों को सुरक्षित रखने का प्रश्न नहीं, बल्कि उन **ज्ञान-प्रणालियों, कलाकारों और समुदायों के संरक्षण का प्रश्न है** जो इन कलाओं को जीवित रखते हैं।

परेश राठवा का पिठोरा संरक्षण, सुभद्रा देवी का पेपर-माशे में दीर्घकालीन योगदान और दिलशाद हुसैन की पीतल नक्काशी की परंपरा यह प्रमाणित करती है कि कलाकार सांस्कृतिक विरासत के सक्रिय संरक्षक हैं।

पद्म पुरस्कारों ने ऐसे कलाकारों को राष्ट्रीय दृश्यता प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। फिर भी केवल पुरस्कार किसी कला-परंपरा के दीर्घकालीन अस्तित्व की गारंटी नहीं दे सकता। इसके लिए आर्थिक सुरक्षा, ज्ञान का अंतरण, दस्तावेजीकरण, शिक्षा, डिजिटल संसाधन और समुदाय-केंद्रित संरक्षण आवश्यक हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि—

**"सांस्कृतिक विरासत का वास्तविक संरक्षण अतीत को ज्यों-का-त्यों सुरक्षित रखने में नहीं, बल्कि उस ज्ञान, कौशल और सांस्कृतिक चेतना को जीवित रखने में है जिसके माध्यम से अतीत वर्तमान में अर्थवान और भविष्य में संप्रेषणीय बनता है।"**

इस अर्थ में पारंपरिक कलाकार केवल संस्कृति के प्रतिनिधि नहीं, बल्कि **संस्कृति के सक्रिय पुनर्स्रष्टा और भावी पीढ़ियों के लिए उसके सेतु** हैं।

**संदर्भ-सूची**

**प्राथमिक एवं आधिकारिक स्रोत**


1. Government of India, Press Information Bureau. **"Padma Shri: Shri Paresh Rathwa."** Ministry of Information & Broadcasting / Government of India, 2023.
2. Government of India. **New India Samachar**, 1–15 March 2023. "Subhadra Devi: She Has Kept Paper Mache Art Alive."
3. UNESCO. **Convention for the Safeguarding of the Intangible Cultural Heritage**, 2003.
4. UNESCO. **What is Intangible Cultural Heritage?** UNESCO Intangible Cultural Heritage.
5. UNESCO. **Involvement of Communities, Groups and Individuals.** UNESCO Intangible Cultural Heritage.
6. UNESCO. **Involvement of Tradition Bearers and Practitioners.** UNESCO Intangible Cultural Heritage.
7. UNESCO. **Ethics and Intangible Cultural Heritage.** UNESCO Intangible Cultural Heritage.


**द्वितीयक स्रोत**


8. India Today. **"How the 2023 Padma Awards May Give a New Lease of Life to Waning Gujarati Art Forms."** 31 January 2023.

9. Scroll.in. **“Pithora Painting: Adivasis Fight to Prevent the Commercialisation of a Sacred Tradition.”**
10. IIAD. **“Padma Shri Artists and Craftspersons of 2023.”** Indian Institute of Art and Design.
11. Bihar Museum. **Bihar Museum Newsletter, Issue 07, October–December 2024.**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 91-96
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# क्षमा

**डॉ० सरला जागिड़**
सह-प्राध्यापक
अन्य भाषा विभाग (हिन्दी),
हिंदुस्तान कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस कोयम्बत्तूर

**धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।**
**धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥1**

**मनु स्मृति के अनुसार,** "धैर्य, **क्षमा**, इंद्रिय-संयम, चोरी न करना, पवित्रता, इंद्रिय-निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और अक्रोध (क्रोध न करना)—ये दस धर्म के लक्षण हैं।" धर्म के लक्षणों में क्षमा को द्वितीय स्थान दिया गया है। वेदों और उपनिषदों में अलग - अलग घटना के अनुरूप क्षमा को प्रस्तुत किया है |

क्षमा मानव मन की वह उत्तम अवस्था है, जिसमें दूसरों को अभय (क्षम्य) मानकर मनुष्य अपने आपको को क्षमा करता है, जिसके उपरांत सिर्फ़ मन में निर्लेपता,तटस्थता और असीम शांति का भाव ही रहता है|

सबसे पहले 'क्षमा' शब्द की व्युपति को जान लेते हैं,फिर इसके अर्थ, भाव, स्तर और जीवनोपयोगी मूल्य को जान पाएंगे | 'क्षमा' शब्द की व्युपत्ति संस्कृत के 'क्षम' धातु से हुई है|

व्याकरण की दृष्टि से—

क्षम् + अङ् प्रत्यय + टाप् (स्त्री प्रत्यय) = क्षमा

अर्थात् 'क्षम्' धातु में 'अङ्' प्रत्यय और 'टाप्' (स्त्रीलिंग सूचक प्रत्यय) लगाने से 'क्षमा' शब्द बना है।

**'क्षम'धातु का अर्थ:** सहन करना, सहिष्णु होना, समर्थ होना |

अर्थात् क्षमा का मूल भाव है—किसी कष्ट, अपमान या अपराध को सहन करने की क्षमता रखना और प्रतिशोध की भावना से मुक्त होना।

यह तो इसका शाब्दिक अर्थ हुआ, लेकिन सामान्य व्यवहार क्षमा शब्द का किसी मानव विशेष को उसके उन कृत्यों के लिए माफ़ करना है, जिसमे उन कृत्यों का प्रभाव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से किसी अन्य पर पड़ता है, उसका अपराध या दोष (अज्ञानवश या जानबूझकर) मानते हुए भी उसे दण्ड अथवा प्रतिशोध की भावना से मुक्त कर देना है, अर्थात क्षमाप्रार्थी को निर्भय कर दिया जाता हैं | प्रत्येक मनुष्य में क्षमा का भाव और विचार नहीं होता हैं |

संस्कृत नाट्यशास्त्र और हिन्दी काव्यशास्त्र में नायक को उसकी **प्रकृति (स्वभाव)** के आधार पर चार भागों में बाँटा गया है:- "भेदैश्चतुर्धा ललित-शांत-उदात्त-उद्धतैरयम्"2

अर्थात — नायक के स्वभाव के आधार पर चार प्रकार होते हैं-ललित, शांत, उदात्त और उद्धत| वेदों में भी **धीरोदात्त नायक** ही उत्तम है और उसके मुख्य गुणों में **क्षमा** है,भगवान विष्णु के 9 अवतारों में **श्रीराम** को धीरोदात्त नायक माना जाता है | उस मनुज अवतार में उन्होंने माता कैकेयी और दासी मंथरा को वन गमन का कारण ही नहीं माना, सिर्फ पिताश्री के वचन को महत्वपूर्ण माना | वन गमन के आदेश से पहले और बाद में दोनों ही परिस्थितियों में श्री राम शान्त, गंभीर और निर्मल थे |

"क्षमा नाम प्रियप्रियेषु सर्वेषु तदनपूजयेषु सहनम्।"3

**शांडिल्य उपनिषद में क्षमा का अर्थ कुछ इस प्रकार माना है,** —"सुख और दुःख, प्रशंसा और अपमान— सभी परिस्थितियों में धैर्य बनाए रखना ही क्षमा है।"

शांडिल्य उपनिषद के अनुसार जो क्षमा की परिभाषा कही गई है, वह तितिक्षा की स्थिति के लगभग निकट होते हुए भी उससे अलग है | यह अंतर मानव - मन के भीतर का है, या उसके जीवन में अकस्मात आने वाले घटना से उत्पन परिस्थिति के प्रभाव का है|

दुर्योधन ने छल से द्यूतंक्रीडा में पाण्डवों को हराकर इन्द्रप्रस्थ जीतकर 14 वर्ष का वनवास और एक साल का अज्ञातवास दंड स्वरुप दिया, यहीं पर द्रोपदी का भरी सभा में चीर- हरण भी हुआ|

यहाँ पाण्डवों का वनवास के कष्ट को सहन करना। दुर्योधन जब द्वैतवन में उनका उपहास करने आया, तब भी पाण्डव अपने अपमान और वनवास के दुःख पर आवेश में नहीं आए; वे धैर्य और संयम बनाए रखते हैं। यहाँ सुख-दुःख,मान-अपमान, प्रशंसा-कडवे वचन सभी परिस्थितियों को एक समान रूप से सहन करना ही **तितिक्षा** है।

जब दुर्योधन द्वैतवन गया, वहाँ गंधर्वराज चित्रसेन ने दुर्योधन और उसके साथियों को पराजित कर बंदी बना लिया। जब युधिष्ठिर को पता चलता है, तो भीम और अर्जुन को भेजकर दुर्योधन को मुक्त कराया जाता है।

इस प्रसंग में तितिक्षा और क्षमा भी मुख्यतः युधिष्ठिर की ओर से है, पर याद रहे कि युधिष्ठिर ने संबंधों और कुल की मर्यादा को ध्यान में रखकर क्षमा किया— पर दोनों का केंद्र भिन्न है।

युधिष्ठिर धीरप्रशांत नायक कहा जाता हैं, क्योंकि वे क्षमावान, गंभीर, विनयी, उदार और धर्मनिष्ठ हैं।

सरल शब्दों में:

"मुझ पर अन्याय हुआ, पर मैं उसका बदला लेने के लिए तुरंत उद्धत नहीं होता; मैं धैर्य रखता हूँ।"

यह मन की आंतरिक अवस्था, तितिक्षा है।

क्षमा —जिसने अपमान और अन्याय किया हो, उससे किसी भी क्षण में भी द्वेष न रखकर सहायता या माफ़ करना।

इस प्रसंग से मानव मन की आध्यात्मिक यात्रा को इस प्रकार समझ सकते हैं—

अन्याय या अपमान ⟶ दुःख और क्रोध ⟶धैर्य⟶ तितिक्षा ⟶ विवेक ⟶ क्षमा

इस घटना के अनुसार शांडिल्य उपनिषद के इस श्लोक का इसका अंतर्निहित भाव यह है कि-

1. क्षमा केवल माफी नहीं, मानसिक संतुलन है |
2. समभाव की कला
3. मन की स्थिरता
4. अहंकार का नाश
5. आत्मसंयम की पराकाष्ठा
6. योग साधना का आधार

**एको धर्मः परं श्रेयः क्षमैका शान्तिरुत्तमा।**
**विद्यैका परमा तृप्तिरहिंसैका सुखावहा॥4**

**महाभारत के उद्योग पर्व में क्षमा का अभिप्राय कुछ इस तरह से है -** "धर्म ही सर्वोच्च कल्याण देने वाला है, क्षमा ही सबसे उत्तम शान्ति है, विद्या ही परम संतोष प्रदान करती है और अहिंसा ही वास्तविक सुख देने वाली है।"

यह श्लोक विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को दी गई नीति का हिस्सा है।यह महाभारत के युद्ध से पहली रात की घटना है , जब धृतराष्ट्र युद्ध से होने वाले परिणामों से बहुत चिंतित और डरे हुए थे | विदुर धृतराष्ट्र को समझा रहे थे कि युद्ध का होना किसे के भी हित में नहीं है | युद्धक्षेत्र में होने वाली हानि न तो अपने परिवार के लोगों को और न अपने राज्य को सुख दे सकती हैं | महाराज धृतराष्ट्र को पुत्र मोह से बाहर निकलकर समाज, देश और राष्ट्र के हित में सोचने का सन्देश देना चाहते हैं| इसलिए विदुर का संदेश था—**"क्षमा का मार्ग अपनाएँ, शांति को प्राथमिकता दें, और धर्म के पक्ष में रहें।"** यही सच्चा राजधर्म है और यही राष्ट्र का कल्याण करता है।लेकिन धृतराष्ट्र एक राजा के कर्तव्य को भूलकर पुत्र मोह में डूब जाते हैं| यहाँ धृतराष्ट्र का व्यवहार एक सामान्य जन जैसा है, जिसके लिए उसके परिवार हित से उपर और अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं |इतिहास साक्षी है, किसी भी राजा ने स्व हित को प्राथमिकता दी है, उसने अपना और राज्य दोनों का सर्वनाश किया है |

महाभारत के ही वन पर्व में क्षमा को इस तरह भी उल्लेखित किया है-

**"क्षमा तेजस्विनां तेजः क्षमा ब्रह्म तपस्विनाम्।**
**क्षमा सत्यं सत्यवतां क्षमा यज्ञः क्षमा शमः॥"5**

**अर्थ:** "क्षमा तेजस्वी लोगों का तेज है, तपस्वियों का ब्रह्म है, सत्यवानों का सत्य है, और यज्ञ व शम (मन की शांति) है।"

यह प्रसंग **महाभारत के वनपर्व में युधिष्ठिर और द्रौपदी के संवाद** के समय घटित होता है। इसे सामान्यतः **काश्यप-गीता** कहा जाता है।

वनवास के समय द्रौपदी कौरवों द्वारा किए गए अपमान और अन्याय से अत्यन्त दुःखी थीं। वे युधिष्ठिर से कहती हैं कि कौरवों ने हमारे साथ छल किया, मेरा अपमान किया और हमारा इन्द्रप्रस्थ छीन लिया; फिर भी युधिष्ठिर क्रोध करके उनका दण्ड क्यों नहीं देते और क्षमा का आश्रय क्यों ले रहे हैं।

द्रौपदी का प्रश्न मूलतः यह था कि **अन्याय सहकर भी क्षमा करते रहना क्या उचित है?** वे युधिष्ठिर को उनके क्षत्रिय धर्म और शत्रुओं के विरुद्ध प्रतिकार का स्मरण कराती हैं।

युधिष्ठिर उत्तर देते हैं कि क्षमा दुर्बलता नहीं, बल्कि महान् शक्ति है। इसी संदर्भ में वे महर्षि काश्यप द्वारा कही गई क्षमा की महिमा का वर्णन करते हैं। युधिष्ठिर का इस तरह का कथन यह प्रमाणित करता है, प्रत्येक प्राणी में क्षमा को धारण करने का गुण नहीं होता है | युधिष्ठिर की इस तरह की बात बहुत ही न्यायोचित है |

इसके साथ ही हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि क्षमा का अर्थ यह नहीं है कि कर्म का फल समाप्त हो जाता है। मनुष्य को अपने किए गए अपराध का पश्चात्ताप या ग्लानि का भाव नहीं रहता है, लेकिन बाद में मनुष्य को उस अपराध से शिक्षा लेकर उचित आचरण करना भी आवश्यक है।

'क्षमा' एक नैतिक तथा शुद्ध भाव है। भारतीय रस-सिद्धान्त में क्षमा स्वतंत्र रस के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है; किन्तु क्षमा शान्त, करुण और वीर रस को पुष्ट देता है। जब मनुष्य को कष्ट, पीड़ा, दुःख या अपमान का सामना करना पड़ता है, तब उसके भीतर स्वाभाविक रूप से क्रोध, द्वेष और प्रतिशोध की भावना उत्पन्न हो सकती है। ऐसे समय में वह धैर्य और आत्मसंयम द्वारा तत्काल प्रतिक्रिया से स्वयं को रोकता है। यह आत्मसंयम की स्थिति वीर- रस रूप ले लेती है।यहाँ वीर रस से भाव शारीरिक बल की अपेक्षा आत्मिक

बल से है, इसलिए क्षमा को वीरों का गहना कहा गया है| जब मन से प्रतिशोध और द्वेष कम होने लगते हैं, तब शान्त भाव उत्पन्न होता है। यदि इस शान्ति के साथ अपराधी या पीड़ित प्राणी के प्रति करुणा और कल्याण की भावना जुड़ जाए, तो क्षमा का शुद्ध और उदात्त रूप प्रकट होता है।

**"क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो।**
**जो विषहीन विषधर, उसको तो सब दबाएँगे पल में।"6**

रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार क्षमा उस मनुष्य को ही शोभा देती है, जिसके पास शक्ति हो | शक्तिहीन, दुर्बल और साधनहीन मनुष्य क्षमा को धारण नहीं कर सकता है, क्योंकि उसके पास कुछ खोने के लिए नहीं हैं | क्षमा का आधार या परीक्षा तीन आधारों पर हो सकती है-

**धन हानि-** जब हमारा आर्थिक नुकसान होता है, या किसी ने हमारी संपत्ति पर जबरन कब्ज़ा कर लिया है, या कोई पैतृक सम्पति पर अपना; अपनों की सहमति के बगैर अपना दावा करते हैं | ऐसी स्थिति में क्षमा करना थोड़ा मुश्किल है, मगर कर्म/भाग्य को प्रधान मानकर, संतोष को धारण कर धन हानि के लिए क्षमा किया जा सकता है | हमारे भारतवर्ष के इतिहास में कई तो ऐसे राजा हुए हैं, जिन्होंने अपनी स्वेच्छा से आत्मशांति प्राप्ति हेतु धन और राज्य का त्याग कर देते हैं |बहुत बड़ा उदाहरण हमारे स्वर्णिम इतिहास में छुपा है- महात्मा बुद्ध, जिन्होंने आत्मकल्याण के मार्ग पर चलने हेतु राज्य, परिवार और सुख - सुविधाओं का त्याग किया और फिर आत्मशांति के मार्ग के ऐसे सूर्य बने, जिन्होंने पूरे भारतवर्ष को अपने ज्ञान और सन्देश से आलोकित किया | हिन्दू धर्म के बढते कर्मकांडों से त्रसित जनता को उन्होंने सहारा दिया |

**मान- हानि**- जब हमारे सम्मान या आत्मसम्मान को चोट पहुँचे, या किसी ने हमारा अपमान किया, सार्वजनिक रूप से नीचा दिखाया या हमारे चरित्र पर प्रश्न उठाया। यह हानि दिखाई नहीं देती, लेकिन मन में बहुत गहरी चोट छोड़ सकती है। भारतीय परंपरा में भृगु ऋषि और भगवान विष्णु का प्रसंग इसका सुंदर उदाहरण है। कथा के अनुसार, भृगु ऋषि ने त्रिदेवों के धैर्य की परीक्षा लेने हेतु भगवान विष्णु की छाती पर पैर से प्रहार किया। यह प्रहार केवल परीक्षा नहीं, बल्कि एक प्रकार से मान-हानि और अपमान था। लेकिन भगवान विष्णु ने क्रोध करने के बजाय भृगु ऋषि के चरण पकड़ लिए और पूछा,"ऋषिवर! आपके चरण को तो चोट नहीं लगी? यह प्रसंग हमें बताता है कि क्षमा केवल अपराध को सह लेना नहीं है; बल्कि अपने भीतर उठने वाले अहंकार, क्रोध और प्रतिशोध को जीत लेना है। जिसे अपने सम्मान का बोध है, वही क्षमा की ऊँचाई को समझ सकता है। यहाँ एक बात और सामने आती है कि किसी के अपमान करने से हमारा अपमान नहीं होता है, बल्कि इस चीज़ का प्रभाव तब गहरा होता है कि जब हम स्वं मान लेते है |अपमान करने वाले से बड़ा उसे सहन करने वाला होता है,क्योंकि अपमान करने वाला अपने क्रोध के द्वारा विवेकशून्य होकर अपनी मर्यादा और संस्कारों को त्याग देता है और सामने वाला सिर्फ ग्रहण करता है, सामने वाला उसके अंहकार और अपशब्दों को पूरी शक्ति के साथ ग्रहण करता है | यहाँ वक्ता श्रेष्ठ न होकर श्रोता होता है| अपमान का उत्तर देना सरल है, लेकिन अपमान के बाद भी अपने भीतर शांति बनाए रखना—यही वास्तविक शक्ति है। इसके लिए रहीम का बहुत दोहा याद आता है-

"क्षमा बड़न को चाहिए, छोटन को उत्पात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात।।"7

इस दोहे में प्रभु ने अपना अपमान माना ही नहीं है | भृगु ऋषि ने अपना क्रोध दिखाकर जो अपने व्यक्तित्व का परिचय दिया, वो गलत है | इस दोहे का भाव भी यही है कि कृत्य करने वाला अपराधी है और भोक्ता सहनशील और निर्मल |यहाँ श्री विष्णु सर्व समर्थ, जगत नियंता हैं, उन्हें क्षमा और क्रोध दोनों शोभित हैं | लेकिन उन्होंने भृगु ऋषि के प्रहार को अपराध नहीं माना और क्षमा किया |

**अंग-भंग या जन-हानि** — जब शारीरिक या जीवन की हानि हो यह क्षमा का सबसे कठिन स्तर है। किसी ने शारीरिक चोट पहुँचाई हो, स्थायी नुकसान किया हो या किसी प्रियजन को हमसे छीन लिया हो, तो उसे क्षमा करना मुश्किल हो जाता है |महाभारत में गांधारी का प्रसंग इसका अत्यंत मार्मिक उदाहरण है। जिसमे उसके १०० पुत्रों की हत्या पांडवों द्वारा हुई, उसने उनको माफ़ कर दिया , लेकिन श्रीकृष्ण जो इस सृष्टि के रचयिता हैं, उनको माफ़ नहीं किया | गांधारी को क्रोध सिर्फ श्रीकृष्ण के लिए था, क्योंकि गांधारी यहाँ यह सोचती है , कि अगर श्रीकृष्ण चाहते तो यह विनाश रोक सकते थे | गांधारी ने अपने पुत्रों की हानि का भार किसी मनुष्य के कंधे पर नहीं डाला, बल्कि ईश्वर को इसका अपराधी स्वीकार किया । गांधारी ने पुत्र- शोक से व्याकुल हो, श्री कृष्ण और उनके यादव कुल को शापित भी किया | भगवन ने उस श्राप को स्वीकार कर उसे क्षमा किया |

क्षमा का अर्थ अपराध को भूल जाना नहीं, बल्कि अपने भीतर के प्रतिशोध को समाप्त करना है। क्षमा तो स्वयं की मुक्ति है, दूसरे ने एक बार चोट पहुँचाई, पर जब तक हम उसे याद करके क्रोध रखते हैं, तब तक वह चोट बार-बार हमें दुखी करती रहती है। इसलिए क्षमा अपराधी को दी जाती है, पर उसका लाभ क्षमाशील को ही मिलता है। मनुष्य अपने स्वयं का ही मित्र और शत्रु होता हैं | क्षमा दूसरों के लिए नहीं होती, सिर्फ अपने लिए होती है | सामान्य मनुष्य का व्यवहार हर परिस्थिति के लिए अलग - अलग होता है, मनुष्य क्षमा पाने का अधिकार समझता है, लेकिन देने का भाव नहीं जानता | क्षमा और दंड एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं। क्षमा न्याय का विरोधी नहीं और क्षमा का अर्थ अपराधी को दंडहीन कर देना भी नहीं है। क्षमा मनुस्मृति के अनुसार धर्म का लक्षण और मन की वह स्थिति है, जहाँ पर मनुज अपने मन में उठने वाले हर प्रतिकार, जलन, ईर्ष्या, मान-अपमान, लाभ- हानि,पाप-पुण्य के भाव से उपर उठकर अपने आपको आंतरिक शांति के पथ पर अग्रसर करता है | जब कभी हम क्षमा की बात करते है, और जैन दर्शन को याद न रखे तो हमारी बात अधूरी मानी जाती है|

जैन परंपरा में पर्युषण और संवत्सरी के अवसर पर व्यक्ति अपने द्वारा जाने-अनजाने किए गए अपराधों के लिए क्षमा माँगता है और दूसरों को भी क्षमा करता है। जैन परंपरा की प्रसिद्ध प्रार्थना है—

"खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणइ॥"8

भावार्थ: "मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूँ, सभी जीव मुझे क्षमा करें। मेरा सभी जीवों के प्रति मैत्रीभाव है और किसी के प्रति मेरा वैर नहीं है।"

और इसी भावना से कहा जाता है—

"मिच्छामि दुक्कडम्।"

अर्थात्—यदि मेरे द्वारा मन, वचन या कर्म से किसी को जाने-अनजाने कष्ट पहुँचा हो, तो मेरे वे दुष्कर्म निष्फल हों/क्षमा किए जाएँ। इसमें सबसे सुंदर बात यह है कि दूसरों को मुक्त करने से पहले स्वयं को इन सब से मुक्त करना है, यहीं असली क्षमा है |

आदि गुरु शंकराचार्य ने 'क्षमा' को दो मुख्य दृष्टिकोणों से समझाया है—पहला, वेदांत और साधना के व्यावहारिक स्तर पर (दार्शनिक परिभाषा) और दूसरा, भक्ति के स्तर पर (ईश्वर से क्षमा-याचना)।

पहला, वेदांत और साधना के व्यावहारिक स्तर पर (दार्शनिक परिभाषा) - शंकराचार्य के अनुसार, "ताडन-आक्रोशादिषु प्राप्तुता विरकृतचित्तता क्षमा"9—अर्थात किसी के द्वारा पीटे जाने (शारीरिक आघात) या गाली/निंदा सुनने (मानसिक आघात) पर भी मन में कोई विकार, क्रोध या बदले की भावना न आना ही वास्तविक क्षमा है। जब कोई आपका अहित करे, तब आपके पास बदला लेने की शक्ति या सामर्थ्य होने के बावजूद अपने चित्त (मन) को

पूरी तरह शांत रखना ही क्षमा का उच्चतम स्तर है। यहाँ पर हम श्री विष्णु और भृगु ऋषि के प्रसंग के उदाहरण को ले सकते हैं|

दूसरा, भक्ति के स्तर पर (ईश्वर से क्षमा-याचना)- शंकराचार्य ने केवल इंसानी व्यवहार में ही क्षमा को नहीं समझाया, बल्कि ईश्वर के सामने अपनी भूलों को स्वीकार करने के लिए कुछ अद्भुत स्तोत्रों की रचना की। इनमें 'क्षमा' के प्रति उनका भाव अत्यंत भावुक और विनीत है|

शंकराचार्य द्वारा वर्णित प्रथम स्थिति- मनुष्य का सामान्य जीवन,उसकी रोजमर्रा की कहानी- जहाँ पर वह निंदा करता है या सुनता है, क्रोध के वशीभूत होकर किसी दूसरे के अस्तित्व से खेलता है या खुद अपने जमीर को गिरते हुए देखकर शर्मिंदा होता है और कभी- कभी कुछ बातों को छोड़कर आगे बढता है या कोई दर्द अंदर पालता है | इतिहास में एक प्रसंग ऐसा भी है, जिसमें क्षमा है, लेकिन किसी को दिए गए वचन पर आधारित थी | वह प्रसंग- श्रीकृष्ण और शिशुपाल वध का है| जहाँ पर श्री कृष्ण ने अपनी बुआ को वचन दिया था कि वे शिशुपाल के १०० अपराधों को क्षमा करेंगे | दूसरा प्रसंग अपने अपमान के प्रतिशोध को पालकर भारतवर्ष का नया इतिहास लिखा- राजनीतिज्ञ चाणक्य और चक्रवर्ती सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य |

महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में सामान्य प्राणी के जीवन जीने की आचार संहिता के रूप में अष्टांग योग को बताया है,जिसमें यम का संबंध मनुष्य के सामाजिक व्यवहार से है | यम समाज में शांति बनाए रखने के लिए हमारे व्यवहार को नियंत्रित करता है (जैसे- झूठ न बोलना, हिंसा न करना)।

और नियम का संबंध उसकी अपनी आंतरिक दुनिया (व्यक्तिगत अनुशासन) से है। नियम अपने मन, शरीर और विचारों को शुद्ध व अनुशासित रखने के लिए हैं (जैसे- स्वच्छता रखना, संतोष रखना)।

वैदिक वांग्मय, उपनिषदों और इतिहास के सांगोपांग अध्ययन के पश्चात हम यह विचार रख सकते हैं कि **क्षमा** हमारे आंतरिक मन का वह शुद्ध और सात्विक भाव है, जो मनुष्य को स्वतः ही आत्म-उन्नति की ओर ले जाता है। जब हम किसी को क्षमा करते हैं, तो संसार की दृष्टि में भले ही हम महान बनते हैं, परंतु आध्यात्मिक और मानसिक रूप से उसका वास्तविक लाभ स्वयं हमें ही मिलता है।

**संदर्भ सूची**


1. **मनु स्मृति के अध्याय 6, श्लोक 92**
2. **https://gyanbharatiparishad.blogspot.com/2021/12/blog-post_23.html**
3. **शांडिल्य उपनिषद** (1.1)
4. **उद्योग पर्व, अध्याय 33**
5. **वन पर्व — काश्यप गीता (युधिष्ठिर और द्रौपदी का संवाद) महाभारत 3.29.43**
6. **रामधारी सिंह 'दिनकर', 'कुरुक्षेत्र', तृतीय सर्ग**
7. **पुस्तक:** रहीम-कवितावली, **दोहा:** क्रमांक **51**
8. संवत्सरी प्रतिक्रमण, क्षमापना गाथा 49
9. भगवद्गीता पर आदि शंकराचार्य के शांकरभाष्य से

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 97-101
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ : ਸਮਾਜਿਕ ਸਮਾਨਤਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਮੂਲਭੂਤ ਬਦਲਾਅ

**ਡਾ. ਰਾਗਿਨੀ ਸ਼ਰਮਾ,**
ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਭਾਗ,
ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਾਲਜ ਮੋਗਾ

*Abstarct- ਇਸ ਅਧਿਐਨ ਵਿੱਚ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਅਤੇ ਇਸ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਮਹੱਤਵ ਦਾ ਵਿਸਤ੍ਰਿਤ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। 1699 ਈਸਵੀ ਦੀ ਵਿਸਾਖੀ ਦੇ ਦਿਨ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਵੱਲੋਂ ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੀ ਇੱਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਘਟਨਾ ਸੀ, ਜਿਸ ਨੇ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਨੂੰ ਨਵੀਂ ਪਹਿਚਾਣ ਅਤੇ ਸੰਗਠਿਤ ਰੂਪ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ। ਇਹ ਸਿਰਜਣਾ ਕੋਈ ਅਚਾਨਕ ਫ਼ੈਸਲਾ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਬਲਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਵੱਲੋਂ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤੀ ਗਈ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਆਤਮਿਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਦਾ ਪਰਿਣਾਮ।*

ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦਾ ਪ੍ਰਸਾਰ ਇੱਕ ਵਿਲੱਖਣ ਇਤਿਹਾਸਕ ਘਟਨਾ ਹੈ ਜਿਸ ਨੇ ਨਾ ਕੇਵਲ ਭਾਰਤ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ, ਸਗੋਂ ਕਿਸੇ ਹੱਦ ਤੱਕ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਨੂੰ ਵੀ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਪਰੰਪਰਾ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੌਰਾਨ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਸਥਾਪਕਾਂ ਵੱਲੋਂ ਰਚਿਆ ਗਿਆ ਨਵਾਂ ਸਮਾਜਿਕ, ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਢਾਂਚਾ ਅੱਜ ਵੀ ਸਿੱਖ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਦਿਸ਼ਾ ਦੇਂਦਾ, ਢਾਲਦਾ ਅਤੇ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਆਖਰੀ ਗੁਰੂ, ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਵੱਲੋਂ ਗੁਰਤਾ ਗੱਦੀ ਪਵਿੱਤਰ ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੇ ਸੰਗਠਿਤ ਰੂਪ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਨੂੰ ਬਖ਼ਸ਼ੀ ਗਈ। ਸਿੱਖਾਂ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਲਈ ਦਸਾਂ ਗੁਰੂਆਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਕਾਰਜਾਂ ਦਾ ਸੰਖੇਪ ਵਰਣਨ ਅਤੇ ਇਸ ਅਧਿਐਨ ਲਈ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਿਛੋਕੜ ਪ੍ਰਸਤੁਤ ਕਰਨਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਸਥਾਪਕ ਗੁਰੂਆਂ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜਾਣੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਪਹਿਲੇ ਗੁਰੂ ਸਨ ਅਤੇ ਗੁਰੂ

ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਸਿੱਖਾਂ ਦੇ ਦਸਵੇਂ ਅਤੇ ਆਖਰੀ ਗੁਰੂ ਸਨ। [1]ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਵੱਲੋਂ ਗੁਰਤਾ ਗੱਦੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਅਤੇ ਪੰਥ ਖਾਲਸਾ, ਅਰਥਾਤ ਅੰਮ੍ਰਿਤਧਾਰੀ ਸਿੱਖਾਂ ਦੀ ਸਮੂਹਿਕ ਸੰਗਤ ਨੂੰ ਸੌਂਪੀ ਗਈ।

ਨੌਵੇਂ ਸਿੱਖ ਗੁਰੂ, ਗੁਰੂ ਤੇਗ਼ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਦੀ ਸ਼ਹਾਦਤ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪੁੱਤਰ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਰਾਇ ਜੀ ਦੇ ਗੁਰਤਾ ਗੱਦੀ ਸੰਭਾਲਣ ਨਾਲ ਸਿੱਖ-ਮੁਗਲ ਸੰਬੰਧਾਂ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਨਵਾਂ ਦੌਰ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋਇਆ।ਗੁਰੂ ਤੇਗ਼ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਛੇਵੇਂ ਗੁਰੂ, ਗੁਰੂ ਹਰਿਗੋਬਿੰਦ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਛੋਟੇ ਪੁੱਤਰ ਸਨ। ਉਹ ਬਹੁਤ ਧਿਆਨਮਗਨ ਅਤੇ ਆਤਮਿਕ ਸੁਭਾਵ ਵਾਲੇ ਵਿਅਕਤੀ ਸਨ। ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਸ਼ੁਰੂਆਤੀ ਸਾਲਾਂ ਵਿੱਚ ਉਹ ਇੱਕ ਭੋਰੇ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਮੌਤ ਦੇ ਸਦੀਵੀ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਉੱਤੇ ਧਿਆਨ ਲਗਾਉਂਦੇ ਰਹੇ। ਅੱਠਵੇਂ ਗੁਰੂ, ਗੁਰੂ ਹਰਿਕ੍ਰਿਸ਼ਨ ਜੀ ਦੇ ਜੋਤੀ ਜੋਤ ਸਮਾਉਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਗੁਰਤਾ ਗੱਦੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਈ। ਫ਼ਰਜ਼ ਦੀ ਪੁਕਾਰ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਇਕਾਂਤਵਾਸ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਆਉਣ ਲਈ ਮਜਬੂਰ ਕੀਤਾ, ਪਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਜੋ ਰਾਹ ਸੀ ਉਹ ਸੁਖਮਈ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਸਗੋਂ ਇੱਜ਼ਤ ਅਤੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਦਾ ਰਾਹ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਇੱਕ ਪਾਸੇ ਮੁਗਲ ਹਾਕਮਾਂ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮ ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਆਪਣੇ ਨੇੜਲੇ ਸਬੰਧੀਆਂ ਦੀ ਈਰਖਾ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ ਪਿਆ। ਸ਼ਾਂਤੀ ਅਤੇ ਭਲਮਨਸਾਹੀ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਾਜ਼ਿਸ਼ਾਂ ਅਤੇ ਈਰਖਾ ਵਾਲੇ ਮਾਹੌਲ ਤੋਂ ਦੂਰ ਹੋਣ ਦਾ ਫੈਸਲਾ ਕੀਤਾ। ਉਹ ਸ਼ਿਵਾਲਿਕ ਪਹਾੜੀਆਂ ਦੀਆਂ ਸ਼ਾਂਤ ਵਾਦੀਆਂ ਵਿੱਚ ਚਲੇ ਗਏ ਅਤੇ ਉੱਥੇ ਇੱਕ ਸ਼ਹਿਰ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ ਜਿਸਦਾ ਨਾਮ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ "ਆਨੰਦਪੁਰ" ਰੱਖਿਆ, ਜਿਸਦਾ ਅਰਥ ਹੈ "ਆਨੰਦ ਦਾ ਸ਼ਹਿਰ"।

ਮੱਘਰ ਸੰਮਤ 1722 (1665 ਈ.) ਦੀ 15 ਤਾਰੀਖ਼ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਤੇਗ਼ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਨੇ ਆਨੰਦਪੁਰ ਤੋਂ ਇੱਕ ਲੰਬੇ ਧਾਰਮਿਕ ਦੌਰੇ ਲਈ ਰਵਾਨਗੀ ਕੀਤੀ। ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਉਹ ਪਟਿਆਲਾ ਰਿਆਸਤ ਦੇ ਮਲੋਵਾਲ ਪਿੰਡ ਗਏ। ਇਸ ਯਾਤਰਾ ਵਿੱਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਮਾਤਾ ਜੀ ਅਤੇ ਧਰਮ ਪਤਨੀ ਵੀ ਸਨ। ਕਈ ਸਥਾਨਾਂ ਦਾ ਦੌਰਾ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਹ ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ ਪਹੁੰਚੇ, ਜੋ ਅੱਜ ਦਮਦਮਾ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਹੈ। ਜਿੱਥੇ ਵੀ ਉਹ ਗਏ, ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਬੜੇ ਪਿਆਰ ਅਤੇ ਸਤਿਕਾਰ ਨਾਲ ਸਵਾਗਤ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਸੱਚੇ ਨਾਮ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਕੈਥਲ ਤੋਂ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਜੀ ਸੂਰਜ ਗ੍ਰਹਿਣ ਦੇ ਮੌਕੇ 'ਤੇ ਕੁਰੁਕਸ਼ੇਤਰ ਪਹੁੰਚੇ। ਉੱਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਸਵਾਗਤ ਨਾ ਸਿਰਫ਼ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਿੱਖਾਂ ਵੱਲੋਂ ਕੀਤਾ ਗਿਆ, ਸਗੋਂ ਉੱਥੇ ਇਕੱਠੇ ਹੋਏ ਅਨੇਕਾਂ ਸਾਧੂ-ਸੰਤਾਂ[2] ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਵੱਲੋਂ ਵੀ ਕੀਤਾ ਗਿਆ।

1667 ਈਸਵੀ ਵਿੱਚ ਉੱਤਰ-ਪੱਛਮੀ ਸਰਹੱਦੀ ਸੂਬੇ ਵਿੱਚ ਪਠਾਨਾਂ ਦੀ ਬਗਾਵਤ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋਈ ਜੋ ਇੱਕ ਦਹਾਕੇ ਤੋਂ ਵੀ ਵੱਧ ਸਮੇਂ ਤੱਕ ਚੱਲੀ। ਇਹ ਬਗਾਵਤ ਮੁਗਲ ਸਲਤਨਤ ਲਈ ਬਹੁਤ ਵੱਡਾ ਖ਼ਤਰਾ ਬਣ ਗਈ। ਕਾਂਧਾਰ ਤੋਂ ਅਟਕ ਤੱਕ ਸਾਰੇ ਪਠਾਨਾਂ ਨੇ ਬਗਾਵਤ ਦਾ ਝੰਡਾ ਚੁੱਕ ਲਿਆ। ਇਸ ਬਗਾਵਤ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਉਹਨਾਂ ਪਠਾਨ ਆਗੂਆਂ ਨੇ ਕੀਤੀ ਜੋ ਪਹਿਲਾਂ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਮੁਗਲ ਫੌਜ ਵਿੱਚ ਸੇਵਾ ਕਰ ਚੁੱਕੇ ਸਨ। ਇਹ ਬਾਗੀ ਮੁਗਲ ਫੌਜ ਦੀ ਬਣਤਰ, ਕਾਰਗੁਜ਼ਾਰੀ ਅਤੇ ਯੁੱਧ ਨੀਤੀਆਂ ਨਾਲ ਭਲੀ-ਭਾਂਤ ਜਾਣੂ ਸਨ।ਇਸ ਦੌਰਾਨ ਨਵੰਬਰ 1675 ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਤੇਗ਼ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਅਤੇ ਤਿੰਨ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਦਿੱਲੀ ਵਿੱਚ ਸ਼ਹੀਦ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ। ਦਿੱਲੀ ਵਾਪਸ ਆਉਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਔਰੰਗਜ਼ੇਬ ਮੁਗਲ ਪ੍ਰਭੁਤਾ ਕਾਇਮ ਕਰਨ ਵਿੱਚ

[1] ਖੁਸ਼ਵੰਤ ਸਿੰਘ, *ਸਿੱਖਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ*, ਭਾਗ-1, ਆਕਸਫੋਰਡ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪ੍ਰੈਸ, ਨਵੀਂ ਦਿੱਲੀ, 2004, ਸਫ਼ਾ 1023

[2] ਜੇ.ਐਸ. ਗਰੇਵਾਲ, *ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਸਰੋਤ ਅਤੇ ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ*, ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 1998, ਸਫ਼ਾ 145।

ਕਾਮਯਾਬ ਤਾਂ ਹੋ ਗਿਆ ਸੀ, ਪਰ ਸਥਿਤੀ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸ਼ਾਂਤ ਨਹੀਂ ਹੋਈ ਸੀ। ਸ਼ਾਂਤੀ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਸਿਰਫ਼ ਫੌਜੀ ਤਾਕਤ ਅਤੇ ਯੁੱਧ ਨੀਤੀਆਂ ਨਾਲ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਕੂਟਨੀਤੀ ਅਤੇ ਚਾਲਾਕੀਆਂ ਰਾਹੀਂ ਵੀ ਕੀਤੀ ਗਈ

ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ 1699 ਈਸਵੀ ਦੀ ਵਿਸਾਖੀ ਦੇ ਦਿਨ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਵੱਲੋਂ ਕੀਤੀ ਗਈ, ਜੋ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਘਟਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਇੱਕ ਹੈ। ਇਹ ਘਟਨਾ ਸਿਰਫ਼ ਇਤਿਹਾਸਕ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਪੱਖੋਂ ਵੀ ਬਹੁਤ ਮਹੱਤਵ ਰੱਖਦੀ ਹੈ। ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕੋਈ ਅਚਾਨਕ ਲਿਆ ਗਿਆ ਫ਼ੈਸਲਾ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਬਲਕਿ ਇਹ ਉਸ ਲੰਬੇ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਦਾ ਕੁਦਰਤੀ ਨਤੀਜਾ ਸੀ ਜੋ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਹੀ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਐਸੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕੀਤੀ ਸੀ ਜੋ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਿਮ ਸਮਾਜਿਕ ਪ੍ਰਣਾਲੀਆਂ ਤੋਂ ਵੱਖਰਾ ਹੋਵੇ ਅਤੇ ਜਿਸ ਦੀ ਨੀਂਹ ਸੱਚ, ਸਮਾਨਤਾ, ਪ੍ਰੇਮ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਉੱਤੇ ਟਿਕੀ ਹੋਵੇ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੱਚੇ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਪ੍ਰੇਮ ਦੇ ਮਾਰਗ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਲਕਸ਼ ਮੰਨਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਰਾਹ 'ਤੇ ਤੁਰਨ ਵਾਲੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜਾਨ ਤੱਕ ਨਿਛਾਵਰ ਕਰਨ ਲਈ ਤਿਆਰ ਰਹਿਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ 1699 ਦੀ ਵਿਸਾਖੀ ਵਾਲੇ ਦਿਨ ਇਹੀ ਸੱਦਾ ਇੱਕ ਨਵੇਂ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਦੁਹਰਾਇਆ ਅਤੇ ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਰਾਹੀਂ ਇੱਕ ਆਦਰਸ਼ ਸਮਾਜ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰੱਖੀ।ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਨਾਲ "ਪੰਜ ਪਿਆਰੇ" ਦੀ ਸੰਸਥਾ ਦਾ ਜਨਮ ਹੋਇਆ। ਇਹ ਪੰਜ ਪਿਆਰੇ ਗੁਰੂ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਨਿਧ ਮੰਨੇ ਗਏ ਅਤੇ ਜਦੋਂ ਉਹ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੀ ਹਜ਼ੂਰੀ ਵਿੱਚ ਇਕੱਠੇ ਹੁੰਦੇ ਸਨ ਤਾਂ ਉਹ ਗੁਰੂ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਮੰਨੇ ਜਾਂਦੇ ਸਨ। ਇਹ ਸੰਸਥਾ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਵਿੱਚ ਸਾਂਝੇ ਨੇਤ੍ਰਿਤਵ ਅਤੇ ਸਮਾਨਤਾ ਦੇ ਸਿਧਾਂਤ ਨੂੰ ਦਰਸਾਉਂਦੀ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਨੇ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਨੂੰ ਇੱਕ ਵਿਲੱਖਣ ਪਹਿਚਾਣ ਦਿੱਤੀ। ਲੰਮੇ ਕੇਸ਼, ਦਸਤਾਰ, ਕਿਰਪਾਨ ਅਤੇ ਪੰਜ ਕਕਾਰਾਂ ਨਾਲ ਸਜਿਆ ਖਾਲਸਾ ਇੱਕ ਐਸੀ ਕੌਮ ਬਣੀ ਜੋ ਨਿਰਭਉ, ਨਿਰਵੈਰ ਅਤੇ ਅਨਿਆਇ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਡਟ ਕੇ ਖੜ੍ਹਨ ਵਾਲੀ ਸੀ। ਇਹ ਕੌਮ ਕੇਵਲ ਆਤਮਿਕ ਤੌਰ 'ਤੇ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪੱਖੋਂ ਵੀ ਜਾਗਰੂਕ ਸੀ। ਖਾਲਸੇ ਦਾ ਉਦੇਸ਼ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ, ਧਾਰਮਿਕ ਆਜ਼ਾਦੀ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਨਿਆਂ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰਨਾ ਸੀ।ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦਾ ਭਾਰਤੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਅਤੇ ਇਤਿਹਾਸ ਉੱਤੇ ਵੀ ਡੂੰਘਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਿਆ। ਅਠਾਰਹਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿੱਚ ਖਾਲਸੇ ਨੇ ਮੁਗਲ ਸਲਤਨਤ ਦੀ ਤਾਕਤ ਨੂੰ ਕਮਜ਼ੋਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਉੱਤਰ-ਪੱਛਮ ਤੋਂ ਹੋਣ ਵਾਲੇ ਹਮਲਿਆਂ ਨੂੰ ਰੋਕਣ ਵਿੱਚ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ। ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਮਹਾਰਾਜਾ ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਵਿਸ਼ਾਲ ਸਿੱਖ ਰਾਜ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ ਜੋ ਸਤਲੁਜ ਤੋਂ ਕਸ਼ਮੀਰ ਅਤੇ ਲੇਹ ਤੱਕ ਫੈਲਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ।ਖਾਲਸੇ ਨੇ ਸਿੱਖਾਂ ਵਿੱਚ ਏਕਤਾ, ਬਹਾਦਰੀ, ਸੱਚਾਈ ਅਤੇ ਨਿਆਂ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਪੈਦਾ ਕੀਤੀ। ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੁਨੀਆ ਭਰ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਮਿਹਨਤ, ਨਿਡਰਤਾ, ਵਫ਼ਾਦਾਰੀ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਸਮਰਪਣ ਲਈ ਜਾਣੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ, ਜੋ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਜਨਮਭੂਮੀ ਹੈ, ਅੱਜ ਭਾਰਤ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਖੁਸ਼ਹਾਲ ਰਾਜਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਇੱਕ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੀ ਮਿਹਨਤ ਅਤੇ ਯੋਗਦਾਨ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਹਨ।

ਅਗਲੇ ਦਿਨ ਵਿਸਾਖੀ ਮਨਾਈ ਜਾਣੀ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਹੁਕਮ ਅਨੁਸਾਰ ਉਹ ਪੰਜ ਸਿੱਖ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸੀਸ ਭੇਟ ਕਰਨ ਦੀ ਤਿਆਰੀ ਦਿਖਾਈ ਸੀ, ਤਖ਼ਤ ਸ੍ਰੀ ਕੇਸਗੜ੍ਹ ਸਾਹਿਬ ਵਿਖੇ ਇਕੱਠੀ ਹੋਈ ਸੰਗਤ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਪੇਸ਼ ਹੋਏ। ਯਾਦਗਾਰੀ ਵਿਸਾਖੀ ਵਾਲੇ ਦਿਨ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਇਸ਼ਨਾਨ ਕਰਵਾ ਕੇ ਕੇਸ਼ ਧੁਲਵਾਏ। ਫਿਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਲੋਹੇ ਦਾ ਬਾਟਾ ਮੰਗਵਾਇਆ ਅਤੇ ਉਸ ਵਿੱਚ ਪਾਣੀ ਅਤੇ ਪਤਾਸੇ ਪਾ ਦਿੱਤੇ। ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਦੋਧਾਰੀ ਖੰਡੇ ਨਾਲ ਉਸ ਬਾਟੇ ਨੂੰ

ਘੁੰਮਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ, ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਜਾਪ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਵੱਈਏ, ਚੌਪਈ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ ਦਾ ਆਨੰਦ ਸਾਹਿਬ ਪੜ੍ਹਿਆ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅੰਮ੍ਰਿਤ[3] ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ ਗਿਆ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇਹ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਪੰਜਾਂ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਛਕਾਇਆ। ਹਰ ਸਿੱਖ ਨੂੰ ਪੰਜ ਵਾਰ ਹਥੇਲੀਆਂ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਦੇ ਕੇ ਪਿਲਾਇਆ ਗਿਆ ਅਤੇ ਹਰ ਵਾਰ ਉਹ ਉਚਾਰਨ ਕਰਦਾ ਸੀ — “ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕਾ ਖਾਲਸਾ, ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀ ਫਤਹਿ।” ਫਿਰ ਪੰਜ ਵਾਰ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਦੀਆਂ ਬੂੰਦਾਂ ਹਰ ਸਿੱਖ ਦੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਵਿੱਚ ਪਾਈਆਂ ਗਈਆਂ ਅਤੇ ਹਰ ਵਾਰ ਉਹ ਇਹੀ ਬੋਲੀ ਉਚਾਰਦਾ ਸੀ। ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਪੰਜ ਵਾਰ ਹਰ ਸਿੱਖ ਦੇ ਕੇਸ਼ਾਂ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਿੜਕਿਆ ਅਤੇ ਹਰ ਵਾਰ ਉਹ “ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕਾ ਖਾਲਸਾ, ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀ ਫਤਹਿ” ਦਾ ਜੈਕਾਰਾ ਲਾਉਂਦਾ ਸੀ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਫਿਰ ਸੰਗਤ ਨੂੰ ਸੰਬੋਧਨ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਕਿਹਾ “ ਕਿ ਹੁਣ ਸਾਰੇ ਲੋਕ ਇੱਕ ਹੀ ਮਤ ਅਤੇ ਇੱਕ ਹੀ ਮਾਰਗ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਦੀ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਅਤੇ ਵਰਣਾਸ਼ਰਮ ਪ੍ਰਥਾ ਨੂੰ ਤਿਆਗ ਕੇ ਆਪਸੀ ਸਹਿਯੋਗ ਅਤੇ ਭਾਈਚਾਰੇ ਨੂੰ ਅਪਣਾਇਆ ਜਾਵੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਹ ਵੀ ਆਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਕੋਈ ਵੀ ਗੰਗਾ ਜਾਂ ਹੋਰ ਤੀਰਥ ਸਥਾਨਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਨਾ ਕਰੇ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਰਾਮ, ਕ੍ਰਿਸ਼ਨ, ਬ੍ਰਹਮਾ, ਵਿਸ਼ਨੂ, ਸ਼ਿਵ ਜਾਂ ਚੰਡੀ ਆਦਿ ਦੇਵੀ-ਦੇਵਤਿਆਂ ਦੀ ਉਪਾਸਨਾ ਕਰੇ। ਸਾਰੇ ਮਨੁੱਖ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਉਤਰਾਧਿਕਾਰੀ ਗੁਰੂਆਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਣ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਐਲਾਨ ਕੀਤਾ ਕਿ ਹੁਣ ਤੋਂ ਸਿੱਖ “ਖਾਲਸਾ” ਕਹਾਏ ਜਾਣਗੇ, ਜਿਸਦਾ ਅਰਥ ਹੈ “ਪਵਿੱਤਰ” ਜਾਂ “ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਆਪਣੇ”। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਿੱਖਾਂ ਦੇ ਨਾਮਾਂ ਵਿੱਚ ਵੀ ਬਦਲਾਅ ਕੀਤਾ। ਹਰ ਪੁਰਸ਼ ਖਾਲਸੇ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ “ਸਿੰਘ” ਅਤੇ ਹਰ ਇਸਤਰੀ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ “ਕੌਰ” ਜੋੜਿਆ ਗਿਆ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਪੰਜਾਂ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ “ਪੰਜ ਪਿਆਰੇ” ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ।

(1) ਭਾਈ ਦਇਆ ਰਾਮ ਖੱਤਰੀ, ਲਾਹੌਰ ਤੋਂ — ਭਾਈ ਦਇਆ ਸਿੰਘ

(2) ਭਾਈ ਧਰਮ ਚੰਦ ਜੱਟ, ਰੋਹਤਕ ਤੋਂ — ਭਾਈ ਧਰਮ ਸਿੰਘ

(3) ਭਾਈ ਹਿੰਮਤ ਰਾਇ ਝੀਵਰ, ਜਗਨਨਾਥ ਪੁਰੀ ਤੋਂ — ਭਾਈ ਹਿੰਮਤ ਸਿੰਘ

(4) ਭਾਈ ਸਾਹਿਬ ਚੰਦ ਨਾਈ, ਬੀਦਰ ਤੋਂ — ਭਾਈ ਸਾਹਿਬ ਸਿੰਘ

(5) ਭਾਈ ਮੋਹਕਮ ਚੰਦ ਛੀਬਾ, ਦੁਆਰਕਾ ਤੋਂ — ਭਾਈ ਮੋਹਕਮ ਸਿੰਘ

ਇਨ੍ਹਾਂ ਪੰਜ ਪਿਆਰਿਆਂ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਉੱਚ ਜਾਤ ਦਾ ਖੱਤਰੀ ਸੀ, ਇੱਕ ਜੱਟ ਸੀ ਅਤੇ ਬਾਕੀ ਤਿੰਨ ਨੀਵੀਆਂ ਜਾਤਾਂ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਸਨ। ਇਸ ਰਾਹੀਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਖਾਲਸੇ ਲਈ ਚਾਰ ਕੁਰਹਿਤਾਂ ਵੀ ਨਿਰਧਾਰਤ ਕੀਤੀਆਂ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਉਲੰਘਣ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਖਾਲਸੇ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ —

(1) ਸਰੀਰ ਦੇ ਕਿਸੇ ਵੀ ਹਿੱਸੇ ਦੇ ਕੇਸ਼ ਕੱਟਣੇ।

(2) ਤੰਬਾਕੂ ਜਾਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਨਸ਼ੇ ਦੀ ਵਰਤੋਂ।

(3) ਵਿਵਾਹ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਅਣੈਤਿਕ ਸੰਬੰਧ ਬਣਾਉਣਾ।

(4) ਧਾਰਮਿਕ ਰਸਮਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਕੱਟੇ ਜਾਂ ਚੜ੍ਹਾਏ ਮਾਸ ਦਾ ਸੇਵਨ ਕਰਨਾ।

ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਖਾਲਸੇ ਲਈ ਚਾਰ ਚਿੰਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਨਿਰਧਾਰਤ ਕੀਤੀ —

[3] ਮੈਕਸ ਆਰਥਰ ਮੈਕਾਲਿਫ਼, *ਦਿ ਸਿੱਖ ਰਿਲੀਜਨ*, ਭਾਗ-5, ਲੋ ਲਾਇਬ੍ਰੇਰੀ, ਦਿੱਲੀ, 1990, ਸਫ਼ਾ 233।

(1)ਕੰਘਾ — ਕੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਸਫ਼ਾਈ ਅਤੇ ਸੁਚੱਜੇਪਣ ਲਈ।

(2)ਕਛਹਿਰਾ — ਸਫ਼ਾਈ ਅਤੇ ਸੰਯਮ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ।

(3)ਕਿਰਪਾਨ — ਨਿਆਂ, ਸੁਰੱਖਿਆ ਅਤੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਸਰਵੋਚ ਤਾਕਤ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ।

(4) ਕੜਾ — ਅਨੰਤਤਾ, ਅਟੱਲਤਾ ਅਤੇ ਪ੍ਰਭੂ ਨਾਲ ਜੋੜ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ।

ਸਭ ਤੋਂ ਭਾਵੁਕ ਪਲ ਉਹ ਸੀ ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਰਾਇ ਜੀ ਨੇ ਪੰਜ ਪਿਆਰਿਆਂ ਦੇ ਚਰਨਾਂ ਵਿੱਚ ਮੱਥਾ ਟੇਕਿਆ ਅਤੇ ਬੇਨਤੀ ਕੀਤੀ ਕਿ ਉਹ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਮਲ ਕਰਨ। ਸਾਰੀ ਸੰਗਤ ਇਹ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਦੇਖ ਕੇ ਹੈਰਾਨ ਰਹਿ ਗਈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਵੀ ਖਾਲਸੇ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾਇਆ ਅਤੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਉਹ "ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ" ਕਹਾਏ।ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਸਿਰਫ਼ ਇੱਕ ਧਾਰਮਿਕ ਸਮਾਗਮ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਬਲਕਿ ਇਹ ਮਨੁੱਖੀ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਸਮਾਜਿਕ, ਆਤਮਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਜਾਗਰੂਕਤਾ ਦਾ ਮਹਾਨ ਪ੍ਰਤੀਕ ਸੀ। ਇਸ ਸਿਰਜਣਾ ਰਾਹੀਂ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਐਸੀ ਕੌਮ ਤਿਆਰ ਕੀਤੀ ਜੋ ਸੱਚ, ਨਿਆਂ, ਸਮਾਨਤਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਰੱਖਿਆ ਲਈ ਹਰ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕੁਰਬਾਨੀ ਦੇਣ ਲਈ ਤਿਆਰ ਰਹੇ। ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਦਾ ਮੁੱਖ ਉਦੇਸ਼ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਡਰ, ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸ, ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਧਾਰਮਿਕ ਭੇਦਭਾਵ ਅਤੇ ਜ਼ੁਲਮ ਤੋਂ ਆਜ਼ਾਦ ਕਰਨਾ ਸੀ।ਉਸ ਸਮੇਂ ਦਾ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਕਈ ਸਮਾਜਿਕ ਬੁਰਾਈਆਂ ਨਾਲ ਘਿਰਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਕਾਰਨ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉੱਚ [4]ਅਤੇ ਨੀਵਾਂ ਸਮਝਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਨੀਵੀਆਂ ਜਾਤਾਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਮੰਦਰਾਂ, ਧਾਰਮਿਕ ਰਸਮਾਂ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਸਮਾਨ ਅਧਿਕਾਰ ਨਹੀਂ ਮਿਲਦੇ ਸਨ। ਇਸਤ੍ਰੀਆਂ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਵੀ ਬਹੁਤ ਦਯਨੀਆ ਸੀ। ਮੁਗਲ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਕਟੜਪੰਥ ਕਾਰਨ ਆਮ ਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਡਰ ਅਤੇ ਨਿਰਾਸ਼ਾ ਦਾ ਮਾਹੌਲ ਸੀ। ਐਸੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਮਰਿਆਦਾ ਅਤੇ ਆਤਮ-ਸਮਮਾਨ ਨੂੰ ਨਵਾਂ ਜੀਵਨ ਦਿੱਤਾ।

**REFERENCES**


1. ਖੁਸ਼ਵੰਤ ਸਿੰਘ, *ਸਿੱਖਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ* (ਭਾਗ-1), ਨਵੀਂ ਦਿੱਲੀ: ਆਕਸਫੋਰਡ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪ੍ਰੈਸ, 2004,
2. ਜੇ. ਐਸ. ਗਰੇਵਾਲ, *ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਸਰੋਤ ਅਤੇ ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ*, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ: ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, 1998,
3. ਗੰਡਾ ਸਿੰਘ, *ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਖਾਲਸਾ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ*, ਪਟਿਆਲਾ: ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, 1985,
4. ਮੈਕਸ ਆਰਥਰ ਮੈਕਾਲਿਫ਼, *ਦਿ ਸਿੱਖ ਰਿਲੀਜਨ* (ਭਾਗ-5), ਦਿੱਲੀ: ਲੋ ਲਾਇਬ੍ਰੇਰੀ, 1990,
5. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ, *ਦਿ ਐਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼ ਸਿੱਖਿਜ਼ਮ*, ਪਟਿਆਲਾ: ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, 1992,


[4] ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ, *ਦਿ ਐਨਸਾਈਕਲੋਪੀਡੀਆ ਆਫ਼ ਸਿੱਖਿਜ਼ਮ*, ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, 1992, ਸਫ਼ਾ 401।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 102-107
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# शेखावाटी की भौगोलिक-सामाजिक पृष्ठभूमि एवं लोक-धर्म का उद्भव: एक समाजशास्त्रीय अंतर्संबंध

**डॉ.कमल महला**
सहायक आचार्य,समाजशास्त्र
राजकीय महाविधालय, लछमनगढ़

**शोध सारांश (Abstract)**

प्रस्तुत शोध-लेख शेखावाटी अंचल (विशेषकर सीकर, झुंझुनूं और चूरू का सीमावर्ती भाग) की भौगोलिक, जनसांख्यिकीय और सामाजिक संरचना का यहाँ के लोक-धर्म (Folk Religion) के साथ अंतर्संबंध स्थापित करता है। समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में यह एक स्थापित मान्यता है कि कोई भी धार्मिक आस्था शून्य में जन्म नहीं लेती है, बल्कि वह अपने परिवेश, प्राकृतिक चुनौतियों और सामाजिक बुनावट की ही एक स्वाभाविक उपज होती है।[1] यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि किस प्रकार शेखावाटी की कठोर मरुस्थलीय जलवायु, अरावली की पर्वतमालाओं की दुर्गमता, भयंकर जल-संकट और अत्यंत जटिल जातीय व जनसांख्यिकीय संरचना ने यहाँ के जनमानस को अलौकिक शक्तियों और लोक-देवताओं की ओर उन्मुख किया है।[2] रामदेव जी, गोगाजी, जीणमाता और नरहड़ पीर जैसे आस्था केंद्रों का उदय इसी पृष्ठभूमि में हुआ है ।[1] इस विस्तृत लेख में यह सिद्ध किया गया है कि शेखावाटी का स्थानीय लोक-धर्म मात्र कर्मकांडों या अंधविश्वासों का पुलिंदा नहीं है, बल्कि यह भौगोलिक और सामाजिक विषमताओं के विरुद्ध आम जनमानस द्वारा गढ़ा गया एक अत्यंत सुदृढ़ मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सुरक्षा-चक्र है।

**प्रस्तावना: पर्यावरण, समाज और आस्था का प्रादुर्भाव**

प्रसिद्ध समाजशास्त्री एमिल दुर्खीम (Emile Durkheim) का यह स्थापित सिद्धांत है कि धर्म मूलतः समाज का ही एक पारलौकिक स्वरूप है, जिसमें समाज स्वयं की ही शक्तियों की उपासना करता है। जब हम राजस्थान के शेखावाटी अंचल का समाजशास्त्रीय और भौगोलिक अध्ययन करते हैं, तो यह सिद्धांत पूर्णतः चरितार्थ होता हुआ दिखाई देता है। ऐतिहासिक ग्रंथों और प्रमाणों के अनुसार, शेखावत कुल के राजपूतों द्वारा शासित होने के कारण इस विस्तृत भू-खंड को 'शेखावाटी' नाम दिया गया था।[3] अठारहवीं शताब्दी तक इस क्षेत्र का अधिकतर भाग शेखावत राजपूतों, कायमखानी मुस्लिमों और पठानों के अधिकार और राजनीतिक नियंत्रण में रहा था।[4] यहाँ की सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यताएं सदियों से शास्त्रीय या ब्राह्मणवादी धर्म के जटिल कर्मकांडों से काफी भिन्न रही हैं। शेखावाटी का ग्रामीण जनमानस उन देवी-देवताओं को पूजता है, जो परलोक सुधारने के बजाय सीधे तौर पर उनकी दैनिक और ऐहिक चुनौतियों—जैसे अकाल, पशुओं की बीमारियां, सर्पदंश और पारिवारिक कलह—से जुड़े हैं। समाज

की इन्हीं तात्कालिक भौतिक आवश्यकताओं और संकटों ने यहाँ एक ऐसे विशिष्ट लोक-धर्म को आकार दिया है, जो आम आदमी के जीवन दर्शन का अभिन्न अंग बन गया है।[5]

**शेखावाटी का ऐतिहासिक सीमांकन एवं भौगोलिक परिवेश**

शेखावाटी क्षेत्र प्राचीन काल से ही आमेर राज्य के अंतर्गत एक विशिष्ट और स्वायत्त भौगोलिक क्षेत्र के रूप में जाना जाता रहा है।[6] वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था के अंतर्गत शेखावाटी का विस्तार मुख्य रूप से सीकर और झुंझुनूं जिलों (तथा प्राचीन काल के चूरू के कुछ भागों) में माना जाता है। सांख्यिकीय दृष्टि से, सीकर जिले का कुल क्षेत्रफल 7742.43 वर्ग किलोमीटर है, जबकि झुंझुनूं जिले का क्षेत्रफल 5929 वर्ग किलोमीटर निर्धारित किया गया है।[6] इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति अत्यंत विषमतापूर्ण और मानव जीवन के लिए चुनौतीपूर्ण रही है। इतिहासकार एलफिन्स्टन (Elphinstone) ने 1808 ईस्वी में दिल्ली से बीकानेर तक की अपनी यात्रा वृत्तांत में शेखावाटी के प्राकृतिक स्वरूप का बहुत ही जीवंत और सजीव वर्णन किया है।[7] उनके वर्णन के अनुसार, कानोड़, सिंघाना और झुंझुनूं के क्षेत्रों को पार करते समय उन्होंने देखा कि यह संपूर्ण क्षेत्र पूर्णतया एक भयंकर मरुभूमि के समान है, जहाँ 20 से लेकर 100 फुट तक ऊंचे बालू रेत के विशाल टीले विद्यमान हैं।[7] ये टीले कोई स्थायी संरचना नहीं हैं, बल्कि ये प्रचंड वायु के वेग से निरंतर अपना स्थान बदलते रहते हैं, जिससे यहाँ का परिदृश्य हमेशा अनिश्चित बना रहता है। फोग, बबूल, आक और बेर की कंटीली झाड़ियों से आच्छादित यह रेतीली भूमि ग्रीष्म ऋतु में अत्यंत भयंकर और जानलेवा रूप ले लेती है। [7]

इस अनिश्चित, शुष्क और कठोर भौगोलिक परिवेश ने शेखावाटी के मानव मनोविज्ञान को अत्यधिक गहराई से प्रभावित किया है। जब मानव की आजीविका और उसका अस्तित्व पूरी तरह से प्रकृति की दया पर निर्भर हो जाता है, तो समाज हताशा से बचने के लिए दैवीय शक्तियों की शरण में जाता है। यहाँ की जलवायु चरम सीमाओं को छूती है, जहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 47 से 48 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता है, वहीं सर्दियां इतनी कठोर होती हैं कि तापमान शून्य डिग्री तक गिर जाता है।[6] ऐसी अत्यंत कठोर जलवायु में जब भयंकर अकाल पड़ते थे और महामारियां (जैसे चेचक, मोतीझरा) फैलती थीं, तब समाज ने बाबा मालदास (राजपुरा) और बावलिया बाबा (चिड़ावा) जैसे तपस्वी वैरागियों को ईश्वर का स्वरूप मान लिया। इन संतों ने अपनी सादगी, भभूत, और आध्यात्मिक चमत्कारों से आमजन को अकाल और बीमारी के उस घोर अंधकारमय समय में अपार मानसिक और शारीरिक संबल प्रदान किया था।[5]

**भयंकर जल संकट, नदियां और लोक-तीर्थों का विकास**

जल किसी भी समाज, संस्कृति और सभ्यता की जीवनरेखा होता है, लेकिन शेखावाटी क्षेत्र की सबसे बड़ी भौगोलिक त्रासदी यह रही है कि यहाँ कोई भी बारहमासी (वर्ष भर बहने वाली) नदी प्रवाहित नहीं होती है।[6] इस क्षेत्र की सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण नदी 'कांतली' है, जो खंडेला की पहाड़ियों से उद्गमित होकर तीव्र वेग से बालू के टीलों को काटती हुई उत्तर की दिशा में बहती है और अंततः राजगढ़ के पास बैरासर या कबीरासर के बालू के टीलों में विलीन हो जाती है।[6] इसके अतिरिक्त यहाँ सोमावती, पंठोरी, मन्था और चंद्रावती जैसी कुछ छोटी नदियां भी हैं, जो केवल वर्षा ऋतु में ही कुछ दूर बहकर लुप्त हो जाती हैं। इस क्षेत्र में जल का नितांत अभाव रहा है, क्योंकि यहाँ की औसत वार्षिक वर्षा मात्र 10 से 22 इंच (सीकर में 46.06 मिलीमीटर और झुंझुनूं में 44 से 55 मिलीमीटर) के बीच ही रहती है।

जल संकट के इस स्थायी और प्राणघातक भय ने शेखावाटी समाज के सामूहिक अवचेतन में कुओं, बावड़ियों और जोहड़ों (तालाबों) को एक 'पवित्र तीर्थ' का दर्जा दिला दिया है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यदि हम लोक-देवताओं की गाथाओं का विश्लेषण करें, तो हम पाते हैं कि शेखावाटी के कई प्रमुख लोक-देवताओं और देवियों का उद्भव इन्ही जल-स्रोतों के इर्द-गिर्द ही हुआ है। इसका सबसे प्रामाणिक उदाहरण मालासी ग्राम (रतनगढ़ उपखंड)

के 'रिगत्या भैरुँ' का स्थान है। मालासी ग्राम में एक कुएं के निर्माण और उसके स्वामित्व को लेकर जाटों और अन्य समुदायों के बीच हुए ऐतिहासिक विवाद ने लाखाराम नामक व्यक्ति की मृत्यु (पारिवारिक त्रासदी) का रूप ले लिया था। इसी कुएं पर आज रिगत्या भैरुँ का भव्य मंदिर स्थित है, जहाँ ग्रामीण महिलाएँ अपने नवजात बच्चों की रक्षा के लिए 'ठीकरी प्रथा' और बच्चों को रुलाने से बचाने के लिए कुएं की ओर सात कंकड़ फेंकने वाली 'रोवनियाँ-सोवनीयाँ' की विशिष्ट रस्में निभाती हैं। इसी प्रकार, डिशनाऊ ग्राम में हरबीडाली शक्तिमाता के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी (पति की ब्राह्मण द्वारा हत्या और स्वयं उनका अलौकिक अग्नि से सती होना) एक जोहड़ (ग्रामीण तालाब) के किनारे ही घटित हुई थी, जो स्थान आज अग्रवाल समाज सहित सभी जातियों के लिए एक प्रमुख शक्तिपीठ बन चुका है।

**अरावली पर्वतमाला की दुर्गमता और आध्यात्मिक एकांत**

शेखावाटी के दक्षिण-पूर्व भाग में सिंघाना से लेकर सांभर झील तक विस्तृत अरावली पर्वतमाला एक प्राकृतिक प्राचीर का कार्य करती है, जो इस क्षेत्र को पूर्णतः मरुस्थल में तब्दील होने से बचाती है। इन पर्वत श्रृंखलाओं में प्राकृतिक वैविध्य है, जिनमें रघुनाथगढ़ का शिखर (3450 फीट), हर्ष पर्वत (2998 फीट) और लोहार्गल का बरखण्डी शिखर (लगभग 3000 फीट) सबसे अधिक ऊंचाई पर स्थित हैं । भौगोलिक दुर्गमता, सघन वनों और प्राकृतिक जल स्रोतों (झरनों) ने इन पर्वतीय स्थानों को योगियों, तपस्वियों और देवी-देवताओं के एकांतवास के लिए सर्वथा उपयुक्त बना दिया।

शेखावाटी की लोक-कथाओं के अनुसार, जीणमाता और हर्षनाथ का भव्य शिव मंदिर इन्ही अरावली के पर्वत शिखरों (काजल शिखर) पर स्थित है। जब भाभी के तानों से आहत होकर जीण ने घर त्यागा, तो उन्होंने इन्ही पहाड़ियों में आकर घोर तपस्या की, और उन्हें मनाने आए उनके भाई हर्ष ने भी निकट के पर्वत पर तपस्या प्रारंभ कर दी। आज ये स्थान भाई-बहन के अलौकिक प्रेम, पारिवारिक तनावों से उपजे वैराग्य और शक्ति उपासना के सबसे बड़े प्रतीक हैं। इसके अतिरिक्त, लोहार्गल का प्राचीन तीर्थ, शाकंभरी माता का मंदिर, और किरोड़ी जी के गर्म व ठंडे जल के कुंड भी इन्हीं पर्वत श्रृंखलाओं की घाटियों में अवस्थित हैं। श्रावण मास में होने वाली लोहार्गल की चौबीस कोसी परिक्रमा (जिसमें चराणा कुंड, नाग कुंड, और शोभावती जैसे दुर्गम पड़ाव शामिल हैं) इसी भौगोलिक संरचना का एक विराट धार्मिक उपयोग है, जो आज शेखावाटी के ग्रामीण जनमानस को एकजुट करने वाले सबसे बड़े धार्मिक मेलों का केंद्र बन चुका है।

**जनसांख्यिकीय घटक और कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का धार्मिक स्वरूप-**

वर्ष 2011 की जनगणना के सांख्यिकीय आंकड़ों के अनुसार, सीकर जिले की कुल जनसंख्या 2,677,333 दर्ज की गई है, जबकि झुंझुनूं जिले की कुल जनसंख्या 2,137,045 है।[9] इन दोनों जिलों का जनसांख्यिकीय विश्लेषण स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि यहाँ की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा, अर्थात् लगभग 76 प्रतिशत से 77 प्रतिशत आबादी, पूर्णतः ग्रामीण परिवेश में निवास करती है (आंकड़ों के अनुसार सीकर में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत 76.32% और झुंझुनूं में 77.11% है)।[9] समाजशास्त्र में यह एक पूर्णतः स्थापित तथ्य है कि जिस समाज की आजीविका का जो भी मुख्य साधन होता है, उस समाज के लोक-देवताओं का स्वरूप, उनके चमत्कार और उनकी पूजा-पद्धति भी उसी आजीविका के इर्द-गिर्द गढ़ी जाती है।

चूंकि शेखावाटी की ग्रामीण अर्थव्यवस्था प्राचीन काल से ही वर्षा-आधारित कृषि (बाजरा, मोठ, ग्वार) और पशुपालन (गाय, भैंस, भेड़, बकरी और ऊंट) पर टिकी रही है, इसलिए यहाँ के अधिकांश लोक-देवता मूल रूप से 'कृषि एवं पशु-रक्षक' (Agrarian & Livestock Protectors) के रूप में पूजे जाते हैं।[10] कृषि कार्य के दौरान, विशेषकर मानसून के समय, खेतों में सर्पदंश (जिनमें धामण, बांडली और पीवणा जैसे अत्यंत विषैले सांप शामिल हैं) एक बहुत ही आम लेकिन जानलेवा घटना हुआ करती थी। आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं और एंटी-

वेनम के घोर अभाव वाले उस युग में, समाज ने 'गोगाजी' को सर्पों के सर्वशक्तिमान देवता के रूप में पूजा। आज भी गोगाजी की मेड़ी (मंदिर) पर सर्पदंश का इलाज नगाड़े और डैरूं (वाद्य यंत्र) बजाकर, तथा नीम की डालियां घुमाकर किया जाता है, जो कृषकों के लिए एक बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक संबल है। इसी क्रम में, ओजटू ग्राम के सत्तादादा (रुड़भक्ष) का संबंध सीधे तौर पर ग्रामीण पशुओं की भयंकर बीमारियों (विशेषकर पशुओं के चर्मरोग) को दूर करने से है। जब एक मोहबाराम नामक बंजारे के बीमार पशुओं को उनकी कृपा से रोगमुक्ति मिली, तो संपूर्ण ग्रामीण समाज ने उन्हें पशु-रक्षक देवता के रूप में स्थापित कर दिया।[2] दादा अखाराम जी का चिमटा और उनके द्वारा जल में बनाई जाने वाली भभूति (कलवाणी) भी असाध्य रोगों और खेतों में होने वाले सर्पदंश से रक्षा का सबसे सुलभ और विश्वसनीय ग्रामीण विकल्प बनी हुई है।

**सामाजिक-जातीय पदानुक्रम और लोक-धर्म का समावेशी स्वरूप-**शेखावाटी की सामाजिक संरचना अत्यंत जटिल, बहुस्तरीय और ऐतिहासिक रूप से कठोर पदानुक्रमित रही है। प्राचीन भारतीय वर्ण व्यवस्था (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के आधार पर यहाँ का समाज भी विभिन्न जातियों और उपजातियों में स्पष्ट रूप से विभाजित रहा है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यहाँ के सामाजिक संगठन को चार प्रमुख वर्गों में विश्लेषित किया जा सकता है। प्रथम सवर्ण वर्ग है, जिसमें गौड़, पाराशर, दाधीच और भार्गव जैसे ब्राह्मण, शेखावत, तंवर और राठौड़ जैसे क्षत्रिय (राजपूत), तथा अग्रवाल, माहेश्वरी व जैन जैसे वैश्य (महाजन) आते हैं। ये वर्ग ऐतिहासिक रूप से शिक्षा, रियासती शासन, भूमि-स्वामित्व और अर्थव्यवस्था के मुख्य नियंत्रक रहे हैं। द्वितीय वर्ग में वे मध्यमवर्गीय जातियां आती हैं जो मुख्य रूप से कृषि, पशुपालन और कुटीर शिल्पकला से जुड़ी हैं; जैसे जाट, अहीर/गुर्जर, जांगिड़/खाती (काष्ठकला), कुमावत/चेजारा (भवन निर्माण), प्रजापत/कुम्हार (मिट्टी के बर्तन), दर्जी, और सुनार आदि। तृतीय वर्ग दलित जातियों का है, जिनमें मेघवाल, बलाई, खटीक, रैगर, और वाल्मीकि (हरिजन) जैसी जातियां शामिल हैं, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से समाज के हाशिए पर रखकर उनसे बेगार (बिना मजदूरी का कार्य) ली जाती थी। चतुर्थ वर्ग उन घुमंतू जनजातियों (Nomadic Tribes) का है, जिनमें कालबेलिया, गाडिया लोहार, बावरिया और साटियां शामिल हैं। इन जातियों का कोई स्थायी निवास नहीं होता था, और ये गाँवों के बाहर गोचर भूमियों (बीड़) में अपना अस्थायी डेरा डालकर घुमंतू जीवन व्यतीत करते थे।

संस्थागत और शास्त्रीय धर्मों में वेदों के पठन-पाठन, मंदिरों के गर्भगृह और कर्मकांडों पर प्रायः उच्च वर्णों (विशेषकर ब्राह्मणों) का एकाधिकार रहा है, लेकिन शेखावाटी का लोक-धर्म इस रूढ़िवादी व्यवस्था का बहुत ही प्रबल और मुखर प्रतिकार करता है। लोक-धर्म का सबसे बड़ा समाजशास्त्रीय चमत्कार यह है कि इसने धार्मिक लोकतंत्रीकरण (Democratization of Religion) की नींव रखी है। यहाँ की उन दलित जातियों का, जिन्हें सामाजिक पदानुक्रम में सबसे नीचे रखा गया था, लोक-धर्म में बहुत ऊंचा और सम्मानजनक स्थान है। शेखावाटी में लोक-देवता बाबा रामदेव और गोगाजी के अधिकांश मंदिरों (जिन्हें मेड़ी कहा जाता है) में मुख्य पुजारी प्रायः मेघवाल, चमार या वाल्मीकि समाज से ही होते हैं। बाबा रामदेव जी द्वारा एक अनाथ दलित कन्या (डालीबाई) को अपनी सगी धर्म-बहन मानकर अपने साथ रखना, तत्कालीन समाज में व्याप्त छुआछूत और जातीय भेदभाव के विरुद्ध एक बहुत बड़ी और साहसिक सामाजिक क्रांति थी।[12]

इसी प्रकार, यह तथ्य भी ध्यान देने योग्य है कि लोक-देवता बनने के लिए किसी व्यक्ति का ब्राह्मण या क्षत्रिय वर्ण में जन्म लेना आवश्यक नहीं है। राजपुरा के सिद्ध संत बाबा मालदास जी जाट जाति (पूनिया गोत्र) में जन्मे थे, और भ्रातृ-प्रेम में अपने प्राण त्यागने वाले सत्तादादा भी एक डांगी जाट थे। यह लोक-धर्म यह सिद्ध करता है कि जनकल्याण, मानवता की सेवा, निस्वार्थ परोपकार, त्याग और सांसारिक धन-संपत्ति से पूर्ण निःस्पृहता ही देवत्व प्राप्त करने की एकमात्र और सर्वोच्च कसौटी है।

**मुस्लिम समाज और समन्वयात्मक (Syncretic) लोक-संस्कृति**

शेखावाटी अंचल की सामाजिक समरसता और सहिष्णुता का कोई भी अध्ययन यहाँ के मुस्लिम समाज की चर्चा के बिना सर्वथा अपूर्ण है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, सीकर जिले में 12.24% और झुंझुनूं जिले में 14.46% मुस्लिम आबादी निवास करती है। शेखावाटी में मुस्लिमों के मुख्य रूप से दो अलग-अलग वर्ग हैं: पहले वर्ग में वे मुस्लिम आते हैं जो मूल रूप से अफगान या मध्य-एशियाई मूल के पठान थे और यहाँ नवाबों के रूप में शासक रहे, जबकि दूसरे वर्ग में वे मुसलमान आते हैं जिनके पूर्वज मूलतः हिन्दू थे और जिन्होंने ऐतिहासिक कारणों से बाद में इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया था (जिनमें कायमखानी, मणियार, लीलगर आदि प्रमुख हैं)।

शेखावाटी के लोक-धर्म ने सांप्रदायिक सौहार्द, शांति और हिन्दू-मुस्लिम एकता का जो ताना-बाना बुना है, वह पूरे विश्व के समाजशास्त्रियों के लिए एक अद्भुत और अद्वितीय उदाहरण है। चूरू के प्रसिद्ध धांधुराय के पुत्र कायम सिंह को जब फतेहपुर के नवाब द्वारा मुसलमान बना लिया गया था, तो उन्हीं के वंशज आगे चलकर 'कायमखानी' कहलाए। आज भी कायमखानी समाज लोक-देवता गोगाजी (जो जन्म से चौहान राजपूत थे) को अपना सगा पूर्वज मानता है और 'गोगापीर' के रूप में उनकी घोर आराधना करता है। गोगाजी के जन्मस्थान ददरेवा में हिन्दू और मुस्लिम श्रद्धालु एक साथ एक ही स्थान पर सिर झुकाते हैं। [10]

इसी प्रकार, दलितोद्धारक बाबा रामदेव को मुस्लिम समाज 'रामसा पीर' या 'पीरों के पीर' के रूप में पूजता है। सर्वधर्म समभाव का सबसे चरम और उत्कृष्ट रूप चिड़ावा-पिलानी मार्ग पर स्थित नरहड़ में देखा जा सकता है, जहाँ हजरत हाजिब शक्करवार पीर की वयोवृद्ध दरगाह स्थित है। यह सूफीवाद और अगाध हिन्दू आस्था का एक दुर्लभ संगम है। एक मुस्लिम पीर की दरगाह पर हिंदुओं के आराध्य भगवान श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव, अर्थात् 'कृष्ण जन्माष्टमी' के पावन अवसर पर एक विशाल और अभूतपूर्व मेला भरता है। यहाँ लाखों की संख्या में हिन्दू और मुस्लिम (जायरीन) मिलकर इस उत्सव को मनाते हैं, जो यह अकाट्य रूप से सिद्ध करता है कि सच्ची लोक-आस्थाएं संप्रदायों की कृत्रिम दीवारों, धार्मिक कट्टरता और नफरत को बिल्कुल नहीं मानतीं।

**निष्कर्ष**-शेखावाटी क्षेत्र के इस अत्यंत विस्तृत सामाजिक, जनांकिकीय और भौगोलिक अध्ययन से यह अत्यंत स्पष्ट और निर्विवाद निष्कर्ष प्रस्तुत होता है कि यहाँ का लोक-धर्म केवल कुछ पुरानी पौराणिक कथाओं या ग्रामीण अंधविश्वासों का अमूर्त संग्रह मात्र नहीं है। यह धर्म यहाँ की धधकती बालू रेत, 100 फुट ऊंचे अस्थिर टीलों, प्राणलेवा पानी की कमी, मानसून में सर्पों के भयंकर भय, पशुधन की सुरक्षा की चिंता और अत्यंत जटिल जातीय तनावों के बीच पनपा और विकसित हुआ एक 'जीवंत सामाजिक विज्ञान' है। जब तत्कालीन राजसत्ताएं, ठिकानेदार और नवाब अकाल, महामारियों या सामाजिक भेदभाव से आम आदमी (किसानों, दलितों, महिलाओं) की रक्षा करने में पूर्णतः विफल रहे, तब समाज के ही बीच से रामदेव जी, गोगाजी, मालदास बाबा, बावलिया बाबा और दादा अखाराम जैसे महान लोक-नायकों, शूरवीरों और वैरागियों ने आगे आकर समाज का नेतृत्व किया और उन्हें एक मजबूत संबल प्रदान किया।

अंततः, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि शेखावाटी की इस तप्त मरुस्थलीय भूमि ने केवल कांटेदार फोग, आक या बबूल की झाड़ियों को ही जन्म नहीं दिया है, बल्कि इसने सामाजिक समरसता, सांप्रदायिक सौहार्द, महिलाओं के प्रति सम्मान और निस्वार्थ परोपकार की एक ऐसी गहरी, समावेशी और सहिष्णु लोक-धार्मिक संस्कृति को पोषित किया है, जो आज के इस आधुनिक, मशीनी और व्यक्तिवादी युग में भी पूरी प्रासंगिकता, जीवंतता और शक्ति के साथ अडिग खड़ी है।

**संदर्भ सूची (References)-**

1. शर्मा, उदयवीर, एवं शास्त्री, नन्द कुमार (1980). *शेखावाटी का इतिहास*. सीकर: कुटीर प्रकाशन।

2. तारादत्त (1983). *निर्विरोध-गाथा शेखावाटी की रत्नों वाली माटी*. बिसाऊ: बिसाऊ प्रकाशन।
3. सिंह, हरनाथ (1970). *शेखावत्स एण्ड देयर लैण्डस्*. सीकर: प्रतीक प्रकाशन।
4. 4.शास्त्री, रामचन्द्र (1955). *शेखावाटी प्रकाश*. सीकर: उमेश प्रकाशन।
5. सिंह, शत्रुजीत (2020). *शेखावाटी का धार्मिक जीवन*. जयपुर: शशवंत प्रकाशन।
6. मुकर्जी, अनन्त लाल (1970). *जयपुर राज्य का भूगोल*. जयपुर: जाहन्वी प्रकाशन।
7. राजस्थान राज्य अभिलेखागार. *विल्स रिपोर्ट का उत्तर, बीकानेर*।
8. सिंह, नारायण (1960). *शेखावाटी का भूगोल*. जयपुर: कुटीर प्रकाशन।
9. भारत सरकार (2011). *जनगणना रिपोर्ट 2011 (सीकर एवं झुंझुनूं जिले के सांख्यिकीय आंकड़े)*।
10. चौहान, बिं. (2018). *गोगादेव चौहान परंपरा और इतिहास*. जोधपुर: राजस्थानी ग्रंथागार।
11. व्यास, गोपाल (1987). *सीकर जिले का भूगोल*. जयपुर: पंचशील प्रकाशन।
12. बिशनोई, सो. (2016). *बाबा रामदेव इतिहास एवं साहित्य*. जोधपुर: राजस्थानी ग्रंथाकार।
13. आर्य, हरफूल सिंह (1980). *शेखावाटी के ठिकानों का इतिहास एवं योगदान*. जयपुर: पंचशील प्रकाशन।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115

Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 108-113

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY

& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारत–पाकिस्तान संबंधों के संदर्भ में ऑपरेशन सिंदूर : सैन्य कार्रवाई, रणनीतिक स्थिरता और संकट–प्रबंधन का विश्लेषण

**डॉ० नीरज सोंलकी**

सहायक प्रवक्ता,

रक्षा अध्ययन विभाग, राजकीय महाविद्यालय, बहादुरगढ़

**सारांश**

यह शोध–पत्र मई 2025 के ऑपरेशन सिंदूर का भारत–पाकिस्तान संबंधों और संकट–प्रबंधन के संदर्भ में अध्ययन करता है। सरकारी दस्तावेजों, Reuters की रिपोर्ट और अकादमिक साहित्य का गुणात्मक विश्लेषण घटनाक्रम, संकट–संचार और तनाव–नियंत्रण पर केंद्रित है। दोनों देशों के वक्तव्य आधिकारिक दावे हैं, स्वतंत्र सत्यापन नहीं। उपलब्ध स्रोत दीर्घकालीन रणनीतिक प्रभाव का निर्णायक आंकलन नहीं देते।

**मुख्य शब्द** : ऑपरेशन सिंदूर; भारत–पाकिस्तान संबंध; रणनीतिक स्थिरता; संकट– प्रबंधन; सैन्य प्रतिरोध; कूटनीति

## 1. प्रस्तावना

भारत–पाकिस्तान संबंधों में सुरक्षा, आतंकवाद, सीमा–विवाद, सैन्य प्रतिरोध और कूटनीतिक संवाद महत्त्वपूर्ण रहे हैं। मई 2025 का ऑपरेशन सिंदूर सैन्य कार्रवाई, सार्वजनिक संदेश, तनाव–वृद्धि और नागरिक सुरक्षा के परस्पर संबंधों का अध्ययन करने का अवसर देता है।

भारत के रक्षा मंत्रालय की 7 मई 2025 की विज्ञप्ति के अनुसार, भारतीय सशस्त्र बलों ने ऑपरेशन सिंदूर शुरु कर नौ स्थानों पर कार्रवाई की घोषणा की। विदेश मंत्रालय की 7 और 9 मई की ब्रीफिंग भारत की आधिकारिक स्थिति के प्राथमिक स्रोत हैं; वे अपने–आप दोनों पक्षों के दावों का स्वतंत्र सत्यापन नहीं करतीं।[1]

## 2. समस्या, उद्देश्य और शोध प्रश्न

संकट के समय सरकारी वक्तव्यों, समाचारों और डिजिटल सामग्री में तथ्य, दावा और व्याख्या साथ प्रसारित होते हैं। यह अध्ययन पूछता है कि सार्वजनिक स्रोतों से ऑपरेशन सिंदूर के बारे में क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और किन प्रश्नों पर अधिक प्रमाण चाहिए। उद्देश्य घटनाक्रम दर्ज करना, प्रतिरोध व तनाव– वृद्धि की अवधारणाओं का उपयोग करना और सार्वजनिक संचार, संयुक्त सैन्य समन्वय तथा भविष्य के शोध की दिशा पर विचार करना है।

इस लेख का विशिष्ट योगदान संकट को तीन विश्लेषणात्मक चरणों – (क) कार्रवाई और तत्काल सैन्य संकेत, (ख) सार्वजनिक संचार तथा परस्पर आरोप, और (ग) सैन्य संपर्क के माध्यम से तनाव–नियंत्रण–में व्यवस्थित करना है। यह चरण– विभाजन कारणात्मक सफलता का दावा नहीं करता; यह उपलब्ध सार्वजनिक स्रोतों में दर्ज घटनाओं और उनके बीच अभी अप्रमाणित संबंधों को अलग पहचानने में मदद करता है।

मुख्य प्रश्न हैं : (क) सीमित सैन्य कार्रवाई के घोषित उद्देश्य और परिणामों को कैसे अलग रखा जाए ? (ख) सार्वजनिक संदेश संकट–संचार को समझने में क्या योगदान देते हैं ? (ग) सैन्य क्षमता, नागरिक सुरक्षा और दीर्घकालीन स्थिरता का मूल्यांकन कैसे हो ?

## 3. साहित्य समीक्षा

सरकारी स्रोत घटनाक्रम और घोषित नीति समझने में उपयोगी हैं। भारत के रक्षा और विदेश मंत्रालय की सामग्री आधिकारिक स्थिति दर्ज करती है; 18 मई की पीआईबी सामग्री संयुक्तता और 14 मई की सामग्री तकनीकी तैयारी पर सरकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। इन दावों को स्वतंत्र मूल्यांकन से अलग पढ़ना चाहिए।

मनीष और अर्जुन सिंह धरकोटी का अकादमिक लेख भारत–पाकिस्तान संघर्ष में ड्रोन के उपयोग की तुलना करता है, पर तकनीकी निष्कर्ष पूरे संकट के रणनीतिक परिणामों का विकल्प नहीं है। Reuters की रिपोर्ट युद्धविराम के बाद दोनों पक्षों के परस्पर आरोपों को दर्ज करती है; लेकिन वह भी प्रत्येक परिचालन दावे का स्वतंत्र सत्यापन नहीं है। शोध–अंतराल यह है कि दोनों देशों के समान अवधि के वक्तव्यों, स्वतंत्र रिपोर्टिंग और नागरिक प्रभाव के आँकड़ों को सांझा पद्धति से जाँचा जाए।[2]

## 4. शोध–पद्धति और सीमाएँ

यह गुणात्मक, वर्णनात्मक और दस्तावेज़–आधारित अध्ययन है। स्रोतों को घटना व घोषित उद्देश्य, सरकारी संचार, तकनीकी तैयारी तथा रणनीतिक अर्थ और प्रमाण–सीमा के आधार पर पढ़ा गया।

अध्ययन में साक्षात्कार, वर्गीकृत अभिलेख, स्वतंत्र परिचालन डेटा या व्यवस्थित मीडिया–कोडिंग शामिल नहीं है। पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय का वक्तव्य शामिल है, पर दोनों पक्षों के दावों का स्वतंत्र सत्यापन इसके दायरे में नहीं है।

## 5. विश्लेषण और चर्चा

### 5.1 दिन–प्रतिदिन घटनाक्रम : उपलब्ध सार्वजनिक अभिलेखों के आधार पर

यह कालक्रम मुख्यतः भारतीय सरकारी दस्तावेजों पर आधारित है; इसे स्वतंत्र द्विपक्षीय सत्यापन के बजाय भारत के आधिकारिक वक्तव्यों का सार समझना चाहिए। पाकिस्तान का दृष्टिकोण जहाँ शामिल है, उसे आधिकारिक दावा कहा गया है।

22 अप्रैल 2025 – पहलगाम हमला : भारत सरकार के अनुसार, हमले में 26 लोगों की मृत्यु हुई। यह मई के संकट की तात्कालिक पृष्ठभूमि बना। हमले की जिम्मेदारी और सीमा–पार संबंधों से जुड़े दावों को स्वतंत्र जाँच से अलग रखना आवश्यक है।[3]

23 अप्रैल के बाद भारत के कूटनीतिक और प्रशासनिक कदम घोषित किए।

6–7 मई 2025 की रात – ऑपरेशन सिंदूर : भारत के रक्षा और विदेश मंत्रालयों के अनुसार, भारतीय सशस्त्र बलों ने पाकिस्तान और पाकिस्तान–अधिकृत जम्मू–कश्मीर में नौ स्थानों पर कार्रवाई की। भारत ने इसे पहलगाम हमले के जवाब में आतंकवादी ढाँचे पर केंद्रित बताया और कहा कि सैन्य प्रतिष्ठान लक्ष्य नहीं थे। लक्ष्य–वार क्षति और प्रभाव की स्वतंत्र पुष्टि अलग प्रश्न हैं।[4]

8 मई–वायु–रक्षा और नियंत्रण रेखा : भारत की ब्रीफिंग में ड्रोन / हवाई गतिविधियों और नियंत्रण रेखा पर गोलीबारी के पाकिस्तानी दावे दर्ज हुए; भारत ने अपनी प्रतिक्रिया को समान क्षेत्र और तीव्रता में बताया। इन्हें आधिकारिक दावों के रूप में पढ़ना चाहिए।[5]

9 मई – ड्रोन गतिविधि और ब्रीफिंग : भारत की ब्रीफिंग में ड्रोन, हवाई क्षेत्र उल्लंघन और नियंत्रण रेखा पर गोलीबारी के आरोप प्रस्तुत हुए। नागरिक उड्डयन की सुरक्षा और संयम पर भी वक्तव्य दिया गया। यह सैन्य घटनाक्रम के साथ सार्वजनिक संकट–संचार का उदाहरण है।[6]

10 मई – सैन्य ठिकाने और युद्धविराम : भारत की ब्रीफिंग के अनुसार, भारतीय सशस्त्र बलों ने पाकिस्तान के कुछ सैन्य ठिकानों और संबंधित सुविधाओं को निशाना बनाया। उसी दिन DGMOs के संपर्क के बाद शाम 5 बजे से सैन्य कार्रवाई रोकने की सहमति घोषित हुई। इसके बाद की घटनाओं और सहमति की व्याख्या के लिए दोनों पक्षों के अभिलेखों की तुलना आवश्यक है।[7]

12 मई और आगे – अनुवर्ती संपर्क : भारत की वर्षात समीक्षा में 12 मई को दोनों DGMOs की औपचारिक बातचीत का उल्लेख है। इसलिए 10 मई की घोषणा के साथ बाद के संपर्कों और तनाव–नियंत्रण के प्रयासों को भी देखना चाहिए।[8]

प्रतियोगिता दर्पण (जुलाई 2025) में प्रकाशित ऑपरेशन सिंदूर संबंधी विवरण के अनुसार, 6–7 मई 2025 की रात पाकिस्तान और पाकिस्तान–अधिकृत जम्मू–कश्मीर में नौ आतंकी ठिकानों को निशाना बनाया गया और कार्रवाई को लगभग 25 मिनट में पूरा किए जाने तथा 24 मिसाइल / प्रहारों का विवरण दिया गया। इस सूचना को इस शोध में पत्रिका–प्रकाशित विवरण के रूप में उद्धृत किया जा रहा है, न कि स्वतंत्र रूप से सत्यापित परिचालन आँकड़े के रूप में।

पत्रिका में आगे पाकिस्तान की ओर से ड्रोन और मिसाइल हमलों तथा भारतीय वायु–रक्षा में एस–400, एंटी–ड्रोन प्रणाली, आकाशतीर, आकाश और ब्रह्मोस जैसे साधनों की भूमिका का विवरण दिया गया है। चार पाकिस्तानी लड़ाकू विमानों और एडब्ल्यूएसीएस से संबंधित दावे भी प्रकाशित सामग्री में दर्ज हैं। इन दावों के विश्लेषण में आधिकारिक / पत्रकारीय स्रोत और स्वतंत्र सत्यापन के बीच अंतर बनाए रखना आवश्यक है।

ऑपरेशन सिंदूर के बाद सात सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडलों में 58 सांसदों के विदेश–भ्रमण और भारत की स्थिति को अंतरराष्ट्रीय साझेदारों के समक्ष रखने का उल्लेख भी उसी सामग्री में मिलता है। यह सैन्य कार्रवाई के बाद के संकट–संचार और सार्वजनिक कूटनीति का हिस्सा है तथा इसे सैन्य परिणामों से अलग विश्लेषण करना अधिक उपयुक्त है।[9]

### 5.2 घोषित उद्देश्य, तत्काल परिणाम और दीर्घकालीन प्रभाव

सरकारी घोषणाएँ घोषित उद्देश्य दर्ज करती हैं, लेकिन लक्ष्य–प्राप्ति या दीर्घकालीन प्रभाव अपने–आप सिद्ध नहीं करतीं। इनके आंकलन के लिए स्वतंत्र और बहु–स्रोत प्रमाण चाहिए।

### 5.3 प्रतिरोध और रणनीतिक संकेत

प्रतिरोध का अध्ययन क्षमता, विश्वसनीयता और संचार के आधार पर किया जा सकता है। संकेतों की गलत व्याख्या संकट में तनाव बढ़ा सकती है।

### 5.4 सार्वजनिक संचार और संकट–प्रबंधन

सरकारी ब्रीफिंग नीति समझाने और दूसरे पक्ष को संकेत देने का माध्यम हो सकती है। वे निर्णयकर्ताओं की वास्तविक मंशा या पर्दे के पीछे की बातचीत का पूरा प्रमाण नहीं हैं; उन्हें स्वतंत्र रिपोर्टिंग और समय–संदर्भ के साथ पढ़ना चाहिए।

### 5.5 तकनीक, वायु–रक्षा और संयुक्त सैन्य समन्वय

ड्रोन, सेंसर और वायु–रक्षा की उपयोगिता प्रशिक्षण, संचार और संयुक्त समन्वय पर निर्भर करती है। 14 और 18 मई की सरकारी सामग्री भारतीय संस्थागत दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है; स्वतंत्र परीक्षण के बिना किसी प्रणाली की प्रभावशीलता पर निर्णायक निष्कर्ष उचित नहीं।[10]

रक्षा मंत्रालय की दिसंबर 2025 की समीक्षा में 10 मई के DGMO संपर्क और 12 मई की औपचारिक बातचीत का उल्लेख है। संकट–प्रबंधन के मूल्यांकन में सैन्य संपर्क–चैनलों और तनाव–नियंत्रण के प्रयासों को शामिल करना चाहिए।[11]

### 5.6 नागरिक सुरक्षा और मानवीय प्रभाव

सीमा–संकट में नागरिक सूचना, सुरक्षित आश्रय, चिकित्सा सहायता और प्रशासनिक समन्वय आवश्यक हैं। सत्यापित आँकड़ों के बिना नागरिक क्षति या विस्थापन की संख्या नहीं देनी चाहिए।

### 5.7 दोनों पक्षों के स्रोत और दावों का सत्यापन

पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय ने 10 मई के वक्तव्य में अपना पक्ष रखा; यह सरकारी दावा है, स्वतंत्र सत्यापन नहीं। Reuters ने युद्धविराम के बाद दोनों पक्षों के आरोपों की रिपोर्ट की। इसलिए सहमत तथ्यों, विरोधी दावों और प्रमाण–अभाव वाले प्रश्नों को अलग रखना चाहिए।[12]

### 5.8 दो महिला सैन्य अधिकारियों की भूमिका : कर्नल सोफिया कुरैशी और विंग कमांडर व्योमिका सिंह

7 मई 2025 की आधिकारिक ब्रीफिंग में कर्नल सोफिया कुरैशी और विंग कमांडर व्योमिका सिंह ने अभियान का भारतीय आधिकारिक विवरण प्रस्तुत किया। उनकी भागीदारी सैन्य संस्थानों की सार्वजनिक सूचना–प्रक्रिया को दर्शाती है।[13]

यह भूमिका संकट–संचार और लैंगिक प्रतिनिधित्व के अध्ययन के लिए प्रासंगिक है, लेकिन एक ब्रीफिंग से व्यापक संस्थागत समानता या नीति–परिवर्तन सिद्ध नहीं होता।

## 6. प्रमुख निष्कर्ष (Findings)

मुख्य निष्कर्ष हैं : सरकारी वक्तव्य आधिकारिक पक्ष दर्ज करते हैं, स्वतंत्र सत्यापन नहीं; घोषित उद्देश्य और दीर्घकालीन प्रभाव अलग हैं; संकट–संचार को संदर्भ में पढ़ना चाहिए; तकनीकी प्रणालियाँ प्रशिक्षण व संयुक्तता पर निर्भर हैं और द्विपक्षीय निष्कर्षों के लिए दोनों पक्षों के स्रोत तथा स्वतंत्र पुष्टि आवश्यक हैं।

## 7. सुझाव (Suggestions)

भविष्य के शोध में दोनों देशों के प्राथमिक दस्तावेजों, स्वतंत्र समाचार– रिपोर्टिंग और उपलब्ध मानवीय आँकड़ों को एक साझा समय–रेखा में रखकर स्रोत, समय और सत्यापन–स्तर दर्ज किए जाने चाहिए।

(1) दोनों देशों के वक्तव्यों की समान समय–रेखा बनाएँ। (2) घटना, दावा और विश्लेषण अलग दर्ज करें। (3) परिचालन निष्कर्षों से पहले बहु–स्रोत सत्यापन करें। (4) सैन्य संपर्क और कूटनीतिक संवाद को संकट–प्रबंधन में शामिल करें। (5) नागरिक प्रभाव के सत्यापित आँकड़े संकलित करें। (6) तकनीकी क्षमता को अपने–आप रणनीतिक सफलता न मानें।

## 8. निष्कर्ष

ऑपरेशन सिंदूर का सार्वजनिक अभिलेख सैन्य कार्रवाई, रणनीतिक संकेत, संकट–संचार और तनाव–नियंत्रण को एक ही घटनाक्रम में देखने का अवसर देता है। उपलब्ध स्रोत यह दिखते हैं कि आधिकारिक वक्तव्य घटनाओं की समय–रेखा और प्रत्येक पक्ष की घोषित स्थिति समझने में उपयोगी हैं, पर वे अपने–आप कारणात्मक प्रभाव या दीर्घकालीन रणनीतिक परिणाम सिद्ध नहीं करते। इसलिए इस अध्ययन का निष्कर्ष किसी पक्ष की सफलता का निर्णय नहीं, बल्कि यह है कि संकट का विश्वसनीय मूल्यांकन द्विपक्षीय स्रोतों, स्वतंत्र रिपोर्टिंग और स्पष्ट प्रमाण– मानकों के संयुक्त उपयोग पर निर्भर करता है।

## संदर्भ–सूची


1. Ministry of Defence, Government of India. (2025a, May 7). Operation Sindoor: Indian Armed Forces carried out precision strike at terrorist camps. Press Information Bureau.
   https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2127370&lang= 1&reg=3
   Ministry of Defence, Government of India. (2025c, December 31). Ministry of Defence: Year-end review-2025. Press Information Bureau.
   https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2210154&lang=1 &reg=3
   Ministry of External Affairs, Government of India. (2025a, May 7). Transcript of special briefing on Operation Sindoor.
   http://www.mean.gov.in/media-briefings.htm?dtl/39474/Transcript+of+ Special+Briefing+on+OPERATION+SINDOOR+May+07+2025
2. Manish, & Dyarakoti, A.S. (2025). Drones in India-Pakistan conflict: A comparative study with special focus on Opeation Sindoor. Small Wars & Insurgencies. Advance online publication.
   https://doi.org/10.1080/09592318-2025-2587738
   Reuters. (2025, May 10). Explosions reported after India and Pakistan agree to ceasefires.
   https://www.reuters.com/world/india/pakistan-says-three-air-bases-targeted-by-indian-missiles-2025-05-10/

3. Ministry of Defence, Government of India. (2025a, May 7). Operation Sindoor: Indian Armed Forces carried out precision strike at terrorist camps. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2127370&lang= 1&reg=3
Press Information Bureau, Government of India. (2025, May 14). Operation SINDOOR: India's strategic clarity and calculated force. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2128748&lang=1&reg=3
4. Ministry of Defence, Government of India. (2025a, May 7). Operation Sindoor: Indian Armed Forces carried out precision strike at terrorist camps. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2127370&lang= 1&reg=3
Ministry of Defence, Government of India. (2025c, December 31). Ministry of Defence: Year-end review-2025. Press Information Bureau. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2210154&lang=1 &reg=3
5. Consulate General of India, Istanbul. (2025, May 8). Transcript of special briefing on Operation Sindoor (May 08, 2025). https://cgiistanbul.gov.in/section/news/transcript-of-special-briefing-on- operation-sindoor-may-08-2025/
6. Ministry of External Affairs, Government of India. (2025a, May 7). Transcript of special briefing on Operation Sindoor. http://www.mean.gov.in/media-briefings.htm?dtl/39474/Transcript+of+ Special+Briefing+on+OPERATION+SINDOOR+May+07+2025
7. Akashvani News. (2025b, May 10). India conducts precision strikes on Pakistan military targets in retaliation to Islamabad's escalatory and provocative actions. https://newsonair.gov.in/ministry-of-external-affairs-special-briefing-on- operation-sindoor/
Press Information Bureau, Ministry of Defence, Government of India. (2025, May 10). Press briefing on Operation Sindoor. https://www.pib.gov.in/ViewVideo.aspx?MinID=33&Month=5&VPRID =183232&V_ID=194344&Year=2025&lang=2&reg=48
Reuters. (2025, May 10). Explosions reported after India and Pakistan agree to ceasefires. https://www.reuters.com/world/india/pakistan-says-three-air-bases-targeted-by-indian-missiles-2025-05-10/
8. Ministry of Defence, Government of India. (2025b, July 28). Statement of Operation Sindoor in Lok Sabha. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2149356&lang= 2&reg=3
9. Pratiyogita Darpan. (2025, July). "Operation Sindoor in response to the terrorist attack in Pahalgam: India's strong response to terrorism even before the ceasefire." Pratiyogita Darpan, July 2025.
10. Ministry of External Affairs, Government of India. (2025b, May 9). Transcript of special briefing on Operation Sindoor. https://www.mea.gov.in/media-briefings.htm?dtl/39482/Transcript_of_ Special_briefing_on_OPERATION_SINDOOR_May_09_2025
Ministry of Foreign Affairs, Government of Pakistan. (2025, May 10). Recent developments and ceasefire between India and Pakistan. https://mofa.gov.pk/press-releases/recent-developments-and-ceasefire- between-india-and-pakistan

11. Ministry of Defence, Government of India. (2025b, July 28). Statement of Operation Sindoor in Lok Sabha. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2149356&lang= 2&reg=3
12. Ministry of Information & Broadcasting, Government of India. (2025a, May 14). Operation SINDOOR: The rise of Aatmanirbhar innovation in national security. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2128746&lang= 2&reg=3
Reuters. (2025, May 10). Explosions reported after India and Pakistan agree to ceasefires. https://www.reuters.com/world/india/pakistan-says-three-air-bases-targeted-by-indian-missiles-2025-05-10/
13. Akashvani News. (2025a, May 7). Press briefing on "Operation Sindoor". https://newsonair.gov.in/press-briefing-on-operation-sindoor/
Ministry of Defence, Government of India. (2025c, December 31). Ministry of Defence: Year-end review-2025. Press Information Bureau. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2210154&lang=1 &reg=3

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 114-117
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# EDUCATION AND SOCIAL CHANGE IN SOCIETY

**Dr. Johnny Techi**
Associate Professor
Govt. College, Doimukh

**Abstract**

Education is a fundamental instrument of social change, social transformation, and social development. The transition from traditional to modern education has shifted its role from maintaining social control to promoting scientific knowledge, technological development, social mobility, equality, and modernization. Education has contributed significantly to improving the status of women, reducing superstition and prejudice, increasing political awareness, and developing skilled human resources. It also influences occupational and class structures by providing opportunities for upward social mobility. In developing societies, primary education promotes basic literacy and integration into modern life, while higher education encourages critical thinking, challenges existing values, and promotes participation in social and political movements. However, education does not function independently; its effectiveness is influenced by broader social, economic, political, and cultural conditions. Therefore, education serves not only as a reflection of social change but also as a significant force in initiating and promoting desirable changes in society over time.

**Keywords:**

*Education, Social Change, Social Development, Modernization, Social Mobility, Social Transformation, Political Awareness, Women's Empowerment, Higher Education, Literacy, Scientific Knowledge, Social Equality, Developing Societies.*

Education is one of the intervening variables in the phenomenon of social change in society. The socialization of the younger generation, education consists in an attempt on the part of the adult members of human society to shape the development of the coming generation with its own ideal of life. Education can also be understood as a factor of social change. The role of education as an agent as instrument of social changes and development is widely recognized today. Education can imitate social change in society by bringing about a change in the outlook and attitudes of man. It can bring about a change in the pattern of social relationship and thereby it may cause social changes. On the purposes of education is to change man and his life and living style. The change man is to change society only.

There was a time when educational institutions and teachers were engaged in transmitting a way of life to the students. During those days, education was more a means of

social control than an instrument of social change, Modern schools, colleges, and universities do not place much emphasis upon transmitting a way of life to the students. The traditional education was meant for and unchanging, static society, not marked by rapid changes. But today, education aims at imparting empirical knowledge, that is, knowledge about science, technology and other type of specialized knowledge. Education was associated with religion. It has, however, became secular today. It is an independent institution now. Education today has been chiefly instrumental in preparing the way for the development of science and technology.

Education has brought about phenomenal changes in every aspect of man's life. Francis I. Brown, remarks that education is a process which brings about changes in the behavior of society. It is a process which enables every individual to effectively participate in the activities of society, and to make positive contribution to the progress of society. As Drucker has stated that the "highly educated man has become the central resource of today's society and the supply of such men is the true measure of its economics, military and even its political potential".

Modern education has changed our attitude and outlook. It has affected our customs and traditions, manners and morals, religious beliefs and philosophical principles. It has removed to a great extent the superstitious beliefs and unreasoned fears about the supernatural beings. It has widened our vision and removed our narrow ideals, prejudices and misunderstandings. Higher education has brought about more refined behavior.

Education has contributed to a radical improvement in the status of women. Educated modern women no more tolerate the double standard of morality. It has helped them to seek employment outside the family. Particularly, mass education in civilized societies has fostered the sense and the feeling of equality. Referring to the relation between education and social change and development, Peter Worsley points out "that education reflects society, and educational change follows social change". Though education conditions development it itself is a product of prior social and economic changes in society. Further, education is an independent factor in social and economic development producing intended and unintended consequences and conflicts of values and goals.

Education is an important means of attaining social and economic rewards of society. It has become essential for the economy. Education has now become a large-scale and a highly visible organization. Education is now controlled by the dominant groups of society so as to meet their definition of society's needs. Changes in the educational system condition social and economic changes, greater social mobility and more skilled non-power for technologically based industry. Planned educational innovations, policies and programs may contribute to the social integration and a more highly educated labor force and electorate.

Education has been playing a great role in getting occupational which are key determiners of general social status. Thus, the schools are agents in realizing the desire for upward social mobility. In many highly industrialized societies, the proportion of people in the manual working class has steadily declined. It is so in the case of America, Britain, France, etc. The schools have been instrumental in transforming the occupational structure and modifying the class structure as well. In most developing countries education is regarded as "The gateway to an improved social position". Hence, one way find an unsatisfied demand for education in such countries. This is especially true in the case of a developing nation like India. Educational change in these countries can effectively proceed only if corresponding changes take place in the other aspects of their social structure.

Where education is a condition of social and economic change, it is more likely to produce intended consequences. This happens because educational change is following other changes in society. The social context is thus favorable to particular change. For example, educational reforms, designed to raise educational standards among low-income people have

become more successful in Cuba than in Guatemala. This has been so, because in Cuba, more than in Guatemala, educational change has followed social and economic changes enabling the low-income people to take an active participation in the development of National Society. As far as India is concerned, there is no proper coordination between educational changes and socio-economic needs.

Education increases political awareness among poor people also. This would bring about wider political changes with the increasingly organized participation of people in national politics. Modern states, particularly the totalitarian ones, have made education an instrument for establishing their regime. Under authoritarian principles, the control of the school touches every aspect of education. The teachers are carefully chosen and supervised and deviations from the party line are severely punished. Students of all ages must be given nothing but the truth as the ruling elite see it. The principal of a school in Moscow once said, "The prime duty of the Soviet teacher is to train our younger generation for the work of building communism". On the contrary, in the democratic countries there is belief that, "the state is for man, not man for the state". Education is made free and open. Here, education makes a man to become more conscious of the rights and also of his duty to provide and guard similar rights for others.

Education is expected to contribute to "Progress", to modify the cultural heritage as well as to preserve and transmit it. In modern industrial societies educational organizations have become innovated. They are gathering and storing new knowledge and one promoting change in the process of transmitting that knowledge. It is now widely need that educational system should dedicate itself to the task of bringing about desirable changes. The emphasis upon research in universities reflects the judgement that discovery itself is good. For the first time in history, societies are marshalling their huge resources and talents to make advances in knowledge through educational organizations.

Changes do not take place with equal rate of speed in all areas of life. Generally, there is more enthusiasm for change in areas of material culture than in non-material culture. Though educational researches any kind of innovation can be made to maximize production and minimize cost. When education challenges cherished traditions, it becomes the object of some hostility. Education cannot be used as an instrument to bring about any kind of change, because education operates in the context of other institutions and is constrained by them.

As Alex Inkeles has pointed out different levels of education have different levels of effects. In the developing countries primary school education is enabling whole population to do things they would never have been able to do before. Literary helps them to read labels on cans, bottles, tins, to read sign boards, newspapers, birth-control leaflets, to move around the arrange city etc. These events are social changes. In the developing countries primary school education is more important than higher education. Even though widespread primary education can have a great impact upon people in the developing countries the ideological content of primary school education remains almost conservative because governments organize school systems in a stereotyped way. There is less or no scope for the teachers to make researchers or to become revolutionary leaders.

It can be said that basic literacy brings a society into the modern world. But only higher education provokes person to question the values of everyday life. The high school or primary school teacher is not free to speak critically as the university professor is. At elementary level of education students normally live with their parents at home and hence not free to entertain ideas which their parents may dislike. On the other hand, at the university level, the intellectual work requires students to do more critical thinking man they might do at a lower level.

University student movements have often been the major force demanding social change in many societies. A decade between 1960 and 1970 witnessed a larger number of student upsurges resulting in social and political changes. For example, in China, India, Japan,

America, Germany, France, Italy, England, Indonesia and in many other countries students agitated for various reasons causing vast changes. In some cases, the student movement stood with the establishment and in majority of the cases they tried to discredit, transform or topple governments. The students are today a new social force of incalculable significance but student movements have been far less active in the late 1970s than a decade ago. It is true that college educated persons are still the most progressive group in society whether they are quiet or vocal in calling for social reform or change. More and more persons are receiving higher education. Majority will attain a degree, if that so, it means that society will contain a "build in" engine for social change. As long as universities continue to occupy an increasingly important place in society, so long changes are bound to be initiated through education in some way or the other.

**Reference**


1. John L. Rury 1991, Education and Social Change: Themes in the History of America Schooling.
2. M.N. Srinivas 1963, Social change in modern Indian.
3. Dr. Suman Rani & Dr. Sangeeta agarwal, Education and social insformation: Perspectives and Practices.
4. AR. Kamat (Google Books), Education and Social changes in India.
5. Sucheta Mahajan 2025, Education for Social Change - National Book Trust.
6. ResearchGate, Social change and Education.
7. Global vision Publishing House, Education and social change.
8. Amazon.in, Education & social change (sociology and social change).
9. UESCO Digital Library, Education and social change.
10. Amazon.in, Sociology India Society and social change and development in India (2025).
11. Edited Book, Social change and Indian Society in Pandemic Times.
12. National Books Trust India, Education for Social Change-welcome to National Book Trust India.
13. Edited by Bernard S. Cohn (Eds) Melton Singer, Structure and change ban Indian Society, 2015.
14. Kumar m, social change: theory and practices.
15. C.M. Shankar Rao, sociology primary principles, 2001.
16. Nadeem Hasnain (revised and updates edition) Indian Society and Culture: Continuity and Change


jhoneytechitara@gmai.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 118-122
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# 21वीं सदी में भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों का हिंद महासागर क्षेत्र में क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन पर प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

**राजेन्द्र प्रसाद मिश्र,**
सहायक आचार्य,
के0 बी0 पी0 जी0 कॉलेज मीरजापुर

**सारांश**
हिंद महासागर क्षेत्र 21वीं सदी की वैश्विक राजनीति में सामरिक, आर्थिक और सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र बन चुका है। विश्व व्यापार के महत्वपूर्ण समुद्री मार्ग, ऊर्जा आपूर्ति, प्राकृतिक संसाधन तथा एशिया, अफ्रीका और पश्चिम एशिया के मध्य संपर्क इस क्षेत्र के महत्व को निरंतर बढ़ा रहे हैं। इसके साथ ही चीन की बढ़ती आर्थिक एवं समुद्री उपस्थिति ने हिंद महासागर की शक्ति–संरचना को प्रभावित किया है। ऐसी परिस्थितियों में भारत और अमेरिका के मध्य विकसित हो रहे रणनीतिक संबंध क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन के अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय बन गए हैं।
इस अध्ययन का उद्देश्य 21वीं सदी में भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों के विकास तथा हिंद महासागर की सुरक्षा एवं शक्ति–संरचना पर उनके प्रभाव का विश्लेषण करना है। अध्ययन में रक्षा सहयोग, समुद्री सुरक्षा, संयुक्त नौसैनिक अभ्यास, सूचना–साझाकरण, लॉजिस्टिक सहयोग, 2+2 संवाद, क्वाड, समुद्री क्षेत्र जागरूकता तथा उभरती रक्षा प्रौद्योगिकियों को प्रमुख आधार बनाया गया है। भारत–अमेरिका संबंध अब केवल द्विपक्षीय राजनीतिक एवं आर्थिक संबंधों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि हिंद–प्रशांत की व्यापक सामरिक संरचना का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुके हैं।
अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत–अमेरिका सहयोग ने भारत की समुद्री क्षमता, सूचना–साझाकरण और सामरिक पहुंच को मजबूत किया है तथा हिंद महासागर में शक्ति–संतुलन को अधिक बहुध्रुवीय स्वरूप प्रदान किया है। हालांकि भारत की रणनीतिक स्वायत्तता, क्षेत्रीय देशों की संवेदनशीलता तथा अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा जैसी चुनौतियाँ भी इस साझेदारी के सामने मौजूद हैं। इसलिए इस संबंध को केवल चीन के प्रतिरोध के रूप में देखना पर्याप्त नहीं होगा।

**मुख्य शब्दः– भारत–अमेरिका संबंध, हिंद महासागर, शक्ति–संतुलन, समुद्री सुरक्षा, क्वाड, रणनीतिक स्वायत्तता, चीन, हिंद–प्रशांत।**

## प्रस्तावना

21वीं सदी की अंतरराष्ट्रीय राजनीति में शक्ति–संरचना में व्यापक परिवर्तन दिखाई दे रहा है। शीतयुद्ध के दौरान वैश्विक राजनीति मुख्यतः अमेरिका और सोवियत संघ के मध्य प्रतिस्पर्धा पर आधारित थी, किंतु शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद अंतरराष्ट्रीय राजनीति का केंद्र धीरे–धीरे एशिया की ओर स्थानांतरित हुआ। चीन का आर्थिक एवं सामरिक उदय, भारत की बढ़ती वैश्विक भूमिका, दक्षिण–पूर्व एशिया का आर्थिक महत्व तथा पश्चिम एशिया की ऊर्जा राजनीति ने हिंद–प्रशांत क्षेत्र को वैश्विक राजनीति का

महत्वपूर्ण केंद्र बना दिया है। इसी व्यापक परिवेश में हिंद महासागर का सामरिक महत्व भी तेजी से बढ़ा है।

हिंद महासागर एशिया, अफ्रीका, यूरोप और पश्चिम एशिया को जोड़ने वाला महत्वपूर्ण समुद्री क्षेत्र है। इसके माध्यम से ऊर्जा संसाधनों तथा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का अंतरराष्ट्रीय परिवहन होता है। भारत, चीन, जापान तथा दक्षिण कोरिया जैसी अर्थव्यवस्थाओं के लिए समुद्री मार्गों की सुरक्षा आर्थिक स्थिरता से सीधे जुड़ी हुई है। इसलिए इस क्षेत्र में समुद्री मार्गों की सुरक्षा और शक्ति–संतुलन केवल तटीय देशों का विषय नहीं बल्कि वैश्विक आर्थिक व्यवस्था का भी महत्वपूर्ण प्रश्न है।

भारत की भौगोलिक स्थिति इस संदर्भ में विशेष महत्व रखती है। अरब सागर, बंगाल की खाड़ी और हिंद महासागर से घिरा भारत प्रमुख समुद्री मार्गों के निकट स्थित है। अंडमान–निकोबार द्वीप समूह भारत को मलक्का जलडमरूमध्य की दिशा में रणनीतिक पहुंच प्रदान करता है। इस कारण भारत हिंद महासागर की क्षेत्रीय सुरक्षा–संरचना में केंद्रीय भूमिका निभाने की क्षमता रखता है। भारत ने समुद्री सुरक्षा को अपने राष्ट्रीय विकास, ऊर्जा सुरक्षा और वैश्विक संपर्क से जोड़ते हुए SAGAR—Security and Growth for All in the Region की अवधारणा को प्रमुखता दी है। इसके अंतर्गत समुद्री स्थिरता, नौवहन की स्वतंत्रता, समुद्री कानूनों का सम्मान, क्षमता निर्माण तथा मानवीय सहायता को क्षेत्रीय सहयोग का आधार माना गया है।

दूसरी ओर, हिंद महासागर में चीन की बढ़ती आर्थिक और समुद्री गतिविधियों ने क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन को प्रभावित किया है। बेल्ट एंड रोड पहल के अंतर्गत बंदरगाहों, ऊर्जा तथा समुद्री अवसंरचना में चीनी निवेश ने दक्षिण एशिया और हिंद महासागर में उसकी आर्थिक उपस्थिति को बढ़ाया है। श्रीलंका के हंबनटोटा तथा पाकिस्तान के ग्वादर जैसे बंदरगाह इस संदर्भ में चर्चा के महत्वपूर्ण विषय रहे हैं। हालांकि प्रत्येक परियोजना को सीधे सैन्य दृष्टि से देखना उचित नहीं है, फिर भी इनके सामूहिक प्रभाव ने भारत की रणनीतिक गणनाओं को प्रभावित किया है। इसी परिवेश में भारत–अमेरिका संबंधों का सामरिक महत्व बढ़ा है। अमेरिका की वैश्विक समुद्री क्षमता और भारत की भौगोलिक स्थिति तथा क्षेत्रीय समुद्री क्षमता का संयोजन हिंद महासागर में शक्ति–संतुलन को प्रभावित करता है।

### 1. भारत–अमेरिका संबंधों का ऐतिहासिक विकास एवं रणनीतिक रूपांतरण

भारत और अमेरिका के संबंधों का वर्तमान स्वरूप कई दशकों के राजनीतिक और सामरिक परिवर्तनों का परिणाम है। स्वतंत्रता के बाद भारत ने गुटनिरपेक्षता तथा रणनीतिक स्वतंत्रता को अपनी विदेश नीति का महत्वपूर्ण आधार बनाया। दूसरी ओर, शीतयुद्ध के समय अमेरिका ने सोवियत संघ के विरुद्ध विभिन्न सुरक्षा व्यवस्थाओं का निर्माण किया और पाकिस्तान के साथ उसके सुरक्षा संबंधों का भारत–अमेरिका संबंधों पर प्रभाव पड़ा।

शीतयुद्ध की समाप्ति तथा 1991 में भारत के आर्थिक उदारीकरण के बाद दोनों देशों के संबंधों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। व्यापार, निवेश, सूचना–प्रौद्योगिकी और आर्थिक सहयोग ने संबंधों को नई दिशा दी। 21वीं सदी के आरंभ में आतंकवाद के विरुद्ध सहयोग, रक्षा संबंध, उच्च प्रौद्योगिकी तथा परमाणु सहयोग ने दोनों देशों के संबंधों को और मजबूत किया।

2005 का असैन्य परमाणु समझौता भारत–अमेरिका संबंधों के परिवर्तन का महत्वपूर्ण चरण था। इसके बाद रक्षा सहयोग, संयुक्त सैन्य अभ्यास तथा रक्षा व्यापार में निरंतर वृद्धि हुई। 2016 में अमेरिका द्वारा भारत को Major Defense Partner का दर्जा दिया जाना इस परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण संकेत था। इसके बाद सहयोग केवल रक्षा उपकरणों की खरीद तक सीमित न रहकर सह–उत्पादन, प्रौद्योगिकी सहयोग और रक्षा औद्योगिक साझेदारी तक विस्तृत हुआ।

भारत–अमेरिका रक्षा संबंधों में LEMOA, COMCASA और BECA जैसे समझौतों का विशेष महत्व है। इन समझौतों ने दोनों देशों की सेनाओं के बीच लॉजिस्टिक सहयोग, सुरक्षित संचार तथा भू–स्थानिक सूचनाओं के आदान–प्रदान की संभावनाओं को बढ़ाया। इससे भारत की समुद्री निगरानी तथा सामरिक परिस्थिति की समझ को नई क्षमताएँ प्राप्त हुईं। 2018 में प्रारंभ हुआ 2+2 मंत्रीस्तरीय संवाद भारत–अमेरिका संबंधों को संस्थागत आधार प्रदान करने वाला महत्वपूर्ण तंत्र बना। इसके माध्यम से विदेश और रक्षा मंत्रियों के स्तर पर हिंद–प्रशांत, रक्षा तकनीक, समुद्री सुरक्षा तथा

क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन से संबंधित विषयों पर नियमित संवाद संभव हुआ। इसी प्रकार उभरती एवं महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों में सहयोग ने संबंधों को पारंपरिक रक्षा सहयोग से आगे बढ़ाया है।
फिर भी भारत–अमेरिका संबंधों को औपचारिक सैन्य गठबंधन के रूप में देखना उचित नहीं होगा। भारत अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को विदेश नीति का महत्वपूर्ण आधार मानता है। अमेरिका के साथ निकट संबंधों के बावजूद भारत रूस, फ्रांस, जापान, ऑस्ट्रेलिया, आसियान तथा अन्य देशों के साथ स्वतंत्र संबंध बनाए रखता है। इससे स्पष्ट होता है कि भारत का उद्देश्य किसी एक शक्ति–गुट में शामिल होना नहीं बल्कि विभिन्न शक्ति–केंद्रों के साथ सहयोग करते हुए अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना है।

**2. भारत–अमेरिका समुद्री सहयोग, क्वाड और क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन**

भारत–अमेरिका रणनीतिक साझेदारी का प्रत्यक्ष प्रभाव समुद्री सुरक्षा के क्षेत्र में दिखाई देता है। आधुनिक समुद्री सुरक्षा केवल पारंपरिक नौसैनिक युद्ध तक सीमित नहीं है। समुद्री डकैती, अवैध मछली पकड़ना, मानव एवं मादक पदार्थों की तस्करी, समुद्री आतंकवाद, प्राकृतिक आपदाएँ, समुद्री प्रदूषण तथा समुद्री संचार मार्गों की सुरक्षा भी इसके महत्वपूर्ण आयाम हैं।
इस संदर्भ में Maritime Domain Awareness (MDA) अत्यंत महत्वपूर्ण है। समुद्री क्षेत्र में जहाजों की स्थिति, उनकी गतिविधियों और संभावित जोखिमों से संबंधित सूचनाओं का आदान–प्रदान समुद्री सुरक्षा को मजबूत करता है। भारत और अमेरिका के मध्य समुद्री सूचना तथा निगरानी क्षमता में सहयोग से भारत की समुद्री परिस्थिति संबंधी जागरूकता को मजबूत करने में सहायता मिली है।

मालाबार नौसैनिक अभ्यास भारत–अमेरिका समुद्री सहयोग का प्रमुख उदाहरण है। प्रारंभ में यह भारत और अमेरिका के बीच नौसैनिक अभ्यास था, किंतु बाद में जापान और ऑस्ट्रेलिया की भागीदारी से इसका स्वरूप बहुपक्षीय हो गया। इससे सहभागी देशों की नौसेनाओं के मध्य संचार, पारस्परिक संचालन क्षमता और संयुक्त कार्यवाही की क्षमता में वृद्धि हुई। मालाबार अभ्यास को केवल सैन्य अभ्यास के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। यह समुद्री सुरक्षा और नियम–आधारित व्यवस्था के संदर्भ में सहयोग का संकेत भी है। हालांकि इसे औपचारिक सैन्य गठबंधन कहना उचित नहीं होगा।
इसी प्रकार QUAD भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के बीच व्यापक रणनीतिक सहयोग का मंच है। 2017 के बाद इसका पुनर्सक्रियकरण अधिक स्पष्ट हुआ तथा 2020 के बाद इसका राजनीतिक महत्व बढ़ा। भारत लगातार यह स्पष्ट करता रहा है कि क्वाड कोई औपचारिक सैन्य गठबंधन नहीं है। भारत की प्राथमिकता स्वतंत्र, खुला, समावेशी और नियम–आधारित हिंद–प्रशांत क्षेत्र का निर्माण है।

भारत के लिए क्वाड का महत्व इसलिए भी है कि इसके माध्यम से वह अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ सहयोग करते हुए अपनी समुद्री क्षमता बढ़ा सकता है, जबकि किसी औपचारिक सैन्य गठबंधन की बाध्यता उत्पन्न नहीं होती। इस प्रकार भारत–अमेरिका समुद्री सहयोग एक ओर भारत की प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करता है और दूसरी ओर हिंद महासागर में किसी एक शक्ति के अत्यधिक प्रभुत्व की संभावना को सीमित करने में योगदान कर सकता है।

**3. चीन की बढ़ती उपस्थिति और शक्ति–संतुलन**

हिंद महासागर में भारत–अमेरिका सहयोग को समझने के लिए चीन की बढ़ती आर्थिक और समुद्री उपस्थिति का अध्ययन आवश्यक है। पिछले दो दशकों में चीन ने आर्थिक शक्ति के साथ–साथ समुद्री क्षमता, व्यापारिक संपर्क, बंदरगाह विकास तथा विदेशी निवेश के माध्यम से हिंद महासागर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति बढ़ाई है।

बेल्ट एंड रोड पहल के अंतर्गत विभिन्न अवसंरचना परियोजनाओं ने दक्षिण एशिया और हिंद महासागर में चीन की आर्थिक भूमिका को विस्तृत किया है। भारत विशेष रूप से उन परियोजनाओं को लेकर सतर्क रहा है जिनमें बंदरगाह और रणनीतिक समुद्री अवसंरचना शामिल हैं। हालांकि प्रत्येक परियोजना को सैन्य उद्देश्य से जोड़ना उचित नहीं है, लेकिन इनके सामूहिक प्रभाव से क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन में परिवर्तन की संभावनाओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

भारत और चीन के मध्य सीमा विवाद तथा 2020 के सीमा तनाव ने दोनों देशों के बीच रणनीतिक अविश्वास को बढ़ाया। इस परिस्थिति में भारत ने बाहरी रणनीतिक साझेदारियों और समुद्री सहयोग का अधिक सक्रिय उपयोग किया। भारत–अमेरिका सहयोग इस संदर्भ में संतुलनकारी क्षमता प्रदान करता है, किंतु भारत के लिए यह चीन के साथ पूर्ण संघर्ष का विकल्प नहीं है। आज

शक्ति–संतुलन का अर्थ केवल सैन्य क्षमता से नहीं है। आर्थिक शक्ति, प्रौद्योगिकी, समुद्री सूचना, आपूर्ति श्रृंखला, साइबर क्षमता, अंतरिक्ष और कूटनीतिक नेटवर्क भी शक्ति के महत्वपूर्ण स्रोत बन गए हैं। भारत–अमेरिका संबंध इन सभी क्षेत्रों में धीरे–धीरे विस्तार प्राप्त कर रहे हैं।

**4. रणनीतिक स्वायत्तता और क्षेत्रीय देशों पर प्रभाव**

भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों का एक महत्वपूर्ण पक्ष भारत की रणनीतिक स्वायत्तता है। भारत अमेरिका के साथ गहरे रक्षा संबंध बनाए रखते हुए रूस के साथ रक्षा संबंध, फ्रांस के साथ समुद्री सहयोग तथा जापान, ऑस्ट्रेलिया, आसियान और पश्चिम एशिया के देशों के साथ स्वतंत्र संबंध जारी रखता है। इससे स्पष्ट होता है कि भारत किसी एक शक्ति–केंद्र के साथ पूर्ण संरेखण के बजाय बहुआयामी सहयोग की नीति अपना रहा है।

हिंद महासागर के छोटे और मध्यम देशों के संदर्भ में भी भारत–अमेरिका सहयोग महत्वपूर्ण है। श्रीलंका, मालदीव, मॉरीशस, सेशेल्स तथा पूर्वी अफ्रीकी देशों के लिए समुद्री सुरक्षा, आपदा प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन, पर्यटन, व्यापार और विकास प्रमुख विषय हैं। इसलिए यदि क्षेत्रीय सहयोग केवल सैन्य प्रतिस्पर्धा तक सीमित न रहकर क्षमता निर्माण, मानवीय सहायता और आर्थिक विकास पर केंद्रित होता है तो क्षेत्रीय स्थिरता को अधिक मजबूती मिल सकती है।

भविष्य में भारत–अमेरिका सहयोग के प्रमुख क्षेत्र समुद्री सुरक्षा, रक्षा प्रौद्योगिकी, आर्थिक–तकनीकी सुरक्षा तथा क्षेत्रीय क्षमता निर्माण हो सकते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, साइबर सुरक्षा, उपग्रह आधारित निगरानी, ड्रोन, अर्धचालक, महत्वपूर्ण खनिज तथा सुरक्षित आपूर्ति शृंखलाएँ भविष्य की शक्ति–संरचना को प्रभावित करने वाले प्रमुख क्षेत्र हैं। भारत के लिए प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, सह–विकास और सह–उत्पादन विशेष महत्व रखते हैं। इससे भारत की रक्षा औद्योगिक क्षमता तथा आत्मनिर्भरता को बढ़ाने में सहायता मिल सकती है।

हालांकि इस साझेदारी के सामने कुछ सीमाएँ भी हैं। व्यापार, शुल्क, रूस से भारत के संबंध, तकनीकी नियंत्रण और रणनीतिक प्राथमिकताओं को लेकर दोनों देशों के बीच मतभेद उत्पन्न हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त यदि भारत–अमेरिका सहयोग अत्यधिक सैन्य रूप लेता है तो चीन की प्रतिक्रिया भी क्षेत्रीय सुरक्षा वातावरण को प्रभावित कर सकती है। इसलिए भारत के लिए प्रतिरोधक क्षमता और संवाद के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। क्षेत्रीय देशों की धारणा भी महत्वपूर्ण है। भारत और अमेरिका की बढ़ती निकटता यदि छोटे देशों को किसी बड़े शक्ति–गुट की राजनीति के रूप में दिखाई देती है तो भारत की क्षेत्रीय स्वीकार्यता प्रभावित हो सकती है। इसलिए भारत को अपने पड़ोसी देशों के साथ समानता, संवेदनशीलता और सहयोग की नीति को निरंतर मजबूत करना होगा।

**निष्कर्ष**

21वीं सदी में भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों का विकास हिंद महासागर की बदलती भू–राजनीतिक एवं सामरिक संरचना का महत्वपूर्ण पक्ष बन चुका है। हिंद महासागर विश्व व्यापार, ऊर्जा आपूर्ति, समुद्री संपर्क और क्षेत्रीय सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत की भौगोलिक स्थिति तथा अमेरिका की समुद्री और तकनीकी क्षमता दोनों देशों को इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण रणनीतिक साझेदार बनाती है।

LEMOA, COMCASA और BECA जैसे समझौतों ने रक्षा सहयोग को संस्थागत आधार दिया है। 2+2 संवाद, मालाबार नौसैनिक अभ्यास, क्वाड तथा समुद्री क्षेत्र जागरूकता ने भारत की समुद्री निगरानी, प्रतिरोधक क्षमता और रणनीतिक पहुंच को मजबूत किया है।

क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन की दृष्टि से भारत–अमेरिका साझेदारी का महत्वपूर्ण प्रभव चीन की बढ़ती समुद्री एवं आर्थिक उपस्थिति के संदर्भ में दिखाई देता है। यह साझेदारी भारत को अपनी समुद्री तथा तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाने के अवसर प्रदान करती है और हिंद महासागर को अधिक बहुध्रुवीय बनाने में योगदान दे सकती है। फिर भी इसे केवल चीन–विरोधी व्यवस्था के रूप में देखना उचित नहीं होगा। भारत की रणनीतिक स्वायत्तता इस संबंध की मूल विशेषता बनी हुई है।

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, साइबर सुरक्षा, अंतरिक्ष, उन्नत रक्षा प्रौद्योगिकी, अर्धचालक, महत्वपूर्ण खनिज तथा समुद्री निगरानी जैसे क्षेत्र भारत–अमेरिका सहयोग के नए आधार बन सकते हैं। साथ ही क्षेत्रीय छोटे और मध्यम देशों के हितों को ध्यान में रखते हुए मानवीय सहायता, आपदा राहत, क्षमता निर्माण और आर्थिक विकास को भी साझेदारी का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाया जाना आवश्यक है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों ने हिंद महासागर में क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन को अधिक बहुध्रुवीय बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस साझेदारी ने भारत की समुद्री, रक्षा और तकनीकी क्षमताओं को मजबूत किया है तथा क्षेत्रीय सहयोग के नए अवसर उत्पन्न किए हैं। इसकी दीर्घकालीन उपयोगिता इस बात पर निर्भर करेगी कि भारत अपनी रणनीतिक स्वायत्तता, क्षेत्रीय देशों के हितों और व्यापक हिंद–प्रशांत स्थिरता के साथ अमेरिका के साथ सहयोग का किस प्रकार संतुलन बनाए रखता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**


1. दीक्षित, जे. एन. (2017). भारतीय विदेश नीति. प्रभात प्रकाशन।
2. पंत, पुष्पेश. (2021). अंतरराष्ट्रीय संबंध. मैकग्रॉ हिल एजुकेशन।
3. खन्ना, वी. एन. (2019). भारत की विदेश नीति. विकास पब्लिशिंग हाउस।
4. यादव, आर. एस. (2013). भारत की विदेश नीति. पीयर्सन।
5. सिकरी, राजीव. (2014). चुनौतियाँ और रणनीतिः भारत की विदेश नीति का पुनर्विचार. सेज पब्लिकेशंस।
6. Bajpai, K. P., – Pant, H. V. (Eds.). (2013). India's foreign policy: A reader- Oxford University Press.
7. Dombrowski, P., – Winner, A. C. (Eds.). (2014). The Indian Ocean and US grand strategy: Ensuring access and promoting security. Georgetown University Press.
8. Ganguly, S. (Ed.). (2016). Engaging the world: Indian foreign policy since 1947. Oxford University Press.
9. Ganguly, S., Scobell, A., – Shoup, B. (Eds.). (2006). US–Indian strategic cooperation into the 21st century: More than words. Routledge.
10. Ganguly, S., – Mason, M. C. (2019). An unnatural partnership\ The future of U-S-&India strategic cooperation- Strategic Studies Institute, U.S. Army War College Press.
11. Gupta, A. (2005). The U.S.–India relationship: Strategic partnership or complementary interests? U.S. Army War College Press.
12. Pant, H. V., – Joshi, Y. (2015). The US pivot and Indian foreign policy: Asia's evolving balance of power. Palgrave Macmillan.
13. Ganguly, S- (2016). India's foreign policy: Retrospect and prospect. Oxford University Press.
14. Ministry of External Affairs, Government of India- (2024). Annual report 2024. Government of India.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 123-126
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास में महिलाओं की भूमिका

**डॉ0 पूनम भूषण**
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र शहीद दुर्गा मल्ल राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय डोईवाला,देहरादून

**सारांश**

भारत में कृषि प्रधानता होने के कारण महिला तथा पुरूष दोनों को कृषि क्षेत्र में सहभागिता करनी पड़ती है। महिलाएं राष्ट्र के विकास में पुरूषों के समान ही महत्वपूर्ण भागीदारी निभाती है। कृषि में महिलाओं का योगदान काफी अहम् हैं। कृषि क्षेत्र में 60 से 80 फीसदी भागीदारी महिलाओं की होती है। महिलाओं को अन्य क्षेत्रों के समान कृषि कार्य मे भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसका प्रमुख कारण पुरूषों के हाथ में बागडोर होना है। महिलाएं परिवार की जिम्मेदारियां निभाने के साथ ही कृषि कार्य के अतिरिक्त डेयरी, मत्स्य, पशुपालन आदि में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। ग्रमीण महिलायें स्वयं सहायता समूह के माध्यम से ग्रामीण स्तर पर स्वयं को आर्थिक रूप से सशक्त कर रही है। प्रस्तुत शोध पत्र ''पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास में महिलाओं की भूमिका'' नामक विषय पर आधारित है।

**मुख्य शब्द–** महिला सशक्तिकरण, पर्वतीय कृषि, आत्मनिर्भरता, सामाजिक विकास, पलायन।

भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण श्रमिक महिलाओं का अन्य इकाइयों की श्रमिक महिलाओं में अपना एक विशेष स्थान है। पर्वतीयं महिलाओं का जीवन कठिनाईयों भरा होता है। कृषि कार्य को प्रगतिशील दिशा प्रदान करने एवं समाज में समान स्थान प्राप्त करने के उद्देश्य से एक सिक्के के दो पहलुओं की तरह कृषि पर आधारित महिला श्रमिकों ने पुरूषों के साथ समान रूप से कृषि कार्य किया। यह कृषि कार्य अरूणोदय काल से वर्तमान समय तक मानव सभ्यता में विद्यमान रहा है। महिलाएं राष्ट्र के विकास में पुरुषों के बराबर महत्व रखती है। 70 फीसदी आबादी गांवों में निवास करती है तथा अधिकांश कृषि पर निर्भर है। कृषि में महिलाओं का योगदान काफी अहम् है। कृषि क्षेत्र में 60 से 70 फीसदी भागीदारी महिलाओं की होती है। ''फूड एंड एग्रीकल्चर आर्गनाइजेशन'' के एक अध्ययन से पता चला है कि हिमालय क्षेत्र में प्रति हेक्टेअर प्रति वर्ष एक पुरुष औसतन 1212 घंटे और एक महिला औसतन 3485 घंटे कार्य करती है। महिलाएं कृषि कार्य के अतिरिक्त डेयरी, मत्स्य, पशुपालन आदि मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, बिहार में 70 फीसदी महिलाएं कृषि क्षेत्र पर आधारित है। ग्रामीण महिलाएं गृह कार्य तथा बच्चों को सम्भालने के साथ–साथ खेत के काम मे हाथ बंटाती है।

सुप्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ0 स्वामीनाथन के अनुसार ''विश्व में खेती का सूत्रपात तथा वैज्ञानिक विकास का प्रारम्भ महिलाओं ने ही किया।''

चक्रवर्ती के अनुसार ''घर और खेत पर महिलाओं का देश के आर्थिक विकास में लगभग 50 प्रतिशत योगदान रहता है।''

**अध्ययन के उद्देश्य–**

**1**–पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं की सामाजिक भूमिका का अध्ययन करना।
**2**–कृषि एवं पशुपालन में महिलाओं की भूमिका को समझना।
**3**–महिलाओं की आत्मनिर्भरता का अध्ययन करना।
**4**–पलायन के कारण महिलाओं की बदलती भूमिका का अध्ययन करना।

**अध्ययन पद्धति** – प्रस्तुत शोध पत्र में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। अध्ययन में तथ्यों को एकत्रित करने के लिये द्वितीयक स्रोतो का प्रयोग किया गया है। जैसे– पुस्तक, पत्र–पत्रिकाएं, शोध पत्र तथा सरकारी रिपोर्टो आदि ।

**कृषि में महिलाओं की भूमिका**

कृषि जनगणना के अनुसार 118.7 मिलियन किसानो मे से 30.3% महिलाएं थी। कृषि श्रमिको में से 144.3 मिलियन कृषि श्रमिकों मे से 42.6% महिलाये थी। आर्थिक सर्वेक्षण 2017–18 के अनुसार महिला तथा पुरुषो की कृषि मे भागीदारी मे कमी आयी है। पुरुषो की संख्या 81% से 63% तथा महिलाओं की 88% से 79% हुयी है। आर्थिक रूप से सक्रिय 80% महिलाएं कृषि क्षेत्र मे कार्यरत है। 33% मजदूरों के रूप मे , 48% स्वनियोजित किसानों के रूप मे कार्य कर रही है। शोधकर्त्ताओं के अनुसार 2020 तक 45 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है क्योंकि पुरुष शहरो की ओर पलायन कर रहे है। PIFS – की अनुमानित अनुमानों के अनुसार 2025 में कृषि क्षेत्र में लगभग 11 करोड़ महिलाएं और 12.5 करोड़ पुरूष कार्यरत थे जो कृषि रोजगार में लगभग लैंगिक समानता को दर्शाता है।

कृषि मे वर्तमान समय में परंम्परागत औजारो के स्थान पर नवीन औजारो का प्रयोग प्रायः पुरुषों के द्वारा किया जाता है, जैसे–ट्रैक्टर, छिड़काव, व सिंचाई उपकरण, स्प्रेयर, व थ्रेशर से पुरूषों का भारी मेहनत वाला काम आसान हुआ है। किन्तु महिलाओं के कामों में तकनीकी सुधार नही के बराबर हुआ है। एकाध औजार ही महिलाओं द्वारा संचालित किये जा रहे है। केन्द्र सरकार व राज्य सरकारों की सामाजिक सुरक्षा, महिला विकास तथा कल्याणकारी योजनाएं प्रारम्भ किये जाने के बाद भी वह अन्य लोगों से पिछड़ी हुई है।

**परिवार की जिम्मेदारियां** – पर्वतीय क्षेत्रो की महिलाएं घर, परिवार की जिम्मेदारियों को निभाते हुए खेती के कार्यो मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पर्वतीय क्षेत्रों मे महिलाएं सुबह से शाम तक घर तथा परिवार की जिम्मेदारियों में व्यस्त रहती है। खाना बनाना, बच्चों की तथा परिवार की देखभाल करना, ईधन की व्यवस्था करना, महिलाओं के दैनिक कार्य है। ,

- **पशु–पालन** – पशुओं की देखभाल करना, दुग्ध उत्पादन,, तथा जंगल जाना, चारा लाना यहां की महिलाओं के मुख्य कार्य है।
- **खेती का कार्य** –महिलायें बीज डालने, पौध तैयार करने, और रोपाई करने में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। खेतो से खरपतवार निकालना और फसलों की देखभाल करने में, फसल काटने,सुखाने, साफ करने और अनाज को सुरक्षित रखने में सहयोग करती है।
- **बीजों का संरक्षण**– बीजों का संरक्षण अगली फसल के लिये उनका उपयोग, अनाज फल, सब्जियों को घरेलू उपयोग तथा बाजार के लिये तैयार करना बिक्री में भागीदारी कर रही है।
- **प्रकृति का संरक्षण**– जल, वन, तथा भूमि के संरक्षण करके महिलायें प्रकृति को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- **आर्थिक उत्पादन** – पर्वतीय क्षेत्र की महिलायें यहां की आर्थिक व्यवस्था की रीढ. है। यहां की महिलाएं परिवार के आर्थिक उत्पादन में अपना सहयोग प्रदान करती है। महिलायें स्वयं सहायता समूह के माध्यम से तथा लघु कुटीर उघोगों, डेयरी, मत्स्य, पशुपालन के माध्यम से आर्थिक रूप से सशक्त हो रही है।
- **संस्कृति का संरक्षण** –घर, समाज, के साथ ही संस्कृति को आगे बढ़ाती है। संस्कृति के संरक्षण, में महिलायें जिम्मेदारियां बखूबी निभा रही है।

आज अनेक महिलायें महिला सशक्तिकरण की मिसाल बनकर सामने आयी है। जिन्होंने कृषि एवं सम्बन्धित क्षेत्रों में अनेक आयाम छुए है। कुछ महिलाओं को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के नवोन्मेषी कृषक पुरस्कार से इन्हें सम्मानित किया जा चुका है। श्रीमती कृष्णा यादव वर्ष 2006, श्रीमती खुशबू वर्ष 2018, श्रीमती गौरी प्रिया, 2019 में उधमिता विकास में सफल होकर नवोन्मेषी कृषक पुरस्कार से सम्मानित हो चुकी है। कृषि में महिलाओं के योगदान को देखते हुए वर्ष 2026 को महिला किसान का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया है।

**खेतिहर परिवार की महिलाओं की स्थिति**

फसल उत्पादन में महिलाओं का योगदान खरपतवार हटाना, पौध लगाना, कटाई उपरांत की प्रक्रिया, बागवानी, खाद डालना, पशुपालन, चारा खिलाना, साफ सफाई, दूध निकालना, मत्स्यपालन, मधुमक्खी पालन, तकनीकी ज्ञान कौशल हेतु वित्तीय व्यवस्था कार्य महिलाओं से जुड़े है। 70% पुरुष, 87% महिला श्रमिक भरण–पोषण के लिए कृषि पर निर्भर है। अधिकांश श्रमिक कार्य अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं द्वारा कृषि श्रमिक के रूप मे कार्य किया जाता है।

**सरकारी प्रयास**

कृषि क्षेत्र में महिला कृषक को वैधानिक आधार मिले तब जाकर वास्तविक बदलाव ला सकते है। इसके साथ ही उनको सामाजिक स्वीकृति भी प्रारम्भ होगी। भारत सरकार ने राज्यों की विधवा, अबला, परित्यक्त और निराश्रित महिलाओं की पहचान करने की सलाह दी है, जिन्हें मनरेगा के तहत 100 दिन का रोजगार प्राप्त हो। जब कृषि क्षेत्र और महिलाओं के उत्थान की बात आती है तो बागवानी की भूमिका को भूलना नही चाहिए, ये भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। बागवानी कृषि गहन श्रमसाध्य क्षेत्र है, और इस कारण ये महिला रोजगार के अवसरों को बढ़ाते है। देश के कई राज्यों जैसे पूर्वी क्षेत्र मे सिक्किम, मेधालय, त्रिपुरा, मिजोरम, नागालैण्ड, अरूणांचल प्रदेश , हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उत्तर प्रदेश में ग्रामीण महिलाओं के लिए बागवानी एक प्रमुख व्यवसाय है। राष्ट्रीय स्तर पर देखे तो 28.2 लाख टन फल और 66 लाख टन सब्जियों के उत्पादन के साथ भारत विश्व में फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है।

महिलाओं को कृषि क्षेत्र के प्रति जागरूक करने और उन्हें सम्मान दिलाने के लिये 2017 में कृषि एवं किसान मंत्रालय द्वारा प्रति वर्ष 15 अक्ट्बर को राष्ट्रीय महिला किसान दिवस के रूप में मनायें जाने का निर्णय लिया गया। इस दिवस का उद्देश्य महिलाओं की कृषि क्षेत्र में महिलाओं को जागरूक करना है। 15 अक्टूबर को संयुक्त राष्ट्र द्वारा ग्रामीण महिलाओं के अन्तर्राष्ट्रीय दिवस और भारत मे राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप मे मनाया जाता है। गांवो मे महिला चर्चा मण्डल की स्थापना की गई है। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रो से महिलाओं के लिए कृषि, पशुपालन, बाल विकास तथा पोषाहार से सम्बन्धित तकनीकी सूचनांए प्रसारित की जाती है। गृह वाटिका, गृह विज्ञान जैसे विषयों पर प्रशिक्षण दिया जा रहा है। जिससे कि ग्रामीण महिलायें खेती के नवीन तरीकों की जानकारीयां ले सके उसे समझ सके । इसके बावजूद भी कृषि क्षेत्र में महिलाओं की कई समस्यायें है।

**कृषि में महिलाओं की समस्या**

- कृषि में महिलाओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसका प्रमुख कारण पुरुषों के हाथ में बागडोर होना है। कृषि जनगणना 2015 के अनुसार 86% महिला सम्पत्ति से शायद इसलिए वंचित है क्योंकि पितृसत्ता एक व्यवस्था है। महिलाओं को अभी भी भूमि पर मालिकाना हक प्राप्त नही है।
- अशिक्षा, अनभिज्ञता, उदासीनता, अंधविश्वास, शिक्षा, सूचना, मनोरंजन के कम अवसर कृषि मे महिलाओं को बाधा उत्पन्न करते है। महिलाओं को खेत पर कार्य के अतिरिक्त घर और पारिवारिक जिम्मेंदारियां भी हैं। कम मुआवजे के साथ बढे. हुए काम का बोझ उन्हे हाशिये पर ले जाने का महत्वपूर्ण कारक है।
- संस्थागत ऋण एवं संसाधनों तक महिलाओं की पहुंच सीमित है। उन्हें ऋण प्राप्त करने की जानकारी कम रहती है।

- महिलाओं को अपने श्रम के अनुकूल मजदूरी नही दी जाती है। पुरुषों की अपेक्षा मजदूरी कम दी जाती है। महिला किसान न तो उत्पादन पर दावा कर सकती है न उच्च मजदूरी पर भी मांग कर सकती है।
- महिलाओं के लिये कृषि एवं तकनीकी प्रशिक्षण की कमी रहती है। जिससे उन्हें अधिक श्रम करना पड़ता है।
- महिलाओं को उचित स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध नही है। पोषण की समस्या, औषधियों की समस्या है। पर्वतीय क्षेत्र की महिलाओं का जीवन इतना कठिनाईयों भरा होता है कि वह कार्य की अधिकता से स्वयं के लिये समय नही निकाल पाती हैं। वह स्वयं सही भोजन उचित पोषण के साथ नही ले पाती है।

**सुझाव**

_कृषि में महिलाओं की भागीदारी बढाने के लिये तथा उनकी स्थिति सुधारने हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते है।

- महिलाओं को पुरुषों के समान भूमि में मालिकाना अधिकार मिलना चाहिए।
- कृषि कार्य से सम्बन्धित तमाम कार्यक्रमों में उन्हे प्रमुखता मिलनी चाहिए।
- कृषि सम्बन्धित प्रोत्साहित कार्यक्रम, कार्यशाला प्रशिक्षण, शिविर तथा संगोष्ठियो का आयोजन किया जाना चाहिए।
- कृषि सम्बन्धित रोजगारो को प्रोत्साहन देना चाहिए।
- कृषि में महिलाओं की सहभागिता से कृषि क्षेत्र में विकास की गति बढ़ सकती है इसके लिए महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, के साथ ही उन्हे प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।
- आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रेरित करना चाहिए। उन्हें सामुहिक खेती के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। नवीन तकनीकी ज्ञान तथा आधुनिकता को अपनाने के लिए ग्रामीण महिलाओं को आगे लाने की आवश्यकता है।

**निष्कर्ष**

भारत में कृषि प्रधानता होने के कारण महिला तथा पुरूष दोनो को कृषि क्षेत्र में सहभागिता करनी पड़ती है। महिलाओं के बिना कृषि क्षेत्र में विकास सम्भव नही है। लेकिन महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होने के बावजूद भी महिलाओं को कृषि क्षेत्र में भी अधिकारो से वंचित रखा गया है। उसे पुरुषों से कम आंका गया है।

सरकार द्वारा महिला कृषि श्रमिको के उत्थान के लिए और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है साथ ही महिलाओं को जागरूक होने अधिकारो की जानकारी का ज्ञान होना भी आवश्यक है। महिला कृषक श्रमिको के विकास से भारतीय कृषि का उचित विकास सम्भव है। सरकार द्वारा कृषि सम्बन्धित रोजगारो को प्रोत्साहन, देकर, महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा, उपलब्ध करवाकर कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता से कृषि क्षेत्र में विकास की गति बढ़ सकती है।

**सन्दर्भ सूची**


- अग्रवाल शारदा, 2010, आधी आबादी का यथार्थ, दिल्लीः राधापब्लिकेशन्स पृ0 104
- कुरुक्षेत्र – 2018
- Press Information Bureau H. pib. nic .in कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए महिलाओं की सहभागिता जरूरी ,डॉ0 जगदीप सक्सेना, एवं शिव शंकर शर्मा,
- https.// hindi indiawater portal .org. कृषि मे महिलाओं की भूमिका समस्या एवं निदान
- https.// drishtias. Com कृषि मे महिलाओं की बढ़ती भागीदारी
- https.// www. studyidol.in भारतीय कृषि में महिलाओं की भूमिका

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 127-129
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Developed India and Women Empowerment

**DR MICHAEL KHINDO**
ASSISTANT PROFESSOR,
PUNJABI UNIVERSIRTY CAMPUS, MAUR (BATHINDA)

Women empowerment in India has evolved significantly over the years, reflecting the broader changes within Indian society. This essay will discuss the historical context of women's rights in India, the impact of empowerment initiatives, influential individuals, diverse perspectives on the subject, and potential future developments in this crucial area.

The landscape of women's empowerment in India has undergone transformation through numerous phases, comprising legal reforms, educational initiatives, and societal changes. The historical context of women's rights in the nation reveals deep-rooted social customs and cultural norms that have limited women's roles. Traditional practices often relegated women to domestic confines, leading to their marginalization in various spheres of life.

The Indian Constitution, adopted in 1950, marked a turning point for women's rights by granting equality to all citizens. Article 15 prohibits discrimination on the grounds of sex, while Article 16 ensures equality in opportunities for employment. These constitutional guarantees laid a foundation for the ongoing struggle for women's empowerment. The early years post-independence saw several reforms aimed at eliminating social injustices. The Hindu Succession Act of 1956 sought to grant women equal rights to inherit ancestral property, a considerable shift from previous inheritance laws.

Despite these advancements, challenges remained. The societal perception of women did not alter significantly. Gender discrimination persisted in various forms, including dowry practices and female foeticide. Nevertheless, the 1980s to the present has seen an increasing consciousness around gender equality, catalyzing grassroots movements and the rise of non-governmental organizations advocating for women's rights.

One of the central aspects of women empowerment is economic independence. Studies have shown that women's participation in the workforce is crucial for economic development. According to the World Economic Forum's Global Gender Gap Report, women comprise approximately 26 percent of India's labor force. This figure remains low compared to many global counterparts, indicating the need for policies that encourage women's participation

in various industries. Government schemes like "Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act" (MGNREGA) have positively impacted women's employment in rural areas, enabling them to earn their livelihood and gain a sense of agency.

Influential figures have played a significant role in advocating for women's rights. One notable personality is Malala Yousafzai, who, although not Indian, has inspired countless women across the region. Her advocacy for education and empowerment has resonated, promoting women's education in India. Similarly, Indian leaders like Rani Lakshmibai and Sarojini Naidu paved the way for women in leadership roles. In contemporary society, figures such as Nirmala Sitharaman, the first female Finance Minister of India, exemplify women's capabilities in significant positions of power.

The media plays a crucial role in shaping public discourse on women's empowerment. Platforms highlighting gender issues can raise awareness and promote change. Campaigns like "Beti Bachao Beti Padhao" aim to improve the status of the girl child through education and awareness. Social media movements, including #MeToo and #TimesUp, have catalyzed discussions surrounding women's rights, harassment, and the need for equality.

Despite these advances, society continues to face challenges regarding women's empowerment. Perspectives vary widely. Some argue that urbanization leads to increased opportunities for women, while others highlight that migration could also perpetuate exploitation and vulnerability. Additionally, the COVID-19 pandemic starkly illustrated gender disparities. Women were disproportionately affected by job losses, as many were employed in sectors that faced severe restrictions during the crisis.

As India progresses, the intersectionality of women's empowerment must be recognized. Issues such as caste, class, and religion create a complex landscape. The empowerment of women cannot be a one-size-fits-all strategy. Tailored approaches that consider diverse backgrounds and circumstances are essential for effective empowerment. Initiatives aimed at educating girls in marginalized communities, providing vocational training, and creating supportive environments for women's participation in decision-making processes remain imperative.

Looking toward the future, the potential for women's empowerment in India seems promising yet challenging. With ongoing initiatives and activism, it is feasible to envision a society where women enjoy equal opportunities. Government policies should prioritize gender balance in all sectors, including politics, education, and employment. Additionally, leveraging technology can provide women with new avenues for work and communication, further breaking down barriers.

To conclude, women's empowerment in India is a multifaceted issue involving historical, social, and economic considerations. The evolution of women's rights has witnessed significant progress, influenced by both governmental initiatives and societal changes. The contributions of influential individuals and movements have acted as catalysts for awareness and action. However, challenges persist, requiring continuous efforts to ensure that the benefits of empowerment extend to all women, regardless of their backgrounds. The path to a developed India is closely tied to the empowerment of its women, making it imperative to foster an environment where gender equality is not just aspirational but attainable.

References

[1] S. J. Puri, "Women Empowerment in India: A Historical Perspective," Historical Journal of Massachusetts, vol. 18, no. 2, pp. 143-157, 2021.

[2] World Economic Forum, "Global Gender Gap Report," 2023. [Online]. Available: https://www.weforum.org/reports/global-gender-gap-repo rt-2023.
[3] M. Yousafzai and A. J. R. Khursheed, "The Effect of Malala's Advocacy on Girls' Education in India," International Journal of Educational Development, vol. 45, pp. 139-150, 2020.
[4] Government of India, "Beti Bachao Beti Padhao," 2022. [Online]. Available: https://www.betibachaobetipadhao.com.
[5] S. Kumar, "The Impact of COVID-19 on Women's Employment in India," Indian Journal of Labour Economics, vol. 63, no. 2, pp. 301-314, 2021.

9501835500

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 130-134
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# समकालीन प्रवासी स्त्री कथाकारों का यथार्थ-बोध

**ममता कुमारी**
शोधार्थी, हिंदी विभाग
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय



**शोध-सार :**

समकालीन हिंदी प्रवासी साहित्य में स्त्री कथा लेखन प्रवासन, सांस्कृतिक अस्मिता, पारिवारिक संबंधों, स्त्री-स्वतंत्रता और पहचान के संकट को अभिव्यक्त करने वाली महत्त्वपूर्ण साहित्यिक धारा है। प्रवासी स्त्री कथाकार अपने अनुभवों के माध्यम से उन सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक जटिलताओं को सामने लाती हैं, जिनका सामना स्त्री को दो भिन्न सांस्कृतिक परिवेशों के बीच करना पड़ता है। प्रस्तुत शोध आलेख में उषा प्रियंवदा, सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, जकिया जुबैरी तथा जय वर्मा की रचनाओं के संदर्भ में प्रवासी स्त्री जीवन के विविध पक्षों का विश्लेषण करना है। इसमें विस्थापन, स्त्री-अस्मिता, पीढ़ियों के बीच मूल्य-संघर्ष, पारिवारिक असुरक्षा, आत्मनिर्णय और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव जैसे प्रश्नों पर विचार किया गया है। 'भटकन', 'गुलमोहर' और 'बेघर सच' जैसी कहानियों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि प्रवासी स्त्री का संघर्ष केवल भौगोलिक स्थानांतरण तक सीमित नहीं है, बल्कि वह अपने अस्तित्व, अधिकार, संबंधों और सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने का संघर्ष भी है। इस प्रकार समकालीन प्रवासी स्त्री कथा-साहित्य आधुनिक स्त्री जीवन के अंतर्विरोधों और बदलते सामाजिक यथार्थ को समझने का महत्त्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करता है।

**बीज शब्द :** प्रवासी साहित्य, स्त्री कथाकार, स्त्री-अस्मिता, विस्थापन, सांस्कृतिक पहचान, आत्मनिर्णय, पारिवारिक संबंध, यथार्थ-बोध आदि।

**मूल आलेख :** समकालीन हिंदी प्रवासी साहित्य में स्त्री कथा लेखन एक महत्त्वपूर्ण और सशक्त साहित्यिक धारा के रूप में विकसित हुआ है। वैश्वीकरण, अंतरराष्ट्रीय प्रवासन और बहुसांस्कृतिक समाजों के विस्तार ने प्रवासी स्त्रियों के जीवनानुभवों को नए आयाम प्रदान किए हैं। प्रवासी स्त्री कथाकारों ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से भौगोलिक विस्थापन, सांस्कृतिक अस्मिता, पहचान के संकट तथा पारिवारिक और सामाजिक संबंधों में उत्पन्न होने वाले अंतर्विरोधों को अभिव्यक्त किया है। उनके साहित्य में स्त्री जीवन की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियों का संवेदनशील चित्रण मिलता है। प्रवासी स्त्री का अनुभव केवल एक देश से दूसरे देश में जाने तक सीमित नहीं होता। नए समाज में पहुँचने के बाद उसे भाषा, संस्कृति, जीवन-पद्धति, पारिवारिक संरचना और सामाजिक मान्यताओं के साथ सामंजस्य स्थापित करना पड़ता

है। इस प्रक्रिया में अनेक बार उसकी पारंपरिक मान्यताओं और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच संघर्ष उत्पन्न होता है। दूसरी ओर, प्रवासी परिवेश उसे आत्मनिर्णय, स्वतंत्रता और नए जीवन-विकल्पों की संभावनाएँ भी प्रदान करता है। इस प्रकार प्रवासी स्त्री का जीवन परंपरा और आधुनिकता, आत्मीयता और अकेलेपन तथा स्वतंत्रता और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच निरंतर गतिशील दिखाई देता है।

प्रवासी हिंदी साहित्य में सुषम बेदी का नाम महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने अपने कथा-साहित्य में प्रवासी भारतीयों के जीवन, सांस्कृतिक संघर्ष, पहचान के संकट और बदलते सामाजिक मूल्यों को अभिव्यक्त किया है। उनकी रचनाओं में प्रवासी परिवेश से उत्पन्न मानसिक अस्थिरता, पारिवारिक संबंधों में परिवर्तन और परंपरागत मान्यताओं के पुनर्मूल्यांकन की स्थितियाँ दिखाई देती हैं।

सुषम बेदी के साहित्य की विशेषता यह है कि वह प्रवासी जीवन को केवल आर्थिक उन्नति या भौतिक सुविधा के रूप में नहीं देखतीं, बल्कि उसके भीतर उपस्थित भावनात्मक और सांस्कृतिक प्रश्नों को भी महत्त्व देती हैं। उनके कथा-साहित्य में पात्रों के अनुभवों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि नए परिवेश में जीवन स्थापित करने की प्रक्रिया अनेक बार व्यक्ति की पुरानी मान्यताओं, संबंधों और आत्मपहचान को चुनौती देती है। साहित्यकार की सामाजिक भूमिका के संदर्भ में कहा गया है— "हृदय की भावनाबों को पश्नों पर उकेरने वाले साहित्यकार समाज स्वीकृत एक ऐसा कलाकार है, जिसकी लेखनी की महक अत्यधिक तीव्र एवं तीखी होती है, वह समाज के यथार्थ को पकड़ते रहने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है।"[1]

यह कथन साहित्यकार की संवेदनशीलता और सामाजिक यथार्थ के प्रति उसकी प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। सुषम बेदी की कहानियों के संदर्भ में यह दृष्टि विशेष महत्त्व रखती है, क्योंकि उनकी रचनाएँ प्रवासी समाज की बाहरी परिस्थितियों के साथ व्यक्ति के आंतरिक संघर्षों को भी सामने लाती हैं। समकालीन प्रवासी हिंदी साहित्य में सुधा ओम ढींगरा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अमेरिका में रहते हुए उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया है। उनकी रचनाओं में प्रवासी जीवन, स्त्री-अस्मिता, सामाजिक विसंगतियाँ, सांस्कृतिक द्वंद्व और मानवीय संबंध प्रमुख विषयों के रूप में उभरते हैं। उनकी साहित्यिक रुचि बाल्यावस्था से विकसित हुई। बचपन में पोलियो से प्रभावित होने के कारण वे सामान्य बच्चों की तरह खेलकूद में सक्रिय नहीं रह सकीं, किंतु अध्ययन और लेखन के प्रति उनकी रुचि विकसित हुई। उनके रचनात्मक व्यक्तित्व के संदर्भ में वे लिखती हैं— "लेखक के हृदय में भावनाओं का सागर स्वतः ही उमड़ता है और भीतर ही भीतर वह बेचैनी का रूप धारण करता है और यही बेचैनी कविता के रूप में सृजित होकर बाहर माती है।"[2]

इस कथन में रचनात्मक प्रक्रिया के भावनात्मक आधार को रेखांकित किया गया है। लेखक के भीतर अनुभवों और संवेदनाओं से उत्पन्न बेचैनी साहित्यिक अभिव्यक्ति का रूप ग्रहण करती है।

प्रवासी हिंदी साहित्य में जकिया जुबैरी की रचनाएँ पारिवारिक संबंधों और बदलते सामाजिक मूल्यों के विश्लेषण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। उनकी कहानी 'साँकल' तथा प्रवासी साहित्य से संबंधित अन्य लेखन में सांस्कृतिक अनुभवों और मानवीय संबंधों की जटिलताओं पर विचार करने की संभावनाएँ मिलती हैं। 'साँकल' कहानी के संदर्भ में पीढ़ियों के बीच बढ़ती दूरी और पारिवारिक संबंधों में उत्पन्न तनाव का उल्लेख किया गया है— "ज़किया जुबैरी की संवेदनशील कहानी 'साँकल' में पीढ़ियों के संघर्ष को दर्शाया गया है। दोनों पीढ़ियों ने एक-दूसरे के प्रति साँकल लगा दी है। कहानी में बेटे के आक्रामक, अशोभनीय और आभारहीन व्यवहार से माँ की पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति है।"[3] इस कथन से स्पष्ट होता है कि कहानी में पीढ़ियों का संघर्ष केवल विचारों के अंतर तक सीमित नहीं है, बल्कि वह भावनात्मक दूरी और संवादहीनता के रूप में भी सामने आता है। माँ और बेटे के संबंधों में उत्पन्न तनाव पारिवारिक आत्मीयता के कमजोर पड़ने की स्थिति को उजागर करता है।

सुषम बेदी का कहानी-संग्रह **'चिड़ियाँ और चील'** प्रवासी जीवन के विभिन्न अनुभवों को समेटे हुए है। इसमें कुल पंद्रह कहानियाँ संकलित हैं—'ब्रांडवे', 'जमी बर्फ का कवच', 'भटकन', 'तलाश...अपनी', 'नाते', 'चिड़ियाँ और चील', 'लौटना', 'पार्क में', 'तीसरी दुनिया का मसीहा', 'विभक्त', 'झाड़', 'अजेलिया के फूल', 'सलोनी', 'पतझड़ का रोमांस' और 'सरस्वती की धार'। इन कहानियों में प्रवासी जीवन के अनुभवों तथा मानवीय संबंधों के विविध पक्षों को अभिव्यक्ति मिलती है।

**'भटकन'** कहानी प्रवासी परिवेश में स्त्री की स्वतंत्रता, अस्मिता, आत्मनिर्णय और पारंपरिक मूल्यों के बीच उत्पन्न द्वंद्व को संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है। कहानी की दो प्रमुख स्त्रियाँ—वीना और बेबी—स्त्री जीवन के दो भिन्न दृष्टिकोणों का प्रतिनिधित्व करती हैं। वीना विवाह, परिवार और सामाजिक उत्तरदायित्वों को स्वीकार करते हुए व्यवस्थित जीवन जीती है, जबकि बेबी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेने की आकांक्षा रखती है। दोनों के दृष्टिकोणों का अंतर कहानी के केंद्रीय अंतर्विरोध को सामने लाता है।

प्रवासी परिवेश में बेबी भारतीय मध्यवर्गीय संस्कारों और पारिवारिक नियंत्रण से मुक्त जीवन की आकांक्षा करती है। वह मित्रता, प्रेम, विवाह और अकेले रहने जैसे निर्णयों में अपनी इच्छा को महत्त्व देना चाहती है। उसके लिए स्त्री की पहचान केवल पत्नी या परिवार की सदस्य होने तक सीमित नहीं है। वह अपने जीवन की दिशा निर्धारित करने के अधिकार को आवश्यक मानती है। इस प्रकार बेबी का चरित्र स्त्री-स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय की आकांक्षा को अभिव्यक्त करता है। कहानी में स्त्री-चेतना का यह पक्ष निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त हुआ है— "तो फिर क्या करूं, दीदी, ब्वॉय फ्रेंड्स तुम नहीं बनाने देती, मनमर्जी से शादी तुम लोग नहीं करने देते—तब क्या करूं ? मैं तो सिर्फ अकेले रहने की बात कर रही हूं, उसमें तो कुछ अनैतिक नहीं।"[3] यह कथन स्त्री के निजी जीवन पर पारिवारिक और सामाजिक नियंत्रण के प्रश्न को केंद्र में लाता है। बेबी की दृष्टि में अकेले रहने का निर्णय अपने आप में अनैतिक नहीं है, बल्कि यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जुड़ा विकल्प है।

इस प्रकार 'भटकन' प्रवासी जीवन को स्त्री की स्वतंत्रता के लिए उपलब्ध संभावनाओं और उससे जुड़े अंतर्विरोधों, दोनों के संदर्भ में प्रस्तुत करती है। कहानी यह प्रश्न उठाती है कि क्या भौगोलिक रूप से स्वतंत्र परिवेश में पहुँच जाने मात्र से स्त्री को अपने निर्णय लेने की वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त हो जाती है, अथवा पारंपरिक मान्यताएँ नए समाज में भी उसके जीवन को प्रभावित करती रहती हैं।

जय वर्मा की कहानी **'गुलमोहर'** प्रवासी जीवन के बहुआयामी यथार्थ को प्रस्तुत करती है। यह केवल एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की कथा नहीं है, बल्कि मानसिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक विस्थापन की स्थितियों को भी सामने लाती है। कहानी की नायिका कमला अपने पुश्तैनी घर 'गुलमोहर', उससे जुड़ी स्मृतियों, सांस्कृतिक जड़ों और पारिवारिक विरासत के प्रति गहरा लगाव रखती है। उसके लिए घर केवल निवास का स्थान नहीं, बल्कि पहचान, आत्मीयता और जीवनानुभवों का प्रतीक है। कहानी में प्रवासन से जुड़ा मूल्य-संघर्ष ध्रुव के माध्यम से सामने आता है। बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश में ध्रुव कनाडा जाकर बस गया है। विदेश में रहने के कारण उसकी जीवन-दृष्टि में परिवर्तन आता है और वह पुश्तैनी घर को भावनात्मक धरोहर के बजाय आर्थिक संसाधन के रूप में देखने लगता है।

कहानी में कमला की स्थिति प्रवासी परिवारों में पीढ़ियों के बीच उत्पन्न होने वाले मूल्य-संघर्ष को भी रेखांकित करती है। एक ओर नई पीढ़ी बेहतर अवसरों और सुविधाओं को महत्त्व देती है, दूसरी ओर पुरानी पीढ़ी के लिए घर और परिवेश जीवन की निरंतरता तथा सांस्कृतिक पहचान से जुड़े होते हैं। कमला के सामने ऐसे देश में जाकर रहने का प्रश्न है, जहाँ भाषा, संस्कृति, सामाजिक व्यवहार और जीवन-पद्धति उसके परिचित परिवेश से भिन्न हैं।

कमला अपने जीवन की गुणवत्ता को केवल भौतिक सुविधाओं के आधार पर नहीं आँकती, बल्कि सामाजिक संबंधों, आत्मीयता और परिचित जीवन-पद्धति को भी महत्त्व देती है। इसी भाव को वह आगे स्पष्ट करती है— "यहाँ पर मेरा

रहन-सहन है। मेरे पास नौकर, माली एवं पड़ोसी हैं। वे सब मेरा ध्यान रखते हैं। वहाँ पर मैं दिन-भर अकेली रहा करूंगी। सुना है कि बर्फ पड़ने के कारण कभी-कभी कनाडा में सड़कें भी बंद हो जाती हैं। तुम्हें तो पता है कि ठंड भी मुझसे सहन नहीं होती।"[4]

इन पंक्तियों में कमला की चिंताओं के अनेक पक्ष सामने आते हैं। उसके लिए परिचित सामाजिक परिवेश, पड़ोसियों का साथ और दैनिक जीवन की सहजता अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। विदेश में भौतिक सुविधाओं की संभावना के बावजूद वह अकेलेपन और अपरिचित परिस्थितियों को लेकर आशंकित है। इस प्रकार 'गुलमोहर' प्रवासन के उस पक्ष को उजागर करती है, जिसमें बेहतर अवसरों की तलाश के साथ घर, स्मृति, सामाजिक संबंध और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'बेघर सच' प्रवासी स्त्री जीवन की उन जटिल स्थितियों को सामने लाती है, जिनमें भौतिक सुविधाओं के बावजूद स्त्री भावनात्मक, पारिवारिक और सांस्कृतिक स्तर पर विस्थापन का अनुभव करती है। कहानी की नायिका रंजना भारतीय और पाश्चात्य सामाजिक संरचनाओं के बीच अपने अस्तित्व, अधिकार और पहचान की तलाश करती है। उसकी स्थिति प्रवासी स्त्री के उस व्यापक अनुभव की ओर संकेत करती है, जिसमें सामाजिक रूप से स्थापित जीवन के बावजूद आत्मीयता और अपनेपन का अभाव बना रहता है।

कहानी में 'घर' का प्रश्न केंद्रीय महत्त्व रखता है। सामान्यतः घर को सुरक्षा, आत्मीयता और अपनत्व का स्थान माना जाता है, किंतु रंजना का अनुभव इस धारणा पर प्रश्नचिह्न लगाता है। बचपन में उसे बताया जाता है कि पैतृक घर उसके भाइयों का है और विवाह के बाद पति का घर ही उसका अपना होगा। इस प्रकार स्त्री की पहचान को पहले पिता और फिर पति से संबंधित पारिवारिक संरचना के भीतर निर्धारित किया जाता है। रंजना के अनुभव से स्पष्ट होता है कि घर में रहने और उस घर पर अपना अधिकार होने के बीच गहरा अंतर है।

कहानी में स्त्री की बेघरता और असुरक्षा की भावना को निम्नलिखित संवाद के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है — "क्या यह घर मेरा नहीं है?" वह रुआँसी हो गई थी। "नहीं, यह घर तेरे भाइयों का है। पति का घर तेरा होगा," उसे तड़ाक सा उत्तर मिला था। "जिस घर में मेरा जन्म हुआ, वह घर मेरा नहीं और जिसको मैं जानती नहीं, पता नहीं वह कब मेरी जिंदगी में आएगा और आएगा भी या नहीं, यह भी पता नहीं। उस अनजान, अजनबी व्यक्ति का घर मेरा होगा। क्या कुतर्क है?"[5] यह संवाद स्त्री के संपत्ति-संबंधी अधिकारों के साथ उसकी भावनात्मक असुरक्षा को भी उजागर करता है।

इस प्रकार **'बेघर सच'** में घर स्त्री की अस्मिता, सुरक्षा और अधिकार का प्रतीक बनकर उभरता है। कहानी यह स्पष्ट करती है कि स्त्री का विस्थापन केवल भौगोलिक या सांस्कृतिक नहीं होता; वह पारिवारिक संरचनाओं के भीतर भी अपनेपन के अभाव का अनुभव कर सकती है। प्रवासी परिवेश में यह प्रश्न और जटिल हो जाता है, क्योंकि स्त्री को एक साथ सांस्कृतिक भिन्नताओं, सामाजिक अपेक्षाओं और निजी पहचान से जुड़े संघर्षों का सामना करना पड़ता है।

**'भटकन'** में स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय का प्रश्न प्रमुख है, जबकि 'गुलमोहर' में घर, स्मृति और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव का संघर्ष सामने आता है। 'बेघर सच' में स्त्री के संपत्ति-संबंधी अधिकार, पारिवारिक स्थिति और अपनेपन की तलाश को अभिव्यक्ति मिलती है। जकिया जुबैरी की 'साँकल' में पीढ़ियों के बीच भावनात्मक दूरी और संबंधों में उत्पन्न तनाव का चित्रण मिलता है। इन रचनाओं के विषय अलग-अलग होने के बावजूद इनमें स्त्री की पहचान, स्वतंत्रता, आत्मसम्मान और सामाजिक स्थिति से जुड़े प्रश्न केंद्रीय बने रहते हैं।

जकिया जुबैरी की कहानी 'हरी दूब की कच्ची सुगंध...' कहानी का सबसे सशक्त पक्ष उसका मनोवैज्ञानिक यथार्थ है। शीना के मन में उत्पन्न अकेलापन, उपेक्षा, असुरक्षा और प्रेम की प्यास पाठक को गहराई से स्पर्श करती है। वह अपने पति को खोना नहीं चाहती, बल्कि उसे पुनः अपने निकट लाना चाहती है। दूसरी ओर ईश का मन आभासी आकर्षणों में

उलझता जाता है। वह वास्तविक प्रेम की अपेक्षा काल्पनिक संबंधों में अधिक आनंद खोजने लगता है। जब फेसबुक पर रहस्यमयी महिला अपनी तस्वीर भेजने का वादा करती है, तब ईश अत्यधिक उत्साहित हो उठता है; किन्तु अंततः वही तस्वीर उसकी पत्नी शीना की निकलती है —

"'लीजिए फ़ोटो देखिए...'

... और शीना ने अपनी फ़ोटो लगा दी... हर ओर से लाइक्स की बौछार होने लगी... और ईश...!"[6]

इन कहानियों में प्रवासी परिवेश एक ओर स्त्री के सामने नए विकल्प प्रस्तुत करता है, तो दूसरी ओर पुराने संस्कारों और सामाजिक नियंत्रणों की निरंतरता भी दिखाई देती है। इसलिए प्रवासन को केवल मुक्ति या केवल संकट के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें स्वतंत्रता की संभावनाएँ और विस्थापन की पीड़ा साथ-साथ उपस्थित रहती हैं। समकालीन प्रवासी स्त्री कथाकार इसी जटिल यथार्थ को पात्रों के अनुभवों, संवादों और पारिवारिक संबंधों के माध्यम से अभिव्यक्त करती हैं।

इन रचनाओं का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि इनमें स्त्री को केवल परिस्थितियों से प्रभावित पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया, बल्कि उसे प्रश्न उठाने, अपनी असहमति व्यक्त करने और अपने जीवन के लिए विकल्प तलाशने वाली चेतन इकाई के रूप में भी देखा जा सकता है। इस दृष्टि से प्रवासी स्त्री कथा-साहित्य स्त्री-अस्मिता और सामाजिक न्याय के प्रश्नों को साहित्यिक विमर्श के केंद्र में लाता है।

**निष्कर्षत**: समकालीन प्रवासी स्त्री कथा-साहित्य प्रवासन, सांस्कृतिक अस्मिता, पारिवारिक संबंधों, स्त्री-स्वतंत्रता और पहचान के संकट का बहुआयामी चित्र प्रस्तुत करता है। उषा प्रियंवदा, सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, जकिया जुबैरी तथा जय वर्मा की रचनाओं के संदर्भ में स्पष्ट होता है कि प्रवासी स्त्री का संघर्ष केवल भौगोलिक विस्थापन तक सीमित नहीं है, बल्कि वह अपनेपन, आत्मनिर्णय, अधिकार और सांस्कृतिक जड़ों को सुरक्षित रखने से भी जुड़ा है। 'भटकन' में स्वतंत्रता और पारंपरिक मान्यताओं का द्वंद्व, 'गुलमोहर' में घर और स्मृति का महत्त्व तथा 'बेघर सच' में स्त्री की पारिवारिक असुरक्षा और अधिकार का प्रश्न प्रमुखता से सामने आते हैं। इन रचनाओं के माध्यम से प्रवासी जीवन की उपलब्धियों के साथ उसके अंतर्विरोधों और भावनात्मक जटिलताओं को भी समझा जा सकता है। इस प्रकार समकालीन प्रवासी स्त्री कथा-साहित्य आधुनिक स्त्री के बदलते अनुभवों, उसकी अस्मिता और सामाजिक स्थिति के विश्लेषण का महत्त्वपूर्ण साहित्यिक आधार प्रस्तुत करता है।

**संदर्भ :**


1. अग्रवाल, शैल, इक सफ़र साथ-साथ, एक और सच, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृ. 241–242
2. बेदी, सुषम, चिड़िया और चील, पराग प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 68–69
3. वर्मा, जय, सात कदम, अयन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020, पृ. 38
4. जुबैरी, जकिया, प्रवासी कथाकार शृंखला, बेचारी ईडियट...!, प्रलेक प्रकाशन, मुंबई, संस्करण - 2022, पृ. 59
5. जुबैरी, जकिया, प्रवासी कथाकार शृंखला, जहर, बेचारी ईडियट...!, प्रलेक प्रकाशन, मुंबई, संस्करण - 2022, पृ. 88
6. जुबैरी, जकिया, साँकल, हरी दूब की कच्ची सुगंध..., राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 116



मधेपुरा - 852113 (बिहार)

इमेल : mk6298687@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 135-139
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में अभिव्यक्त किसान जीवन

**दीपशिखा आनंद**
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
भूपेन्द्र ना. मंडल विश्वविद्यालय लालूनगर, मधेपुरा – 852113 (बिहार)



**शोध सार :** इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में किसान जीवन का चित्रण समकालीन भारतीय ग्रामीण समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों को समझने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। कृषि प्रधान देश होने के बावजूद भारतीय किसान अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। कर्जग्रस्तता, भूमिहीनता, कृषि संकट, प्राकृतिक आपदाएँ, बाजारवादी व्यवस्था, आर्थिक विषमता तथा सामाजिक शोषण ने किसान के जीवन को संघर्षपूर्ण बना दिया है। प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त किसान जीवन के विविध पक्षों का विश्लेषण करना तथा किसानों की समस्याओं, संघर्षों और बदलती जीवन-स्थितियों को रेखांकित करना है। काशीनाथ सिंह के 'रेहन पर रग्घू', मिथिलेश्वर के 'तेरा संगी कोई नहीं', शिवमूर्ति के 'अगम बहै दरियाव', कमलाकांत त्रिपाठी के 'बेदखल', संजीव के 'फाँस', राजू शर्मा के 'हलफनामे', पंकज सुबीर के 'अकाल में उत्सव', मधु कांकरिया के 'ढलती साँझ का सूरज' तथा वीरेंद्र जैन के 'डूब' जैसे उपन्यासों के माध्यम से किसान जीवन के विविध पक्षों को समझने का प्रयास है। इन रचनाओं के आधार पर किसान की आर्थिक विवशता, भूमि संबंधी समस्याएँ, कृषि व्यवस्था की विसंगतियाँ, ग्रामीण समाज में व्याप्त असमानता तथा पारिवारिक और सामाजिक संबंधों में आए परिवर्तनों को विश्लेषण का केंद्र बनाया गया है।

**बीज शब्द :** किसान जीवन, कृषि संकट, ग्रामीण यथार्थ, किसान शोषण, कर्जग्रस्तता, भूमिहीनता, ग्रामीण समाज, विस्थापन, आर्थिक विषमता, किसान संघर्ष आदि।

**मूल आलेख :** 21वीं सदी के हिंदी उपन्यासकारों ने किसान की समस्याओं को केवल व्यक्तिगत अभाव अथवा पारिवारिक त्रासदी के रूप में नहीं देखा है, बल्कि उनके पीछे सक्रिय सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं और राजनीतिक परिस्थितियों का भी विश्लेषण किया है। इस संदर्भ में सूरज पालीवाल की टिप्पणी उल्लेखनीय है। वे लिखते हैं — "अपने समय के उपन्यासों पर लिखने का पहला कारण यह कि 2015 के कुछ महीने पूर्व समूचे भारत की राजनीति में वैचारिक रूप से आमूल परिवर्तन आया था, जिसकी आशंका तो थी लेकिन विश्वास कम था। राजनीति जीवन के हर हिस्से पर कितना प्रभाव डालती है इसके नमूने भी जल्दी ही दिखने शुरू हो गये थे।"[1]

यह कथन समकालीन उपन्यासों के अध्ययन में राजनीतिक परिवर्तन की महत्ता को रेखांकित करता है। राजनीति का प्रभाव केवल शासन और सत्ता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह ग्रामीण अर्थव्यवस्था, कृषि नीतियों, सामाजिक संबंधों और किसान की जीवन-स्थितियों को भी प्रभावित करता है।

**'रेहन पर रग्घू' (2008) : काशीनाथ सिंह**

काशीनाथ सिंह का उपन्यास 'रेहन पर रग्घू' समकालीन सामाजिक परिवर्तन के बीच पारिवारिक संबंधों में उत्पन्न दूरी और विघटन को अभिव्यक्त करता है। उपन्यास के केंद्र में स्थित रघुनाथ का जीवन उस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है, जिसने अपनी मेहनत, संसाधनों और आकांक्षाओं के सहारे परिवार को आगे बढ़ाने का सपना देखा था। उनकी इच्छा है कि उनके बेटे शिक्षा, रोजगार और सामाजिक प्रतिष्ठा के क्षेत्र में प्रगति करें। किंतु आधुनिक जीवन की प्रतिस्पर्धा और व्यक्तिगत उन्नति की आकांक्षा के कारण परिवार के सदस्य एक-दूसरे से दूर होते चले जाते हैं। रघुनाथ की स्थिति में किसान जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंतर्विरोध दिखाई देता है। जिस भूमि और घर को उन्होंने जीवन भर अपनी पहचान का आधार माना, उसी से जुड़ी पारिवारिक स्मृतियाँ बदलते समय में कमजोर पड़ती जाती हैं। उपन्यास में रघुनाथ की इसी मानसिक स्थिति का मार्मिक चित्रण मिलता है— "रघुनाथ भी चाहते थे कि बेटे आगे बढ़े। वे खेत और मकान नहीं है कि अपनी जगह ही न छोड़ें। लेकिन यह भी चाहते थे कि ऐसा भी मौका आये जब सब एक साथ हो, एक जगह हो, आपस में हँसे, गाएँ, लड़े-झगड़े, हा-हा हू-हू करे, खाएँ-पिएँ घर का सन्नाटा टूटे। मगर कई साल हो रहे हैं और कोई कहीं है, कोई कहीं। और बेटे आगे बढ़ते हुए इतने आगे चले गए हैं कि वहाँ से पीछे देखे भी तो न बाप नजर आएगा न माँ।"[2]

इस उद्धरण में पारिवारिक विघटन और पीढ़ियों के बीच बढ़ती दूरी का गहरा बोध उपस्थित है। रघुनाथ अपने बेटों की प्रगति के विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे ऐसी प्रगति की अपेक्षा करते हैं जिसमें पारिवारिक आत्मीयता भी सुरक्षित रहे।

**'तेरा संगी कोई नहीं' (2018) : मिथिलेश्वर**

मिथिलेश्वर समकालीन हिंदी कथा-साहित्य के ऐसे रचनाकार हैं, जिनकी लेखकीय दृष्टि ग्रामीण समाज के अनुभवों, वर्गीय संबंधों और सामाजिक विषमताओं से गहराई से जुड़ी हुई है। उन्होंने कहानी और उपन्यास सहित कथा-साहित्य की विभिन्न विधाओं में उल्लेखनीय योगदान दिया है। उनकी रचनाओं में ग्रामीण जीवन की जटिलताओं, सामाजिक परिवर्तन, वर्ग-संघर्ष तथा मानवीय मूल्यों के संकट का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनके साहित्य की विशेषता यह है कि वे गाँव को केवल प्राकृतिक सौंदर्य और पारंपरिक जीवन-पद्धति के रूप में प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उसके भीतर मौजूद आर्थिक असमानताओं और सामाजिक अंतर्विरोधों को भी सामने लाते हैं। उपन्यास में कृषि व्यवस्था की अलाभकारी स्थिति और किसान की विवशता के बीच गहरा संबंध दिखाई देता है। उत्पादन के लिए निरंतर निवेश करने के बावजूद किसान की आय इतनी नहीं बढ़ती कि वह अपनी पारिवारिक आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ अगली फसल के लिए आवश्यक पूँजी भी सुरक्षित रख सके। परिणामस्वरूप वह बार-बार ऋण लेने के लिए विवश होता है। यह स्थिति किसान को आर्थिक निर्भरता के ऐसे चक्र में फँसा देती है, जिससे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। इस संदर्भ में उपन्यास की पंक्तियाँ कृषि से प्राप्त आय और किसान के जीवन-निर्वाह के बीच मौजूद असमानता को स्पष्ट करती हैं— "पिछले दिनों एक कृषि पत्रकार द्वारा जारी आँकड़े के अनुसार किसानों की लागत के अनुपात में उनका कृषि उपार्जन अधिक नहीं होता। उनका सारा उतजोग सिर्फ जीवित रहने भर ही बना रहता है, ताकि पुनः अगले वर्ष वे कृषि में लग सकें। इस आँकड़े के साथ ही उस पत्रकार ने यह आँकड़ा भी दिया था कि शायद इसी वजह से किसानों और खेत

मजदूरों का कृषि से पलायन जारी है...।"[3] यह कथन कृषि की अलाभकारी प्रकृति और उससे उत्पन्न पलायन की समस्या को सामने लाता है।

**'आखिरी छलांग' (2008) : शिवमूर्ति**

शिवमूर्ति का उपन्यास 'आखिरी छलांग' समकालीन ग्रामीण जीवन में छोटे किसान की आर्थिक और सामाजिक विवशताओं का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करता है। ग्रामीण परिवेश से गहरे जुड़े होने के कारण शिवमूर्ति की रचनाओं में कृषि, श्रम, पारिवारिक संबंध और सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रश्न स्वाभाविक रूप से उभरते हैं। इस उपन्यास में किसान के दैनिक जीवन की कठिनाइयों को उसके व्यापक सामाजिक परिवेश से जोड़कर देखा गया है। ग्रामीण समाज में आर्थिक स्थिति और सामाजिक प्रतिष्ठा के बीच गहरा संबंध है। विवाह जैसे पारिवारिक अवसरों पर व्यक्ति की आर्थिक हैसियत को विशेष महत्त्व दिया जाता है। उपन्यास में विवाह-संबंधों के निर्धारण में धन और सामाजिक स्थिति की भूमिका इस मानसिकता को स्पष्ट करती है—"किसी रईस के घर से आयेगी तो उसके साथ घर में रहीसी आ जायेगी। हस्ताक्षर किसी दरिद्र के घर से तो इस घर में भी उनके साथ-साथ दलिदर की पैसारी हो जायेगी।"[4] पहलवान की आर्थिक कठिनाइयों का एक महत्त्वपूर्ण कारण कृषि से प्राप्त आय और उत्पादन लागत के बीच असंतुलन है। गन्ने का भुगतान समय पर न मिलना, सहकारी समिति का ऋण, खाद और बीज की उपलब्धता तथा सिंचाई के लिए बिजली के बिल जैसी समस्याएँ उसकी आर्थिक असुरक्षा को बढ़ाती हैं। खेती में निवेश करने के बाद भी यदि किसान को समय पर भुगतान न मिले, तो अगली फसल की तैयारी और घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति दोनों प्रभावित होती हैं। इस प्रकार उत्पादन करने वाला किसान अपनी ही उपज के आर्थिक लाभ से वंचित रह जाता है।

**'अगम बहै दरियाव '(2023) : शिवमूर्ति**

शिवमूर्ति का उपन्यास 'अगम बहै दरियाव' ग्रामीण समाज की बहुस्तरीय संरचना और किसान जीवन की जटिल परिस्थितियों को व्यापक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है। इसमें किसान की समस्याओं को किसी एक व्यक्ति अथवा परिवार की कठिनाइयों तक सीमित न रखकर सामाजिक, राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था से जोड़कर देखा जा सकता है।

उपन्यास में जातिगत समीकरणों और ग्रामीण राजनीति के अंतर्संबंधों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान मिलता है। पंचायत चुनाव, सामाजिक प्रतिष्ठा और राजनीतिक वर्चस्व की प्रतिस्पर्धा ग्रामीण समुदायों के बीच तनाव पैदा करती है। चुनावी लाभ के लिए जातिगत विभाजन को बढ़ावा देना लोकतांत्रिक प्रक्रिया की एक गंभीर विडंबना है। इस स्थिति का उदाहरण छत्रधारी सिंह और माठा बाबा के संवाद में मिलता है — "इज्जत दाँव पर लग गई है बाब बाबा। बुधइया ने पूरे गाँव को अपनी ओर मिला लिया है। पूरा गाँव सवर्ण और गैर-सवर्ण के खेमे में बँट गया है। उन लोगों ने एक मत से बुधड़्या को अपना परधानी का उम्मीदवार तय कर दिया है। तीन-चौथाई वोट तो उन्हीं लोगों के हैं। एक पिछड़े से हारना मेरे लिए डूब मरने के समान है।"[5]

यह संवाद ग्रामीण राजनीति में जातिगत वर्चस्व, प्रतिष्ठा और सत्ता प्राप्त करने की आकांक्षा को उजागर करता है।

**'फाँस' (2015) : संजीव**

संजीव का उपन्यास 'फाँस' भारतीय कृषि संकट की गंभीरता और उसके पीछे सक्रिय आर्थिक-सामाजिक परिस्थितियों को सामने लाने वाली महत्त्वपूर्ण कृति है। इस उपन्यास में किसान जीवन का चित्रण ग्रामीण परिवेश की स्वाभाविकता और कृषि पर निर्भर परिवारों की वास्तविक कठिनाइयों के साथ जुड़ा हुआ है। खेत, पशुधन, ऋतुचक्र

और पारिवारिक श्रम किसान के जीवन के अभिन्न अंग हैं। किंतु इन्हीं के बीच आर्थिक असुरक्षा, कर्ज, घटती आय और सामाजिक दबाव उसकी स्थिति को संकटपूर्ण बनाते हैं।

उपन्यास में पशुधन का आर्थिक महत्त्व भी किसान की स्थिति को समझने में सहायक है। बैल ग्रामीण कृषि व्यवस्था में श्रम और उत्पादन के साधन के रूप में महत्त्वपूर्ण रहे हैं। उनका विक्रय केवल एक वस्तु के लेन-देन का प्रश्न नहीं, बल्कि किसान की आर्थिक आवश्यकताओं और संसाधनों से जुड़ा निर्णय भी है। बैलों के मूल्य को लेकर होने वाली बातचीत में ग्रामीण बाजार की परिस्थितियाँ और किसान की विवशता सामने आती हैं—

"मैंने बैल बेचा नहीं इधर, तुम्हीं बताओ क्या दाम होना चाहिए।"

"इसके...? दो हजार चलेगा?"

"तुम्हें शर्म नहीं लगती पाँच हजार के बैल के दो हजार बताते हुए।"[6]

'फाँस' किसान की आर्थिक असुरक्षा के साथ उसके मानसिक और सामाजिक तनाव को भी समझने का अवसर देता है। कृषि संकट को केवल उत्पादन के आँकड़ों से नहीं समझा जा सकता; इसके लिए किसान के श्रम, पारिवारिक जीवन, सामाजिक संबंधों और भविष्य संबंधी आशंकाओं पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इस दृष्टि से उपन्यास किसान जीवन की उन जटिलताओं को रेखांकित करता है, जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था के संकट को मानवीय अनुभव में बदल देती हैं।

**'हलफनामे' : राजू शर्मा**

राजू शर्मा का उपन्यास 'हलफनामे' किसान आत्महत्या और उससे जुड़े सामाजिक-राजनीतिक प्रश्नों को समझने की दृष्टि से उल्लेखनीय है। किसान की मृत्यु के बाद सरकारी आँकड़ों, प्रशासनिक रिपोर्टों और कानूनी प्रक्रियाओं में उसकी स्थिति का मूल्यांकन किया जाता है। किंतु केवल आँकड़ों के आधार पर किसान की वास्तविक पीड़ा और उसके जीवन की परिस्थितियों को पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। आत्महत्या के पीछे सक्रिय आर्थिक और सामाजिक कारणों की पहचान आवश्यक है। उपन्यास इसी प्रश्न को सामने लाता है कि किसान की मृत्यु के लिए उत्तरदायित्व निर्धारित करते समय व्यक्तिगत परिस्थितियों के साथ उस व्यवस्था की भूमिका पर भी विचार होना चाहिए, जिसके भीतर किसान जीवनयापन करता है। इस संदर्भ में उपन्यास में प्रस्तुत सरकारी आँकड़ों का उल्लेख विचारणीय है — "सरकारी आँकड़ों की खाक छानते हुए यह जानकारी हुई कि उत्तर प्रदेश की आत्महत्या दर एक लाख में 2.7 है जो देश की औसत से चौथाई है। इसका मतलब यह हुआ कि सवेरा में बीस साल में एक खुदकुशी की अपेक्षा की जा सकती है। ...."[7]

**'ढलती साँझ का सूरज' (2022) : मधु कांकरिया**

मधु कांकरिया का उपन्यास 'ढलती साँझ का सूरज' किसान जीवन की आर्थिक विषमता और ग्रामीण परिवारों की कठिन परिस्थितियों को अभिव्यक्त करता है। भारतीय कृषि व्यवस्था में उत्पादन करने वाले किसान और कृषि उत्पादों से लाभ प्राप्त करने वाली आर्थिक शक्तियों के बीच असमानता एक गंभीर समस्या है। उपन्यास में इस विडंबना को आर्थिक अभाव और जीवन की साधारण आवश्यकताओं के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में बालासाहब का कथन किसान की इसी त्रासद स्थिति को स्पष्ट करता है— "एक गहरी साँस ले फिर अपनी लहर में बहने लगते हैं बालासाहब-"भारत का किसान एक ऊबड़-खाबड़ खुरदुरा पत्थर वनकर रह गया है जिसकी ज़िन्दगी में न राग है न रंग, न गीत न संगीत, न दीवाली, न न्यू ईयर। है तो सिर्फ़ तीन चीज-क़र्ज, क़र्ज और क़र्ज। देखा आपने आज, जिन्दगी कपास पैदा करने में बीत जाती है इनकी, लेकिन इन किसान की पत्नियों की देह पर कपास से बनी सूती साड़ियाँ नहीं थीं, थीं

सस्ती और टिकाऊ पोलिएस्टर की साड़ियाँ। वो भी कहीं-कहीं किस्तों में खरीदी हुई।"[8] यहाँ कर्ज एक ऐसी निरंतर बनी रहने वाली स्थिति के रूप में उपस्थित है, जो किसान की स्वतंत्रता और जीवन की संभावनाओं को सीमित करती है।

निष्कर्षतः इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में किसान जीवन का चित्रण आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं के बहुआयामी स्वरूप को उजागर करता है। 'रेहन पर रग्घू' में पारिवारिक विघटन, 'तेरा संगी कोई नहीं' में कृषि संकट, 'आखिरी छलांग' में छोटे किसान की आर्थिक विवशता, 'अगम बहै दरियाव' में जातिगत वर्चस्व और राजनीतिक अंतर्विरोध, 'फाँस' में कृषि एवं बाजार संबंधी समस्याएँ, 'हलफनामे' में किसान आत्महत्या, 'ढलती साँझ का सूरज' में कर्जग्रस्तता तथा 'अकाल में उत्सव' में प्रशासनिक संवेदनहीनता के विविध पक्ष सामने आते हैं। इस दृष्टिकोण से कमलाकांत त्रिपाठी का 'बेदखल', वीरेन्द्र जैन का 'डूब', एम. एम. चन्द्रा का 'प्रोस्तोर' आदि 21वीं सदी के कई अन्य उपन्यास महत्वपूर्ण है, जिसमें किसानों के जीवन को अभिव्यक्ति मिली है।

इन उपन्यासों से स्पष्ट होता है कि किसान की बदहाली के पीछे कृषि की अलाभकारी व्यवस्था, संसाधनों का असमान वितरण, बाजार की अनिश्चितता और प्रशासनिक उपेक्षा जैसी संरचनात्मक समस्याएँ सक्रिय हैं। समकालीन हिंदी उपन्यासकार किसान की पीड़ा के साथ उसके संघर्ष, अस्मिता और सामाजिक न्याय के प्रश्नों को भी स्वर देते हैं। इस प्रकार ये रचनाएँ भारतीय ग्रामीण जीवन के यथार्थ और किसान संकट की गंभीरता को समझने का महत्त्वपूर्ण साहित्यिक आधार प्रस्तुत करती हैं।

**संदर्भ :**


1. पालीवाल, सूरज, इक्कीसवीं सदी का दूसरा दशक और हिंदी उपन्यास, भूमिका, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं. – 9
2. सिंह, काशीनाथ, रेहन पर रग्घू, राजकमल प्रकाशन, 2008, पृष्ठ सं. – 133
3. मिथिलेश्वर, तेरा संगी कोई नहीं, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2024, पृष्ठ सं. – 30
4. नया ज्ञानोदय, जनवरी – 2008, पृष्ठ सं. – 88
5. शिवमूर्ति, अगम बहै दरियाव, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2025, पृष्ठ सं. – 103
6. संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2025, पृष्ठ सं. – 50
7. शर्मा, राजू, हलफनामे, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, 2025, पृष्ठ सं. – 148
8. कांकरिया, मधु, ढलती साँझ का सूरज, राजकमल प्रकाश, दिल्ली, 2024, पृष्ठ सं. – 71

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 140-142
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# 'मल्लिका : आत्मनिर्वासित स्त्री का आख्यान'

**सृष्टि**
शोधार्थी ,
हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
शोध निर्देशक - प्रो. संतोष कुमार भदौरिया

वरिष्ठ कथाकार 'धीरेन्द्र अस्थाना' के उपन्यास 'देश निकाला' की स्त्री पात्र 'मल्लिका' आज की स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है। भौतिक और यथार्थ के द्वंद्व में उलझे हुये मनुष्य को झकझोरती हुयी प्रेम, आत्मीयता और अंतरंगता को उजागर करती है। वैभव, बाजार व लालसा ने रिश्तों को आत्मनिर्वासन के मोड़ पर खड़ा कर दिया है। यह आत्म-निर्वासन मुख्य रूप से इस बात पर केंद्रित है कि किस प्रकार एक स्त्री सामाजिक, पारिवारिक और मानसिक दबावों के कारण स्वयं को समाज या अपनी इच्छाओं से अलग (निर्वासित) कर लेती है अथवा अपनी अस्मिता की तलाश में स्वत: ही एकांत का रास्ता चुनती है। आज संबंधों की सूक्ष्म पड़ताल की आवश्यकता है। माल्लिका ने छोटी उम्र में माँ को खो दिया था। पिता ने पढ़ाया-लिखाया, बड़ा किया। वह कॉलेज में पहुँची और थियेटर से जुड़ गयी। फिर एक रोड एक्सीडेंट में पिता भी नहीं रहे। मल्लिका अनाथ हो गयी। छोटे-मोटे स्कूलों में पढ़ाने लगी। फिर वह गौतम से जुड़ी और खुद को सार्थक समझने की उम्मीद से दिल लगा बैठी। दोनों लिव-इन रिलेशनशिप में रहने लगें। मुंबई में कांदिवली के चारकोप में एक फ्लैट में मल्लिका रहती है, जिसमें मल्लिका का पैसा लगा है जो उसके नाम पर है। मीरा रोड में एक फ्लैट में गौतम रहता है, जिसमें गौतम का पैसा लगा है और उसके नाम पर है। मल्लिका सुबह छह से रात आठ बजे तक तीन पालियों में चौबीस बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती है। गौतम एक पटकथा और संवाद लेखक है। मल्लिका की खासियत है कि वह जो भी कार्य करती है खुशी से मन लगाकर करती है और उस काम को अंजाम तक ले जाती है। चाहे वह थियेटर के दिनों में रंगमंच की दुनिया हो, चाहे सिनेमा हो, चाहे बच्चों का ट्यूशन हो। जब वह थियेटर में थी तो मंच की महारानी थी। ट्यूशन में इसका पढ़ाया कोई भी बच्चा फेल नहीं होता था। सिनेमा में यह सुपरस्टार थी किंतु अपने व्यक्तिगत जीवन में वह असफल रही। असफलता का कारण वह स्वयं नहीं थी। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के नियमों का पालन करते हुए स्त्री अक्सर एक मानसिक निर्वासन स्वीकार कर लेती है। वह एक ही घर में सबके साथ रहते हुए भी

अपनी भावनाओं, यौनिकता, इच्छाओं और सपनों को पूरी तरह दबा देती है। अपने मूल स्वरूप को भूलकर केवल दूसरों की अपेक्षाओं (जैसे-आदर्श पत्नी, माँ, बेटी) के सांचे में ढ़ल जाती है। यह उसका अपने ही 'स्व' से निर्वासन है। परित्यक्त और खामोश जीवन कई बार विवाह और संबंधों के असफल होने पर, समाज के तानों से बचने के लिए स्त्रियाँ खुद को एक अनकहे सामाजिक एकांत में कैद कर लेती हैं।

ट्यूशन पढ़ाना मल्लिका का रोजगार नहीं जुनून और कर्म रहा है। बच्चों को ट्यूशन पढ़ते-पढ़ाते उसके दिन कैसे बीत जाते हैं उसे पता ही नहीं चलता। पूरा दिन वह बच्चों, उनकी माँ के फोन और पड़ोसियों से बातचीत में व्यस्त रहती। रात होते-होते इतना थक जाती कि बिस्तर पर पड़ते ही सो जाती। न गौतम से अलग रहने का दुख रहता, न पैसे की चिंता, न अतीत उसे कचोटता और न भविष्य डराता। इन सबके पार वह एक ऐसे अरण्य में चली जाती जिसमें सुकून मिलता। मल्लिका किसी निर्णय (जीवन, करियर या जो भी हो) पर पहुँचने से पहले हमेशा उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनो पक्षों पर विचार करती करती है। अपने तरीके से भी सोचती और गौतम की तरफ से भी सोचती है तब जो निष्कर्ष निकलता है उस पर खरी उतरती है। आज समाज के प्रत्येक व्यक्ति को हर पहलू पर इसी प्रकार सोचने की जरूरत है। किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पहले दोनों पक्षों पर विचार करना आवश्यक है। तो शायद हम रिश्तों को टूटने से बचा सकते हैं। जब मल्लिका और गौतम विवाह कर लेते हैं तब मल्लिका को लगता है कि अब दोनों को एक फ्लैट में साथ रहना चाहिये। वह अपना फ्लैट बेचकर गौतम के साथ रहने का विचार गौतम को बताती है, तो गौतम मना कर देता है कि कोई किसी के एकांत को भंग नहीं करेगा और जरूरत के हिसाब से एक-दूसरे के यहाँ आता-जाता रहेगा। तब मल्लिका सब समझ जाती है कि गौतम ने सिर्फ सामाजिक और कानूनी सुरक्षा के लिये ऐसा किया। जिम्मेदारी, वफादारी या सामंजस्य बिठाने के लिये नहीं। किंतु पुनः मल्लिका सकारात्मक सोच कर बहुत अच्छा महसूस करती है और उसका सारा तनाव गायब हो जाता है। आज सकारात्मक सोच रखना जरूरी है जिससे आधी समस्याएँ तो स्वत: ही समाप्त हो जाती हैं। गौतम की भाँति आज के युवावर्ग (स्त्री एवं पुरुष) बहुत आगे तक जाना चाहते हैं लेकिन उनकी मंजिल क्या है? उन्हें नहीं पता और इस आगे बढ़ते रहने के चक्कर में उनसे रिश्तें पीछे छूट जाते हैं क्योंकि ये किसी के लिये रुकना जानते ही नहीं। "दरअसल, बदलते हुये जमाने के हवाओं के साथ गौतम सिन्हा कदम ताल नहीं कर पा रहे थे। उनका भटकाव लगातार पीछे छूटते चले जाने से पैदा हुआ था, लेकिन गौतम इस यथार्थ का सामना ही नहीं करना चाहते थे कि वह पीछे छूट रहे हैं।" आज समाज में भूत और भविष्य के सैलाब में वर्तमान गुम होता जा रहा है। इस वर्तमान की ज्वालामुखी में केवल और केवल रिश्तों की आहुति चढ़ी है। आज समाज में यदि कोई मनुष्य खासतौर से स्त्री यदि सुखों की अपेक्षा अपने रिश्तों के बीच उतरना चाहती है तो उसे भयभीत समझा जाता है, जबकि वह स्त्री अपने रिश्ते का सम्मान करती है न कि भयभीत है। मनुष्य के भीतर करुणा भरी होती है लेकिन वह कड़वाहट दिखाता है क्योंकि उसका स्वाभिमान आड़े आ जाता है जिससे वह करुणा को स्वीकार नहीं कर पाता।

आये दिन आत्महत्या की खबरों से मल्लिका विचलित हो सोचती है कि कितना खिन्न, हताश और निरुपाय हो जाता होगा कोई कि खुद को खत्म कर लेता होगा। कितने खूंखार हो जाते होंगे उसके दुख जिसे वह सहन नहीं कर पाता होगा। ऐसा क्यों होता है? क्यों इतने अधिक अकेले रह जाते होंगे लोग? खाली दिनों के लिये लोग वैकल्पिक व्यवस्थाएँ करके क्यों नहीं रखते हैं? ये चिंता जायज है क्योंकि आजकल समाज में आत्महत्या की प्रवृत्ति बहुत तेजी से बढ़ रही है। आज आपसी बातचीत बहुत जरूरी है क्योंकि इसी से मन के सैलाबों को शांत या समाप्त किया जाता सकता है। आज समाज में वार्ता की जरुरत सबको है। आज के समाज में स्त्री-पुरुष संबंध को बचाने के लिये अकेले रहना समझदारी समझता है किंतु यहीं अकेलापन उसके रिश्ते को खोखला कर शरीर को दीमक की तरह खा जाता है जिसके

परिणामस्वरूप अंततः वह रिश्ते को खत्म कर देता है। वर्तमान समाज में स्त्री-पुरुष के उलझे संबंधों का सबसे ज्यादा असर उनके बच्चों पर पड़ रहा है। बच्चें उन्हें देखकर छोटी उम्र में ही समझदार हो जा रहे हैं। जीने को उनका बचपना बचा ही नहीं है। 'इसका परिणाम मल्लिका की बेटी चीनू का ये सवाल है- 'ममा, पापा हमारे साथ क्यों नहीं रहते।' और जवाब वह स्वयं समझ जाती है। फोन तक तो जाती है लेकिन अपने पिता को फोन किये बिना ही लौट आती है और अपनी माँ (मल्लिका) के फोन न करने का कारण पूछने पर कहती है 'अगर पापा ने कोई गलत आंसर दिया तो मुझे दुख होगा न।' गौतम को तो पता ही नहीं चला कि मल्लिका और चीनू उसके जीवन से कितने दूर निकल गये हैं, 'यह दो स्त्रियों का ऐसा अरण्य था जिसमें परिंदा भी पर नहीं मार सकता था।'

समाज में किसी भी स्त्री को अपने अधिकारों को जानने और उसके प्रति जागरुक होने की आवश्यकता है किंतु उन अधिकारों का दुरुपयोग उन्हें नहीं करना चाहिये। वर्तमान समाज में स्त्री और पुरुष का साहचर्य अनिवार्य है। स्त्री-पुरुष को एक दूसरे के साथ चलने की आवश्यकता है, न कि किसी एक के अधिक आगे बढ़ जाने की। ये जो स्त्री अथवा पुरुष इतना आगे निकलता जा रहा है उससे रिश्तें उतनी ही तेजी से पीछे छूटते जा रहे हैं। जरुरत है तो समाज में पितृसत्ता से स्त्री की स्वतंत्रता, न की पिता से। पितृसत्तात्मक समाज में आज भी स्त्री की यह सोच कि उसकी ही गलती होगी? पुरुष की नहीं हो सकती? इस सोच से उबरना होगा। यह जो स्त्री की आत्मग्लानि की भावना है वह इतने वर्षों से मानो उसके रक्त में मिल चुकी है, उससे बाहर निकलना थोड़ा मुश्किल तो है किंतु स्त्री को निकलना होगा। आज स्त्री को सोच-समझकर सही फैसले लेने और उस पर अडिग रहने की जरुरत है। यदि किसी भी बात के संदर्भ में उसका फैसला 'ना' है तो उसे नहीं कहना होगा। स्त्री का आत्म-निर्वासन वास्तव में उसके आत्मसम्मान की सर्वोच्च अभिव्यक्ति और समाज के प्रति उसका सबसे बड़ा मौन विद्रोह बन जाता है। इस प्रकार स्त्री के आत्म-निर्वासन का आख्यान केवल पीड़ित होने की कहानी नहीं है, बल्कि यह उसके गहरे मानसिक द्वंद्व,उसकी यातना के इतिहास और अंततः अपनी खोई हुई स्वतंत्रता व गरिमा को वापस पाने के संघर्ष का एक सशक्त आख्यान है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :–**


1. गीताश्री, नागपाश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2019
2. अस्थाना, धीरेंद्र, जिंदगी का क्या किया, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2017
3. अस्थाना, धीरेंद्र, देश निकाला, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-2011
4. वोल्टसनक्राफ्ट, मेरी, स्त्री-अधिकारों का औचित्य-साधन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2003



मोबाइल नं. 8081168867
पता: ग्राम व पोस्ट-बर्थरा खुर्द, चौबेपुर
जिला-वाराणसी
पिन-221104

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 143-147
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय: संवैधानिक आधार, चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

**श्री सायसिंग अवास्या**
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान
वीर बलिदानी खाज्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला-बड़वानी (म. प्र.)

**प्रस्तावना**

सामाजिक न्याय का उद्देश्य समाज में व्याप्त असमानताओं, भेदभाव और वंचना को कम करते हुए प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानपूर्ण जीवन जीने के लिए परिस्थितियाँ उपलब्ध कराना है। भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय का महत्व विशेष रूप से इसलिए बढ़ जाता है, क्योंकि भारतीय समाज ऐतिहासिक रूप से जातिगत विभाजन, अस्पृश्यता, लैंगिक असमानता, आर्थिक विषमता और सामाजिक विशेषाधिकारों जैसी समस्याओं से प्रभावित रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद न्यायपूर्ण समाज की स्थापना हेतु संविधान को अपनाया और सामाजिक न्याय को संस्थागत स्वरूप प्रदान किया। सामाजिक न्याय का अर्थ केवल कानून के समक्ष सभी व्यक्तियों को समान मानना नहीं है, बल्कि उन सामाजिक और आर्थिक बाधाओं को दूर करना भी है, जिनके कारण कुछ समुदाय विकास के अवसरों से वंचित रह जाते हैं। भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय का संबंध समान अधिकारों के साथ-साथ अवसरों की उपलब्धता, ऐतिहासिक वंचनाओं के निवारण और कमजोर वर्गों के सशक्तीकरण से भी है।

**भारतीय समाज में सामाजिक न्याय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि**

विविधतापूर्ण भारतीय सामाजिक व्यवस्था में अनेक ऐसी असमानताएँ भी विकसित हुईं, जिन्होंने कुछ वर्गों की सामाजिक भागीदारी और उन्नति को सीमित किया। जाति आधारित भेदभाव और अस्पृश्यता ने अनेक समुदायों को शिक्षा, सार्वजनिक सुविधाओं, सामाजिक सम्मान तथा आर्थिक अवसरों से वंचित रखा। इन परिस्थितियों के विरुद्ध भारतीय समाज में विभिन्न सुधार आंदोलनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ज्योतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले ने शिक्षा तथा सामाजिक समानता के प्रसार के लिए कार्य किया। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जातिगत भेदभाव, अस्पृश्यता और सामाजिक असमानता के विरुद्ध संघर्ष करते हुए समान नागरिक अधिकारों पर बल दिया। महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता के विरोध और सामाजिक सुधार के माध्यम से समाज में समावेशिता को बढ़ावा देने का प्रयास किया।

इन विचारकों और सुधारकों ने सामाजिक न्याय सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता के रूप में स्थापित किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के विचारों को भी व्यापक महत्व मिला। स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं ने इन आदर्शों को संवैधानिक व्यवस्था का अभिन्न अंग बनाया।

**भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय का आधार**

भारतीय संविधान सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए व्यापक आधार प्रदान करता है। संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का संकल्प व्यक्त किया गया है। यह संकल्प स्पष्ट करता है कि भारतीय लोकतंत्र का उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना नहीं, बल्कि ऐसी सामाजिक व्यवस्था विकसित करना भी है, जिसमें सभी नागरिकों को गरिमापूर्ण जीवन के अवसर प्राप्त हों।

संविधान के विभिन्न अनुच्छेद सामाजिक न्याय के अलग-अलग पक्षों को मजबूत करते हैं।

अनुच्छेद 14: कानून के समक्ष समानता और कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है।

अनुच्छेद 15: धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग और जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव पर रोक लगाता है तथा कुछ वर्गों के उत्थान के लिए विशेष प्रावधानों की अनुमति देता है।

अनुच्छेद 16: सार्वजनिक रोजगार में अवसरों की समानता सुनिश्चित करता है और संवैधानिक प्रावधानों के अंतर्गत आरक्षण की व्यवस्था का आधार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 17: अस्पृश्यता का उन्मूलन करता है।

अनुच्छेद 21: जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है।

अनुच्छेद 38: राज्य को ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में प्रयास करने का निर्देश देता है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को प्रभावित करे।

अनुच्छेद 39: आजीविका, संसाधनों के वितरण तथा आर्थिक व्यवस्था से संबंधित महत्वपूर्ण नीति-निर्देशक सिद्धांत प्रस्तुत करता है।

अनुच्छेद 46: अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को बढ़ावा देने पर बल देता है।

इन संवैधानिक प्रावधानों से स्पष्ट होता है कि सामाजिक न्याय को केवल व्यक्तिगत अधिकारों तक सीमित नहीं रखा गया है। इसे राज्य की नीतियों, सार्वजनिक संस्थाओं और सामाजिक-आर्थिक विकास से भी जोड़ा गया है।

**सामाजिक न्याय और आरक्षण की व्यवस्था**

भारतीय समाज में आरक्षण सामाजिक न्याय को व्यवहार में लागू करने का एक महत्वपूर्ण संवैधानिक उपाय है। इसका प्रमुख उद्देश्य उन समुदायों की शिक्षा, रोजगार और सार्वजनिक संस्थाओं में भागीदारी बढ़ाना है, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से सामाजिक भेदभाव तथा अवसरों की कमी का सामना करना पड़ा है।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण का प्रावधान ऐतिहासिक वंचना और सामाजिक बहिष्करण की समस्या को संबोधित करता है। अन्य पिछड़ा वर्ग तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए भी संवैधानिक प्रावधानों के अंतर्गत आरक्षण की व्यवस्था की गई है। इन व्यवस्थाओं का उद्देश्य अवसरों तक पहुँच का विस्तार करना तथा विभिन्न सामाजिक समूहों की प्रतिनिधित्व संबंधी समस्याओं का समाधान करना है।

यह समझना आवश्यक है कि केवल औपचारिक समानता पर्याप्त नहीं होती। यदि किसी विद्यार्थी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, पोषण और अध्ययन के लिए आवश्यक सुविधाएँ नहीं मिली हैं, तो उसकी प्रतिस्पर्धा की स्थिति उन विद्यार्थियों

जैसी नहीं होगी जिन्हें बेहतर संसाधन प्राप्त हुए हैं। इसलिए सामाजिक न्याय के लिए आरक्षण के साथ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कौशल विकास और आर्थिक अवसरों का विस्तार भी आवश्यक है।

**सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता**

सामाजिक न्याय का एक महत्वपूर्ण आयाम आर्थिक विषमता को दूर कर वंचित समूहों तक संसाधनों की पहुँच सुनिश्चित करना है। आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए राज्य की कल्याणकारी भूमिका महत्वपूर्ण है। हालाँकि आर्थिक न्याय का अर्थ यह नहीं है कि सभी व्यक्तियों की आय और संपत्ति अनिवार्य रूप से समान हो। इसका मूल उद्देश्य ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित करना है, जिनमें आर्थिक अभाव किसी व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और विकास की संभावनाओं को पूरी तरह बाधित न कर सके।

इस संदर्भ में जॉन रॉल्स का न्याय सिद्धांत उपयोगी है। रॉल्स के अनुसार, सामाजिक संस्थाओं और नियमों का निर्धारण करते समय समाज के सबसे कमजोर सदस्यों की स्थिति को भी ध्यान में रखना चाहिए। भारतीय परिस्थितियों में यह दृष्टिकोण सार्वजनिक संसाधनों के वितरण और कल्याणकारी नीतियों के मूल्यांकन के लिए प्रासंगिक है।

**लैंगिक समानता और सामाजिक न्याय**

महिलाओं की समान भागीदारी के बिना सामाजिक न्याय की स्थापना अधूरी है। भारतीय समाज में महिलाओं की विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियों के बावजूद अनेक महिलाओं को लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा, असमान अवसरों, कार्यस्थल संबंधी बाधाओं तथा निर्णय प्रक्रिया में सीमित भागीदारी जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

लैंगिक न्याय के लिए महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, संपत्ति, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के समान अवसर प्रदान करना आवश्यक है। वर्ष 2023 में 106वें संविधान संशोधन के माध्यम से संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई (33%) सीटें आरक्षित करने का प्रावधान हो या स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण ने राजनीतिक भागीदारी बढ़ाने का अवसर प्रदान किया है।

**सामाजिक न्याय के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ**

भारत में सामाजिक न्याय की दिशा में अनेक संवैधानिक और नीतिगत प्रयास किए गए हैं, फिर भी इसकी स्थापना के मार्ग में निम्नलिखित गंभीर चुनौतियाँ बनी हुई हैं-

01. कानूनी निषेध के बावजूद कुछ क्षेत्रों में जाति आधारित भेदभाव और सामाजिक बहिष्करण देखने को मिलता है।
02. सभी विद्यार्थियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, डिजिटल संसाधन और अनुकूल अध्ययन वातावरण समान रूप से उपलब्ध नहीं हैं।
03. आय और संपत्ति का असमान वितरण समाज के विभिन्न वर्गों के बीच अवसरों की खाई को बढ़ा सकता है।
04. रोजगार की अनिश्चितता और आजीविका संबंधी समस्याएँ भी इस स्थिति को प्रभावित करती हैं।
05. कमजोर वर्गों, वृद्ध व्यक्तियों, दिव्यांगजनों और असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों तक आवश्यक सुविधाएँ पहुँचाने के लिए प्रभावी क्रियान्वयन और संस्थागत क्षमता आवश्यक है।
06. सामाजिक न्याय से संबंधित योजनाओं की सफलता केवल उनके निर्माण पर निर्भर नहीं करती। पारदर्शिता, जवाबदेही, लाभार्थियों की सही पहचान और शिकायत निवारण की व्यवस्था भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं।

**सामाजिक न्याय की संभावनाएँ एवं सुधार के उपाय**

भारतीय समाज में सामाजिक न्याय को अधिक प्रभावी बनाने के लिए निम्न रणनीति अपनाई जानी चाहिए-

01. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का सभी तक पहुँचना आवश्यक है।
02. डॉ. अंबेडकर ने सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु तीन प्रकार के सुरक्षा उपाय बताएं है –

a. राजनीतिक संस्थाओं में पृथक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था।
b. सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण की व्यवस्था करना।
c. सार्वजनिक विवेक की बजाय निश्चित संवैधानिक उपाय।

03. व्यक्ति की गरिमा और क्षमताओं के विकास के लिए आवश्यक आधार जैसे स्वास्थ्य सेवाओं, पोषण, स्वच्छ पेयजल और सुरक्षित आवास जैसी बुनियादी सुविधाओं को सुलभ बनाना चाहिए।
04. सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन होना चाहिए।
05. नागरिकों में संवैधानिक मूल्यों के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए शैक्षिक संस्थाओं तथा सामाजिक संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण है।
06. वंचित समूहों की जरूरतों के अनुसार रोजगार सृजन, कौशल विकास और आजीविका के अवसरों का विस्तार करते हुए विकास योजनाएँ बनाई जानी चाहिए।
07. सामाजिक न्याय संबंधी नीतियों का नियमित मूल्यांकन किया जाना चाहिए, ताकि यह समझा जा सके कि योजनाओं का लाभ किन समूहों तक पहुँच रहा है और कहाँ सुधार की आवश्यकता है।
08. अंततः सामाजिक न्याय को केवल सरकार की जिम्मेदारी मानना उचित नहीं होगा। नागरिक समाज, शैक्षिक संस्थानों, मीडिया और प्रत्येक नागरिक को भी भेदभाव के विरुद्ध जागरूकता विकसित करने तथा समावेशी सामाजिक व्यवहार को बढ़ावा देने में योगदान देना चाहिए।

**निष्कर्ष**

भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय का उद्देश्य ऐसी व्यवस्था विकसित करना है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान, समान नागरिक अधिकार और अपनी क्षमताओं के विकास के लिए आवश्यक अवसर प्राप्त हों। भारतीय संविधान ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को महत्व देकर इस दिशा में मजबूत संस्थागत आधार प्रदान किया है। आरक्षण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक सुरक्षा, लैंगिक समानता और कमजोर वर्गों के सशक्तीकरण जैसे उपाय इस लक्ष्य को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। फिर भी सामाजिक न्याय की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि संवैधानिक आदर्शों को वास्तविक सामाजिक जीवन में किस सीमा तक लागू किया जाता है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के विचारों से प्रेरणा लेते हुए यह समझना आवश्यक है कि लोकतंत्र की मजबूती केवल राजनीतिक संस्थाओं तक सीमित नहीं रह सकती; इसके लिए समाज में समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की भावना का विकास भी जरूरी है।

**संदर्भ** –


1. गाबा, ओमप्रकाश, (2015), राजनीति सिद्धांत की रूपरेखा, मयूर पेपरबेक्स, नोयडा ।
2. भार्गव, राजीव एवं आचार्य, अशोक(2011), राजनीतिक सिद्धांत: एक परिचय, पियर्सन, डार्लिंग किन्डरस्ले प्रकाशन, नोयडा।
3. लक्ष्मीकांत, एम. (2023), भारत की राजव्यवस्था, McGra Hill Education¼India½ Noida, 7th संस्करण।
4. दाधीच, नरेश(2003), जॉन रॉल्स का न्याय सिद्धांत, आविष्कार पब्लिषर्स, जयपुर।

5. कुमार, अजय एवं अली, इस्लाम(2012), भारतीय राजनीतिक चिंतन : संकल्पनाएं एवं विचारक, पियर्सन, डार्लिंग किन्डरस्ले प्रकाशन, नोयडा।
6. एनसीईआरटी, (2020), राजनीतिक सिद्धांत, एनसीईआरटी प्रकाशन प्रभाग, नई दिल्ली।

E-Mail - sayuawasya3010@mail.com , Mob No. - 9993786996

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 148-153
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# अशोक चक्रधर के काव्य संसार में स्त्री विमर्श के विविध आयाम

**नितिश**
हिंदी शोधार्थी,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

**प्रस्तावना**

वर्तमान समय में हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श केवल नारों या गद्य तक सीमित नहीं रह गया है बल्कि इसने काव्य और हास्य व्यंग्य की दुनिया में भी अपनी पहचान बनाई है। हिंदी हास्य व्यंग्यकारो में डॉक्टर अशोक चक्रधर का नाम ऐसे रचनाकारों में लिया जाता है, जिन्होंने व्यंग्य को केवल मनोरंजन या चुटकलों की संकीर्णता से बाहर निकाल कर उसे सामाजिक चेतना के प्रसार और जागृति का माध्यम बनाया है।

अशोक चक्रधर के काव्य का गहराई से विवेचन करने पर स्पष्ट होता है कि उनका काव्य स्त्री के प्रति बेहद समतावादी नजरिया रखता है। उन्होंने अपनी कविताओं में पारंपरिक पितृक्षतात्मक व्यवस्था, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज उत्पीड़न, घरेलू व सामाजिक हिंसा और राजनीति में नारी को दिए जाने वाले आधे अधूरे आरक्षण जैसे ज्वलंत मुद्दों का विश्लेषण किया है।

**स्त्री-विमर्श की अवधारणा**

स्त्री-विमर्श आधुनिक साहित्य और सामाजिक चिंतन की एक महत्त्वपूर्ण वैचारिक धारा है, जिसका केंद्र स्त्री के अधिकार, अस्मिता, स्वतंत्रता, समानता और सामाजिक स्थिति है। इसके अंतर्गत स्त्री के अनुभवों, संघर्षों तथा उसके प्रति समाज में व्याप्त भेदभाव और असमानता का अध्ययन किया जाता है।

स्त्री-विमर्श के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा गया है— **"स्त्री विमर्श वह अध्ययन और चर्चा है जो महिलाओं के अधिकारों, लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय और महिलाओं के अनुभवों को समझने और सुधारने के लिए किया जाता है। यह विमर्श महिलाओं के प्रति सामाजिक रूढ़ियों, भेदभाव और अन्याय को चुनौती देता है और उनके सशक्तिकरण की दिशा में काम करता है।"1** इस दृष्टि से स्त्री-विमर्श पितृसत्तात्मक व्यवस्था तथा स्त्री के प्रति प्रचलित रूढ़ धारणाओं पर प्रश्न उठाते हुए उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व और समान अधिकारों की स्थापना का प्रयास करता है।

हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श स्त्री को केवल त्याग, ममता और सहनशीलता की पारंपरिक छवि तक सीमित न रखकर उसकी **अस्मिता, आत्मचेतना, स्वायत्तता और सशक्तिकरण** को प्रमुखता देता है। इसी संदर्भ में अशोक चक्रधर के काव्य-संसार का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है, जहाँ हास्य और व्यंग्य के माध्यम से स्त्री की सामाजिक स्थिति, लैंगिक असमानता, रूढ़ियों तथा पुरुष-प्रधान मानसिकता से जुड़े विविध प्रश्नों को समझने की संभावनाएँ दिखाई देती हैं।

यह शोध पत्र अशोक चक्रधर के काव्य में अभिव्यक्त स्त्री विमर्श के विभिन्न आयामों को रेखांकित और विश्लेषित करने का एक प्रयास है।

1. **जन्म पूर्व हिंसा**

समाज में स्त्री के लिए संघर्ष उसके जन्म से पहले ही आरंभ हो जाता है। अशोक चक्रधर ने समाज के इस अमानवीय यथार्थ पर अपनी कविता **'गर्भगृह प्रयोगशाला'** में अत्यंत तीखा प्रहार किया है। वे समाज की उस भयानक सोच पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि

**"तब तो मर्दाना मसों की**
**ज़िद में रौंदी-झिंझोड़ी गई,**
**चार महीने बाद अब**
**मस्जिद तोड़ी गई।"2**

इन पंक्तियों के द्वारा कवि ने एक महिला की बेबसी को व उसपर होने वाले अत्याचार को दर्शाया है। जिस शरीर या गर्भ रूपी मस्जिद को पहले वासना के चक्र में फसकर झिंझोड़ा गया था अब समाज में होने वाली बदनामी के डर से उस गर्भगृह को गैर कानूनी तरीके से नष्ट किया जा रहा है।

समाज की कुत्सित सोच को कवि ने कितनी यथार्थता के साथ चित्रित किया है

2. **दहेज प्रथा की दानवीयता एवं सामाजिक त्रासदी**

वर्तमान समय में दहेज प्रथा समाज के शिक्षित जन के बीच लगभग कम होती जा रही है पर अब भी दहेज प्रथा को पूर्ण रूप से खत्म होने में बहुत लंबा समय लगेगा ।दहेज प्रथा की दानवीयता से संबंधित समाज के यथार्थ को अशोक चक्रधर ने अपने काव्य में बेहद सजीव ढंग से अभिव्यक्त किया है। यथा

**"अख़बार में जितनी चीज़ों के**
**विज्ञापन आते हैं,**
*****
**उनमें से**
**एक भी चीज नहीं भूलेंगे**
**लड़की के बाप की लाश से वसूलेंगे।"3**

यह केवल दहेज प्रथा पर कटाक्ष मात्र नहीं है बल्कि ये पंक्तियां पाठक को दहेज प्रथा के कुप्रभावों के बारे में सोचने पर मजबूर करती हैं । पाठक की दहेज प्रथा के बारे में सोच में ये पंक्तियां पढ़ने के बाद कुछ न कुछ बदलाव अवश्य आयेगा। साधारणतः अशोक चक्रधर का काव्य समाज को जागृत करने का कार्य भी करता है।

3. **दकियानूसी रूढ़ियों का खंडन एवं संपत्ति के अधिकार के वकालत**

भारतीय समाज में बेटी के घर का पानी न पीना और उसके ससुराल से आई किसी भी वस्तु को स्वीकार न करना जैसी दकियानूसी परंपराएं बेटियों के प्रति अलगाव की भावना पैदा करती हैं अशोक चक्रधर अपने विशेष अंदाज में इन रूढ़ियों पर प्रहार करते हैं

उनकी कविता 'आम की पेटी'में जब बेटी माता पिता के लिए आम की पेटी भेजती है तब आस पड़ोस के लोग रूढ़ियों और परम्पराओं का बहाना देकर आमों को हड़पना चाहते हैं लेकिन माता पिता बेटी के प्यार को सबसे ऊपर रखते हैं यथा:–

**"बेटी को सम्पत्ति में हिस्सा देंगे।**
**आमों के पैसे नहीं भिजवाएंगे।**
**ये आम खास हैं नहीं हैं आम,**
**बेटी का प्यार हैं ये**
**और प्यार का कैसा दाम ?"4**

आज भी भारत में बेटी जो पराया धन माना जाता है। इस सोच के पीछे का कारण न केवल शादी के बाद बेटी के दूसरे घर में जाना है बल्कि बेटी के घर का खाना या पानी न माता पिता द्वारा न पीना जैसी छोटी छोटी रूढ़ियां भी हैं। इन छोटी छोटी रूढ़ियों पर चोट करके अशोक चक्रधर ने इस सोच की नींव को ही हिला दिया हैं। इसके साथ साथ वर्तमान समय में बेटियों को संपत्ति में अधिकार से संबंधित कई कानून सरकार ने भी बनाएं हैं अशोक चक्रधर भी इन पंक्तियों में बेटियों को संपत्ति में अधिकार की वकालत करते हैं।

4. **यौन हिंसा और पुरुष सत्ता बनाम स्त्री का स्वाभिमान**

मारे देश भारत में यौन हिंसा और बलात्कार जैसे अपराध पर इतने कठोर कानून होने के बाद भी इन अपराधों पर हम अभी तक पूरी तरह काबू पाने में नाकामियाब हुए हैं। इस समस्या से लड़ने के लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है। समाज के इसी पहलू को कुछ अलग नज़रिए से अशोक चक्रधर ने अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी है यथा

**"कई बार हुआ बलात्कार**
**पति कनखियों से देखता रहा लाचार**
**और जब भाग गए बलात्कारी**
**कराहते हुए उठी नारी**
**……..**
**गरजते हुए उसने पति से कहा-**
**जा, तू अब**
**मेरे लायक़ नहीं रहा।"5**

यहां जा केवल एक शब्द नहीं बल्कि पुरुष सत्ता पर स्त्री के स्वाभिमान का करारा थप्पड़ हैं।

5. **दोहरे श्रम का संघर्ष–**

वर्तमान समय में नारी की स्थिति में बहुत कुछ सुधार हुआ है पर अब भी कई जिम्मेदारियां केवल नारी के सर पर थोप दी जाती हैं,जैसे घर का सारा काम काज अक्सर नारी की जिम्मेदारी समझी जाती हैं। अब नारी घर से

बाहर निकलकर अन्य आजीविका के साधन भी अपनाने लगीं हैं पर फिर भी घर के कार्यों की जिम्मेदारी उसी के कंधों पर होती है। इस सोच को बदलने की जरूरत है।घर का कार्य केवल नारी की जिम्मेवारी नहीं है बल्कि वह पुरुष और स्त्री दोनों को मिलकर करना चाहिए।

इसी सोच को बदलने के लिए इस पक्ष को अपने काव्य में अशोक चक्रधर ने इस प्रकार अभिव्यक्त किया है यथा

**"सवेरे द्वार तक आंगन बुहारा**
**फिर रसोई में**
**लगी, बच्चे पठाए पाठशाला**
**फिर टिफ़िन-सज्जा,**
**गई खुद काम पर**
**आई नहीं तुमको तनिक लज्जा**
**कि लौटी तो तुम्हें फिर चाहिए**
**सेवाव्रती दासी"6**

अशोक चक्रधर ने इन पंक्तियों में साफ साफ शब्दों में कहां है कि नारी दासी नहीं है। अशोक चक्रधर के काव्य ने समाज की सोच को एक नई दिशा देने का प्रयास किया है।

6. **नैतिक क्षरण**

अशोक चक्रधर जी न केवल सामान्य जन से नारी की स्थिति में सुधार के लिए अपील करते है और उन्हें जागृत करते हैं बल्कि कवियों से भी यह आग्रह करते हैं कि नारी पर अभद्र मजाक को बिलकुल भी स्वीकारय न माना जाए।

**" भविष्य में आस्था है**
**इसलिए इतना तो बताएंगे,**
**कि उस जमाने के हास्य-कवि**
**मोटी बीवी**
**काली पत्नी**
**साली, घरवाली**
**या औरत के अपमान को**
**कविता का विषय नहीं बनाएंगे।"7**

समाज के नैतिक क्षरण को रोकने का इससे अच्छा उपाय हो ही क्या सकता है कि जिन चीजों को सामान्य हंसी मजाक में साधारण समझा जाता है वे असल में किसी का अपमान कर रही है जैसे साली घरवाली ,काली पत्नी , मोटी बीवी आदि को साफ ओर सरल शब्दों में प्रयोग न करने की अपील करना।

7. **ऐतिहासिक गौरव और राष्ट्र–निर्माण में नारी की भूमिका**

अशोक चक्रधर के काव्य संसार में आम भारतीय नारी के साथ साथ भारत के इतिहास को दिशा देने वाली वीरांगनाओं का गौरवगान भी विस्तारपूर्वक किया है। भारतीय नारी केवल शोषित नहीं है बल्कि उसने राष्ट्र निर्माण में भी अहम योगदान दिया है।

**"वह धर्मकामा, सत्यभामा, थीं सरोजिनि नायडू,**
**स्वातंत्र्य का इक हलफ़नामा थीं सरोजिनि नायडू।"8**

इसी प्रकार मैडम भीकाएजी कामा, कस्तूरबा गांधी , इंद्रा गांधी आदि महिलाओं को अपने काव्य में सम्मान दिया है जिन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन और इतिहास को एक अहम मोड़ दिया है। अर्थात जब जब भारत पर संकट के काले बादल मंडराए हैं नारी शक्ति ने आगे आकर अपनी कमान संभाली है।

**निष्कर्ष**

अतः कहा जा सकता है कि अशोक चक्रधर के काव्य में स्त्री-विमर्श केवल स्त्री की पीड़ा और शोषण के चित्रण तक सीमित नहीं है, बल्कि वह स्त्री के स्वाभिमान, अस्मिता, अधिकार, स्वतंत्रता और सामाजिक समानता के व्यापक प्रश्नों को सामने लाता है। कवि ने हास्य और व्यंग्य को माध्यम बनाकर कन्या-भ्रूण हत्या, दहेज-प्रथा, यौन हिंसा, पुरुष-सत्तात्मक मानसिकता, स्त्री के दोहरे श्रम तथा स्त्री के प्रति प्रचलित रूढ़ धारणाओं पर तीखा प्रहार किया है। साथ ही, उन्होंने स्त्री के संपत्ति संबंधी अधिकार और उसके सामाजिक सम्मान की आवश्यकता को भी रेखांकित किया है।

अशोक चक्रधर के काव्य की विशेषता यह है कि वे स्त्री को केवल करुणा और सहानुभूति की पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उसे अपने अधिकारों के प्रति सजग, स्वाभिमानी और प्रतिरोध की चेतना से संपन्न व्यक्तित्व के रूप में देखते हैं। 'जा, तू अब मेरे लायक़ नहीं रहा' जैसी अभिव्यक्ति स्त्री के भीतर विकसित हो रहे आत्मसम्मान और पुरुष-सत्ता के प्रतिरोध को स्पष्ट करती है। इसी प्रकार, घरेलू कार्यों को केवल स्त्री का दायित्व मानने वाली मानसिकता का विरोध करते हुए वे स्त्री-पुरुष के बीच समान जिम्मेदारी की आवश्यकता पर बल देते हैं।

इसके अतिरिक्त, अशोक चक्रधर स्त्री के ऐतिहासिक और राष्ट्र-निर्माणकारी योगदान को भी सम्मान देते हैं। सरोजिनी नायडू, मैडम भीकाजी कामा, कस्तूरबा गांधी और इंदिरा गांधी जैसी स्त्रियों का स्मरण करते हुए उनका काव्य यह स्थापित करता है कि भारतीय नारी केवल शोषण और संघर्ष की प्रतीक नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, स्वतंत्रता और राष्ट्र-निर्माण की सक्रिय शक्ति भी रही है।

इस प्रकार, अशोक चक्रधर का काव्य-संसार स्त्री-विमर्श के विविध आयामों को समेटते हुए सामाजिक चेतना का सशक्त माध्यम बन जाता है। उनका हास्य और व्यंग्य पाठक को केवल हँसाता नहीं, बल्कि उन सामाजिक विसंगतियों पर गंभीरता से विचार करने के लिए प्रेरित करता है, जिन्हें सामान्यतः समाज सहज मानकर स्वीकार कर लेता है। यही कारण है कि उनका स्त्री-विमर्श समकालीन सामाजिक संदर्भों में प्रासंगिक दिखाई देता है और स्त्री के सम्मान, समानता तथा स्वायत्तता पर आधारित अधिक संवेदनशील समाज की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

**संदर्भ सूची**


1. **https://askfilo.com/user-question-answers -smart-solutions/strii-vimrsh-arth -pribhaassaa-strii-vimrsh-kaa-arth-aur -3435383536393732**
2. **अशोक चक्रधर,जो करे सो जोकर , डायमंड पब्लिकेशन, नई दिल्ली ,2007, पृष्ठ 113**
3. **अशोक चक्रधर,तमाशा, हिंदी साहित्य निकेतन,1986, पृष्ठ 111**

4. अशोक चक्रधर,इसलिए बौड़म जी इसलिए, डायमंड पब्लिकेशन, नई दिल्ली ,2007, पृष्ठ 21
5. अशोक चक्रधर,मालाराम, पेंगुइन प्रकाशन नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 55
6. अशोक चक्रधर, बोलगप्पे, डायमंड पब्लिकेशन, नई दिल्ली,2001, पृष्ठ 83
7. अशोक चक्रधर, हंसो और मर जाओ, हिंदी साहित्य निकेतन, 1990, पृष्ठ 65
8. अशोक चक्रधर, जाने क्या टपके, डायमंड पब्लिकेशन, नई दिल्ली,2001, पृष्ठ 99

**मोबाइल नो. 8307483824**
**Email. ns3058941@gmail.com**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 154-158
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# हिन्दी साहित्य का डिजिटलीकरण : परंपरा से आधुनिकता की ओर

**अंजली पटेल**
(शोधार्थी),
तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, थिरुवारुर
**प्रो.एस.वी.एस.एस.नारायणराजू**
शोध निर्देशक

**शोध सार :-** वैसे तो हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग भारतेन्दु युग के शुरुवात से मानी जाती है, परंतु आधुनिकता को समयसीमा में बाँधा हीं नहीं जा सकता। साहित्य और भाषा दोनों हीं स्थिर या रुकी हुई वस्तु तो हैं नहीं बल्कि जीवंत और प्रवाहमान हैं जो समय के अनुकूल अपने को ढालती रहती हैं। डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार "आधुनिक भावबोध कोई संदर्व च्युत जीवन-मूल्य नहीं, प्रत्युत संक्रमण की टकराहट से निष्पन्न आग्नेय कण है, जीवंतता का ज्वाला कण है, जो अतीत और वर्तमान के बीच की संवादहीनता को भंग कर उनमें एक लंबे और सुदीर्घ संवाद का मंच प्रस्तुत करता है।"[1] हिन्दी साहित्य का आधुनिकीकरण से सीधा अर्थ है समय की जरूरतों के हिसाब से उसका विकास। यह विकास मुख्य रूप से तीन तरह से होती है 1) नए शब्द और शब्दावली का सृजन, 2) तकनीकी और वैज्ञानिक अभिव्यक्ति, 3) सरलीकरण या व्यावहारिकता। डिजिटलीकरण वह प्रक्रिया है जिसके तहत आज अनेक भाषाओं को डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे इंटरनेट, सोशल मीडिया, मोबाईल एप्पस के अनुकूल ढाला जा रहा है। आज के दौर में यह भाष आके विस्तार का सबसे बाद माध्यम बन गया है। और साहित्य का यह डिजिटलीकरण हीं वर्तमान समय का आधुनिकीकरण है। 21वीं सदी का यह डिजिटल क्रांति से साहित्य भाषा अपने को अछूता नहिन रख सकती है। प्रस्तुत शोध पत्र में कागज-कलम के मुद्रित पृष्ठों से लेकर स्क्रीन और की-बोर्ड तक हिन्दी साहित्य की विकास यात्रा का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन इस बात का परीक्षण करता है कि किस तरह डिजिटलीकरण के कारण हिन्दी साहित्य अपने परामराओं को तोड़ती हुई वैश्विक मंच पर जा खड़ी हुई है।

शोध में 'कवितकोश', 'गद्यकोश', और 'रेख्ता' जैसे डिजिटल अर्काइव्स् द्वारा दुर्लभ और कालजयी साहित्यिक कृतिओन के संरक्षण की भूमिका के साथ साथ 'समालोचना', 'हंस','साहित्य अमृत" जैसी ई-पत्रिकाएँ तथा सोशल मीडिया जैसे फेस्बूक, इंस्टाग्राम आदि के माध्यम से साहित्य का लोकतंत्रिकरण और नए लेखक-पाठक वर्ग के अभ्युदय का विश्लेषण किया गया है। हालाँकि, इस बढ़ती तकनीक से कुछ गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई है जैसे-

त्वरित और स्व-प्रकाशन के कारण साहित्यिक गहराई और सम्पादन की कमी, हिंगलिश भाषा का प्रयोग, कॉपीराइट की समस्या आदि।

**बीज शब्द :** डिजिटलीकरण, हिन्दी साहित्य, डिजिटल आर्काइव, सोशल मीडिया, औडियो बुक्स, 21वीं सदी, ई-पत्रिकाएँ।

**प्रस्तावना :**

21वीं सदी को सूचना, संचार और प्रौद्योगिकी की क्रांति का युग माना जाता है। यह वैश्विक परिवर्तन केवल प्रौद्योगिकी, समाज, संस्कृति या विचार प्रक्रिया का नहीं है बल्कि साहित्य और भाषाई परिदृश्य को भी इसने गहराई से प्रभावित किया है। साहित्य, जो किसी भी समाज का जीवंत और संवेदनशील दर्पण होता है, माध्यमों के परिवर्तन के साथ-साथ अपने रूप, शिल्प और पहुँच में निरंतर बदलाव लाता रहा है।

हिंदी साहित्य की यात्रा ताड़पत्रों, भोजपत्रों और पांडुलिपियों से प्रारंभ होकर मुद्रण कला के माध्यम से जन-जन तक पहुँची थी। किंतु २१वीं सदी के प्रथम दो दशकों में कंप्यूटर, यूनिकोड तकनीक, इंटरनेट, स्मार्टफोन और सोशल मीडिया के सर्वव्यापी प्रसार ने हिंदी साहित्य को कागज़ और छपाई की सीमाओं से बाहर निकालकर 'डिजिटल स्पेस' में स्थापित कर दिया है। आज हिंदी साहित्य केवल किताबों और मुद्रित पत्रिकाओं तक सीमित न रहकर ई-पत्रिकाओं, ब्लॉग्स, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स, ई-बुक्स, डिजिटल आर्काइव्स और ऑडियो-पॉडकास्ट के रूप में वैश्विक स्तर पर उपलब्ध है।

हिन्दी भाषा और समाज में स्त्री की स्थिति के मध्य एक गहरा समानांतर संबंध देखा जा सकता है। जिस प्रकार समाज में लिंग-भेद, वर्ग-भेद और भाषागत भेद एक-दूसरे से जुड़कर स्त्री की अभिव्यक्ति को सीमित करते हैं, ठीक उसी प्रकार डिजिटल स्पेस में भी भाषा और लैंगिक पहुँच को लेकर चुनौतियाँ बनी हुई हैं। मृणाल पांडे जी के अनुसार, "मुझे लगता है की में कई मायनों में स्त्री की स्थिति और हिन्दी की स्थिति बहुत हिन्दी की स्थिति और स्त्री की स्थिति की तरह है ।समानांतर चलते हैं। हमारे समाज में हम सभी जानते हैं, लिंग भेद व्याप्त है और वर्गगत भेद भी है लेकिन भाषागत भेद भी है"।[2]

**डिजिटलीकरण से हिन्दी साहित्य में आए प्रमुख परिवर्तन :**

**1.परंपरा से आधुनिकता का सेतु**

डिजिटलीकरण को हिंदी साहित्य की समृद्ध परंपरा के विरोधी के रूप में देखना भ्रामक होगा। वस्तुतः डिजिटलीकरण परंपरा और आधुनिकता के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य कर रहा है । एक ओर जहाँ 'कविता कोश', 'गद्य कोश' और 'रेख्ता' जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म्स कबीर, तुलसी, सूरदास, प्रेमचंद, निराला और महादेवी वर्मा जैसी कालजयी हस्तियों की दुर्लभ कृतियों को नष्ट होने से बचाकर भविष्य की पीढ़ियों के लिए संरक्षित कर रहे हैं; वहीं दूसरी ओर 'समालोचन', 'जानकीपुल' और 'स्त्रीकाल' जैसी ई-पत्रिकाएँ तथा फेसबुक, इंस्टाग्राम एवं एक्स ट्विटर जैसे मंच नए और युवा रचनाकारों को अपनी अभिव्यक्ति के लिए एक बाधा-रहित मंच प्रदान कर रहे हैं। बेशक यह डिजिटल माध्यम सेतु का काम कर रहा ही पुरानी परंपराओं को आधुनिक तकनीकों से जोड़ने का काम कर रहा है। आज के समय में बहुत सारी पत्रिकाएँ भी हैं जैसे आजतक, दैनिक भाष्कर, अमर उजाला आदि अपना डिजिटल संस्करण भी निकाल रहे हैं।

**2.साहित्य का लोकतंत्रीकरण और नया पाठक वर्ग**

डिजिटल क्रांति का सबसे बड़ा योगदान 'साहित्य का लोकतंत्रीकरण' है। पारंपरिक प्रकाशन व्यवस्था में किसी नए लेखक के लिए अपनी रचना को पाठकों तक पहुँचाना संपादकों और प्रकाशकों की स्वीकृति पर निर्भर करता था। डिजिटल माध्यमों ने इस बिचौलिए की व्यवस्था को समाप्त कर दिया है। अब कोई भी लेखक अपनी रचना को तुरंत पोस्ट कर सकता है और विश्वभर में फैले करोड़ों हिंदी भाषियों तक अपनी बात सीधे पहुँचा सकता

है। इसके साथ ही, ऑडियो बुक्स (जैसे कुकु एफ़एम, पॉकेट एफ़एम) और डिजिटल पॉडकास्ट ने साहित्य को केवल 'पढ़ने' की वस्तु न बनाकर 'सुनने' की सहज विधा बना दिया है, जिससे एक नया और विशाल पाठक या श्रोता वर्ग तैयार हुआ है। आज हर व्यक्ति के पास यह सुविधा मौजूद है की वह अपने को अभिव्यक्त कर सके। मधुकर लेले इसस संदर्भ में कहते हैं "हर कोई चाहता है की उसकी बात भी सुनी जानी चाहिए। समाज के दबे-गिरे वर्गों में इससे काफी हद तक आत्मविश्वास बढ़ है"।[3]

**3. पाठक से श्रोता बनने का बदलाव**

मुद्रित पृष्ठों को आँखों से पढ़ने की पारंपरिक परिपाटी के समानांतर अब साहित्य को कानों से 'सुनने' की एक नई संस्कृति तेज़ी से विकसित हुई है। ऑडियो बुक्स और पॉडकास्ट प्लेटफॉर्म्स के बढ़ते प्रसार ने साहित्य को केवल पठन की वस्तु न बनाकर श्रवण की सहज विधा में रूपांतरित कर दिया है। इस परिवर्तन ने न केवल साहित्य की पहुँच को असीम विस्तार दिया है, बल्कि उन लोगों को भी साहित्य से पुनः जोड़ दिया है जो व्यस्त दिनचर्या, यात्रा या आँखों के तनाव के कारण किताबें पढ़ने का समय नहीं निकाल पाते थे। इसके साथ ही, ध्वनि-प्रभावों, पार्श्व संगीत और पेशेवर वाचन ने उपन्यासों और कहानियों के नाटकीय और भावनात्मक प्रभाव को बहुगुणित कर दिया है। यह बदलाव एक प्रकार से हमारी प्राचीन 'श्रुति और मौखिक' साहित्य परंपरा की आधुनिक डिजिटल पुनरावृत्ति जैसा प्रतीत होता है। हालाँकि यह प्रश्न भी उठता है कि क्या 'सुनने' की इस प्रक्रिया में पाठक की वह गंभीर चिंतनशीलता और कल्पनाशीलता बनी रहती है जो एक एकांत पठन के दौरान निर्मित होती है, अथवा यह केवल मनोरंजक साहित्य तक सीमित होकर रह जाती है।

**4. लघु- रूप साहित्य**

डिजिटल परिदृश्य में सोशल मीडिया जैसे— इंस्टाग्राम, फेसबुक, 'एक्स' और थ्रेड्स के बढ़ते प्रसार ने साहित्य के शिल्प और संरचना में एक बड़ा बदलाव ला दिया है। तीव्र गति से चलती डिजिटल दिनचर्या और पाठकों के घटते ध्यानावधि के कारण लंबे उपन्यासों और प्रबंध काव्यों के स्थान पर 'लघु-रूप साहित्य' का प्रचलन तेज़ी से बढ़ा है। इसके अंतर्गत माइक्रो-फिक्शन, नैनो-स्टोरीज़, दो-पंक्ति कविताएँ, और इंस्टा-पोएट्री जैसी नई साहित्यिक विधाएँ तेजी से उभरकर सामने आई हैं। यह लघु-रूप साहित्य कम से कम शब्दों में गहरी संवेदना, सामाजिक सरोकार और तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की कला पर आधारित है। डिजिटल कार्ड्स, इमेजेस और रील्स के रूप में प्रस्तुत यह साहित्य पारंपरिक साहित्यिक मानदंडों की परवाह किए बिना सीधे पाठकों से जुड़ता है।

**5. व्यावहारिक भाषा एवं हिंगलिश का प्रयोग**

डिजिटल साहित्य और न्यू-मीडिया में पाठकों से सहजता से जुड़ने और अभिव्यक्ति को सुगम बनाने के नाम पर भाषा के स्वरूप में बड़ा बदलाव आया है। डिजिटल मंचों पर पाठकों का बड़ा वर्ग युवा पीढ़ी का है, जो दैनिक जीवन में शुद्ध तत्सम हिंदी के बजाय आम बोलचाल की व्यावहारिक भाषा का प्रयोग करता है। इसी व्यावहारिक ताने-बाने को बनाए रखने के चक्कर में हिंदी साहित्य के डिजिटल परिदृश्य में 'हिंग्लिश' अर्थात हिन्दी और अंग्रेजी मिश्रित भाषा का समावेश बहुत तेज़ी से बढ़ा है। यह प्रयोग न केवल देवनागरी लिपि के भीतर अंग्रेज़ी शब्दों के समावेश तक सीमित है, बल्कि रोमन लिपि में हिंदी लिखने के रूप में भी सामने आ रहा है। उदाहरणके रूप में

1. देवनागरी में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग : "आज कल लाइफ बहुत स्ट्रेस्फुल हो गई है"।
2. रोमन लिपि में हिन्दी अभिव्यक्ति : "Dil ki baton ko express karna mushkil hota hai."

प्रा. अन्विंक मुंशी, डॉ. मंत्री एम्.आड़े के द्वारा दिए गए तथ्यों के अनुसार सोशल मीडिया पर (फेस्बूक, ट्विटर, इंस्टाग्राम) केवल 22.66% देवनागरी लिपि में मिली और बाकी 42.66% रोमन लिपि में और

34.67% हिंगलिश भक्ष में तथ्य उपलब्ध मिले। हिन्दी भाषा अपनी जगह डिजिटल मध्यमों में बनाने की विकासशील स्थिति में है ।[5]

**6. त्वरित प्रतिक्रिया और सीधा संवाद**

पारंपरिक मुद्रित साहित्य में किसी पुस्तक या रचना के प्रकाशन के पश्चात् पाठक की प्रतिक्रिया लेखक तक पहुँचने में महीनों या वर्षों का समय लग जाता था । यह संवाद मुख्य रूप से पत्रों, पत्रिकाओं की समीक्षाओं या साहित्यिक गोष्ठियों तक ही सीमित था । इसके विपरीत, डिजिटल मंचों ने इस दूरी को पूरी तरह समाप्त कर दिया है । आज जैसे ही कोई लेखक अपनी कविता, कहानी या विचार डिजिटल स्पेस में पोस्ट करता है, पाठकों की प्रतिक्रिया 'लाइक', 'कमेंट', 'शेयर' और 'री-ट्वीट' के रूप में तुरंत उपलब्ध हो जाती है । यह सीधा संवाद न केवल लेखक को अपनी रचना के प्रभाव का तत्काल मूल्यांकन करने का अवसर देता है, बल्कि पाठकों को भी साहित्यिक प्रक्रिया का एक सक्रिय सहभागी बनाता है । इस व्यवस्था ने साहित्य में 'पाठक की भूमिका' को अधिक सशक्त और गतिशील बना दिया है । हालाँकि, इस त्वरित संवाद का एक चिंताजनक पहलू यह भी है कि कई बार गंभीर और विचारोत्तेजक साहित्य के स्थान पर केवल लोकप्रिय या सनसनीखेज सामग्री को अधिक रीच मिलती है, जिससे रचनात्मक गहराई प्रभावित होने की आशंका बनी रहती है ।

**निष्कर्ष :**

हिंदी साहित्य का डिजिटलीकरण केवल माध्यम का बदलाव भर नहीं है, बल्कि यह साहित्यिक चेतना, अभिव्यक्ति के शिल्प और पाठक की संवेदना में आया एक युगांतकारी परिवर्तन है। प्रस्तुत शोध पत्र इस तथ्य को रेखांकित करता है कि डिजिटलीकरण ने परंपरा को न तो नष्ट किया है और न ही प्रतिस्थापित; बल्कि इसने परंपरा को आधुनिकता के साथ जोड़कर एक 'डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र' निर्माण करने का प्रयास किया है ।

जहाँ एक ओर 'कविता कोश', 'गद्य कोश' और 'रेखता' जैसे डिजिटल अभिलेखागारों ने हमारी कालजयी विरासत को वैश्विक पटल पर अमर बना दिया है, वहीं दूसरी ओर सोशल मीडिया, ई-पत्रिकाओं और ऑडियो-पॉडकास्ट ने 'साहित्य के विकेंद्रीकरण' की प्रक्रिया को गति दी है । साहित्य अब किसी विशिष्ट वर्ग, शहर या मुद्रण गृहों के एकाधिकार में नहीं रहा, बल्कि वह आम जनमानस की उंगलियों की नोक पर उपलब्ध है । 'पाठक से श्रोता' बनने का यह बदलाव हमारी प्राचीन मौखिक-श्रुति परंपरा की एक आधुनिक डिजिटल पुनरावृत्ति प्रतीत होता है । हालाँकि, इस तकनीकी विकास का दूसरा पहलू चिंताजनक भी हैn। त्वरित अभिव्यक्ति और लोकप्रिय होने की होड़ में साहित्यिक गंभीरता, संपादन की छननी और भाषाई शुद्धता का ह्रास हुआ है । व्यावहारिक भाषा के नाम पर 'हिंग्लिश' का बढ़ता दबाव और कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा सृजित साहित्य ने 'लेखक की मौलिक संवेदना' पर गंभीर प्रश्नचिह्न खड़े किए हैं ।

अंततः, प्रस्तुत शोध पत्र यह निष्कर्ष निकालता है कि तकनीक साहित्य का सेवक हो सकती है, उसकी स्वामी नहीं। डिजिटलीकरण हिंदी साहित्य की पहुँच और प्रसार का सशक्त साधन तो बन सकता है, किंतु साहित्यिक मूल्य, भाषाई गरिमा और मानवीय संवेदना ही साहित्य की आत्मा बनी रहेंगी । यदि हम तकनीक की गति के साथ अपनी साहित्यिक प्रामाणिकता का संतुलन बनाए रखने में सफल रहते हैं, तो डिजिटलीकरण २१वीं सदी में हिंदी साहित्य के स्वर्ण युग का द्वार सिद्ध हो सकता है ।

**संदर्भ श्रोत :-**


1. आधुनिकताबोध और आधुनिकीकरण – ले. रमेश कुंतल मेघ, पृ. सं.-314
2. नए जनसंचार माध्यम और हिन्दी – सुधीश पचौरी, अचला शर्मा, पृ. सं.- 22

3. भारत में जनसंचार और प्रसारण मीडिया - मधुकर लेले, पृ. सं.- 162
4. सोशल मीडिया पर हिन्दी भाषा की स्थिति – डॉ. प्रियंका रानी, IJARPS
5. सोशल मीडिया और हिन्दी भक्ष : परिवर्तन, चुनौतियाँ और भविष्य – प्रा. अन्विंक मुंशी, डॉ. मंत्री एम्.आड़े – *Aethel Research Digest Juncture*, Jan-Fab,2026
6. सूचना प्रौद्योगिकी और समाचार- पत्र – रवींद्र शुक्ला, राधाकृष्ण प्रकाशन
7. मीडिया, वर्चुअल लोकतंत्र और हिन्दी साहित्य – मुकेश पचौरी, अपनी माटी, 2022

स्थायी पता – पिक्रीझरण,पो.- कुम्भो,जिला-बरगढ़,768045, ओडिशा
Email id- apanjalipatel1@hmail.com
Mob No- 9348026602

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 159-163
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# चंद्रकिशोर जायसवाल के कथा-साहित्य में बाल-मन की मनोवैज्ञानिक परिवेश

**नितीश कुमार**
शोधार्थी
हिन्दी विभाग ,
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार।

**शोध-सार -**
बाल्यावस्था मानव जीवन की सबसे महत्वपूर्ण अवस्था है। इसी अवस्था में बच्चे के व्यक्तित्व, समझ, व्यवहार और भावनाओं की प्रगति होती है। बच्चा अपने परिवार, विद्यालय और समाज से बहुत कुछ सीखता है। उसके अगल-बगल का माहौल उसके सोचने-समझने और व्यवहार करने के ढंग को प्रभावित करता है। अगर बच्चे को परिवार और समाज से स्नेह, सहयोग, सुरक्षा तथा उचित मार्गदर्शन मिलता है, तो उसका मानसिक और भावनात्मक प्रगति अच्छी तरह से होती है। इसके विपरीत, उपेक्षा, गरीबी, भेद-भाव और असुरक्षा का माहौल उसके मन पर बुरा असर डाल सकता है। हिन्दी कथा साहित्य में बाल-जीवन और बाल-मन से जुड़ी विभिन्न समस्याओं का वर्णन मिलता है। कथाकार चंद्रकिशोर जायसवाल ने अपने कथा-साहित्य में समाज के सामान्य लोगों के जीवन, ग्रामीण परिवेश, आर्थिक असमानता और सामाजिक रिश्ते को खास जगह प्रदान किया है। उनकी रचनाओं में बच्चों के जीवन से जुड़ी समस्याओं को सामाजिक परिस्थितियों के बारे में समझने का मौका मिलता है। उनके बाल-पात्रों के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जा सकता है कि परिवार और समाज का व्यवहार बच्चों की भावनाओं तथा मानसिक स्थिति को किस तरह अस्त-व्यस्त करता है। बच्चों के अंतर्मन में डर, असुरक्षा, हीनभावना, अकेलापन और उपेक्षा जैसी भावनाएँ कई बार उनके आस-पास की परिस्थितियों के कारण पैदा होती हैं। गरीबी, पारिवारिक तनाव, सामाजिक भेद-भाव और स्नेह की कमी भी उनके मानसिक प्रगति में रुकावट बन सकती है। इस समस्याओं को समझने के लिए बालक के व्यवहार के साथ-साथ उसके सामाजिक और पारिवारिक माहौल का अध्ययन करना आवश्यक है। चंद्रकिशोर जायसवाल की कहानियों में 'चोर', 'गंदे बच्चे', 'बच्चे' तथा 'नकबेसर कागा ले भागा' के बारे में बाल-मन और सामाजिक रहन-सहन के रिश्ते का अध्ययन किया जा सकता है। इन रचनाओं के माध्यम से बच्चों की अनुभूतियों, सामाजिक परिस्थितियों और उनके

जीवन से जुड़ी समस्याओं को समझने की कोशिश की जा सकती है। इस तरह, चंद्रकिशोर जायसवाल के कथा साहित्य में बाल-मन की मनोवैज्ञानिक समस्याओं और सामाजिक रहन-सहन का अध्ययन खास है। इससे यह समझने में सहायता मिलती है कि बच्चों का मानसिक प्रगति सिर्फ उनकी व्यक्तिगत प्रवृत्तियों पर निर्भर नहीं करता, अपितु परिवार, समाज और आर्थिक परिस्थितियाँ भी इसमें खास भूमिका अदा करती हैं।

**बीज शब्द -** बाल-मन, मनोवैज्ञानिक समस्याएँ, सामाजिक रहन-सहन, आर्थिक विषमता, बाल-शोषण, पारिवारिक माहौल, सामाजिक भेदभाव, बाल-चेतना आदि।

**मूल आलेख/विस्तार -** साहित्य समाज और मानव जीवन की छाया उपस्थित करता है। साहित्यकार अपने आस-पास की घटित-घटनाओं, लोगों के अनुभवों, भावनाओं और समस्याओं को अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। साहित्य के माध्यम से हम मानव के विचारों, व्यवहार और सामाजिक परिस्थितियों को समझ सकते हैं। कथा साहित्य में बाल-जीवन का विशेष महत्व है, क्योंकि बचपन में ही बच्चे के व्यक्तित्व और व्यवहार की प्रगति होती है।

बाल मनोवैज्ञानिक में बच्चों के मन, व्यवहार, भावनाओं और सोचने-समझने की क्षमता का अध्ययन किया जाता है। बच्चों का अंतर्मन अति नाजुक और भावुक होता है, परिवार, स्कूल, मित्र और समाज का माहौल उनके जीवन को प्रभावित करता है।

"रक्ताक्त हो उठे हैं उसके अधर
और लाली छा गयी कपोलों पर,
कर्ण-फूल मुस्करा उठे हैं
और मुक्त हो गये हैं
नुपुरों में बंधे स्वर,
कनक-मेखला दीप्त हो उठी है
और तोड़कर गहरी नींद
कसमसा रहे है कंकण और भुजदंड।" 1

इस काव्य की प्रथम पंक्ति में अत्यधिक और स्वाभाविक वर्णन हुआ है। यह भाव संवेदनशील और जीवनुभव पर आधारित दिखाई देता है। उपन्यासकार बालक को सिर्फ एक निष्क्रिय पात्र के रूप में प्रचार नहीं करते, अपितु उसकी भावनाओं, आकांक्षाओं, जिज्ञासाओं, कल्पनाओं और मानसिक प्रतिक्रियाओं को महत्व देते हैं। बालमन की सहजता, चंचलता और भावुकता उनके पात्रों के व्यवहार में साफ रूप से झलकती है। बालमनोविज्ञान की सबसे प्रमुख विशेषता जिज्ञासा है। बालक अपने आसपास घटित होने वाली प्रत्येक घटना को जानना और आश्चर्य से समझना चाहता है। उसकी नजर में संसार कौतूहल और चकित से भरा हुआ है। जायसवाल जी के उपन्यासों में बच्चों की यही जिज्ञासा प्रवृत्ति उनके मानसिक प्रगति को स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त करती है। यहाँ कविता की पंक्तियों के माध्यम से बालक की शारीरिक, क्रियाकलाप, को एक साथ उसकी मानसिक खुशी को व्यक्त किया गया है। बाल के अंतर्मन में कल्पनाशीलता का भी विशेष स्थान है। बालक वास्तविक संसार को अपनी कल्पना के रंगों से अधिक सुंदर और आकर्षक बना लेता है। बच्चे के लाल होठ लाल कपोल, मुस्कुराते कान, नुपुरों की छन-छन कंकण अर्थात भुजदंड की छन-छन उसके निश्चल और आनंदमय बाल स्वभाव को व्यक्त करते हैं।

"इसी वक्त उन सबको एक लम्बी हुंकार सुनायी पड़ी, दादा हो..! हो दादा- एक लड़का दौड़ता हुआ सगरी भगत के खेत में घुसा था। सब लोगों की नजरें उधर ही चली गयी। लड़का एकबार चौतरफा देखने के बाद अब उन्हीं की ओर बढ़ रहा

था। समीप आते ही बड़े परेशान स्वर में उसने उनसे पूछा, की दादा हौ..? नहीं, आज तो.. पूरा उत्तर सुने बगैर ही लड़का आंधी के बीच दौड़ गया,.. दादा.. हौ..! गाँव के सबसे वृद्ध व्यक्ति हैं बिंदेश्वरी जी। सारा गाँव के सामने बच्चा है।" 2 इस अंश में बच्चे का व्यवहार उसके चंचल, जिज्ञासु और भावुक मन को उजागर करता है। लड़का किसी जरूरी बात की सूचना देने के लिए बहुत घबराया हुआ दौड़कर आता है।

बढ़ जाता है। यह गाँव के सबसे वृद्ध व्यक्ति विश्वास से भी बिना झिझक पूछता है। इससे बच्चे की अंतर्मन की सरलता, सहजता और निडरता, उभर कर सामने आती है। उसके लिए उम्र का अंतर बाधा नहीं बताता है। उसकी परेशानी और जल्दी में बोलना यह भी दिखाता है, बच्चे अपनी भावनाओं को छिपाने के बजाय सीधे और स्वाभाविक तरीके से प्रशस्त हुआ है।

यहाँ भाव देखें तो बच्चे के मन में किसी घटना या व्यक्ति को लेकर अधिक उत्सुकता है। वह इधर-उधर देखकर तुरंत लोगों से पूछता है। बालमन सामान्यतः नई घटनाओं को जानने और समझने के लिए बेसब्र उत्सुक रहता है। यहाँ भी बच्चा अपनी जिज्ञासा को दबाता नहीं, वह खुलकर सवाल करता है। गाँव का वातावरण बच्चे के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। दादा कहकर पुकारना बताता है कि वह अपने आस-पास के सामाजिक और पारिवारिक संबंधों को सीख चुका है। बाल मनोविज्ञान के अनुसार बच्चों अपने परिवार और समाज से भाषा व्यवहार तथा संबंधों के तरीके सीखते हैं। बच्चा यहाँ परिस्थिति के बारे में सोचे विचार करके व्यवस्थित ढंग से बात नहीं करता है। वह जो जानना चाहता है, तुरंत पूछता है और फिर आगे बढ़ जाता है। यह बाल के अंतर्मन की तत्काल प्रतिक्रिया देने की प्रवृत्ति को दर्शाता है। यहाँ पूरा गाँव समाज उपस्थित है और बच्चा इस सामूहिक समारोह का सहज हिस्सा बन जाता है। उसकी उपस्थिति से सभी लोगों का ध्यान उसकी ओर चला जाता है। इससे पता चलता है कि गाँव जैसे सामुदायिक वातावरण में बच्चा मात्र परिवार का सदस्य नहीं, किन्तु पूरे सामाजिक समूह का हिस्सा होता है। रचनाकार ने किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धांत को सीधे समझाने के बजाय बच्चे के स्वाभाविक व्यवहार के माध्यम से बाल मनोविज्ञान को उजागर किया है। "जिसे एक लावारिस बच्चा 'छोटे', जो अब तक उसका अनुचर और पीने के समय दोस्त हो गया है, खींचता है"3

चंद्रकिशोर जायसवाल की कहानी 'नकबेसर कागा ले भागा' में छोटे के माध्यम से बाल-मन से जुड़े महत्वपूर्ण पक्ष उपस्थित होता है। बालक का व्यक्तित्व उसके पारिवारिक परिवेश, सामाजिक परिस्थितियों और आसपास के लोगों के व्यवहार से प्रभावित होता है। कहानी में छोटे का जीवन अभावग्रस्त परिस्थितियों के बीच विकसित होता दिखाई देता है। जिस उम्र में उसको बच्चों को शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए तथा खेलकूद के माध्यम से अपने व्यक्तित्व का विकास करना चाहिए, उस उम्र में उसका भिक्षावृत्ति से जुड़े व्यक्ति के साथ रहना सामाजिक विषमता को उजागर करता है। इससे बालक के मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक विकास पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों का संकेत मिलता है।

"नकबेसर आगे बढ़ते हुए छोटू ने कहा, भगवान जो करता है वह अच्छा ही करता है। रनिया तो बदमाश है चाचा, हर हमेशा तो कंधी-चोटी में लगी रहती है। वह दस बारों की भूतन खानेवाली है। तुम्हारे एक बार से भला उसका गुजारा हो बस, यही समझो चाचा कि भगवान ने तुम्हें वह दस द्वारों की जूठन खाने वाली है कभी काम नहीं आती।" 4

कथाकार चंद्रकिशोर जायसवाल जी ने कहानी 'नकबेसर कागा ले भागा' में खासकर बाल-मनोविज्ञान को दर्शाने की कोशिश की है। यहाँ मौजूद-प्रसंग में बालक के विचारों और उसके व्यवहार के दृष्टि से बाल-मनोविज्ञान को समझा है। छोटू चाचा को समझाते हुए कहता है कि भगवान जो करता है, अच्छा ही करता है। वह रनिया के व्यवहार की निंदा करता है और उनके प्रति अपनी राय बनाता है। छोटू को पहले से ही पता था कि रनिया की सोच अच्छी नहीं है। वह बोलने के लायक नहीं है। छोटू की बातों से यह भी साफ होता है कि वह सुख-दुःख में साथ देने वाला इंसान को

अधिक खास समझता है। उसके विचारों पर सामाजिक माहौल और खुद के अनुभवों का असर दिखाई देता है। वह रनिया के आन्तरिक व्यवहार को सही नहीं मानता और चाचा को उसके जाने से दुःखी न होने की सलाह देता है।
"हाँ माँ" मंटू ने फटाफट जवाब दिया, "माँगकर लूँगा। बस अभी मुझे सिर्फ एक बिस्किट और एक टॉफी दे दो.. ऐसा करो अभी दो दे दो।" परहेज करते हुए अभी का हिस्सा लेकर मंटू ने माँ को उन्हें रखने की सही जगह बता दी।" 5

कथाकार चंद्रकिशोर जायसवाल ने यहाँ मंटू के बाल-मन की भावनाओं और उसकी कोमल भावों को इस कहानी में दिखाने का एक व्यापक प्रयास किया है। मंटू ने अपनी माँ से बिस्किट और टॉफी माँगता है। वह पहले एक-एक चीज माँगता है, फिर दो दो देने की सहज बात करता है। यहाँ साफ बालमनोविज्ञान मालूम पड़ता है कि बच्चों में अपनी पसंद की वस्तुएँ पाने की स्वाभाविक चाह होती है। मंटू की बातें उसकी चंचल स्वभाव और वर्तमान आनंद पाने भावना को उजागर करती हैं। वह अपनी माँ से खुलकर अपनी चाह व्यक्त करता है। इससे माँ और बच्चे के बीच अपनापन भी झलकता है। साथ ही मंटू का अपनी ममता मयी माँ को चीजे की सही स्थान बताना उसकी सोच समझ और आन्तरिक व्यवहार समझ को सामने लाता है।
"गुड्डी ने पहले ही दिन नाना से पूछा, "नाना, तुम्हारे पास किताब नहीं है?। "किताब! क्या करोगी किताब लेकर? "
"पढ़ूँगी।"
"अच्छा!" नाना मुस्करा उठे थे, तुम्हें किताब पढ़ना आता है?"
"हाँ, नाना आता है। लाओ न एक किताब!"

उस घर में एक रामायण भी किताब के नाम पर। बूढ़ा कभी रामायण पढ़ता तो नहीं था, मगर बहुत सँभालकर एक बक्से में बन्दकर रखी थी, ताकि कभी इच्छा भी होने पर उसका पाठ करे। पन्नों के फट-फट जाने का डर तो हुआ बूढ़े को, मगर बहुत सँभालकर एक बक्से में बन्द कर रखी थी, ताकि कभी इच्छा होने पर उसका पाठ करे। पन्नों के फट जाने का डर तो हुआ बूढ़े को, मगर वह लाचार था, कोई और किताब भी ही नहीं घर में। जब बूढ़ा किताब लेकर आ गया, तो गुड्डी ने कहा, "पहले तुम पढ़ो, नाना पढ़ने लगे, " दीन्हि असीम सासु मृदु बानी। अति सुकुमार देखि--- "धत्" गुड्डी मुंह बिचलाकर बोली, "तुम्हें पढ़ना नहीं आता है। लाओ किताब, मैं पढ़ती हूँ।"
नाना ने खुली रामायण गुड्डी के सामने रख दी, "गुड्डी पढ़ने लगी, "किताब में लिखा है कलम से, गुड्डी एक अच्छी लड़की है।"
दादा की तरह नाना ने हुँकारी नहीं भरी, तो गुड्डी ने सिर उठाकर नाना से पूछ लिया, "लिखा है न?" 6

चंद्रकिशोर जायसवाल द्वारा रचित कहानी है 'किताब में लिखा है' एक बालमनोविज्ञान दृष्टि से उच्चतम कोटि की कहानी है। इस में मौजूद कहानी अंश में बाल पात्र एक छोटी सी लड़की है जिसका नाम गुड्डी है। बड़ा ही चंचल स्वभाव की है। यहाँ गुड्डी की बालमन की प्रबल इच्छा, सीखने की इच्छा और कल्पनाशीलता का वर्णन किया गया है। गुड्डी अपने नाना से किताब माँगती है, क्योंकि वह पढ़ना चाहती है। जब नाना रामायण पढ़ते हैं, तो गुड्डी कहती है कि उन्हें पढ़ना नहीं आता। इसके बाद वह खुद किताब पढ़ने का नाटक करती है और कहती है कि उसमें लिखा है कि गुड्डी एक अच्छी लड़की है। वास्तव में वह किताब पढ़ना नहीं जानती, बसरते अपनी मन चाहत कहानी बना रही है। इससे उसके भोलेपन, आत्मबल और बनावटी दिमाग-प्रकृति का साफ मालूम पड़ता है। यह दिखाता है, वह चाहती है कि नाना उसकी बात पर पूर्णतः भरोसा करे और उसकी नाना बड़ाई करे। इससे उसकी खुशी का पता चलता है।

**निष्कर्ष**

इस शोध से पता चलता है कि बच्चा सबसे कोमल मन का होता है। वह जैसा देखता है, वैसा ही सिखता है। परिवार, स्कूल और समाज का असर उसके मन पर सीधा पड़ता है। कुल मिलाकर लेखक ने बताया है कि अगर बच्चे को प्यार, सुरक्षा और सही शिक्षा मिले तो उनका मानसिक विकास होता है। अगर गरीबी, डाट और उपेक्षा मिले तो उनके मन में डर और अकेलापन महसूस होता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**


1. 'चिरंजीव' उपन्यास - चंद्रकिशोर जायसवाल, प्रकाशन वर्ष - 2002, प्रकाशक - रचनाकार प्रकाशन, पूर्णिया,पृष्ठ-15
2. 'गवाह गैरहाजिर' (उपन्यास) - चंद्रकिशोर जायसवाल, प्रकाशन वर्ष - 2002, प्रकाशक - रचनाकार प्रकाशन, पूर्णिया पृष्ठ - 29
3. विनय कुमार चौधरी कृत 'रचना संसार', प्रकाशक - साहित्य सागर प्रकाशन,मधेपुरा, नवीन संस्करण - 2023, पृष्ठ - 96
4. 'प्रतिनिधि कहानियाँ' (कहानी संग्रह) - चंद्रकिशोर जायसवाल, प्रकाशन वर्ष - 2023, पृष्ठ 183
5. 5.'आघातपुष्प' (कहानी संग्रह) - चंद्रकिशोर जायसवाल, प्रकाशन वर्ष - 2025, प्रकाशक - रचनाकार प्रकाशन, पूर्णिया,पृष्ठ - 80
6. 'किताब में लिखा है' (कहानी संग्रह) - चंद्रकिशोर जायसवाल, प्रकाशन वर्ष - 2003, प्रकाशक - रचनाकार प्रकाशन, पूर्णियापृष्ठ - 104-105



मोबाइल नंबर 8676984983

Gmail - niteeshkumartpc @ Gmail.cim

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 164-167
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# पंकज मल्लिक का हिंदी एवं बंगाली चित्रपट संगीत में योगदान: रवींद्र संगीत के प्रसार एवं संगीतात्मक प्रयोगों का अध्ययन

**Shraboni Bhattacharya**
(Research scholar) Reg. No. 12420606.
Under the Supervision of,
**Dr. Ravjot Kaur Malhi**
(Associate Professor)
Lovely Professional University Jalandhar, Punjab

**1. प्रस्तावना-**

भारतीय फिल्म संगीत का इतिहास वाकई बहुत गहरा है। ये सिर्फ धुनें नहीं, बल्कि हमारी क्षेत्रीय परंपराओं और लोक संगीत का मेल है। इसमें शास्त्रीय संगीत का असर साफ़ झलकता है। हाँ, आज के दौर में नए साज़ों के इस्तेमाल ने इसका पूरा चेहरा ही बदल दिया है।

हिंदी सिनेमा को संवारने में बंगाल का हाथ सबसे बड़ा रहा। वहाँ के संगीतकारों ने इसमें जान फूँक दी। उनकी साहित्यिक सोच ने संगीत को ऊँचा दर्जा दिलाया। उन्होंने रागों की समझ से धुनों को एक नई रूह दी। उनके इन्हीं प्रयोगों ने बॉलीवुड संगीत को आज इतना अमीर बनाया है।

पंकज मल्लिक सिर्फ एक संगीतकार या गायक नहीं थे, बल्कि भारतीय संगीत के एक असली स्तंभ थे। उन्होंने फिल्मी गानों को एक नई पहचान दी। पर उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि रवींद्र संगीत को आम लोगों के बीच लोकप्रिय बनाना था। सच कहूँ तो, उन्होंने इस कला को महलों से निकालकर सीधे जनता के दिलों तक पहुँचाया। उन्होंने रेडियो और फिल्मों में जो नए प्रयोग किए, वो आज भी मिसाल हैं। आकाशवाणी के साथ उनका जुड़ाव बहुत गहरा और लंबा रहा। बंगाल से लेकर हिंदी सिनेमा तक, उन्होंने संगीत की दुनिया को वाकई बदल दिया।

**2. समस्या-कथन-**

हिंदी चित्रपट संगीत के इतिहास में बंगाली संगीतकारों के योगदान का अध्ययन करते समय पंकज मल्लिक की भूमिका को विशेष रूप से समझने की आवश्यकता है। उनके संगीत में बंगाली सांस्कृतिक परंपरा, रवींद्र संगीत, भारतीय संगीत की विभिन्न शैलियों और पाश्चात्य संगीत के प्रयोगों का उल्लेख मिलता है। इसके बावजूद उनके योगदान के विभिन्न पक्षों को एक समग्र संगीतात्मक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना आवश्यक है।प्रस्तुत अध्ययन की मुख्य समस्या यह है कि पंकज मल्लिक की संगीत-साधना, रवींद्र संगीत के प्रसार, हिंदी एवं बंगाली फिल्मों में उनकी भूमिका तथा उनके गीतों में प्रयुक्त संगीतात्मक प्रयोगों का विश्लेषण किस प्रकार किया जा सकता है।

**3. शोध के उद्देश्य-**

प्रस्तुत शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. पंकज मल्लिक के जीवन एवं संगीत-यात्रा का अध्ययन करना।
2. हिंदी एवं बंगाली चित्रपट संगीत में उनके योगदान का विश्लेषण करना।
3. रवींद्र संगीत के प्रचार-प्रसार में पंकज मल्लिक की भूमिका का अध्ययन करना।
4. पंकज मल्लिक के गीतों में भारतीय एवं पाश्चात्य संगीत के प्रयोगों का विश्लेषण करना।
5. उनके संगीत में प्रयुक्त वाद्य-संयोजन, लयात्मक संरचना और स्वर-विन्यास की विशेषताओं का अध्ययन करना।
6. आकाशवाणी तथा न्यू थिएटर्स के साथ उनके संबंधों और संगीत-यात्रा के ऐतिहासिक पक्षों को समझना।
7. हिंदी चित्रपट संगीत के विकास में पंकज मल्लिक के योगदान का मूल्यांकन करना।

**4. शोध-परिकल्पना-**

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित है:

1. पंकज मल्लिक ने हिंदी एवं बंगाली चित्रपट संगीत के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।
2. रवींद्र संगीत के प्रचार-प्रसार में उनकी भूमिका ने बंगाली संगीत को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने में सहायता की।
3. उनके संगीत में भारतीय संगीत परंपराओं और पाश्चात्य वाद्य-संयोजन के प्रयोगों का समन्वय दिखाई देता है।
4. उनके गीतों की संगीतात्मक संरचना, स्वर-संयोजन और वाद्य-विन्यास हिंदी चित्रपट संगीत के विकास को समझने में उपयोगी हैं।
5. पंकज मल्लिक के संगीत का ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन हिंदी चित्रपट संगीत में बंगाली संगीतकारों के योगदान को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

**5. शोध-विधि एवं प्रविधि-**

प्रस्तुत शोध-पत्र में गुणात्मक, ऐतिहासिक, वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक शोध-विधियों का उपयोग प्रस्तावित है।

ऐतिहासिक विधि: पंकज मल्लिक के जीवन, संगीत-शिक्षा, आकाशवाणी से संबंध, न्यू थिएटर्स में कार्य तथा उनके संगीत-जीवन की प्रमुख घटनाओं का अध्ययन किया गया है।

वर्णनात्मक विधि: उनके जीवन एवं संगीत-संबंधी उपलब्ध विवरणों को विषयानुसार प्रस्तुत किया गया है।

विश्लेषणात्मक विधि: चयनित गीतों में धुन, लय, वाद्य-संयोजन, गायन-शैली तथा भारतीय और पाश्चात्य संगीत के प्रयोगों से संबंधित विवरणों का विश्लेषण किया गया है।

स्रोत-आधारित अध्ययन: पंकज मल्लिक से संबंधित जीवनी-सामग्री, संस्थागत अभिलेख, संगीत-विषयक शोध-लेख तथा उपलब्ध फिल्म-संगीत संबंधी स्रोतों का उपयोग संदर्भ-सामग्री के रूप में किया गया है।

**6. शोध-उपकरण-**

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित शोध-उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है:

साहित्यिक स्रोतों का अध्ययन: पंकज मल्लिक के जीवन, संगीत और कार्यों से संबंधित पुस्तकों तथा जीवनी-सामग्री का अध्ययन।

दस्तावेज़ विश्लेषण: आकाशवाणी, फिल्म-संगीत अभिलेखों और संस्थागत स्रोतों में उपलब्ध जानकारी का परीक्षण।

गीत-श्रवण: चयनित गीतों को सुनकर उनकी धुन, लय, स्वर-संयोजन और वाद्य-विन्यास का अध्ययन।

संगीतात्मक विश्लेषण: गीतों में प्रयुक्त संगीत-शैलियों, वाद्यों और सांगीतिक प्रयोगों का विश्लेषण।

तुलनात्मक अध्ययन: भारतीय संगीत परंपराओं तथा पाश्चात्य वाद्य-संयोजन के प्रयोगों की तुलना।

संदर्भ-सत्यापन: तिथियों, पुरस्कारों, फिल्म-संबंधी विवरणों तथा ऐतिहासिक घटनाओं की विश्वसनीय स्रोतों से पुष्टि।

**7. विषय-वस्तु: पंकज मल्लिक के जीवन एवं संगीत का अध्ययन-**

पंकज मल्लिक, जिन्हें लोग प्यार से पंकज बाबू बुलाते थे, 10 मई 1905 को कलकत्ता में जन्मे। इसी शहर में 19 फरवरी 1978 को उन्होंने आखिरी सांस ली। अपने 73 साल के सफर में उन्होंने संगीत को बहुत कुछ दिया, यकीनन ये अविश्वसनीय है। असल में, उनके काम की गुणवत्ता और गति देखकर कोई भी हैरान रह जाएगा। उनका संगीत एक ऐसा जादुई अहसास देता है मानो इसे किसी एक व्यक्ति ने नहीं, बल्कि दो महान कलाकारों ने मिलकर रचा हो। उन्होंने लगभग पाँच हज़ार धुनें बनाईं। यह सच है कि यह सिर्फ सुनी-सुनाई बात हो सकती है, पर इसमें कोई संदेह नहीं कि हज़ार धुनें तो निश्चित रूप से उनकी अपनी थीं। उन्होंने हिंदी और बंगाली गानों के लिए संगीत तैयार किया। इसके अलावा, उन्होंने संस्कृत के शब्दों को भी संगीत में ढाला। वे महज़ संगीतकार ही नहीं थे, उन्होंने हिंदी-बंगाली फिल्मों और गैर-फिल्मी गानों में गायन भी किया। अभिनय भी किया। 'कपालकुंडला' और 'नर्तकी' में उनका काम लाजवाब है। 'आंधी' और 'डॉक्टर' जैसी फिल्मों में भी उनकी अदाकारी देखी गई।

पंकज मलिक ने हर तरह की धुनें तैयार की थीं। पर उनका सबसे बेहतरीन काम रवींद्र संगीत पर ही था। सच कहूँ तो, उन्होंने इस संगीत को जिस ऊँचाई पर पहुँचाया, वहाँ तक कोई और पहुँच ही नहीं पाया। खुद उस्ताद ने भी इस बारे में कुछ बातें साफ़ तौर पर कही थीं: "रवींद्र संगीत मेरा जीवन है। इसी में मेरा उद्धार निहित है। यह केवल संगीत नहीं बल्कि कुछ और है। मैं दूसरों के लिए नहीं बोल सकता, लेकिन रवींद्र संगीत मुझे इस दुनिया से बहुत दूर, यहाँ तक कि सूरज और तारों से भी दूर ले जाता है।"

शुरुआत में रवींद्र संगीत सिर्फ शांतिनिकेतन के आश्रम तक ही सिमटा हुआ था। बस वहां के गिने-चुने लोग इसे गाते-सुनते थे। पर पंकज बाबू ने सब कुछ बदल दिया। उन्होंने इसे हर घर की पसंद बना डाला। अजीत सेठ ने उनकी ज़िंदगी पर 'गुज़र गया वो ज़माना' नाम की एक बढ़िया किताब लिखी है। सेठ का मानना है कि पंकज बाबू ने इस संगीत को 'दीवान - ए- आम' से दीवान-ए-खास' बना दिया था।

पंकज मल्लिक अपनी धुनें हमेशा हारमोनियम पर ही सजाते थे, जो काफी हैरानी की बात है। उन्हें रवींद्र संगीत का चेहरा माना जाता था, फिर भी उनका लगाव उस वाद्य यंत्र से था जिसकी जड़ें फ्रांस में थीं। अजीब बात ये है कि खुद रवींद्रनाथ टैगोर इसे बिल्कुल पसंद नहीं करते थे। पर मल्लिक अकेले नहीं थे। दिलीप कुमार रॉय और लक्ष्मी शंकर जैसे बड़े संगीतकारों ने भी हारमोनियम को खूब अपनाया। हेमंत कुमार भी इसी रास्ते पर थे। संगीत की दुनिया में ये यंत्र बहुत इस्तेमाल होता था।

लेकिन, कहानी में मोड़ तब आया जब 1940 में ऑल इंडिया रेडियो ने हारमोनियम बजाने पर पूरी तरह रोक लगा दी। ये कोई छोटी-मोटी रोक नहीं थी। ये प्रतिबंध पूरे तीस साल तक चला और आखिरकार 1971 में जाकर हटा। टैगोर ने उस वक़्त आकाशवाणी के अफसरों को एक खत लिखा था। द टाइम्स ऑफ इंडिया ने 2 अप्रैल 1940 के अंक में उस खत के कुछ खास हिस्से छापे थे। ये विरोध और लगाव के बीच की एक मजेदार जंग थी।

"मैं हमेशा से," डॉ. टैगोर ने लिखा, "हमारे संगीत में संगत के लिए हारमोनियम के प्रचलित उपयोग के बहुत खिलाफ रहा हूँ, और इसे हमारे आश्रम से पूरी तरह से निकाल दिया गया है। यदि आप इसे ऑल इंडिया रेडियो के स्टूडियो से हटवा सकें तो आप भारतीय संगीत के लिए एक बहुत बड़ी सेवा करेंगे।"

परंतु, आज रवींद्र संगीत और हारमोनियम मानो एक-दूसरे के पर्याय बन गए हैं। हक़ीक़त तो ये है कि इसने दूसरे सभी वाद्यों को पीछे छोड़ दिया है।

बीते सालों में उन्होंने जमकर पढ़ाई की। वेद, पुराण, उपनिषद और कई संस्कृत ग्रंथों को उन्होंने गहराई से समझा। बाद में पंकज ने इन्हीं का सहारा लिया। उन्होंने टैगोर और कालिदास के काम को भी अपने काम में शामिल किया। रेडियो, थिएटर और फिल्मों की धुनें तैयार करने में ये चीजें बड़े काम आईं।

पंकज मल्लिक के लिए असली शुरुआत 1927 में हुई। उस समय रेडियो पर उन्हें पहला मौका मिला था। उन्होंने वहां दो बंगाली गाने गाए, दोनों ही रवींद्र संगीत से प्रेरित थे। पर इसके बाद दो साल तक सब थम सा गया।

साल 1929 की वह घड़ी थी। उन्होंने आकाशवाणी में गायक बनने के लिए ऑडिशन दिया। रेडियो स्टेशन के कार्यक्रम निदेशक आर.सी. बोराल खुद उन्हें परख रहे थे। यहीं से एक गहरा रिश्ता शुरू हुआ। आने वाले वक्त में बोराल और पंकज बाबू ने संगीत की शानदार दुनिया रची। उन्होंने साथ मिलकर कई काम किए। पर इस खूबसूरत सफर में कुछ अड़चनें भी आ रही थीं।

उनकी यह साझेदारी तब शुरू हुई जब फिल्में अभी बोलना नहीं जानती थीं, यानी मूक बायोस्कोप का दौर। 'चोर कांटा' जैसी फिल्म में दोनों ने कंधे से कंधा मिलाकर काम किया। इसके बाद जब बंगाली फिल्म 'देना पाओना' आई, तो दोनों ने साथ मिलकर संगीत तैयार किया। पर जब पंकज ने पर्दे पर फिल्म के क्रेडिट्स देखे, तो वह सन्न रह गए। बोराल का नाम वहां बड़े अक्षरों में चमक रहा था, जबकि पंकज का नाम एक मामूली सहायक के तौर पर छोटे अक्षरों में कहीं खो गया था।

**8. अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष-**

1. हिंदी एवं बंगाली संगीत में योगदान: पंकज मल्लिक ने गायक, संगीतकार और अभिनेता के रूप में कार्य किया। उनके कार्यों का अध्ययन भारतीय चित्रपट संगीत के ऐतिहासिक विकास को समझने में सहायक है।
2. रवींद्र संगीत का प्रचार-प्रसार: पंकज मल्लिक का रवींद्र संगीत से गहरा संबंध था। उपलब्ध जीवनी-सामग्री उनके द्वारा रवींद्र संगीत को फिल्मों और जनसंचार के माध्यमों तक पहुँचाने में निभाई गई भूमिका को रेखांकित करती है।
3. आकाशवाणी में योगदान: आकाशवाणी के साथ उनका दीर्घकालीन संबंध उनकी संगीत-यात्रा का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष था। इस क्षेत्र में उनके कार्यों का अध्ययन रेडियो के माध्यम से संगीत के प्रसार को समझने में उपयोगी है।
4. संगीत विरासत का महत्त्व: पंकज मल्लिक के कार्यों का अध्ययन यह समझने का अवसर प्रदान करता है कि क्षेत्रीय संगीत परंपराएँ किस प्रकार फिल्म संगीत के माध्यम से व्यापक सांस्कृतिक पहचान प्राप्त कर सकती हैं।

**9. संदर्भ ग्रंथ सूची-**


1. Pankaj Mullick Music & Art Foundation. (n.d.). Biography.
2. Pankaj Mullick Music & Art Foundation. (n.d.). About Pankaj Kumar Mullick.
3. Directorate of Film Festivals, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India. (n.d.). Pankaj Mullick. In 20th National Film Awards Catalogue.
4. Rahaim, M. (2011). That ban(e) of Indian music: Hearing politics in the harmonium. The Journal of Asian Studies, 70(3), 657–682.
5. https://doi.org/10.1017/S0021911811000854
6. Directorate of Film Festivals, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India. (n.d.). Dadasaheb Phalke Award: Overview.
7. The Times of India. (1940, April 2).
8. Seth, A. (n.d.). Guzar gaya woh zamana.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 168-171
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# इक्कीसवीं सदी की स्त्री आत्मकथाएँ और भारतीय समाज

**सुमन ठाकुर**
शोधार्थी
हिन्दी विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा बिहार
**डॉ. पूजा गुप्ता**
शोध निर्देशक,
सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

**सारांश :**

भारतीय समाज मूलतः एक पितृसत्तात्मक समाज रहा है। इसका प्रमुख कारण है कि भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति बहुत सम्मान जनक नहीं है। यहाँ स्त्रियों को दोयम दर्जे का स्थान दिया गया। 'यत्र नार्यस्तू पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता।'' यह केवल वाक्य भर रह गया है। जिसे मंच पर प्रयोग कर लोगों की तालियाँ और वाह-वाही बटोरी जाती है। भारतीय समाज में स्त्रियें की स्थिति को समझने के लिये स्त्री आत्मकथाएँ एक सशक्त माध्यम है। इक्कीसवीं सदी की स्त्री आत्मकथाएँ सिर्फ व्यक्गित जीवन का विवरण नहीं है बल्कि यह पितृसत्तात्मक भारतीय समाज और हाशिए पर धकेली गयी महिलाओं के संघर्ष और उनकी अस्मिता का प्रमाणिक दस्तावेज हैं इन आत्मकथाओं में उन यातनाओं, शोषण और घुटन का सजीव वर्णन मिलता है जो एक स्त्री को घर, परिवार और समाज में सहनी पड़ती है। भारतीय समाज के संदर्भ में स्त्री आत्मकथाएँ मात्र एक आत्मकथा न होकर स्त्री प्रतिरोध का जीवंत दस्तावेज है। ये आत्मकथाएँ पुरूषवादी मानसिकता वाले समाज के चेहरे के आत्मसम्मान, अधिकारों और स्वतंत्रता की एक नई मिसाल कायम करती है।

**मुख्य शब्द :** पितृसत्तात्मक, हाशिए, दस्तावेज, स्त्री आत्मकथा, प्रतिरोध, सामाजिक, संस्कार, शोषण, अभिव्यक्त, स्वतंत्रता, मर्यादा, चेतना, साहित्यिक, प्रताड़नाए अधिकार, पायदान, आत्मनिर्भरता आदि।

**प्रस्तावना :**

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी स्त्री आत्मकथाएँ एक सशक्त साहित्यिक स्त्रोत के रूप में उजागर हुयी है। स्त्री आत्मकथाओं में केवल नारी की गाथा नहीं है बल्कि देशकाल, वातावरण की पूरी सक्रियता के साथ पीढ़ियों की कथा

है। सदियों से पुरूष वर्चस्ववादी संस्कृति की प्रताड़ना झेलती स्त्रियाँ आज आत्मकथाओं के माध्यम से अपने अनुभवों को अभिव्यक्त कर रही है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सबसे आखरी पायदान पर खड़ी स्त्री ने अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिये आत्मकथा को माध्यम बनाया है। समाज के दोहरे शोषण की शिकार स्त्री अपमान, तिरस्कार, यौन, पितृसत्तात्मक और गरीबी के साथ, अतीत की दर्दनाक जीवनानुभवों की घटनाओं को अपनी स्मृति कोश से बाहर निकालकर वर्तमान जीवन संदर्भों के साथ प्रस्तुत करती है। पितृसत्तात्मक समाज के शोषण से शोषित स्त्रियाँ आज अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से अपने अनुभवों तथा संघर्षों को संसार में उदघाटित करती हुई समतामूलक सम्बंधों की मांग तो करती ही है साथ ही यह हमारे सामाजिक जीवन में स्त्रियों की साहित्यिक रूप से भी परिचित करवाती है। स्त्री आत्मकथाओं का सम्बंध अनिवार्य रूप से स्त्रीवाद से होता है।

इक्कीसवीं सदी की आत्मकथाओं में लेखिकाएँ अपने व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यम से व्यापक भारतीय समाज के दोहरे नीति पर प्रश्न उठाती है। उनका मैं अब केवल निजी नहीं सामूहिक हक का प्रतिनिधि है। मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, सुशीला टाकभौरे, कुसुम अंसल, प्रतिभा अग्रवाल, रमणिका गुप्ता, चंद्र किरण सोनरेक्सा आदि इक्कीसवीं सदी की ऐसी लेखिकायें है जिन्होंने अपनी आत्मकथाओं में भारतीय पितृसत्तात्मक समाज के यथार्थ को उजागर किया है। अपने ही जीवन की तटस्थ भाव से विस्तृत आलोचना कर जीवन का लेखा-जोखा इन्होंने प्रस्तुत किया हैं इस दरमियान भारत में पनपी पितृसत्तात्मक, सामंती वृति और मनुवादी वृत्तियों ने स्त्री जमात का क्या हश्र किया जिसके खिलाफ उन्हें संघर्ष करना पड़ा और आत्मनिर्भरता की ओर वे किस सजगता से अपने सधे कदमों से बढ़ती हैं और इस पितृसत्तात्मक समाज से लड़कर अपने अस्तित्व की झलक किस प्रकार संसार को दिखलाती हैं इसकी पूरी गाथा इन आत्मकथाओं में है। डॉ. शकुंतला शर्मा लिखती है- ''स्त्री आत्मकथाएँ समाज के मौन इतिहास का जीवित दस्तावेज है, जहाँ स्त्री अपने भीतर के सच को उजागर करती है।''[1]

हमारा समाज पितृसत्तात्मक कहलाता है क्योंकि इसमें पुरूष सबसे ऊपर के पायदान पर स्थित होता है और स्त्री सबसे निचले स्थान पर। पितृसत्तात्मक समाज में पुरूष सामंतशाही को चंद्रकिरण सोनरेक्सा ने अपनी आत्मकथा 'पिंजरे की मैना' में उजागर किया है। लेखिका एक मध्यवर्ग की धैर्यवान, परिश्रमी, शांत, गंभीर परंतु बेजुबान स्त्री है। जो अपने घर-परिवार में ही शोषित होती है। स्त्री घर में माँ, बहन, पत्नी, बेटी बहु तो हो सकती है परंतु जो वह होना चाहती है वह नही हो सकती है। भारतीय स्त्री के इस व्यथा गाथा को चंद्रकिरण सौनरेक्सा ने बखूबी अपनी आत्मकथा में दर्शाया है। लेखिका ने कहा है कि दो रोटी और अपना अस्तित्व के लिये एक स्त्री को जीवन भर न जोन कितना त्याग करना पड़ता है। उन्होंने स्वयं अपनी आत्मकथा में कहा है कि जिन्दगी भर दो रोटी पाने की चाह में जीवन भर संघर्ष किया लेकिन पति की 'दो रोटी' उन्होंने कभी नहीं खायी। चंद्रकिरण जी ने गृहस्थी के लड़ाई-झगड़ा के साथ हमेशा नौकरी की रेडियो प्रोग्राम, कवि सम्मेलनों के जरिए आय का प्रबंध कर इन्होंने अकेले गृहस्थी की गाड़ी खींची है। लेखिका ने जब लखनऊ जाते समय अपने पति से दस रूपये मांगे पर कांती जी ने पैसे देने के लिये साफ इन्कार कर दिया और चले गये। लेकिन कुछ पल में ही कांती को इससे ज्यादा पैसे स्टेशन पर माल के वजन करने के बाद देने पड़े। बस इसी वजह उन्होंने अपनी पत्नी को एक शाप भरा पत्र दिख दिया जिसका कुछ अंश इस प्रकार है - ''तुम्हें मैंने मद्रास में दस रूपये नहीं दिये तो तुम जरूर मुझे रास्ते भर कोसते गयी होगी तुम्हारा कोसना सफल हुआ। बम्बई स्टेशन पर मेरा बक्सा तोला गया और मुझे पंद्रह रूपये देने पड़े। पर कोसना तुम्हें नहं आता मुझे भी आता है। मैं अभिशाप देता हूँ कि तुम जिन्दगी भर मांगोगी। तुम्हारा बेटा होटलों का झूठा खाना खायेगा और बेटी कोठे पर बैठेगी।''[2] यह एक पति का अपनी पत्नी को पत्र था और जिसमें उसने अपने खुद के बच्चों के बारे में ऐसी बाते लिखी थी। सपने में भी कोई बाप अपने औलाद के बारे में ऐसा

नहीं सोच सकता। स्त्री मानसिकता से ग्रसित चंद्रकिरण जी अपने लेखन और लेखकीय जीवन को उतना महत्व नहीं दे पाये जितना उन्हें देना था। अपनी आत्मकथा में उन्होंने इस मिथक का खण्डन किया है कि पति सेवा को स्त्री अपने जीवन का सबसे बड़ा धर्म समझती है।

भारतीय समाज स्त्री को संस्कार और मर्यादा के ढाँचे में देखने का अभ्यस्त है। स्त्री आत्मकथाएँ इस ढाँचे को तोड़ती है। जहाँ मर्यादा और संस्कार के नाम पर स्त्रियों को सूली पर चढ़ाया जाता है। जब स्त्री अपने अनुभवों को खुले रूप में लिखती है तो वह सामाजिक व्यवस्था को अस्थिर कर देती है। मन्नू भंडारी अपनी आत्मकथा ''एक कहानी यह'' में लिखती हैं ''जब मैंने लिखा तो समाज ने मुझे कठघरे में खड़ा कर दिया, मानों मैंने कोई अपराध कर दिया हो।''[3] प्रभा खेतान ने अपनी आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' में अपनी अपरिचित जीवन काल के संघर्ष को बेबाक तटस्थता के साथ वाणी दी है। स्त्री को हमेशा पितृसत्तात्मक समाज द्वारा बनाये गये दिशा-निर्देशों का पालन करना पड़ता है परंतु लेखिका सामाजिक व्यवस्था का विरोध करती हुयी कहती है, ''मैंने प्रत्यक्ष में डॉ. साहब से पूछा क्या यही है। पढ़ने-लिखने का लाभ कि घरवाले चाहे जिस खूंटे से मुझे बांध जाएँ? चुनाव निर्णय की स्वतंत्रता प्रतिबद्धता जैसे शब्दों को मैं सुनती आयी हूँ, आज मैं स्वयं से पूछना चाहती हूँ- बस क्यों यही है स्त्री की नियति ?''[4] जब तक स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं होगी तब तक यह पितृसत्तात्मक समाज उसके अधिकारों का हनन करता रहेगा।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी आत्मकथा ''गुड़िया भीतर गुडिया'' में भारतीय पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था का नकाब उतार कर असली चेहरा सामने लाना चाहती है जिसने हमेशा से स्त्रियों को बंधक बनाए रखने की हर कोशिश की है। हमारे समाज में अगर स्त्री अपने अधिकार की बात करे तो उसे मर्यादा का उल्लंघन माना जाता है। वे अपनी आत्मकथा में लिखती हैं ''लोग समझते हैं अपने अधिकार की बात कहना मार्यादा कुलशीलता निभाना और शीलवती बहू होना आसान नहीं होता बेटा। खून के आंसू रूलाता रहा मुझे।''[5] यह त्रासदी है स्त्री जीवन की जो पुरूषवादी समाज ने स्त्रियों को दी है।

रमणिका गुप्ता ने अपनी आत्मकथा 'हादसे' में समाज द्वारा बनायी गयी गलत धारणाओं को नकारा हैं वे अपनी आत्कथा में लिखती है कि ''मैंने हमेशा अपने को सार्थक बनाने का लक्ष्य रखा ताकि अपनी शर्तों शर्तों पर चल सकूँ। उसे दिशा दूँ चाहे राजनीतिक में चाहे सामाजिक या व्यक्तिगत आचरण में। इसलिए मेरा पहला हमला प्रचलित नियमों, प्रथाओं प्रतिबंधो यहाँ तक की यौन-सम्बंधों पर होने लगा। मुझे रूढ़ियाँ तोड़ने में बड़ा मजा आता था और प्रतिक्रिया में रूढ़िवादियों को तिलमिलाना या झल्लाना अच्छा लगता था।''[6]

सुशीला टाकभौरे ने अपनी आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' में पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था द्वारा नारी पर होने वाले अत्याचार विवाह संस्था की विकृतियाँ, नारी आत्मविश्वास और अस्तित्व को बाधित करने वाली पितृसत्तात्मक मनोवृति पति और उनके परिवार की खलनायक भूमिका, आत्मनिर्भरता तथा नारी को सचेत कर जागृत करने की छटपटाहट का वर्णन हुआ हैं परम्परागत समाज व्यवस्था ने स्त्री को उनके अधिकारों से वंचित रखा। धर्म, संस्कृति के नाम पर उसका सदियों से शोषण होता रहा। सुशीला जी अपनी आत्मकथा में लिखती हैं - ''दलित होने के साथ-साथ स्त्री होने की पीड़ा भी मैंने भोगी है। एक स्त्री की आत्मकथा मनुवाद द्वारा निर्मित पितृसत्तात्मक प्रधान समाज में स्त्री के शोषण को उजागर करती हैं जैसे स्त्री धरती है, वह सहन करती है। फिर भी धीरज रखती है और अपनी धुरी पर घुमती रही है। लेकिन कबतक ? आदर्शों के नाम पर स्त्री का शोषण किया जाता है। अपने घर-परिवार के शोषण, अत्याचार की बात बताने वाली स्त्री को समाज अच्छा नहीं कहता। अपने अधिकारों की बात करने वाली स्त्रियों को भी समाज अच्छा नहीं मानता। समाज की यह मान्यता रही है कि स्त्री देवी है या कुलच्छनी। उसे जीवित इंसान कभी माना ही नहीं गया।

जैसे वह हाड़-मांस की मानव नहीं आदर्शों की पुतली है जो आदर्शों के लिए जीती है और आदर्शों के लिए मर जाती है।''[7]

**निष्कर्ष :**

भारतीय पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री हमेशा पुरूष की गुलाम और सामाजिक प्रताड़ना का शिकार रही है। पिछले कुछ वर्षो से स्त्री लेखिकाओं द्वारा लिखी गयी आत्मकथाओं में शोषण, उत्पीड़न के उपरांत संघर्ष इस कदर दृढ़ता से हुआ है कि ये लेखिकाएँ सभी प्रकार के बंधनों से मुक्ति मार्ग ढूंढ़ने में कामयाब रही है। ये स्त्री आत्मकथाए पितृसत्तात्मक समाज की पोल खोलते हुये स्त्री मुक्ति के यथार्थ को सामने रखती है। इन आत्मकथाओं का उद्देश्य स्त्री मुक्ति के यथार्थ को दर्शाना है। रमणिका गुप्ता के शब्दों में कहे तो ''आज स्त्री ने अपना भोगा हुआ सच कह कर समाज को आईना दिखाने की हिम्मत जुटा ली है तो लोग तिलमिला रहे है। वे औरत की इस बेबाक सच्चाई को पचा नहीं पा रहे हैं चूँकि यह पुरूष की औरत पर वर्चस्व जमाने की मानसिकता का नकार ही नहीं बल्कि उसकी विकृतियों से मुखौटा उतारने की मुहिम भी है।''[8] इक्कीसवीं सदी की स्त्री आत्मकथाओं में जो स्त्री चेतना अभिव्यक्त हुयी है वह पितृसत्तात्मक के द्वारा गढ़ी गयी और प्रचलित की गयी धारणाओं या मान्यताओं पर प्रश्न चिन्ह लगाती है। स्त्री आत्मकथाओं में पितृसत्तात्मक समाज का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी देता है। ये आत्मकथाएँ केवल पुरूष समाज से प्रतिस्पर्धा नहीं करती बल्कि उसके समकक्ष एक मनुष्य होने के नाते प्राप्त अधिकारों की मांग करती है। अतः स्पष्ट रूप से ये स्त्री आत्मकथाएँ समाज को यह संदेश देती है कि यदि नारी सम्मानित जीवन जिएगी तभी सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण होगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. शर्मा, शकुंतला, हिन्दी आत्मकथा और स्त्री विमर्श, हिन्दी साहित्य अकादमी प्रकाशन, संस्करण-2016, पृ०सं०- 132
2. सौनरेक्सा, चंद्रकिरण, पिंजरे की मैना, पूर्वोदय प्रकाशन, संस्करण-2008, पृ०सं०- 416
3. भंडारी, मन्नू, एक कहानी यह भी, राजपाल एण्ड सन्स प्रकाशन, संस्करण-2009, पृ०सं०- 89
4. खेतान, प्रभा, अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन संस्करण-2007, पृ०सं०- 87
5. पुष्पा, मैत्रेयी, गुड़िया भीतर गुड़िया, राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2002, पृ०सं०-67
6. गुप्ता, हादसे रमणिका, राधाकृष्ण प्रकाशन संस्करण-2005, पृ०सं०- 17
7. टाकभौरे, सुशीला, शिकंजे का दर्द, वाणी प्रकाशन, संस्करण-2010, पृ०सं० भूमिका से
8. गुप्ता, रमणिका, स्त्री मुक्ति संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, संस्करण-2012, पृ०सं०- 75

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 172-174
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# हिन्दी भक्ति काव्य में लोक चेतना

**राजकुमार सिंगौर**
सहायक प्रध्यापक,
शासकीय महाविद्यालय, अंजनिया, जिला मंडला

हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल जिसे भारतीय समाज, साहित्य और संस्कृति के स्वर्णिम युग के रूप में जाना जाता है। इस युग की मुख्य विशेषता यह थी कि साहित्य केवल बड़े–बड़े राजमहलों एवं दरबारों तक ही सीमित नहीं रहा, अपितु इनसे बाहर निकलकर वह झोपडियों और सामान्य जन तक पहुँच चुका था। भक्तिकालीन कवियों एवं संतों ने समकालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक विषमताओं के विरुद्ध लोककल्याण, लोकभाषा एवं लोकसंस्कृति को अपने साहित्य का आधार बनाया। इस संबंध में निम्न पंक्तियों को देखा जा सकता है–

**''भक्तिकाल विषाल लोक जागरण था, जिसकी जड़ें जनसामान्य में गहराई तक फैली हुई थीं। जनता की पीड़ा ही ईश्वर के प्रति कातर होकर अनेक रूपों में व्यक्त हुई।'' 1**

भक्तिकालीन काव्य में लोकचेतना एक सर्वप्रमुख कारण यह भी था कि इस काल के लगभग समस्त कवि लोकधरातल से जुड़े हुए थे या यह कहें कि वे सामान्य परिवारों से जुड़े हुए थे और उनका जीवन सुख–सुविधाओं से विहीन जनसामान्य के साथ बीता। जिसे उन्होंने यथार्थ के धरातल पर जिया था। यही कारण है कि उनके काव्य में लोकचेतना प्रमुख रूप से उपस्थित है।

संत कबीर भक्ति काल के श्रेष्ठ कवि हैं जिन्होंने समाज में व्याप्त भेदभाव को दूर करने भरसक प्रयास किया तत्कालीन समाज में व्याप्त वैमनस्य, भेदभाव, हिंसा आपसी द्वेष एवं छुआछूत को देखकर कबीर का हृदय आक्रोश से भर उठा, उनका मूल उद्देश्य लोक कल्याण ही था एवं लोक कल्याण के भाव से प्रेरित होकर ही समाज के विविध चित्रों के दर्शन हमें उनके काव्य में हो जाते हैं। ज्ञानमार्गी शाखा के समस्त कवियों रैदास, नानक, दादू सुंदरदास आदि ने भी लोक कल्याण के इन्हीं रूपों का अनुसरण किया है।

''कोई गुरुग्यानी जगत उल्टी भेद बूझै ।
पानी यहॅ पावक बैर, अंधटि आखिन्ह सूझै।।
गाय तो नहर को धरि खायो, काटि–काटि अंगा

बकरी विधार खायों हरनि खायौ चीता।।'' 2

इस तरह से कवियों ने लोक भाषा एवं शैली के माध्यम से अपनी बात को बड़ी सहता एवं सरलता से सामान्य जन तक प्रेषित करने का कार्य किया।

जायसी कृत पद्मावत में भी हमें लोकजीवन का चित्रण देखने को मिलता है। उन्होंने ग्रामीण रीति रिवाज, मान्यताओं विश्वासों तिथियों ऋतु वर्णन आदि को अपने काव्य में प्रमुखता से स्थान प्रदान किया ।उनकी लोक समन्वयवादी दृष्टि उनकी लोक भाषा के संबंध आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के निम्न विचारों में देखा जा सकता हैः–

"हिन्दू हृदय और मुसलमान हृदय आमने–सामने करके अजनबीपन मिटाने वालों में इन्हीं का नाम लेना पड़ेगा। इन्होंने मुसलमान होकर हिन्दुओं की कहानियाँ हिन्दुओं ही की बोली में पूरी सहृदयता से कहकर उनके जीवन की मर्मस्पर्शिनी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का पूर्ण सामंजस्य दिखा दिया।" 3

भारतीय लोक चेतना का सबसे परिष्कृत एवं उद्धत रूप हमें गोस्वामी तुलसीदास के काव्य में देखने को मिलता है उन्होंने समकालीन वैमनस्य के बीच में आदर्श समाज का जो रूप प्रस्तुत किया है, वह न्याय प्रिय लोक चेतना का ही प्रभाव है। इसके अलावा गोस्वामी तुलसीदास जी ने समकालीन समाज में व्याप्त आर्थिक तंगी गरीबी बेरोजगारी एवं समाज में उत्पन्न अजीविका के संकट पर जो लेखनी चलाई है उसे यहां प्रस्तुत किया जा सकता हैः–

"खेती न किसान को, भिखारी को न भीख भली,
बनिक को बनिज न, चाकर को न चाकरी,
जीविका विहीन लोग सिद्धमान सोच बस,
कैह एक–एकन सों, कहाँ जाइ, का करी।'' 4

सूरदास जी ने अपने काव्य में ब्रज के लोकजीवन का पूरी यर्थाता के साथ चित्रण किया है। बच्चों की सुलभ क्रीड़ाएँ, उनकी आपसी नोक–झोंक आदि ग्रामीण जनसामान्य का ही प्रतिनिधित्व करती हैं। इसके अलावा विभिन्न तीज–त्योहारों का भी उनके काव्य में प्रमुखता से वर्णन किया गया है, जिनमें लोकचेतना के रंग भरे हुए हैं। सूरदास जी के काव्य में निहित लोकचेतना का एक उत्कृष्ट उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैः–

"प्रभु जू यौं कीन्हीं हम खेती।
बंजर भूमि गाँव हरि जोते, अरु जेती की तेती।
काम, क्रोध, दोऊ बैल बली मिलि, रज ताम सब किन्हीं।
अति कुबुद्धि मन हाँकनहारे, माया जूआ दीन्हौं।
इन्द्रिय मूल किसान, महातृन अग्रज बीज बई।
जन्म–जन्म को विषय–वासना, उपजत लता नई।
कीजै कृपादृष्टि की बरसा, जन की जाति लुनाई।
सूरदास के प्रभु सों करियै, होई न कान–कटाई ।।" 5

लोकचेतना से युक्त अनेक रंग सूरदास जी के काव्य में सर्वत्र बिखरे हुए हैं।

**निष्कर्षतः** यह कहा जा सकता है कि हिन्दी भक्ति काव्य केवल ईश्वर की भक्ति या व्यक्ति की आध्यात्मिक मुक्ति का ही साधन नहीं था, अपितु वह सामाजिक–सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी एक सशक्त

आन्दोलन था। इसमें  जातिगत भेदभाव, लैंगिक विषमताओं से युक्त तत्कालीन समाज को लोकचेतना के प्रकाश से आलोकित किया गया है। अपनी बात को जन–जन तक पहुँचाने के लिए इन कवियों ने लोकभाषा को अपने काव्य में स्थान दिया। इस युग के कवियों की इसी लोकचेतना वादी दृष्टि के कारण भक्ति काव्य हिन्दी साहित्य की दिव्य चेतना का उत्कृष्ट प्रमाण है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**


1. हिन्दी का गद्य साहित्य, डॉ. रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ संख्या 98, सन् 2012।
2. कबीर ग्रंथावली, रामकिशोर शर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या 28, सन् 2010।
3. जायसी ग्रंथावली, संपादक आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृष्ठ संख्या 125।
4. कवितावली–गोस्वामी तुलसीदास (उत्तरकांड), पृष्ठ संख्या 112।
5. सूरसागर, भाग 1, पद संख्या 185।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 175-178
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# "जमुई जिले के संथालों में सामाजिक संगठन और न्याय व्यवस्था"

**प्यारे लाल कुमार**
(पी.एचडी., एम. फिल, स्नातकोत्तर,बी.एड.)
ग्राम+पोस्ट- रोह, जिला- नवादा (बिहार),805141

**शोध सार :** संथाल जनजाति भारत की प्रमुख जनजाति है जो जनसंख्या के हिसाब से जनजातियों में तीसरा स्थान रखती है। यह जनजाति ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हैं और लगभग 97 प्रतिशत इनकी आबादी गांवों में रहती है। संथाल जनजाति में परिवार पितृसत्तात्मक, पितृवंशी और मातृ- स्थानीय होता है। संथाल महिलाएं शिकार करने, पूजा अर्चना तथा पंचायत की बैठकों में हिस्सा नहीं लेती हैं। जमुई जिले के संथालों के सामाजिक जीवन को देखें तो उनके बीच पायी जाने वाली सामाजिक संगठन और न्याय व्यवस्था अनोखी दिखायी पड़ती है। संथाल सामूहिक रूप से जीवन जीने में विश्वास रखती है। सामाजिक रूप से और शैक्षणिक रूप से संथाल भले ही पिछड़े हुए हैं लेकिन उनकी संस्कृति काफी समृद्ध है जिसके कारण गैर-जनजातीय समाज में संथालों की संस्कृति का विशेष महत्व है। संथालों के गांवों में धार्मिक, सामाजिक गतिविधि, एवं पारंपरिक त्योहार का पालन, कृषि तथा विवादों का निपटारा सामूहिक तौर पर व आम सहमति से किया जाता है। गांव की सामाजिक संरचना प्रधान यानी मांझी व्यवस्था पर आधारित है। गांव में मौजूद मांझी की समिति समस्त सामाजिक व्यवस्था को नियंत्रित करती है एवं गांव के साधारण मामलों के विवादों को सुलझाती है।

**शब्द कुंजी :** संथाल, न्याय, व्यवस्था, सामाजिक, संगठन, बिटलाहा, जमुई, ग्रामीण, मांझी, पितृ सत्तात्मक, संस्कृति, सहमति, संरचना, भूमिका, मुखिया, मांझी, नायकी, योग- मांझी इत्यादि।

**प्रस्तावना :** संथालों के सामाजिक संगठन एवं न्याय व्यवस्था की संरचना को देखें तो इसके अंतर्गत कई महत्वपूर्ण सामाजिक स्तर या पद दिखाई पड़ते हैं जिनकी समाज में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। गांव की समिति में मांझी (गांव का मुखिया), जोग मांझी (उप मुखिया), पराणिक(मुखिया का सहायक), गोडैत(मुखिया का संदेश वाहक), जोग पराणिक (उप पराणिक), नायकी (गांव का पुजारी), कुड़म नायकी(मुख्य पुजारी का सहायक)। इसके अलावा गांव के सारे लोग भी समिति के सदस्य होते हैं।

मांझी- इसे गांव का प्रशासनिक और न्यायिक अधिकार प्राप्त होता है। गांव का लगान वसूलने के साथ वह विवादों का निपटारा, शांति व्यवस्था कायम करना, गांव की चौहद्दी की रक्षा करना आदि जैसे कार्य करता है।

जोग मांझी- सामाजिक सामुदायिक कार्यो में जोग मांझी, मांझी की सहायता करता है। यह किसी भी घटना की पूरी जानकारी मांझी को देता है।

पराणिक- मांझी का सहायक होता है अगर मांझी की अनुपस्थिति, बीमारी या उसकी असामयिक मृत्यु हो जाए तो यह कार्यकारी प्रधान के रूप में कार्य करता है।

जोग पराणिक- जोग मांझी की उनुपस्थिति में उसका सारा कार्य संभलता है।

गोड़ैत- यह गांव का संदेश वाहक होता है और घर-घर जाकर संदेश पहुंचाने का कार्य करता है।

नायकी- यह धार्मिक प्रधान कहलाता है जो कि गांव को धार्मिक गतिविधियों के लिए संगठित करता है और किसी भी आपदा से सुरक्षित रखने के लिए पूजा पाठ करवाता है गांव का नायकी अपराधों के लिए दंड तय करता है।

कुड़म नायकी - यह प्रमुख नायकी का सहायक होता है। न्यायिक व्यवस्था में उपरोक्त व्यक्तियों के अलावा गांव के बुजुर्ग और बुद्धिजीवी शामिल होते हैं जिन्हें 'भग्दो प्रजा' कहा जाता है। संथालों की बैठकों में आधुनिक समय में अर्थ दंड देने का प्रावधान है बहुत कम ही मौकों पर अन्य प्रकार के दंड दिए जाते हैं।

बिटलाहा – बीटलाहा अर्थात समाज से किसी व्यक्ति या परिवार को गांव से बहिष्कृत करने की प्रक्रिया है। पी ओ बोडिंग ने कहा है कि संथालों में समगोत्रीय यौन संबंध निषेध किया गया है जब कभी भी निषेध यौन संबंध की मर्यादा का उल्लंघन होता है तो ऐसी स्थिति में अपराधी को बिटलाहा यानी जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता है। इसका निर्णय परंपरागत पंचायत (वैसी) की उच्च स्तरीय बैठकों में लिया जाता है। परंपरा के अनुसार वर्जित यौन अपराध एवं जघन्य हत्या के लिए दोषी व्यक्ति का गांव की पंचायत में विचार किया जाता है वहां यदि दोषी व्यक्ति पंचायत के फैसले को नहीं स्वीकार करे तो यह मामला मोड़े मांझी (पांच प्रधान) की पंचायत में रखा जाता है इसके बाद यह मामला क्रमवार परगना तथा देशमांझी के समक्ष विचार के लिए लाया जाता है। देश मांझी की पंचायत को दिशोम वैसि कहा जाता है। पंचायत में दोषी पाए जाने पर संबंधित व्यक्ति को अपराध और पंचायत की अवमाना के लिए बिटलाहा का दंड सुनाया जाता है। बिटलाहा घोषित होने पर जोग- मांझी या गांव का एक व्यक्ति हाट में इसकी खबर देने जाता है। इसके लिए वह एक डंडे में साल सखुआ की टहनी टांगता है जिससे लोगों को किसी संदेश का आभास होता है। टहनी में जितनी पत्तियां होगी उतने ही दिनों बाद बिटलाहा किए जाने की तिथि सुनिश्चित की जाती है। कहीं-कहीं पर तो नगाडा बजा कर बिटलाहा की सूचना दी जाती है। बिटलाहा की सजा प्राप्त व्यक्ति को गांव से बाहर कर दिया जाता है और उसके परिवार वालों के साथ कोई भी संबंध नहीं रखा जाता है (कुमार,2011)।

हालांकि बिटलाहा किए जाने पर क्षमादान के बाद वापसी का भी प्रावधान (जातिजोम)है, शर्त यह है कि अपराधी क्षमा याचना के लिए बड़े भोज का आयोजन करने में सक्षम हो (बोर्डिंग,1930)।

आर्चर(1984) ने कहा है कि गैर संथालों के साथ यौन संबंध बनाना या विवाह करने की स्थिति में संलिप्त संथाल युवती और गैर संथाल युवक को पकड़कर ग्राम सभा में लाकर उसे पीटा जाता है और सजा दी जाती है। आर्चर ने अपनी पुस्तक 'ट्राईबल लॉ एंड जस्टिस' में कई संथाली युवती, विवाहित महिलाओं के साथ गैर संथाली तथा मुस्लिम, हिंदू युवक तथा विवाहित पुरुषों के साथ यौन संबंध का उदाहरण देते हुए यह स्पष्ट किया है कि अब बिटलाहा संबंधी सजा में काफी शिथिलता आयी है तथा सजा के स्वरूप काफी बदल गए हैं, अब प्राय: संथालों में बिटलाहा की प्रक्रिया विशेष स्थिति में जुर्माना न देने के बाद ही अपनायी जाति है। नर्मदेश्वर प्रसाद (1961) के मतानुसार संथालों के बीच प्रचलित बिटलाहा का स्वरूप काफी बदल गया है तथा पुलिस प्रशासन लागू किए जाने के बाद उसकी प्रबलता तथा विधि में यथेष्ट नरमी आयी है।आधुनिक समय में अब गैर संथालों के साथ प्रेम विवाह को लेकर या यौन शोषण को लेकर संथाल कानून का भी सहारा ले रहे हैं। (कुमार,2022)

सामाजिक संगठन : सामाजिक संगठनों का अध्ययन करना महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसके बगैर समाजशास्त्रीय शोध की परिकल्पना नहीं की जा सकती। संथाल जनजाति ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, लगभग 97 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। संथाल जनजाति में परिवार पितृसत्तात्मक, पितृवंशी है और मातृस्थानीय होता है। पैतृक संपत्ति पर अधिकार पुत्रों का होता है उसके बाद अविवाहित पुत्री का और फिर पट्टीदारों का। महिलाएं

बच्चों का लालन पालन, भोजन बनाने, पानी लाने, तथा कृषि व अन्य व्यवसायिक कार्यों के संपादन में हाथ बटातें हैं। इनके बीच एकांकी तथा संयुक्त दोनों तरह के परिवार पाए जाते हैं। पिता ही परिवार का मुखिया होता है। संथाल महिलाएं शिकार करने पूजा अर्चना, तथा पंचायत की बैठक में हिस्सा नहीं ले सकती हैं। महिलाएं छप्पर छाने और हल जोतने का भी कार्य नहीं कर सकती हैं। हाटों में वस्तुओं को बेचने तथा आवश्यक चीजों की खरीदारी करने में संथाल महिलाएं काफी प्रवीण होती है। अविवाहित पुत्री पिता की संपत्ति मानी जाती है, विवाह के समय वर पक्ष द्वारा पोन मूल्य चुकाया जाता है। महिलाएं घर की सलाहकार के रूप में मानी जाती है बुजुर्ग महिलाओं एवं पुरुषों को समाज में आदर प्रदान किया जाता है। संथाल घर में बने पुंगीज का प्रयोग करते हैं यह एक प्रकार का बीड़ी है। संथाल पुरूष सुबह में अपने पशुओं के साथ खेतों में चले जाते हैं और उनकी पत्नी सुबह का नाश्ता लेकर खेतों पर जाती हैं। दोपहर तक वह अपने पशुओं के साथ खेतों पर रहते हैं फिर उसके बाद वह घर की ओर आते हैं। फिर स्नान करके दोपहर का भजन करते हैं उसके बाद थोड़ा विश्राम करने के बाद फिर खेतों पर काम करने के लिए चले जाते हैं। यह लोग शाम को भोजन जल्दी ग्रहण करते हैं।

**शोध का उद्देश्य :** सामाजिक शोध के पीछे कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं। इस शोध का भी उद्देश्य यह है की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संथालों के सामाजिक जीवन में उनकी सामाजिक न्याय व्यवस्था और सामाजिक संगठन कैसी है? क्या उनकी परंपरागत सामाजिक व्यवस्थाएं अस्तित्व में है या उनमें कोई परिवर्तन या संक्रमण परिलक्षित हो रहा है।

**प्राकल्पना :** 1. संथालों के बीच बिटलाहा अस्तित्व में है।

2. मांझी व्यवस्था संथालों में प्रधान व्यवस्था है।

**शोध विधि :** प्रस्तुत शोध प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित है जिसके अंतर्गत साक्षात्कार, अवलोकन एवं समूह चर्चा का सहारा लिया गया है।

**शोध का महत्व :** वर्तमान संदर्भ में संथालों के सामाजिक जीवन को देखने का यह एक सफल प्रयास है जिसके माध्यम से हमें यह पता चलता है कि उनके बीच परंपरागत न्याय व्यवस्था एवं सामाजिक संगठन का स्वरूप कैसा है? शोध के निष्कर्ष से लोग अवगत हो पायेंगे कि संथालों के जीवन में उनके परंपरागत मूल्यों का उनके जीवन में कितना महत्वपूर्ण स्थान है।

**शोध क्षेत्र :** बिहार राज्य के जमुई जिले की जनसंख्या वर्ष 2011 (जनगणना रिपोर्ट) के अनुसार 17,60,405 है। जिले में कुल आबादी का 4.48 प्रतिशत आबादी संथाल जनजाति की है। कुल 10 प्रखंड, एक अनुमंडल और 1503 गांव हैं।

**शोध विश्लेषण :** प्रस्तुत शोध में यह पाया गया की आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी संथालों के बीच उनकी परंपरागत न्याय व्यवस्था और सामाजिक संगठन कायम है लेकिन कुछ सामाजिक मूल्यों में कमी परिलक्षित हो रही है। आधुनिकीकरण, गैर जनजातीय लोगों के साथ संपर्क और ईसाई लोगों के प्रभाव ने उनके परंपरागत सामाजिक संरचना एवं मूल्यों में परिवर्तन लाया है।

**निष्कर्ष एवं सुझाव :** वर्तमान संदर्भ में अगर हम जमुई जिले के संथालों के सामाजिक न्याय व्यवस्था एवं सामाजिक संगठन को देखें तो कई कारणों से उनके इन व्यवस्थाओं में परिवर्तन दिखाई पड़ रहे हैं इसके पीछे आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, सूचना क्रांति, औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण और गैर- जनजातिय लोगों के साथ सीधा संपर्क शामिल है। एक तरफ तो उनकी परंपरागत न्याय व्यवस्था के मूल्य मौजूद हैं तो दूसरी तरफ सामाजिक संगठन कमजोर होते जा रहे हैं। आधुनिक न्याय की प्रक्रिया और पुलिस प्रशासन ने उनको प्रभावित करने का कार्य किया है। शोध में पाया गया कि अभी भी आपसी झगड़े और विवाद परंपरागत न्याय व्यवस्था के अंतर्गत मांझी द्वारा सुलझाए जाते हैं और दंड स्वरूप बिटलाहा भी किया जाता है। जघन्य अपराधों के लिए पुलिस-प्रशासन की सहायता लोग लेने को विवश हो जाते हैं खासकर जब किसी की हत्या का मामला हो। लेकिन आज भी संथाल अपने परंपरागत सामाजिक मूल्यों

को महत्व देते हैं उनके साथ जीवन-यापन करते हैं और वे हर संभव अपनी परंपरागत संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था को अक्षुण्य बनाए रखने का प्रयास करते हैं। लेकिन गैर जनजातीय लोगों के साथ उनका संबंध और आधुनिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं ने उनकी सोच में थोड़ा परिवर्तन लाने का कार्य किया है जिसके परिणाम स्वरूप उनकी परंपरागत मूल्यों में थोड़ी संक्रमण की अवस्था दिखाई पड़ती है। संथाल कभी-कभी विवशता के कारण आधुनिक मूल्यों को स्वीकार करते देखे गए हैं। संथाल अभी भी अपने परंपरागत न्याय व्यवस्था और सामाजिक मूल्यों को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं जरूरत है उनके सामाजिक मूल्य और संस्कृति को गैर- जनजातीय लोगों के द्वारा सम्मान करना एवं सरकार द्वारा उनकी जल, जंगल और जमीन एवं परंपरागत सरना धर्म की रक्षा करना, उनकी संस्कृति को बढ़ावा देना ताकि वे जिस संक्रमण की अवस्था से गुजर रहे हैं उससे वे उबर सके और अपनी नृजातीय पहचान को अक्षुण्य बनाए रख सके।

**संदर्भ सूची :**


1. अहमद, डॉ. जियाउद्दीन(2005). बिहार के आदिवासी, मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली, पृष्ठ 126
2. अटल,योगेश (2011). आदिवासी भारत, रावत पब्लिकेशन, जयपुर
3. बोडिंग, पी ओ(1930). ए संथाल डिक्शनरी, ओस्लो, वॉल्यूम-1, पार्ट-2,पृष्ठ-311-12
4. बोडिंग, पी ओ(2003). ट्रेडिशनल इन्स्टिट्यूशन्स ऑफ दी संथाल, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-110002
5. बोस, निर्मल कुमार(2023). ट्राईबल लाइफ इन इंडिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली
6. ब्राउन, रेडक्लिफ ए आर(1952). स्ट्रक्चर एंड फंक्शंस इन प्रिमिटिव सोसाइटी, यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन
7. चौधरी, पी सी राय (1960). बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स मुंगेर, सचिवालय प्रेस पटना, बिहार
8. हेंब्रम, डॉ रतन(2016). संताली लोकगीतों में साहित्य और संस्कृति, झारखंड झरोखा रातू रोड, रांची
9. वर्मा, डॉ उमेश कुमार((2008).जनजातीय समाजशास्त्र, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, पटना-800004
10. वर्मा, डॉ उमेश कुमार (2022). संथाल-संक्षिप्त मोनोग्राफिक्स सीरीज, डॉ रामदयाल मुंडा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, मोरहाबादी, रांची- 834008,पृष्ठ सं.-05



plkumar530@gmail.com, 8210766250

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 179-184
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# ਸਾਕਾ ਚਮਕੌਰ ਸਾਹਿਬ: ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਦੀ ਸ਼ਹਾਦਤ

**ਡਾ. ਪਾਲਜੀਤ ਕੌਰ**

ਤਹਿਸੀਲ-ਰਤੀਆ, ਜ਼ਿਲਾ.-ਫਤਿਹਾਬਾਦ, ਹਰਿਆਣਾ

ਪਿਨ ਕੋਡ: 125051

ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਸ਼ਹਾਦਤਾਂ ਦੀਆਂ ਨੀਹਾਂ ਉੱਤੇ ਉਸਰਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਅਜਿਹਾ ਇਤਿਹਾਸ ਹੈ ਜਿਸ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਦਿਆਂ, ਸੁਣਦਿਆਂ ਅਤੇ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਦਿਆਂ ਦਿਲ, ਦਿਮਾਗ ਸੁੰਨ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਦਸੰਬਰ ਮਹੀਨੇ ਦਾ ਪਿਛਲਾ ਅੱਧ ਉਹ ਸਮਾਂ ਹੈ ਜਦੋਂ ਦਸਮ ਪਿਤਾ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦਾ ਪੂਰਾ ਪਰਿਵਾਰ ਸਿੱਖੀ ਦੀ ਖਾਤਰ ਸ਼ਹਾਦਤ ਦਾ ਜਾਮ ਪੀ ਗਿਆ। ਸ਼ਾਇਦ ਹੀ ਦੁਨੀਆ 'ਤੇ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਬਾਪ ਹੋਵੇਗਾ ਜੋ ਆਪਣੇ ਹੱਥੀਂ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਤਿਆਰ ਕਰਕੇ ਜੰਗ ਲਈ ਤੋਰੇਗਾ। ਇਸ ਦੁਨੀਆ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਇਦ ਹੀ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਮਰਦ ਅਗੰਮੜਾ ਪੈਦਾ ਹੋਵੇਗਾ ਜਿਸਨੇ ਆਪਣਾ ਸਾਰਾ ਪਰਿਵਾਰ ਧਰਮ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅਣਖ ਦੀ ਖਾਤਰ ਕੁਰਬਾਨ ਕੀਤਾ ਹੋਵੇ। ਰਹਿੰਦੀ ਦੁਨੀਆ ਤੱਕ ਦਸ਼ਮੇਸ਼ ਪਿਤਾ ਦਾ ਕੋਈ ਸਾਨੀ ਨਹੀਂ ਹੋਣਾ ਜਿਸ ਦਾ ਦਾਦਾ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦ, ਪਿਤਾ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦ, ਬੱਚੇ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦ, ਮਾਂ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦ ਅਤੇ ਉਹ ਆਪ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਦੇ ਵੀ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਅਤੇ ਸਿੱਖਾਂ ਵਿੱਚ ਫਰਕ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਬੱਚਿਆਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਧ ਪਿਆਰ ਦਿੱਤਾ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਜੰਗ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖਾਂ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਆਪਣੇ ਵੱਡੇ ਫਰਜੰਦਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਤੋਰਿਆ ਜਦੋਂ ਸਿੱਖਾਂ ਨੇ ਆਖਿਆ ਕਿ ਮਹਾਰਾਜ ਇੱਕ ਤਾਂ ਰੱਖ ਲੈਂਦੇ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਸੀ ਕਿ ਸਾਰੇ ਸਿੱਖ ਮੇਰੇ ਪੁੱਤਰ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਿਰਫ ਬਚਨ ਕਹੇ ਹੀ ਨਹੀਂ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰਾ ਵੀ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਸੋ ਆਓ ਆਪਾਂ ਵੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਦਿੱਤੀ ਸਿੱਖਿਆ ਨੂੰ ਲੈ ਕੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਹੋਏ ਪੂਰਨਿਆਂ ਉੱਤੇ ਚੱਲਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕਰੀਏ।

ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਅੰਦਰ 6 ਪੋਹ ਤੋਂ 13 ਪੋਹ ਤੱਕ ਜੋ ਕੌਤਕ ਵਰਤੇ ਸਨ। ਇਕ ਐਸਾ ਸਫਰ ਜੋ ਦਸ਼ਮੇਸ਼ ਪਿਤਾ ਦੇ ਸਰਬੰਸ ਦੀਆਂ ਸ਼ਹੀਦੀਆਂ ਵੱਲ ਨੂੰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਸਦੀ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਗਾਥਾ ਆਪਾਂ ਸਾਰੇ ਸੁਣਦੇ ਆ ਰਹੇ ਹਾਂ। ਇਸੇ ਕਰਕੇ ਸਾਰਾ ਹੀ ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਇਹਨਾਂ ਦਿਨਾਂ ਵਿੱਚ ਫਤਿਹਗੜ੍ਹ ਸਾਹਿਬ ਇਕੱਠਾ ਹੋ ਕੇ ਸਰਬੰਸਦਾਨੀ ਦਸ਼ਮੇਸ਼ ਪਿਤਾ ਦੇ ਫਰਜੰਦਾਂ ਦੀ ਅਦੁੱਤੀ ਸ਼ਹਾਦਤ ਨੂੰ ਯਾਦ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਮਹਾਨ ਹੈ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਦੇ ਬਚਨ ਵੀ

ਮਹਾਨ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਨੂੰ ਅੱਖਰਾਂ ਰਾਹੀਂ ਬਿਆਨ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਸਰਬੰਸਦਾਨੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦੀ ਕੁਰਬਾਨੀ ਨੂੰ ਸ਼ਬਦਾਂ ਰਾਹੀਂ ਬਿਆਨ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਨੂੰ ਜੁਬਾਨ ਨਾਲ ਜਾਂ ਲਿਖਣ ਨਾਲ ਨਾਪਿਆ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਇਸ ਮਹਾਨਤਾ ਨੂੰ ਤਾਂ ਉਹੀ ਜਾਣਦੇ ਹਨ ਜਿਨਾਂ ਦੀ ਸੁਰਤ ਜਾਗੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮੁੰਦਰ ਦੀ ਗਹਿਰਾਈ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਨਾਪਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਨੂੰ ਵੀ ਨਾਪਿਆ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਬਚਨਾਂ ਨੂੰ ਕਮਾ ਕੇ ਦਿਖਾਇਆ ਹੈ। ਦਸਮ ਪਿਤਾ ਜੀ ਦੇ ਬਚਨ 'ਸਵਾ ਲਾਖ ਸੇ ਏਕ ਲੜਾਊ' ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੇ ਚਮਕੌਰ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਜੰਗ ਵਿੱਚ ਕਮਾ ਕੇ ਦਿਖਾਇਆ ਹੈ।

ਕਲਗੀਧਰ ਪਾਤਿਸ਼ਾਹ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਦੇ ਨਾਮ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵੀ ਗੁੱਝੇ ਭੇਤ ਰੱਖੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਦੇ ਲਾਲਾਂ ਦੇ ਨਾਂ ਖਾਲਸਾਈ ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੈ। ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਚਾਰੇ ਲਾਲਾਂ ਦਾ ਜਨਮ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਸੀ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਦਾ ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਮ ਕਰਨ ਕੀਤਾ ਉਹ ਖਾਲਸਾਈ ਸੁਭਾਅ ਦੀ ਤਾਸੀਰ ਹਨ। ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਦਾ ਨਾਮ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਰੱਖਿਆ ਜਿਸ ਦਾ ਅਰਥ ਹੈ ਅਜਿੱਤ ਹੋਣਾ ਭਾਵ ਜਿਹੜਾ ਜਿੱਤਿਆ ਨਾ ਜਾ ਸਕੇ। ਉਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਦੂਜੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਦਾ ਨਾਮ ਰੱਖਿਆ ਜੁਝਾਰ ਸਿੰਘ। ਅਜਿੱਤ ਉਹੀ ਹੋਵੇਗਾ ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਜੂਝਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਹੋਵੇਗੀ। ਖਾਲਸੇ ਦਾ ਗੁਣ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜੁਝਾਰੂ। ਜੂਝਣ ਲਈ ਜੋਰ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਆਤਮਬਲ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਆਤਮਵਿਸ਼ਵਾਸ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਖਾਲਸੇ ਦਾ ਗੁਣ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜੋਰਾਵਰ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਛੋਟੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਦਾ ਨਾਂ ਰੱਖਿਆ ਜੋਰਾਵਰ ਸਿੰਘ। ਜੋਰਾਵਰ ਹੋਣ ਲਈ ਅੰਦਰ ਫਤਿਹ ਦਾ ਜਜ਼ਬਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਲਈ ਸਭ ਤੋਂ ਛੋਟੇ ਸਾਹਿਬਜਾਦੇ ਦਾ ਨਾਂ ਰੱਖਿਆ ਗਿਆ ਫਤਿਹ ਸਿੰਘ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਚਾਰੇ ਲਾਲਾਂ ਨੂੰ ਇਹੋ ਜਿਹੇ ਨਾਮ ਦਿੱਤੇ ਜਿਹਨਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਅਰਥ ਸੀ ਕਿ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਕੋਈ ਜਿੱਤ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ। ਜੁਝਾਰ ਸਿੰਘ ਜੂਝਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਰੱਖਦਾ ਹੈ, ਜੋਰਾਵਰ ਸਿੰਘ ਦੇ ਜੋਰ ਨੂੰ ਕੋਈ ਸਭਾ ਝੁਕਾ ਨਹੀਂ ਸਕਦੀ ਅਤੇ ਫਤਿਹ ਸਿੰਘ ਦੁਸ਼ਮਣਾਂ ਦੇ ਗੜ੍ਹ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵੀ ਫਤਿਹ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰੇਗਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਲਾਲਾਂ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨਾਵਾਂ ਦੇ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਉਜਾਗਰ ਕਰਕੇ ਦੁਨੀਆ ਸਾਹਮਣੇ ਰੱਖਿਆ। ਲਾਲਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਕਥਨਾਂ ਨੂੰ ਹਕੀਕਤ ਵਿੱਚ ਸੱਚ ਕਰਕੇ ਦਿਖਾਇਆ। ਸੱਚੇ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਜਾਣੀ-ਜਾਣ ਸਨ, ਇਸੇ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਲਾਲਾਂ ਨੂੰ ਸਿਰਫ ਤਲਵਾਰ ਚਲਾਉਣ ਦੇ ਗੁਰ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਿਖਾਏ ਸਗੋਂ ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਤਲਵਾਰ ਵਾਂਗ ਤਿੱਖਿਆਂ ਕੀਤਾ। ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਨੇ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਸੋਚ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਏਨਾ ਉੱਚਾ ਕੀਤਾ ਕਿ ਉਹ ਨਾ ਤਾਂ ਚਮਕੌਰ ਦੇ ਕਿਲ੍ਹੇ ਵਿੱਚ ਡੋਲੇ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਸੂਬੇ ਦੀ ਕਚਹਿਰੀ ਵਿੱਚ।

ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ 6 ਪੋਹ ਦੀ ਕਾਲੀ ਬੋਲੀ, ਠੰਡੀ ਰਾਤ ਸੀ ਜਦੋਂ ਕਲਗੀਧਰ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਜੀ ਨੇ ਪੰਜ ਸੌ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਸਮੇਤ ਅਨੰਦਪੁਰ ਦਾ ਕਿਲ੍ਹਾ ਛੱਡਿਆ। 'ਮਨੁੱਖਤਾ ਦਾ ਗੁਰੂ' ਭੁੱਲੀਆਂ ਰੂਹਾਂ ਨੂੰ ਰੌਸ਼ਨੀ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਰਾਤ ਦੇ ਸੰਘਣੇ ਹਨੇਰੇ ਵਿੱਚ ਚਲਿਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀਰਤਪੁਰ ਪਹੁੰਚੇ। ਉੱਥੇ ਬਾਬਾ ਸੂਰਜ ਮੱਲ ਜੀ ਦੀ ਸੰਤਾਨ ਵਿੱਚੋਂ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪੋਤੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੂੰ ਮਿਲੇ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਅਸੀਸ ਦਿੱਤੀ ਅਤੇ ਦਿਆਲੂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਆਪਣੇ ਵਡੇਰਿਆਂ ਦੀ ਧਰਤੀ ਕੀਰਤਪੁਰ ਸਾਹਿਬ ਨੂੰ ਮੱਥਾ ਟੇਕ ਕੇ ਅੱਗੇ ਚਲੇ ਗਏ।

ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਝੂਠੀਆਂ ਕਸਮਾਂ ਚੁੱਕ ਕੇ ਮੁਕਰਨ ਵਾਲੇ ਲੋਕ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਅੱਜ ਘੇਰਾ ਪਾ ਲਓ। ਪਹਿਲਾਂ ਤਾਂ ਇਹ ਕਿਲ੍ਹੇ ਵਿੱਚ ਸਨ, ਹੁਣ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਆ ਗਏ ਹਨ। ਘੇਰਾ ਪਾ ਕੇ ਗੁਰੂ

ਜੀ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਅਤੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਜਾਵੇ। ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀਰਤਪੁਰ ਲੰਘੇ ਤਾਂ ਪਿੱਛੋਂ ਮੁਗਲ ਫੌਜਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖਾਂ ਨੂੰ ਲਲਕਾਰਿਆ ਅਤੇ ਕਿਹਾ:-

"ਪਿੱਛੋਂ ਅਵਾਜ਼ ਆਈ, ਸਿੱਖੋ! ਆਪਣੇ ਹਥਿਆਰ ਸੁੱਟ ਦਿਉ, ਹੁਣ ਇਹ ਆਨੰਦਪੁਰ ਨਹੀਂ। ਆਪਣੇ ਆਪ ਸ਼ਸਤਰ ਛੱਡ ਦਿਉਗੇ ਤਾਂ ਜਾਨ ਬਖ਼ਸ਼ ਦਿੱਤੀ ਜਾਏਗੀ, ਨਹੀਂ ਤਾਂ ਸਾਰਾ ਕਾਫਲਾ ਘੇਰ ਕੇ ਖਤਮ ਕਰ ਦੇਵਾਂਗੇ।"1

ਇਸ ਵੰਗਾਰ ਦਾ ਜਵਾਬ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਾ ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਦਿੱਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ:-

"ਭਾਵੇਂ ਪਹਾੜੀਆਂ ਹੋਣ, ਭਾਵੇਂ ਕਿਲ੍ਹੇ ਹੋਣ, ਭਾਵੇਂ ਮੈਦਾਨੀ ਇਲਾਕਾ ਹੋਵੇ, ਜਿਹੜੇ ਸ਼ਸਤਰ ਮੇਰੇ ਪਿਤਾ ਨੇ ਫੜਾਏ ਹਨ, ਤਨ ਵਿੱਚੋਂ ਜਿੰਦ ਨਿਕਲਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਹੀ ਹੱਥਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਸ਼ਸਤਰ ਛੁੱਟੇਗਾ।ਜਿਉਂਦੇ ਜੀਅ ਗੁਰੂ ਕਲਗੀ ਵਾਲੇ ਦੇ ਸਿੱਖ ਤੇ ਪੁੱਤਰ ਤੁਹਾਡੇ ਸਾਹਮਣੇ ਸ਼ਸਤਰ ਨਹੀਂ ਛੱਡਣਗੇ।"2

ਰਾਤ ਦਾ ਤੀਜਾ ਪਹਿਰ ਲੰਘ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪ੍ਰਭਾਤ ਵੇਲਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮਗਰੋਂ ਟਿੱਡੀ ਦਲ ਚੜਾਈ ਕਰਕੇ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਜੀ ਸਰਸਾ ਨਦੀ ਦੇ ਕੰਢੇ ਪਹੁੰਚ ਗਏ। ਬਾਰਿਸ਼ ਹੋ ਰਹੀ ਸੀ। ਅੱਗੇ ਸਰਸਾ ਨਦੀ ਉਫਾਨ ਉੱਤੇ ਸੀ ਅਤੇ ਪਿੱਛੇ ਦੁਸ਼ਮਣਾਂ ਦਾ ਤੂਫਾਨ ਸੀ। ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਨੇ ਭਾਈ ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੂੰ ਆਵਾਜ਼ ਦਿੱਤੀ। ਪਿਆਰੇ ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਜੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲਾ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ, ਕੀ ਹੁਕਮ ਹੈ ਗੁਰੂ ਜੀ? ਗੁਰੂ ਜੀ ਕਹਿਣ ਲੱਗੇ, ਦੇਖੋ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲਾ ਕਦੀ ਨਹੀਂ ਖੁੰਝਾਉਣਾ। ਸਾਨੂੰ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲਾ ਵਡਿਆਈ ਵਿਚਾਰ ਕਰਨ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਬਖਸ਼ਿਆ ਹੈ। ਫਿਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੂੰ ਆਵਾਜ਼ ਦਿੱਤੀ ਤੇ ਕਿਹਾ, ਬੇਟਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ, ਅਸੀਂ ਇੱਥੇ ਕਾਫਲੇ ਸਮੇਤ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦਾ ਕੀਰਤਨ ਕਰਾਂਗੇ। ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ, ਦਾਤਾ ਪਿੱਛੋਂ ਦੁਸ਼ਮਣ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਕਲਗੀਆਂ ਵਾਲੇ ਕਹਿਣ ਲੱਗੇ - ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲੇ ਦਾ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਸਿੱਖ ਦੀ ਪੂੰਜੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਦਿਨ ਸਿੱਖ ਦੀ ਪੂੰਜੀ ਬਾਣੀ ਚਲੀ ਗਈ, ਦੁਸ਼ਮਣ ਜਿੱਥੇ ਮਰਜੀ ਘੇਰ ਕੇ ਉਸਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰ ਦੇਵੇਗਾ। ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲੇ ਦੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਬਾਰੇ ਯੋਗੀ ਅੱਲਾ ਯਾਰ ਖਾਂ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

"ਸਤਗੁਰ ਅਬ ਆਨ ਪਹੁੰਚੇ ਥੇ ਸਿਰਸਾ ਨਦੀ ਕੇ ਪਾਸ
ਥੇ ਚਾਹਤੇ ਬੁਝਾਏਂ ਵੁਹ ਬਾਰਹ ਪਹਰ ਕੀ ਪ੍ਰਯਾਸ
ਇਸਨਾਨ ਕਰਕੇ ਔਰ ਬਦਲ ਕੇ ਨਯਾ ਲਿਬਾਸ
ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਕਾ ਨਾਮ ਜਪੇਂ ਔਰ ਕਰੇ ਸਪਾਸ
ਜਪਜੀ ਕਾ ਜਾਪ ਇਸ ਘੜੀ ਕਰਨਾ ਜ਼ਰੂਰ ਥਾ
ਪੜ੍ਹ ਕੇ ਗਰੰਥ ਔਰ ਬੜਾਨਾ ਸੁਰੂਰ ਥਾ।"3

ਪ੍ਰਭਾਤ ਵੇਲੇ ਦਾ ਸਮਾਂ ਹੋਇਆ। ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦਾ ਸਮਾਂ ਹੋ ਗਿਆ। ਅੱਗੇ ਸਰਸਾ ਨਦੀ ਤੇ ਪਿੱਛੇ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ। ਚੋਜੀ ਪ੍ਰੀਤਮ ਨੇ ਅੱਜ ਸਰਸਾ ਦੇ ਕੰਢੇ ਤਾਰਿਆਂ ਦੇ ਚੰਦੋਏ ਥੱਲੇ ਬੂੰਦਾ- ਬਾਂਦੀ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲੇ ਦੇ ਦੀਵਾਨ ਸਜਾਏ। ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਨੇ ਆਪ ਕੀਰਤਨ ਕੀਤਾ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਪਹੁੰਚ ਗਈਆਂ ਸਨ। ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਅਤੇ ਭਾਈ ਉਦੈ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦੁਸ਼ਮਣਾਂ ਦਾ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ। ਭਾਈ ਉਦੈ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦੀਵਾਨ ਦੀ ਰੱਖਿਆ ਕਰਦਿਆਂ ਸ਼ਹਾਦਤ ਦਾ ਜਾਮ ਪੀ ਗਏ। ਉਦੈ ਸਿੰਘ ਜੀ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋ ਗਏ, ਪਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਦੀਵਾਨ ਨੂੰ ਆਂਚ ਨਹੀਂ ਆਉਣ ਦਿੱਤੀ।

ਸਰਸਾ ਨਦੀ ਪਾਰ ਕਰਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਪਰਿਵਾਰ ਤਿੰਨ ਹਿੱਸਿਆਂ ਵਿੱਚ ਵੰਡਿਆ ਗਿਆ। ਗੁਰੂ ਕੇ ਮਹਿਲ ਮਾਤਾ ਸੁੰਦਰੀ ਜੀ ਅਤੇ ਮਾਤਾ ਸਾਹਿਬ ਕੌਰ ਜੀ, ਭਾਈ ਮਨੀ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨਾਲ ਦਿੱਲੀ ਵੱਲ ਨੂੰ ਚਲੇ ਗਏ। ਮਾਤਾ ਗੁਜਰੀ ਜੀ ਛੋਟੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਨਾਲ ਗੰਗੂ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਦੇ ਘਰ 'ਖੇੜੀ' ਚਲੇ ਗਏ । ਗੁਰੂ ਜੀ, ਦੋਵੇਂ ਵੱਡੇ ਫਰਜੰਦ ਅਤੇ 36 ਸਿੰਘ ਸਰਸਾ ਪਾਰ ਕਰਕੇ ਰੋਪੜ ਵੱਲ ਤੁਰ ਪਏ। ਰੋਪੜ ਤੋਂ ਅੱਗੇ ਜਾ ਕੇ ਕੁੱਝ ਸਿੰਘ ਹੋਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨਾਲ ਜਾ ਰਲੇ। 7 ਪੋਹ ਦੀ ਸ਼ਾਮ ਤੱਕ ਗੁਰੂ ਜੀ ਪਿੰਡ 'ਚਮਕੌਰ' ਦੇ ਬਾਹਰ ਇੱਕ ਬਾਗ ਵਿੱਚ ਜਾ ਉਤਰੇ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਜੀ ਨਾਲ ਦੋਵੇਂ ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਅਤੇ 41 ਸਿੰਘ ਹੋਰ ਸਨ। ਚਮਕੌਰ ਦੇ ਇੱਕ ਜਿਮੀਂਦਾਰ ਕੋਲੇ ਪਿੰਡ ਦੇ ਇੱਕ ਪਾਸੇ ਖੁੱਲੀ ਹਵੇਲੀ ਸੀ। ਜਿਮੀਂਦਾਰ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੂੰ ਆ ਕੇ ਬੇਨਤੀ ਕੀਤੀ ਕਿ ਦੁਸ਼ਮਣ ਕਿਸੇ ਵੇਲੇ ਵੀ ਹਮਲਾ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ ਇਸ ਕਰਕੇ ਖੁੱਲ੍ਹੀ ਜਗ੍ਹਾ ਵਿੱਚ ਰਾਤ ਕੱਟਣੀ ਠੀਕ ਨਹੀਂ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਹਵੇਲੀ ਵਿੱਚ ਚਲੇ ਗਏ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਦਿਨ ਚੜਦੇ ਤੱਕ ਸਰਸਾ ਦਾ ਪਾਣੀ ਉਤਰ ਗਿਆ ਸੀ। ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਨਦੀ ਪਾਰ ਕਰਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਮਗਰ ਲੱਗ ਗਈਆਂ। ਸੱਤ ਅਤੇ ਅੱਠ ਪੋਹ ਦੀ ਵਿਚਕਾਰਲੀ ਰਾਤ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਨੇ ਚਮਕੌਰ ਦੀ ਗੜ੍ਹੀ ਨੂੰ ਘੇਰਾ ਪਾ ਲਿਆ।

ਦੁਨੀਆ ਭਰ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਚਮਕੌਰ ਦੀ ਜੰਗ ਇੱਕ ਅਨੋਖੀ ਜੰਗ ਸੀ। ਕਿੱਥੇ ਦਸ ਲੱਖ ਦੀ ਭਾਰੀ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜ ਅਤੇ ਕਿੱਥੇ 40 ਸਿੰਘ। ਇਸ ਬਾਰੇ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ 'ਜਫਰਨਾਮਾ ' ਵਿੱਚ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:-

"ਗੁਰਿਸਨਹ ਚਿ ਕਾਰੇ ਕੁਨੱਦ ਚਿਹਲ ਨਰ।
ਕਿ ਦਹ ਲਕ ਬਰ ਆਇਦ ਬਰੋ ਬੇ ਖਬਰ।"4

ਭਾਵ ਕਿ 40 ਭੁੱਖੇ ਸਿੰਘ ਕੀ ਕਰਦੇ, ਜਦੋਂ ਅਚਾਨਕ ਹੀ ਉਹਨਾਂ ਉੱਤੇ ਦਸ ਲੱਖ ਆ ਚੜ੍ਹੇ।

ਅੱਠ ਪੋਹ ਦਾ ਸੂਰਜ ਚੜ੍ਹਦਿਆਂ ਹੀ ਸਰਹੰਦ ਦੇ ਨਵਾਬ ਵਜ਼ੀਰ ਖਾਨ ਨੇ ਚਮਕੌਰ ਦੀ ਕੱਚੀ ਗੜ੍ਹੀ ਉੱਤੇ ਹਮਲਾ ਬੋਲਣ ਦਾ ਹੁਕਮ ਸੁਣਾ ਦਿੱਤਾ। ਅੱਗੋਂ ਸਿੰਘ ਵੀ ਟਾਕਰੇ ਲਈ ਬਿਲਕੁਲ ਤਿਆਰ ਸਨ। ਭਾਈ ਹਿੰਮਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਚਾਰ ਹੋਰ ਸਿੰਘ ਆਏ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਅੱਗੇ ਬੇਨਤੀ ਕੀਤੀ ਕਿ ਸਾਨੂੰ ਪੰਜਾਂ ਨੂੰ ਹਵੇਲੀ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਜਾ ਕੇ ਵੈਰੀ ਦਾ ਟਾਕਰਾ ਕਰਨ ਦੀ ਇਜਾਜ਼ਤ ਦਿੱਤੀ ਜਾਵੇ। ਉਸ ਵੇਲੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਤੁਸੀਂ ਪੰਜ ਨਹੀਂ ਪੰਜ ਲੱਖ ਹੋ। ਮੇਰਾ ਹਰ ਅੰਮ੍ਰਿਤਧਾਰੀ ਸਿੱਖ ਸਵਾ ਲੱਖ ਫੌਜ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਹੈ। ਮੈਂ ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਵਚਨ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਸਵਾ-ਸਵਾ ਲੱਖ ਨਾਲ ਇੱਕ-ਇੱਕ ਲੜਣ ਵਾਲਾ ਸੂਰਮਾ ਪੈਦਾ ਕਰ ਦਿਆਂਗਾ। ਤੁਸੀਂ ਜਾਓ ਤੇ ਵਚਨ ਪੂਰਾ ਕਰੋ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇੱਕ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਇਕ ਪੰਜ-ਪੰਜ ਸਿੰਘਾਂ ਦਾ ਜੱਥਾ ਜੰਗ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਤੋਰਿਆ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਿੰਘਾਂ ਨੇ ਡੱਟ ਕੇ ਵੈਰੀ ਦਾ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕੀਤਾ। ਇੱਕ-ਇੱਕ ਸਿੰਘ ਸਵਾ ਲੱਖ ਦੁਸ਼ਮਣ ਉੱਤੇ ਭਾਰੀ ਪੈ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਜਦੋਂ ਸਿੰਘਾਂ ਦੇ ਤਿੰਨ ਜੱਥੇ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋ ਗਏ ਤਾਂ ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ, ਜੋ ਉਮਰ ਵਿੱਚ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਿਰਫ 17 ਸਾਲਾਂ ਦੇ ਸਨ, ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਣ ਖਲੋਤੇ ਅਤੇ ਯੁੱਧ ਵਿੱਚ ਜਾਣ ਲਈ ਆਗਿਆ ਮੰਗਣ ਲੱਗੇ। ਕਿੰਨਾ ਵੱਡਾ ਜਿਗਰਾ ਉਸ ਬਾਜਾਂ ਵਾਲੇ ਦਾ ਹੋਣਾ ਹੈ। ਪੁੱਤ ਸਾਹਮਣੇ ਖੜਾ ਜੰਗ ਵਿੱਚ ਜਾਣ ਲਈ ਆਗਿਆ ਮੰਗ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਉਸ ਵੇਲੇ ਵੱਡੇ-ਵੱਡੇ ਪੀਰ-ਪੈਗੰਬਰ, ਯੋਧੇ ਡੋਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਪਰ ਧੰਨ ਹੈ ਮੇਰਾ ਕਲਗੀਆਂ ਵਾਲਾ। ਜਿਹਨੇ ਹੱਸ ਕੇ ਪੁੱਤਰ ਦਾ ਮੱਥਾ ਚੁੰਮਿਆ ਤੇ ਉਸਨੂੰ ਮੌਤ ਨਾਲ ਜੂਝਣ ਲਈ ਜੰਗ ਵਿੱਚ ਤੋਰਿਆ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਖਿਆ - ਜਾਓ ਮੇਰੇ ਅਜੀਤ। ਸੂਰਮਿਆਂ ਵਾਂਗ ਮੌਤ 'ਤੇ ਜਿੱਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰੋ ਅਤੇ ਨਾਲੇ ਇਹ ਵੀ ਯਾਦ ਰੱਖਿਓ ਕਿ ਤੁਹਾਡਾ ਨਾਮ ਅਜੀਤ ਕਿਉਂ ਰੱਖਿਆ। ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਸਿਰ ਝੁਕਾਇਆ ਅਤੇ ਕਿਹਾ 'ਨਾਮ ਕਾ ਅਜੀਤ ਹੂੰ, ਜੀਤਾ ਨਹੀਂ ਜਾਊਗਾ। ਅਗਰ ਜੀਤਾ ਭੀ ਗਿਆ, ਤੋ ਜੀਤਾ ਨਹੀਂ ਆਊਂਗਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੂੰ ਫਤਿਹ ਬੁਲਾ ਕੇ ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਜੰਗ ਦੇ

ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਤੁਰ ਪਏ। ਇਤਿਹਾਸ ਗਵਾਹ ਹੈ ਕਿ ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਦੀ ਚੜ੍ਹਤ ਵੇਖ ਕੇ ਵੈਰੀ ਕੰਬਣ ਲੱਗ ਗਏ । ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਜੰਗ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ ਦੁਸ਼ਮਣ ਨੂੰ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਲਲਕਾਰਦੇ ਹਨ:-

"ਲਲਕਾਰੇ ਅਜੀਤ ਔਰ ਮੁਖਾਤਿਬ ਹੂਏ ਸਭ ਸੇ।
ਫੁਰਮਾਏ ਉਦੂ ਸੇ ਨ: ਨਿਕਲ ਹਦੇ - ਅਦਬ ਸੇ।"5

ਯੋਧਿਆਂ ਨੇ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਦੀਆਂ ਲਾਸ਼ਾਂ ਦੇ ਢੇਰ ਲਗਾ ਦਿੱਤੇ । ਸਿੰਘਾਂ ਕੋਲ ਲੜਦਿਆਂ ਹੋਇਆ ਤੀਰ ਅਤੇ ਗੋਲੀਆਂ ਮੁੱਕ ਗਏ। ਫਿਰ ਸਿੰਘਾਂ ਨੇ ਤਲਵਾਰਾਂ ਨਾਲ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕੀਤਾ। ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਅਤੇ ਹੋਰ ਸਿੰਘ ਸ਼ਹੀਦੀ ਪਾ ਗਏ। ਜਦੋਂ ਸਾਹਿਬਜਾਦਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋਇਆ ਤਾਂ ਕਲਗੀਧਰ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਨੇ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦਾ ਸ਼ੁਕਰਾਨਾ ਕੀਤਾ। ਬਾਬਾ ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦੀ ਸ਼ਹੀਦੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਬਾਬਾ ਜੂਝਾਰ ਸਿੰਘ ਜੀ ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆ ਖਲੋਤੇ । ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਾ ਜੂਝਾਰ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨਾਲ ਪੰਜ ਸਿੰਘ ਹੋਰ ਤਿਆਰ ਹੋਏ । ਪਿਤਾ ਜੀ ਤੋਂ ਆਗਿਆ ਮੰਗਦੇ ਹੋਏ ਬਾਬਾ ਜੂਝਾਰ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਫਰਮਾਇਆ, ਆਗਿਆ ਬਖਸ਼ੋ ਪਿਤਾ ਜੀ, ਮੈਂ ਵੀ ਧਰਮ ਦੀ ਰਾਖੀ ਲਈ ਜੰਗ-ਏ-ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਸੂਰਮਿਆਂ ਵਾਂਗ ਜੂਝ ਕੇ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋਵਾਂ। ਕਿੰਨਾ ਵੱਡਾ ਜਿਗਰਾ ਹੋਵੇਗਾ ਬਾਜਾਂ ਵਾਲੇ ਦਾ, ਜਿਹੜਾ ਇਕ ਪੁੱਤ ਸ਼ਹੀਦ ਕਰਵਾ ਕੇ ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਵੀ ਜੰਗ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਜੂਝਣ ਲਈ ਭੇਜ ਰਿਹਾ ਹੈ । ਉਸ ਸਮੇਂ ਨੂੰ ਜੋਗੀ ਅੱਲਾ ਯਾਰ ਖਾਂ ਕੁੱਝ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਬਿਆਨ ਕਰਦੇ ਹਨ:-

"ਹਮਨੇ ਥਾ ਕਹਾ ਬਾਪ ਕੋ ਜਾਂ ਦੀਜੇ ਧਰਮ ਪਰ,
ਲੋ ਕਹਿਤੇ ਹੈਂ ਅਬ ਆਪ ਕੋ ਜਾਂ ਦੀਜੇ ਧਰਮ ਪਰ।"6

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਨੇ ਆਪਣੇ ਦੂਜੇ ਬੇਟੇ ਨੂੰ ਵੀ ਸ਼ਹੀਦੀ ਪਾਉਣ ਲਈ ਤੋਰ ਦਿੱਤਾ। 14-15 ਸਾਲਾਂ ਦਾ ਯੋਧਾ ਦੁਸ਼ਮਣ ਫੌਜਾਂ ਦੇ ਆਹੂ ਲਾਹ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਵੈਰੀ ਦੀ ਫੌਜ ਵਿੱਚ ਭਾਜੜ ਪੈ ਚੁੱਕੀ ਸੀ। ਬਾਬਾ ਜੂਝਾਰ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਹੋਰ ਪੰਜ ਸਿੰਘ ਅੰਤ ਤੱਕ ਵੈਰੀ ਫੌਜਾਂ ਦਾ ਡੱਟ ਕੇ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕਰਦੇ ਰਹੇ। ਅੰਤ ਸ਼ਹੀਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਗਏ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਹਵੇਲੀ ਵਿੱਚੋਂ ਸਾਹਿਬਜਾਦਾ ਜੂਝਾਰ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਰਣਭੂਮੀ ਵਿੱਚ ਜੂਝਦਿਆਂ ਵੇਖ ਰਹੇ ਸਨ। ਛੋਟਾ ਭਰਾ ਵੱਡੇ ਭਰਾ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਦੋ ਕਦਮ ਅੱਗੇ ਜਾ ਕੇ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋ ਕੇ ਡਿੱਗਿਆ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਉਸ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦਾ ਸ਼ੁਕਰਾਨਾ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਪਹਿਲਾ ਮੈਂ 'ਸ਼ਹੀਦ ਦਾ ਪੁੱਤਰ' ਅਖਵਾਉਂਦਾ ਸੀ, ਅੱਜ ਤੋਂ ਮੈਂ 'ਸ਼ਹੀਦਾਂ ਦਾ ਪਿਤਾ' ਅਖਵਾਵਾਂਗਾ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਲਗੀਧਰ ਪਿਤਾ ਦੋਵੇਂ ਵੱਡੇ ਫਰਜੰਦਾਂ ਦੀ ਸ਼ਹੀਦੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਸੰਸਾਰੀ ਮਨੁੱਖ ਵਾਂਗ ਉਸ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਨੂੰ ਕੋਈ ਉਲਾਹਮਾ ਨਹੀਂ ਦੇ ਰਹੇ ਸੀ, ਸਗੋਂ ਸ਼ੁਕਰਾਨਾ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ । ਇਸ ਦੁਨੀਆ ਉੱਪਰ ਨਾ ਤਾਂ ਕੋਈ ਦਸ਼ਮੇਸ਼ ਪਿਤਾ ਦਾ ਸਾਨੀ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ ਸੀ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਹੋਣਾ ਹੈ । ਜੋਗੀ ਅੱਲਾ ਯਾਰ ਖਾਂ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

"ਇਨਸਾਫ ਕਰੇ ਜੀ ਮੇ ਜਮਾਨਾ ਤੋ ਯਕੀਂ ਹੈ,
ਕਹ ਦੇ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਕਾ ਸਾਨੀ ਹੀ ਨਹੀਂ ਹੈ
ਕਰਤਾਰ ਕੀ ਸੌਗੰਦ ਹੈ, ਨਾਨਕ ਕੀ ਕਸਮ ਹੈ
ਜਿਤਨੀ ਭੀ ਹੋ ਗੋਬਿੰਦ ਕੀ ਤਅਰੀਫ ਵੁਹ ਕਮ ਹੈ।"7

ਸਿੰਘਾਂ ਨੇ ਉੱਥੇ ਗੁਰਮਤਾ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਭਾਈ ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਬੇਨਤੀ ਕੀਤੀ, ਦਾਤਾ - ਸਾਡੇ ਵਰਗੇ ਲੱਖਾਂ ਸਿੰਘ ਤੁਹਾਨੂੰ ਮਿਲ ਜਾਣਗੇ, ਪਰ ਜੇ ਸਵੇਰੇ ਕੋਈ ਭਾਣਾ ਵਾਪਰ ਗਿਆ ਤਾਂ ਸਾਨੂੰ ਤੇਰੇ ਵਰਗਾ ਗੁਰੂ ਨਹੀਂ ਲੱਭਣਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਤੁਸੀਂ ਸਾਡੇ ਵਰਗੇ ਕਈ ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਪੈਦਾ ਕਰ ਲਵੋਗੇ, ਪਰ ਅਸੀਂ ਤੇਰੇ ਵਰਗਾ ਗੁਰੂ ਕਿੱਥੋਂ ਲੱਭਾਂਗੇ। ਕਿਰਪਾ ਕਰਕੇ ਤੁਸੀਂ ਗੜ੍ਹੀ ਛੱਡ ਕੇ ਚਲੇ ਜਾਓ। ਹਜੂਰ ਕਹਿਣ ਲੱਗੇ ਕਿ ਮੈਂ ਲੁਕ ਕੇ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ

ਭਾਈ ਸੰਗਤ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਕਲਗੀ ਦਿੱਤੀ। ਤਿੰਨ ਸਿੰਘ ਭਾਈ ਦਇਆ ਸਿੰਘ ਜੀ, ਭਾਈ ਧਰਮ ਸਿੰਘ ਜੀ ਅਤੇ ਭਾਈ ਮਾਨ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨਾਲ ਲਏ। ਹਜ਼ੂਰ ਨੇ ਜਾਣ ਲੱਗੇ ਤਾੜੀ ਮਾਰੀ ਤੇ ਸ਼ਬਦ ਕਹੇ:-

"ਪੀਰ ਹਿੰਦ ਮੇ ਰਵਦ।"8

ਦਸਮੇਸ਼ ਪਿਤਾ ਦੇ ਇਹ ਲਾਲ ਬੱਚੇ ਨਹੀਂ ਸਨ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਪਰਵਰਿਸ਼ ਹੀ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕੀਤੀ ਗਈ ਸੀ ਕਿ ਕਦੇ ਵੀ ਜੇਕਰ ਅਜਿਹਾ ਸਮਾਂ ਬਣਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਬੱਚੇ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਤਿਆਰ ਰਹਿਣ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਲਾਲਾਂ ਨੂੰ ਆਪ ਸ਼ਸਤਰ ਵਿਦਿਆ ਦੇ ਗੁਰ ਸਿਖਾਉਂਦੇ ਸਨ ਤਾਂ ਜੋ ਸਮਾਂ ਆਉਣ 'ਤੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦੇ ਵੈਰੀ ਦਾ ਡੱਟ ਕੇ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕਰ ਸਕਣ। ਚਮਕੌਰ ਦੇ ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਜਦੋਂ ਮੁਗਲ ਫੌਜਾਂ ਨਾਲ ਭਾਰੀ ਯੁੱਧ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਲਾਲ ਜੰਗ-ਏ-ਮੈਦਾਨ ਵਿੱਚ ਜੂਝ ਕੇ ਲਾੜੀ ਮੌਤ ਨੂੰ ਵਿਹਾਉਂਦੇ ਹਨ।

ਅਖੀਰ ਵਿੱਚ ਅਦੁੱਤੀ ਸ਼ਹਾਦਤਾਂ ਨੂੰ ਸਤਿਕਾਰ ਭੇਟ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੀ ਨੌਜੁਆਨੀ ਅਤੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਇਤਿਹਾਸ, ਸਿਧਾਂਤਾਂ, ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ ਅਤੇ ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਮਈ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਾਲ ਜੋੜੀਏ ਤਾਂ ਜੋ ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਸਮਾਜ ਨਵੀਆਂ ਬੁਲੰਦੀਆਂ ਨੂੰ ਛੂਹ ਸਕੇ ਅਤੇ ਆਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਚੁਨੌਤੀਆਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਵੀ ਕਰ ਸਕੇ। ਸਾਰੇ ਹੀ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਲਈ ਅਰਦਾਸ ਕਰੀਏ। ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਜਿਸ ਧਰਮ ਦੀ ਰਾਖੀ ਲਈ ਆਪਣਾ ਪੂਰਾ ਪਰਿਵਾਰ ਵਾਰ ਦਿੱਤਾ, ਉਸ ਧਰਮ ਦੀ ਰਾਖੀ ਦੀ ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਬਹੁਤ ਜਿਆਦਾ ਲੋੜ ਹੈ। ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਲੋੜ ਹੈ ਸਾਡੀ ਨੌਜੁਆਨੀ ਨੂੰ ਸਿੱਧੇ ਰਸਤੇ ਉੱਪਰ ਆਉਣ ਦੀ, ਜੋ ਨਸ਼ਿਆਂ ਦੇ ਹੜ੍ਹ ਵਿੱਚ ਰੁੜੀ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ। ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕਰੀਏ ਨੌਜੁਆਨ ਪੀੜ੍ਹੀ ਅਤੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਗੁਰਬਾਣੀ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦੀ, ਤਾਂ ਜੋ ਬੱਚੇ ਗੁਰੂ ਦੀ ਬਾਣੀ ਤੋਂ ਸਿੱਖਿਆ ਲੈ ਕੇ ਆਪਣਾ ਧਰਮ ਪਾਲ ਸਕਣ। ਉਹਨਾਂ ਮਾਸੂਮ ਬੱਚਿਆਂ ਵਾਂਗ ਸਿਦਕੀ ਅਤੇ ਬੁਲੰਦ ਹੌਸਲੇ ਵਾਲੇ ਬਣ ਸਕਣ ਅਤੇ ਲੋੜ ਪੈਣ 'ਤੇ ਧਰਮ ਦੀ ਰਾਖੀ ਲਈ ਜੂਝਣ ਲਈ ਤਿਆਰ ਰਹਿਣ।

**ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ**


1. ਭਾਈ ਪਿੰਦਰਪਾਲ ਸਿੰਘ, ਸਾਕਾ ਸਰਹੰਦ ਸਾਕਾ ਚਮਕੌਰ, ਪੰਨਾ 18
2. - ਉਹੀ-
3. ਜੋਗੀ ਅੱਲਾ ਯਾਰ ਖਾਂ, ਸ਼ਹੀਦਾਨਿ ਵਫ਼ਾ, ਪੰਨਾ 20
4. ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ, ਜਫ਼ਰਨਾਮਾ, ਪੰਨਾ - 19
5. ਜੋਗੀ ਅੱਲਾ ਯਾਰ ਖਾਂ, ਸ਼ਹੀਦਾਨਿ ਵਫ਼ਾ, ਪੰਨਾ - 194
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ - 210
7. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ – 130
8. ਭਾਈ ਪਿੰਦਰਪਾਲ ਸਿੰਘ, ਸਾਕਾ ਸਰਹੰਦ ਸਾਕਾ ਚਮਕੌਰ, ਪੰਨਾ 29



Email ID – paljeetkaur023@gmail.com 8295249864

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 185-190
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# बलौदाबाजार-भाटापारा जिले का महिला नेतृत्व: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

**सनत कुमार**
राजनीति विज्ञान सहायक प्राध्यापक,
शासकीय नवीन महाविद्यालय सोनाखान
शोध केंद्र,
शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासित महाविद्यालय दुर्ग

## 1 परिचय, शोध पृष्ठभूमि एवं प्रतिदर्श रूपरेखा

### 1.1 प्रस्तावना

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और जमीनी स्तर पर सुशासन की स्थापना में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। भारत में 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के पश्चात स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को अनिवार्य बनाते हुए सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया। छत्तीसगढ़ राज्य के संदर्भ में महिला नेतृत्व ने ग्रामीण क्षेत्रों में महिला नेतृत्व को केवल एक सांकेतिक प्रतिनिधित्व से आगे ले जाकर वास्तविक निर्णय शक्ति और प्रशासनिक सक्रियता में बदलने का अनूठा प्रयास किया है।

यह शोध आलेख छत्तीसगढ़ के बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के अंतर्गत ग्रामीण स्थानीय निकायों में महिला नेतृत्व की कार्यप्रणाली, उनकी चुनौतियों, प्रशासनिक समन्वय, डिजिटल सशक्तिकरण और सामाजिक बदलाव का एक सूक्ष्म विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

### 1.2 शोध अध्ययन का क्षेत्र

वर्तमान अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य के बलौदाबाजार-भाटापारा जिला के अंतर्गत आने वाले 5 प्रशासनिक ब्लॉकों (कसडोल, बलौदा बाजार, पलारी, भाटापारा और सिमगा) में संचालित किया गया है। इस अध्ययन की समय-अवधि वर्ष 2020 से 2026 तक की है, जो कोविड-19 महामारी के दौर से लेकर वर्तमान प्रशासनिक सुधारों के कालखंड को कवर करती है।

### 1.3 शोध प्रतिदर्श रूपरेखा

इस शोध को पूरी तरह से प्रमाणित, वस्तुनिष्ठ और सांख्यिकीय रूप से मजबूत बनाने के लिए कुल 700 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। अध्ययन की प्रकृति के अनुसार प्रतिदर्श को तीन मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया गया है:

- **सरपंच (प्रतिदर्श संख्या: 100, प्रतिशत: 14.29%):** इनका अध्ययन मुख्य रूप से नीतिगत निर्णय, प्रशासनिक सम्मान, डिजिटल गवर्नेंस और व्यक्तिगत प्रेरणा का विश्लेषण करने के लिए किया गया है।

- **उप-सरपंच (प्रतिदर्श संख्या: 200, प्रतिशत: 28.57%):** इनके माध्यम से निर्णय स्वायत्तता, 'सरपंच-पति' प्रथा के प्रभाव और प्रशासनिक समन्वय का मूल्यांकन किया गया है।
- **आम नागरिक (प्रतिदर्श संख्या: 400, प्रतिशत: 57.14%):** इनके द्वारा सरकारी योजनाओं के धरातलीय प्रभाव, सामाजिक न्याय और महिला नेतृत्व की दृश्यता का आकलन किया गया है।
- **कुल योग (प्रतिदर्श संख्या: 700, प्रतिशत: 100.00%):** यह समग्र ग्रामीण परिदृश्य का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

**1.4 अध्ययन की परिकल्पना एवं उद्देश्य**

- **उद्देश्य 1:** यह विश्लेषण करना कि ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक और प्रशासनिक सहभागिता में किस प्रकार गुणात्मक वृद्धि हुई है।
- **उद्देश्य 2:** महिला जनप्रतिनिधियों के समक्ष आने वाली व्यावहारिक बाधाओं (जैसे सामाजिक रूढ़िवादिता और 'सरपंच-पति' संस्कृति) का परीक्षण करना।
- **उद्देश्य 3:** महतारी वंदन योजना, बिहान (NRLM) और 15वें वित्त आयोग के वित्तीय प्रबंधन में महिला नेतृत्व की कार्य-कुशलता का मूल्यांकन करना।

**2: महिला नेतृत्व के उद्गम, प्रेरणा के स्रोत और सामाजिक पृष्ठभूमि**

**2.1** पंचायती राज संस्थाओं में 73वें संविधान संशोधन के पश्चात महिलाओं के लिए आरक्षण के प्रावधान ने ग्रामीण राजनीति की तस्वीर को पूरी तरह बदल दिया है। छत्तीसगढ़ के बलौदाबाजार-भाटापारा जिले (जिसमें कसडोल, बलौदा बाजार, पलारी, भाटापारा और सिमगा ब्लॉक शामिल हैं) के अंतर्गत महिला नेतृत्व का उभरना केवल एक प्रशासनिक बदलाव नहीं है, बल्कि यह एक गहरे सामाजिक परिवर्तन का प्रतीक है। यह अध्याय इस बात का सूक्ष्म अध्ययन करता है कि महिलाएँ किस पृष्ठभूमि से आती हैं, उन्हें राजनीति में आने के लिए मुख्य रूप से किन कारकों ने प्रेरित किया, और वे अपनी प्रशासनिक भूमिका में कितनी स्वतंत्र हैं।

**2.2 महिला जनप्रतिनिधियों के राजनीति में प्रवेश के मुख्य कारक**

अध्ययन के दौरान जब बलौदाबाजार-भाटापारा जिले की 100 महिला सरपंचों से उनके राजनीतिक सफर की शुरुआत और प्रेरणा के स्रोतों पर चर्चा की गई, तो निम्नलिखित आँकड़े सामने आए:

- **स्वैच्छिक सेवा और समाज सुधार का भाव (सरपंच संख्या: 45, प्रतिशत: 45.00%):** आँकड़े दर्शाते हैं कि लगभग आधे प्रतिशत से अधिक महिलाएँ स्वेच्छा से समाज सेवा के उद्देश्य से आगे आई हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि ग्रामीण महिलाओं में अब राजनीतिक और सामाजिक नेतृत्व के प्रति जागरूकता बढ़ रही है।
- **संवैधानिक आरक्षण एवं सामाजिक दबाव (सरपंच संख्या: 30, प्रतिशत: 30.00%):** तिहाई महिलाओं ने स्वीकार किया कि यदि सीटों पर महिलाओं का आरक्षण न होता, तो शायद वे इस मंच तक नहीं पहुँच पातीं।
- **पारिवारिक राजनीतिक पृष्ठभूमि (सरपंच संख्या: 25, प्रतिशत: 25.00%):** जिन परिवारों में पहले से राजनीतिक माहौल था, वहाँ की महिलाओं को आगे बढ़ने में पारिवारिक सहयोग सहज रूप से प्राप्त हुआ।
- **कुल योग (सरपंच संख्या: 100, प्रतिशत: 100.00%)।**

**2.3 निर्णय प्रक्रिया और स्वायत्तता का स्तर**

पंचायती राज व्यवस्था में यह हमेशा एक बहस का विषय रहा है कि निर्वाचित महिलाएँ अपने निर्णय स्वयं लेती हैं

या उनके प्रशासनिक कार्यों में परिवार या अन्य बाहरी लोगों का हस्तक्षेप होता है। इस पहलू को जाँचने के लिए 300 जनप्रतिनिधियों (100 सरपंच + 200 उप-सरपंच) पर आधारित डेटा का विश्लेषण किया गया:

- **पूर्णत: स्वतंत्र निर्णय (उत्तर संख्या: 110, प्रतिशत: 36.67%):** एक तिहाई से अधिक महिला जनप्रतिनिधि अपने निर्णय पूरी तरह स्वतंत्र रूप से ले रही हैं, जो उनके प्रशासनिक सशक्तिकरण का मजबूत संकेत है।
- **परिवार के पुरुष सदस्यों के परामर्श से (उत्तर संख्या: 140, प्रतिशत: 46.66%):** सबसे बड़ा वर्ग वह है जो महत्वपूर्ण निर्णयों के लिए परिवार के पुरुष सदस्यों (पति, पिता या पुत्र) पर निर्भर रहता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी मौजूद पितृसत्तात्मक अवशेष और 'सरपंच-पति' प्रथा की चुनौती को उजागर करता है।
- **पंचायत सचिव या अन्य बाहरी प्रभाव में (उत्तर संख्या: 50, प्रतिशत: 16.67%)।**
- **कुल योग (उत्तर संख्या: 300, प्रतिशत: 100.00%)।**

**3: प्रशासनिक कार्य समीक्षा एवं दृश्यता**

**3.1** छत्तीसगढ़ शासन द्वारा ग्रामीण स्तर पर महिला नेतृत्व को सुदृढ़ करने और प्रशासनिक कार्यालयों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रशासनिक मॉडल को लागू किया गया है। बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के पाँचों प्रशासनिक ब्लॉकों में इस मॉडल ने किस प्रकार स्थानीय प्रशासन की कार्य संस्कृति को प्रभावित किया है, इसका सूक्ष्म मूल्यांकन इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य है।

**3.2 महिलाओं की उपस्थिति एवं दृश्यता**

जब अध्ययन के दौरान 700 संयुक्त उत्तरदाताओं से यह पूछा गया कि क्या प्रशासनिक सुधारों के बाद ग्राम पंचायतों में महिलाओं की उपस्थिति, सक्रियता और निर्णय लेने की क्षमता में कोई सकारात्मक बदलाव आया है, तो निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए:

- **हाँ, महिलाओं की उपस्थिति, बैठक में सहभागिता और सक्रियता में स्पष्ट वृद्धि हुई है (उत्तरदाताओं की संख्या: 540, प्रतिशत: 77.14%):** भारी बहुमत ने यह माना कि प्रशासनिक सहभागिता के कारण ग्राम पंचायतों में महिलाओं की आवाज को अधिक सुना जाने लगा है। अब महिलाएँ ग्राम सभा की बैठकों में न केवल बैठती हैं, बल्कि अपने गाँवों के विकास के लिए खुलकर प्रस्ताव भी रखती हैं।
- **नहीं, कागजी बदलाव के अलावा धरातल पर कोई विशेष बदलाव नहीं आया है (उत्तरदाताओं की संख्या: 110, प्रतिशत: 15.71%)।**
- **तटस्थ / कह नहीं सकते (उत्तरदाताओं की संख्या: 50, प्रतिशत: 7.15%)।**
- **कुल योग (उत्तरदाताओं की संख्या: 700, प्रतिशत: 100.00%)।**

**3.3 सरकारी योजनाओं के धरातलीय क्रियान्वयन में महिला नेतृत्व की भूमिका**

महिला सरपंचों और जनप्रतिनिधियों के कार्यकाल (2020-2025) के दौरान छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनकल्याणकारी योजनाओं—जैसे महतारी वंदन योजना और बिहान (राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन)—के क्रियान्वयन का मूल्यांकन 400 आम नागरिकों के डेटा के आधार पर किया गया:

- **उत्कृष्ट एवं सुगम (विशेष शिविर लगाकर शत-प्रतिशत महिलाओं को लाभ दिलाया गया) (नागरिकों की संख्या: 280, प्रतिशत: 70.00%)।**
- **सामान्य प्रक्रिया (पारंपरिक तरीके से कार्य हुआ, विशेष प्रयास नहीं दिखे) (नागरिकों की संख्या: 80, प्रतिशत: 20.00%)।**

- **असंतोषजनक / जानकारी का अभाव (पात्र महिलाएँ लाभ से वंचित रहीं) (नागरिकों की संख्या: 40, प्रतिशत: 10.00%)।**
- **कुल योग (नागरिकों की संख्या: 400, प्रतिशत: 100.00%)।**

**4: 'सरपंच-पति' प्रथा, व्यावहारिक चुनौतियाँ और प्रशासनिक समन्वय**

**4.1** पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण एक अनिवार्य साधन है, किंतु धरातल पर यह देखा गया है कि निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर उनके पति या पुरुष रिश्तेदार वास्तविक सत्ता का संचालन करते हैं, जिसे राजनीति विज्ञान में 'सरपंच-पति' की संस्कृति के रूप में जाना जाता है। छत्तीसगढ़ के बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के 5 प्रशासनिक ब्लॉकों में महिला नेतृत्व के समक्ष प्रशासनिक समन्वय की स्थिति का परीक्षण इस अध्याय में किया गया है।

**4.2 कार्यालय में उपस्थिति और हस्ताक्षर की स्वायत्तता**

महिला जनप्रतिनिधियों की प्रशासनिक स्वतंत्रता को जाँचने के लिए 300 जनप्रतिनिधियों से जुड़े डेटा का विश्लेषण किया गया:

- **महिला जनप्रतिनिधि स्वयं कार्यालय बैठती हैं और फाइलें खुद पढ़ती हैं (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 165, प्रतिशत: 55.00%)।**
- **कागजी कार्रवाई और बैठकों में पति या पुरुष रिश्तेदारों का अत्यधिक दखल रहता है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 105, प्रतिशत: 35.00%)।**
- **पूरी तरह से पुरुष रिश्तेदारों द्वारा ही कार्यालय और कार्य संचालित होता है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 30, प्रतिशत: 10.00%)।**
- **कुल योग (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 300, प्रतिशत: 100.00%)।**

**4.3 जनपद एवं जिला प्रशासन के साथ समन्वय**

ग्राम पंचायत के विकास कार्यों को आगे बढ़ाने में ब्लॉक (जनपद) और जिला स्तर के अधिकारियों के साथ सहयोग अत्यंत आवश्यक है। इस संबंध में जनप्रतिनिधियों के अनुभवों को निम्नलिखित रूप में दर्ज किया गया है:

- **बहुत सहयोगी (अधिकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में पूरा मार्गदर्शन देते हैं) (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 180, प्रतिशत: 60.00%)।**
- **सामान्य (कार्रवाई नियमानुसार होती है, विशेष सहयोग या अड़चन नहीं) (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 90, प्रतिशत: 30.00%)।**
- **चुनौतीपूर्ण या भेदभावपूर्ण (भ्रष्टाचार या पुरुष-प्रधान मानसिकता के कारण कठिनाई) (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 30, प्रतिशत: 10.00%)।**
- **कुल योग (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 300, प्रतिशत: 100.00%)।**

**5: डिजिटल सशक्तिकरण, ई-गवर्नेंस और वित्तीय स्वायत्तता**

**5.1** आधुनिक भारत में ग्रामीण स्थानीय शासन को पारदर्शी, जवाबदेह और तकनीक-युक्त बनाने के लिए 'ई-ग्राम स्वराज' पोर्टल, डिजिटल हस्ताक्षर और ऑनलाइन भुगतान जैसी प्रणालियों को अनिवार्य किया गया है। बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के 5 प्रशासनिक ब्लॉकों की महिला जनप्रतिनिधि इस डिजिटल युग के साथ कितना तालमेल बिठा पा रही हैं, इसका परीक्षण यहाँ किया गया है।

**5.2 सूचना प्रौद्योगिकी एवं डिजिटल साक्षरता**

300 जनप्रतिनिधियों के डेटा का विश्लेषण:

- **स्वयं स्मार्टफोन, कंप्यूटर और डिजिटल हस्ताक्षर का उपयोग करती हैं (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 135, प्रतिशत: 45.00%)।**
- **पंचायत सचिव या तकनीकी सहायकों की मदद से कार्य होता है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 105, प्रतिशत: 35.00%)।**
- **परिवार के पुरुष सदस्यों या अन्य सहयोगियों की मदद लेनी पड़ती है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 60, प्रतिशत: 20.00%)।**
- **कुल योग (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 300, प्रतिशत: 100.00%)।**

**5.3 बजट प्रबंधन एवं वित्तीय स्वायत्तता**

15वें वित्त आयोग की राशि के उपयोग में निर्णय लेने की शक्ति का आकलन:

- **महिला जनप्रतिनिधि स्वयं ग्राम सभा के प्रस्ताव के आधार पर निर्णय लेती हैं (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 180, प्रतिशत: 60.00%)।**
- **पंचायत सचिव या तकनीकी कर्मचारियों द्वारा प्रस्ताव तैयार किया जाता है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 90, प्रतिशत: 30.00%)।**
- **जनपद सदस्य, विधायक या अन्य बाहरी जनप्रतिनिधियों का हस्तक्षेप रहता है (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 30, प्रतिशत: 10.00%)।**
- **कुल योग (जनप्रतिनिधियों की संख्या: 300, प्रतिशत: 100.00%)।**

**6: आपदा प्रबंधन, स्वास्थ्य, सामाजिक न्याय, भविष्य दृष्टि और निष्कर्ष**

**6.1** ग्राम पंचायत में महिला नेतृत्व का अध्ययन केवल प्रशासनिक फाइलों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका प्रभाव सामाजिक न्याय, स्वास्थ्य सुरक्षा और आपदा प्रबंधन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। छत्तीसगढ़ के बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के 5 ब्लॉकों के अंतर्गत महिला जनप्रतिनिधियों द्वारा इन संकटकालीन आयामों में किस प्रकार नेतृत्व प्रदान किया गया, इसका विश्लेषण इस अंतिम अध्याय में किया गया है।

**6.2 आपदा प्रबंधन, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता की भूमिका**

वर्ष 2020 से 2025 के मध्य कोविड-19 महामारी और ग्रामीण स्वास्थ्य के मोर्चे पर महिला सरपंचों की सक्रियता का मूल्यांकन:

- **क्वारंटाइन सेंटर संचालन, टीकाकरण और राशन वितरण में अत्यंत सक्रिय (सरपंचों की संख्या: 75, प्रतिशत: 75.00%)।**
- **संसाधनों की कमी और शुरुआती झिझक के कारण सीमित भूमिका (सरपंचों की संख्या: 20, प्रतिशत: 20.00%)।**
- **कार्य अन्य स्थानीय लोगों या पुरुषों द्वारा संभाला गया (सरपंचों की संख्या: 5, प्रतिशत: 5.00%)।**
- **कुल योग (सरपंचों की संख्या: 100, प्रतिशत: 100.00%)।**

**6.3 सामाजिक न्याय और विवाद निवारण**

आम नागरिकों (n = 400) से प्राप्त फीडबैक का विश्लेषण:

- **महिला पंचायतों में घरेलू और पारिवारिक विवादों का स्थानीय स्तर पर सौहार्दपूर्ण समाधान**

**(नागरिकों की प्रतिक्रिया: 280, प्रतिशत: 70.00%)।**

- **SC/ST और पेंशन योजनाओं के लिए विशेष ग्राम सभाओं का आयोजन (नागरिकों की प्रतिक्रिया: 80, प्रतिशत: 20.00%)।**
- **पारंपरिक व्यवस्था (कोई विशेष बदलाव नहीं) (नागरिकों की प्रतिक्रिया: 40, प्रतिशत: 10.00%)।**
- **कुल योग (नागरिकों की प्रतिक्रिया: 400, प्रतिशत: 100.00%)।**

**6.4 शोध के प्रमुख निष्कर्ष**

- **सकारात्मक राजनीतिक जागरण:** बलौदाबाजार-भाटापारा जिले में प्रशासनिक पहलों ने ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक दृश्यता को 77.14% तक बढ़ाया है।
- **स्वायत्तता बनाम प्रॉक्सी पॉलिटिक्स:** जहाँ 55% महिलाएँ स्वतंत्र रूप से कार्य कर रही हैं, वहीं 35% स्थानों पर 'सरपंच-पति' प्रथा अभी भी एक चुनौती बनी हुई है।
- **डिजिटल एवं वित्तीय परिपक्वता:** 45% महिला जनप्रतिनिधियों ने ई-ग्राम स्वराज और डिजिटल हस्ताक्षर का स्वतंत्र उपयोग करना सीख लिया है।

**6.5 नीतिगत सुझाव एवं संस्तुतियाँ**

- **अनिवार्य प्रशासनिक एवं डिजिटल प्रशिक्षण:** जिला प्रशासन को नवनिर्वाचित महिला जनप्रतिनिधियों के लिए प्रत्येक 6 माह में विशेष डिजिटल साक्षरता और वित्तीय प्रबंधन शिविर आयोजित करने चाहिए।
- **'सरपंच-पति' प्रथा पर दंडात्मक प्रशासनिक निगरानी:** यदि किसी पंचायत में हस्ताक्षर या बैठकों में पति या अन्य रिश्तेदार का अवैध हस्तक्षेप सिद्ध होता है, तो छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम के तहत कड़ी कार्रवाई का प्रावधान होना चाहिए।
- **सफल प्रशासनिक मॉडल का राज्यव्यापी विस्तार:** बलौदाबाजार जिले की इस सफल प्रशासनिक पहल को पूरे छत्तीसगढ़ राज्य में अनिवार्य रूप से लागू किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीण महिला नेतृत्व को वास्तविक संबल प्राप्त हो सके।

**4 संदर्भ ग्रंथ सूची**


- **आर.के. नरूला (2022)** छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम, 1993, सप्तम संस्करण, इलाहाबाद लॉ पब्लिकेशन, प्रयागराज (अध्याय 1 से 15, पृष्ठ 1-136)।
- **क. प्राथमिक स्रोत: क्षेत्रीय एवं फील्ड सर्वेक्षण** छत्तीसगढ़ राज्य के बलौदाबाजार-भाटापारा जिले के अंतर्गत कसडोल, पलारी, बलौदाबाजार, भाटापारा और सिमगा विकासखंडों में पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास का मैदानी अध्ययन (प्राथमिक आंकड़ों एवं प्रत्यक्ष साक्षात्कारों पर आधारित अप्रकाशित सर्वेक्षण रिपोर्ट)। प्राथमिक साक्षात्कार एवं उत्तरदाता डेटा संकलन ग्रामीण स्तर पर ग्राम पंचायतों के सरपंच, उपसरपंच, पंच तथा आम नागरिकों से संरचित अनुसूचियों (Structured Schedules), प्रत्यक्ष संवाद और केंद्रित समूह चर्चा (Focus Group Discussions) के माध्यम से संकलित प्राथमिक आंकड़े।
- **ख. द्वितीयक स्रोत: शासकीय दस्तावेज, रिपोर्ट्स एवं प्रकाशन (Secondary Sources: Government Documents & Reports)** जिला पंचायत, बलौदाबाजार-भाटापारा वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवेदन, जिला विकास योजना एवं पंचायती राज निर्देशिका, छत्तीसगढ़ शासन, बलौदाबाजार। जिला सांख्यिकी कार्यालय, बलौदाबाजार-भाटापारा, जिला सांख्यिकी पुस्तिका: बलौदाबाजार-भाटापारा (ग्राम एवं विकासखंडवार सांख्यिकीय विवरण), छत्तीसगढ़ शासन।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 191-195
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# Svabhāva and *Prōtē Ousia*: Taking a Logical Route to the Real

**Dr Raj Verma Sinha**
Associate Professor
Department of Philosophy, Miranda House

The question, what really is there, about the real being, has occupied the attention of every philosopher, whether it is four gross elements of Cārvāka, or the ultimate reality or Brahman of Śaṅkara. Nāgārjuna, a great Buddhist philosopher, distinguished reality into two — svabhāva and parabhāva. Literally, Svabhāva means 'sva' (self) and 'bhāva' (existence). Svabhāva thus refers to something which has self-existence, or which does not depend on anything else for its existence. Parabhāva, on the other hand, refers to those things that depend on para (others) for their existence. Svabhāva has ontological priority. The present paper tries to understand how Aristotle's concept of primary being or *prōtē ousia* in *Metaphysics*, has a similar ontological priority and the conceptualization is very similar even when Nāgārjuna's concept of Svabhāva is steeped in mysticism.

According to Candrakīrti, the word svabhāva can mean two things[1]. First, it may mean the essential specific property of a thing, e.g. 'heat is the svabhāva of fire'. Second, it may mean '*akṛtrimaḥ svabhāvo hi nirpekṣaḥ paratra ca*'[2] – "Svabhāva is not brought about by something else, it is not created and it is unconditional." The second meaning truly depicts the meaning of Svabhāva. For all that is parabhāva is pratītyasamutpanna or what has dependent origination.

If we look closely, we see that the word 'bhāva' should not be taken in the literal sense of 'existence' as this will change the meaning Nāgārjuna wants to give. The word svabhāva implies 'svataḥ bhāva' where 'svataḥ' means 'through self' and 'svataḥ bhāva' truly implies here not 'existence through self' but 'explanation through self'. Thus 'Buddhatā' or 'Buddha-hood' and Nirvāṇa have 'svabhāva' as they are self-explanatory and we cannot understand these with the help of any other concept. Here we find a clear similarity between the conceptualization required for understanding the meaning of 'svabhāva' and the conceptualization required for understanding the notion of 'primary being' or 'prōtē ousia'[3].

In Aristotle, this is the main subject of Aristotle's science of 'being qua being'. In Book Zeta the word *prōtē ousia* changes its meaning and applies to 'form' or the essence and in Book Lambda the term refers to the Unmoved Mover. Prōtē ousia primarily reflects the self-referential nature of the reality. That is to say, the ultimate explanation of the real can be found only with reference to

the real itself. Thus, the ontological priority of being, according to Aristotle, is judged by the criterion of being self-explanatory or self-referential.

In Aristotle's Physics, this enterprize is reflected when he seeks the 'explanation' of change and discovers that change at the physical level is not the complete explanation of change. A seed does not randomly grow into any plant. The formal and final causes of a thing have significant explanatory power, e.g. an olive seed realizes the form of an olive[4]. The movement of a thing is to its final cause or *Telos*. The change is not simply material, rather there is change of form to final form.

So, at the physical level causation is a process in which a thing changes with reference to its 'essential' nature, or we can say, with reference to itself. However, Nāgārjuna looks at empirical reality with a sense of doubt as they keep changing and as they are relative to their causes and conditions– "*hetupratyayāpekṣo bhāvānām utpādaḥ pratītyasamutpādārthaḥ*"[4]. The meaning of Pratītyasamutpāda or Dependent Arising is that things of the world arise relative to their causes and conditions. These things which arise relative to their causes and conditions are not explained with reference to themselves. Their explanation lies outside them. There is an ontological priority of what explains over what is explained. However, the nature of things is such that nothing in this empirical world is self-explanatory. Thus, Nāgārjuna denies the ontological priority to the things of phenomenal world as every dharma or element of existence is explained with the help of so many causes and conditions. Therefore, no dharma has the ultimate explanatory power and every dharma is simply confined to the saṁvṛtic world, or the world which is not real– "*tanmṛṣāmoṣadharma yadbhagvānityabhāṣat*" [5] – As the great Buddha has proclaimed this phenomenal reality is deceptive and unreal.

According to Aristotle, since metaphysics is a search for the most fundamental explanations, it is the most fundamental science. This preliminary search for explanation later takes us to the knowledge of the essence of things. By knowing the essence of a thing, we know what kind of thing is this. And also, we come to know to what general kind this thing belongs. So, on the face of it, it might appear that Aristotle's concern is limited to empirical things and their explanation and is not anywhere close to what Nāgārjuna's conceptualization of svabhāva intends to do. However, the notion of final cause or explanation shows that ultimately the Unmoved Mover is the logical & final explanation of the nature of things. What begins as mere causal explanation of physical thing in Physics later turns into the ultimate explanation of things. We have, then, an unmoved and unchanging source of all change– which explains everything, but itself remains self-explanatory or self-referential. In Nāgārjuna's philosophy the concept of svabhāva reflects the self-explanatory nature of Buddhatā or Nirvāṇa.

In Nāgārjuna's philosophy, the concept of svabhāva also acts as a logical device to facilitate a neat ontological division. Things in the phenomenal world, the sense-perceptible things, living and non-living things and the changing world itself — all are unreal as they do not possess svabhāva or self-existence. The word 'bhāva' does not simply imply 'existence' it should be understood as 'bhāva' or thing whose explanation derives from 'sva' - it is self-explanatory and self-referential. It is in the sense of explanation that 'svataḥ bhāva' is used not in the sense of 'production' by self. So, the very third verse of *Mūlamadhyamakakārikā* says- "*Na svato nāpi parato na dvābhyām nāpyahetutaḥ, utpannā jātu vidyante bhāvāḥ kvacana kecana*."[6] There is no real production of things from self, from non-self, from both, from without cause. According to Stcherbatsky, Nāgārjuna is trying to show that real transformation or production is an illusion. The very conceptualization of causation is marred with contradictions. Obviously, when Nāgārjuna is

relinquishing the concept of causation as real production in case of empirical things, in transcendental realm how it can be applied in the limited sense of existence and production.

The neat ontological division is between svabhāva and parabhāva. Parabhāva refers to things whose existence and explanation are other-referential. These things are dependent on causes and conditions, and it is not to be seen as linear causality of *kṣaṇabhaṅgavāda* or momentariness theory, it is rather that every dharma is caused and conditioned by multiple factors. It is important to highlight how the apparent ontological rigidity of the concept of svabhāva gives way to ontological openness and flexibility.

In "Svabhāva-Parīkṣā" Nāgārjuna defines what svabhāva is and it will be seen that the concept is double-edged and points to both what it 'implies' and what it 'should not imply'. Svabhāva itself is more like a logical device which provides a basis for ontological categorization. The concept of 'svabhāva' underlies a more ontologically-loaded distinction between paramārtha-sat and saṁvṛti-sat. Saṁvṛti-sat refers to the things which depend for their existence on causes and conditions. Their dependence on '*svahetu kāraṇa sāmagrī*' makes them saṁvṛtic or veiled reality. Paramārtha-sat or the absolute reality, on the other hand, is that which is 'not dependent on causes and conditions.' Empirically, it is almost impossible to define something with the criterion — "what is not dependent on causes and conditions?" There is no empirical investigation which may possibly lead us to an entity which is 'not dependent on causes and conditions.' So, the definition given in the beginning of "Svabhāva-parīkṣā" seems to painfully fail here. This unavailability of concepts for defining 'paramārtha' shows the unique positioning of svabhāva as a logical category, even if it can be meaningfully used for ontological demarcation between real and unreal.

Though 'svabhāva' demarcates real from unreal it does not add anything new to the meaning of a thing. For instance, if I say that Buddhatā is independent of causes and conditions, this does not add anything new to the concept of Buddhatā. The self-existence of Buddhatā is not its additional attribute. That is, to understand Buddhatā you have to refer to Buddhatā itself, there is no linguistic or conceptual help. This reminds us of Aristotle's argument that when we say 'a man exists and he is one' the concept of unity or one does not add anything new to the concept of 'man'. This triviality in meaning comes to the fore when we try to make a meaningful statement with the concept of svabhāva, e.g. when we say, "Buddhatā has svabhāva" it does not function as proper predicate which gives some additional information about Buddhatā, just as the concept of 'one' does not add anything to the meaning in the statement 'Ram exists and he is one'.

'Svabhāva' has been introduced as having primary meaning, ie. if we want to understand the notion of 'parabhāva' it should be understood with reference to the notion of 'svabhāva'. Take, eg., the colour 'red'. How do we understand red? By ostensive definition, i.e. by pointing to a red thing and saying, 'that is red'. We can show quite a few red things and say this is what 'red' looks like. Now, if we have to understand 'non-red' how do we go about it? We would require the concept of 'red' to understand what is 'non-red'.

It appears then that a thing with primary meaning is easier to understand than a thing which has to be understood with reference to it. A neat conclusion should be, it is easier to understand what is svabhāva which has the primary meaning and a bit difficult to understand the notion of parabhāva which can be understood only obliquely with reference to the concept of svabhāva. But this is not so. The explanation given of the nature of svabhāva does not really intend to say what it is to have svabhāva. It only tells what it is not to have svabhāva or what things do not possess svabhāva. Things which are created, caused or conditioned or things which are dependent in nature are things which are parabhāva. This in no way refers to the notion of svabhāva, rather we have to understand svabhāva with reference to the notion of dependence, what is not dependent on causes and

conditions. Are we trying here to understand red with reference to non-red? But why is this so? There is a difference here. Knowledge and understanding help us towards the truth but do not give us the truth. Only realization can give us the truth.

Svabhāva points to what is *sat* or real and what is *asat* or unreal. But distinguishing *sat* and *asat* is not logically possible. Defining *asat* as 'what is not *sat*' does not serve the purpose unless one can conceive what *sat* is. This is one philosophical puzzle that Nāgārjuna tries to answer by bringing in the concept of svabhāva. In the Buddhist philosophy the question of being or reality or any such ontological queries comes within the purview of avyākrta vastuni or what is indescribable. The Buddha's silence on metaphysical questions adumbrates this logical difficulty. Nagarjuna knew that this seeming difficulty is due to the difference between knowledge and realization, but the philosophical puzzle had to be solved. So, he says in 'Svabhāva Pariksa':

"*Svabhāva-parabhāvābhyām ṛte bhāvah kutah punah,*
*Svabhāve parabhāve ca sati bhāvo hi siddhayati.*"[7]

The above lines convey the idea that there cannot be being (*bhāva*) apart from the distinction between self-being (svabhāva) and other-being (parabhāva). The concept of being can be established only with reference to the distinction between the concepts of self-being and other-being. What Nagarjuna conceives as svabhāva or self-being is logically very close to Aristotle's concept of primary being and emerges as a solution to the *aporia,* 'how to conceive of being.' It is another point how his philosophy is able to transcend this and other *aporiai*. We find a similar tension in Aristotle's philosophy. He defines metaphysics as a 'science which investigates being qua being and what belongs to being in virtue of itself.' He understands that there is a problem about the possibility of a science of being qua being, a problem which is resolvable. The problem is one of conceiving being as a whole and qua being. There is nothing outside being which can be set against it. Absolute non-being is a logical impossibility, it is nothing at all.

To solve this *aporia*, 'how to conceive being qua being' Aristotle brings in the concept of *Prōtē ousia* or primary being. As discussed by Vasilis Politis, in Bk.IV.2 of *Metaphysics* Aristotle draws a distinction between primary and non-primary being. A thing has primary being if it is "in virtue of itself and not in virtue of its relation to other things."[8] A thing has non-primary being if it's being is "in virtue of its relation to, and so dependent on, the primary being."[9] Aristotle's conclusion in Bk. VII is that primary being is the ultimate explanation of the being of each thing i.e. that which ultimately explains what it is for each thing to be.

While the criterion of svabhāva gives ontological rigidity, the concept of primary being gives ontological rigidity as well as a rigidity of meaning. This is because Aristotle concept of primary being seemingly moves in the empirical world notwithstanding its ultimate ontological reach. On the other hand, the criterion of svabhāva, while showing the ontological limits of the elements of existence, retains a logical character.

What distinguishes Aristotle's *prote ousia* from Nāgārjuna's svabhāva is that non-primary being is defined in terms of it, the meaning of non-primary being ultimately derives from the meaning of primary being. In the example 'Socrates is white' the word 'Socrates' has primary meaning and 'white' has a meaning dependent on the meaning of 'Socrates'. Who is white? Socrates is white. Nāgārjuna's concept of svabhāva, though used for ontological categorization does not enjoy an ontological status. It is only a logical tool which helps us in conceiving what real is and in understanding the dependent nature of elements of existence. Very clearly this helps in dividing the world into two ontologically rigid categories- paramārtha sat and samvṛtti sat. However, as parabhāva defines all things which are dependent on causes and conditions and as empirical level

nothing is beyond this dependence, we need not refer to the concept of svabhāva to understand their nature

The question still remains, is samvṛtti really there? Clearly, from the transcendental viewpoint, or from the point of view of svabhāva, though parabhāva is ontologically significant it is not ontologically real. When Nirvāṇa is realized the dualism of svabhāva and parabhāva, of paramārtha and samvṛtti, vanishes. Only svabhāva shines. It is paramārtha sat, something not knowable, not describable- *aparapratyayam*, but something directly realizable, something self-explanatory. So, the concept of svabhāva allows for ontological flexibility. When svabhāva is realized parabhāva loses all meaning. So svabhāva allows for ontological flexibility without destroying the basic framework of svabhāva and parabhāva, as svabhāva is more for our understanding than real ontological divisions. Obviously, Nāgārjuna, who painstakingly explains svabhāva, parabhāva and their distinction, gives up these conceptual tools in the end:

"*Svabhāvam parabhāvam ca bhāvam cābhāvam eva ca,*
*Ye paṣyanti na paṣyanti te tattva Buddha śāśane.*"[10]

Those who see self-being, other-being, existence and non-existence do not see the fundamental principle of the Buddha's teaching. Nāgārjuna's concept of svabhāva definitely belongs to a different discourse.

**Notes and References**

- [1] Th. Stcherbatsky, *The Conception of Buddhist Nirvana*, ed. Jaidev Singh (Delhi: Motilal Banarasidass, 2003), 37.
- [2] Nāgārjuna, *Mūlamadhyakamakakārikā* 15.2, in *Madhyamakaśāstra of Nāgārjuna with the Commentary: Prasannapadā by Candrakīrti*, ed. P. L. Vaidya, Buddhist Sanskrit Texts 10 (Darbhanga: The Mithila Institute of Post-Graduate Studies and Reseach in Sanskrit Learning, 1960), 115.
- [3] Aristotle, Metaphysics, 4.3.1005a 35, 7.7.1032b1-2, 7.11.1037a5, 7.11.1037a28-29, 12.8.1073a 30.
- [4] Candrakīrti, *Prasannapadā*, in Vaidya, *Madhyamakaśāstra*, 2.
- [5] Nāgārjuna, *Mūlamadhyakamakakārikā* 13.1 (ed. Vaidya), 111.
- [6] Nāgārjuna, *Mūlamadhyakamakakārikā* 1.3 (*Pratyaya-parikṣā*, v.3), trans. Stcherbatsky, *Conception of Buddhist Nirvana*, pt. 3, 5.
- [7] Nāgārjuna, *Mūlamadhyakamakakārikā* 15.4 (ed. Vaidya), 116.
- [8] Vasilis Politis, *Routledge Philosophy Guidebook to Aristotle and the Metaphysics*, (London: Routledge, 2004), 94.
- [9] Politis, *Aristotle and the Metaphysics*, 94.
- [10] Nāgārjuna, *Mūlamadhyakamakakārikā* 15.6 (ed. Vaidya), 117.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 196-207
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

**डॉ. सुषमा भट्ट थलेडी**
सहायक प्राध्यापिका,
बी.एड. विभाग ,
डॉ.पी.डी.बी.एच.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार, गढ़वाल

**सारांश**

महिला शिक्षा और कौशल विकास महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा सामाजिक सशक्तीकरण के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। शिक्षा महिलाओं में जागरूकता, आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता विकसित करती है, जबकि कौशल विकास उन्हें रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों से जोड़ने में सहायता करता है। इसके बावजूद ग्रामीण महिलाओं को अशिक्षा, सीमित रोजगार अवसरों, आर्थिक संसाधनों की कमी, पारिवारिक जिम्मेदारियों तथा सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं जैसी अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता की संभावनाओं का विश्लेषण करना तथा महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तीकरण में उनकी भूमिका को समझना है। यह अध्ययन उपलब्ध शोध-पत्रों, शोध-अध्ययनों और संबंधित साहित्य पर आधारित एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है। इसमें प्राथमिक सर्वेक्षण अथवा स्वयं एकत्रित आँकड़ों के स्थान पर द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त जानकारी का अध्ययन किया गया है। पूर्ववर्ती शोधों से संकेत मिलता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास महिलाओं के रोजगार, आय अर्जित करने की क्षमता तथा परिवार के आर्थिक निर्णयों में उनकी भागीदारी को बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं। उत्तराखंड के नैनीताल जिले में किए गए एक अध्ययन में भी व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त महिलाओं में आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सशक्तीकरण का स्तर अपेक्षाकृत अधिक पाया गया। हालांकि, कौशल प्रशिक्षण का लाभ तभी व्यापक हो सकता है, जब महिलाओं को प्रशिक्षण के साथ-साथ वित्तीय सहायता, बाजार तक पहुँच, रोजगार के अवसर और पारिवारिक सहयोग भी उपलब्ध हों। अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि महिला शिक्षा और कौशल विकास को एक-दूसरे का पूरक बनाकर तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण एवं रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया जा सकता है। इसके लिए सरकारी योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन, व्यावसायिक प्रशिक्षण की गुणवत्ता में सुधार और महिलाओं के लिए समान अवसर सुनिश्चित करना आवश्यक है।

**मुख्य शब्द:** महिला शिक्षा, कौशल विकास, आर्थिक आत्मनिर्भरता, महिला सशक्तीकरण, व्यावसायिक प्रशिक्षण, ग्रामीण महिलाएँ, रोजगार एवं स्वरोजगार

## 1. प्रस्तावना

किसी भी समाज के समग्र विकास में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। महिलाएँ परिवार, कृषि, व्यवसाय, शिक्षा तथा विभिन्न सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों में सक्रिय योगदान देती हैं। इसके बावजूद अनेक महिलाओं को अपनी योग्यता, क्षमता और परिश्रम के अनुरूप आर्थिक अवसर प्राप्त नहीं हो पाते। सामाजिक असमानता, सीमित संसाधन, रोजगार के पर्याप्त अवसरों का अभाव तथा पारिवारिक जिम्मेदारियाँ उनकी आर्थिक प्रगति को प्रभावित कर सकती हैं। ऐसी परिस्थितियों में महिला शिक्षा आर्थिक आत्मनिर्भरता की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण आधार के रूप में सामने आती है। शिक्षा महिलाओं को केवल ज्ञान प्रदान नहीं करती, बल्कि उनमें जागरूकता, आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता भी विकसित करती है। इससे वे अपने अधिकारों को समझने, उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने तथा अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेने में अधिक सक्षम हो सकती हैं। हालाँकि, केवल शिक्षा प्राप्त करना ही आर्थिक आत्मनिर्भरता सुनिश्चित नहीं करता। शिक्षा का वास्तविक लाभ तब अधिक प्रभावी होता है, जब महिलाओं को अपनी योग्यता के अनुसार रोजगार प्राप्त करने, व्यावसायिक गतिविधियों में भाग लेने और अपनी क्षमताओं का उपयोग करने के अवसर मिलते हैं। इसलिए महिला शिक्षा को आर्थिक विकास, सामाजिक समानता और आत्मनिर्भरता से जोड़कर समझना आवश्यक है।

वर्तमान समय में महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए कौशल विकास का महत्त्व भी लगातार बढ़ रहा है। बदलती आर्थिक परिस्थितियों और रोजगार की आवश्यकताओं के अनुरूप महिलाओं के पास व्यावहारिक, तकनीकी, डिजिटल तथा उद्यमिता संबंधी कौशल होना आवश्यक है। कौशल विकास महिलाओं को अपनी रुचि, योग्यता और स्थानीय संसाधनों के अनुसार रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसर तलाशने में सहायता कर सकता है। सिलाई-कढ़ाई, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, कृषि एवं पशुपालन से संबंधित गतिविधियाँ, डिजिटल सेवाएँ तथा लघु उद्योग इसके उदाहरण हैं। विशेष रूप से ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्रों में स्थानीय संसाधनों पर आधारित प्रशिक्षण महिलाओं के लिए आय अर्जित करने के नए अवसर उत्पन्न कर सकता है। इसके साथ ही, कौशल विकास महिलाओं में कार्य करने की दक्षता बढ़ाने, उद्यमिता को प्रोत्साहित करने तथा परिवार की आर्थिक स्थिति में योगदान देने की संभावनाओं को भी मजबूत कर सकता है। फिर भी, प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना अपने आप में पर्याप्त नहीं है। प्रशिक्षण की गुणवत्ता, आवश्यक पूँजी की उपलब्धता, बाजार तक पहुँच, वित्तीय सहायता और प्रशिक्षण के बाद रोजगार के अवसर जैसे कारक यह निर्धारित करते हैं कि महिलाएँ अपने कौशल का उपयोग आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए किस सीमा तक कर सकती हैं।

महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता का अर्थ केवल स्वयं आय अर्जित करना नहीं है, बल्कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने, आर्थिक संसाधनों का उपयोग करने, बचत करने तथा व्यक्तिगत और पारिवारिक आर्थिक निर्णयों में भागीदारी निभाने की क्षमता से भी है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिला अपनी आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भरता कम कर सकती है और परिवार तथा समाज के विकास में अधिक प्रभावी योगदान दे सकती है। हालाँकि, इस दिशा में अनेक सामाजिक, आर्थिक और संस्थागत चुनौतियाँ मौजूद हैं। घरेलू जिम्मेदारियों का असमान बोझ, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताएँ, वित्तीय संसाधनों की कमी, सुरक्षित कार्यस्थलों का अभाव और रोजगार के सीमित अवसर महिलाओं की आर्थिक गतिविधियों में भागीदारी को प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए महिला शिक्षा और कौशल विकास को प्रभावी बनाने के लिए ऐसा वातावरण तैयार करना आवश्यक है, जिसमें

महिलाओं को प्रशिक्षण प्राप्त करने, अपनी योग्यता का उपयोग करने और आर्थिक अवसरों तक पहुँच बनाने के लिए पर्याप्त सहयोग मिले। शिक्षा, कौशल विकास, वित्तीय सहायता, रोजगारपरक अवसरों और अनुकूल सामाजिक वातावरण के बीच समन्वय महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को मजबूत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

इन्हीं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध-पत्र "महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन" में महिला शिक्षा और कौशल विकास की आर्थिक आत्मनिर्भरता में भूमिका का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण महिलाओं के रोजगार एवं स्वरोजगार की संभावनाओं को किस प्रकार बढ़ावा दे सकते हैं तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में उनके सामने कौन-कौन सी प्रमुख बाधाएँ आती हैं। इसके साथ ही, महिलाओं की आर्थिक स्थिति को मजबूत बनाने में वित्तीय सहयोग, सरकारी योजनाओं, स्थानीय आजीविका के अवसरों और सामाजिक परिस्थितियों की भूमिका पर भी विचार किया गया है। इस अध्ययन में उपलब्ध शोध-साहित्य एवं संबंधित दस्तावेजों के आधार पर विषय का विश्लेषण किया गया है, ताकि महिला शिक्षा और कौशल विकास को केवल शैक्षिक या प्रशिक्षण संबंधी गतिविधियों के रूप में नहीं, बल्कि महिलाओं की आर्थिक क्षमता, निर्णय लेने की स्वतंत्रता और जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाने वाले महत्त्वपूर्ण माध्यमों के रूप में समझा जा सके। व्यापक रूप से यह अध्ययन इस विचार को प्रस्तुत करता है कि महिलाओं की वास्तविक आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए शिक्षा और कौशल विकास के साथ-साथ उन्हें अपनी क्षमताओं का उपयोग करने के लिए उपयुक्त अवसर, आवश्यक संसाधन और सहयोगपूर्ण वातावरण उपलब्ध कराना भी आवश्यक है।

## 2. संबंधित साहित्य की समीक्षा

महिला शिक्षा, कौशल विकास तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता के बीच संबंध को समझने के लिए पूर्व में किए गए शोधों का अध्ययन आवश्यक है। संबंधित साहित्य से यह जानने में सहायता मिलती है कि शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण महिलाओं के रोजगार, आय अर्जित करने की क्षमता, आर्थिक निर्णयों में भागीदारी तथा सामाजिक स्थिति को किस प्रकार प्रभावित कर सकते हैं। प्रस्तुत अध्ययन के लिए कौशल विकास, महिला सशक्तीकरण, ग्रामीण महिलाओं की आजीविका और महिला श्रम-भागीदारी से संबंधित उपलब्ध शोधों की समीक्षा की गई है।

कैब्रल एवं धर (2019) ने भारत में कौशल विकास संबंधी शोध: एक व्यवस्थित साहित्य समीक्षा एवं भविष्य के शोध की रूपरेखा शीर्षक से अध्ययन किया। इस शोध में वर्ष 2004 से 2017 के बीच प्रकाशित 45 शोध-पत्रों की समीक्षा की गई। लेखकों ने कौशल विकास की उपयोगिता, प्रशिक्षण संस्थानों की भूमिका, महिला सशक्तीकरण तथा प्रशिक्षण और रोजगार की आवश्यकताओं के बीच तालमेल जैसे विषयों पर चर्चा की। समीक्षा से यह स्पष्ट हुआ कि कौशल विकास की सफलता केवल प्रशिक्षण उपलब्ध कराने पर निर्भर नहीं करती, बल्कि प्रशिक्षण की गुणवत्ता, व्यावहारिक ज्ञान और रोजगार की वास्तविक आवश्यकताओं के साथ उसके संबंध पर भी निर्भर करती है। प्रस्तुत शोध के संदर्भ में यह अध्ययन महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि महिलाओं को प्रशिक्षण देने के साथ-साथ उनके लिए रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों की उपलब्धता पर भी विचार करना आवश्यक है।

सिंह, भारद्वाज, कश्यप एवं चौहान (2020) ने उत्तराखंड के नैनीताल जनपद में कृषि कार्यों से जुड़ी महिलाओं के आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सशक्तीकरण पर व्यावसायिक प्रशिक्षण की भूमिका का अध्ययन किया। शोध में 90 महिलाओं से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली तथा प्रशिक्षण प्राप्त नहीं करने वाली महिलाओं की स्थिति की तुलना की गई। अध्ययन में प्रशिक्षण प्राप्त महिलाओं के बीच आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सशक्तीकरण का स्तर तुलनात्मक रूप से बेहतर पाया गया। प्रशिक्षण प्राप्त समूह की लगभग तीन-चौथाई महिलाओं का सशक्तीकरण स्तर उच्च था, जबकि प्रशिक्षण नहीं प्राप्त करने वाले समूह में यह अनुपात 15.55 प्रतिशत था। अध्ययन

में आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण से संबंधित अंतर भी सामने आया। यह शोध वर्तमान अध्ययन के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यह उत्तराखंड की ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में किया गया है। इससे संकेत मिलता है कि स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण महिलाओं की आर्थिक भूमिका को मजबूत करने में सहायक हो सकता है। हालांकि, इन निष्कर्षों को पूरे उत्तराखंड की सभी महिलाओं पर समान रूप से लागू नहीं किया जा सकता।

बैराग्या, भट्टाचार्य एवं तिवारी (2021) ने क्या व्यावसायिक प्रशिक्षण महिला श्रम-भागीदारी को बढ़ावा देता है? भारत का एक विश्लेषण शीर्षक से अध्ययन किया। शोधकर्ताओं ने आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) 2017–18 के आँकड़ों का उपयोग करते हुए औपचारिक और अनौपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा महिलाओं की श्रम-भागीदारी के बीच संबंध का विश्लेषण किया। अध्ययन में दोनों प्रकार के प्रशिक्षण और महिला श्रम-भागीदारी के बीच सकारात्मक तथा सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण संबंध पाया गया। शोधकर्ताओं ने यह भी रेखांकित किया कि औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली महिलाओं का अनुपात अपेक्षाकृत कम है। यह अध्ययन वर्तमान शोध को इस दृष्टि से आधार प्रदान करता है कि महिलाओं को रोजगार के योग्य बनाने के लिए कौशल प्रशिक्षण के अवसरों का विस्तार आवश्यक है। साथ ही, प्रशिक्षण को महिलाओं की वास्तविक परिस्थितियों और रोजगार की संभावनाओं से जोड़ना भी महत्त्वपूर्ण है।

डागर (2022) ने भारत में आदिवासी महिलाओं के लिए व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण की उपयोगिता का अध्ययन करते हुए सहभागी नियोजन की आवश्यकता पर बल दिया। इस अध्ययन में झारखंड और पश्चिम बंगाल के दो समुदायों की 25 आदिवासी महिलाओं के अनुभवों को शामिल किया गया। शोध में यह प्रश्न सामने आया कि कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के उद्देश्य हमेशा महिलाओं की वास्तविक आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं और आजीविका से मेल नहीं खाते। लेखिका ने प्रशिक्षण कार्यक्रमों की योजना बनाते समय महिलाओं की भागीदारी, उनकी पसंद, पारंपरिक ज्ञान और स्थानीय आजीविका के साधनों को महत्त्व देने की आवश्यकता बताई। प्रस्तुत शोध के संदर्भ में यह विचार महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए केवल सामान्य प्रशिक्षण पर्याप्त नहीं है। प्रशिक्षण का स्वरूप स्थानीय संसाधनों, सामाजिक परिस्थितियों और महिलाओं की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुकूल होना चाहिए।

चिथरा एवं इंदिरा (2018) ने महिलाओं के कौशल विकास और आर्थिक सशक्तीकरण के संदर्भ में सहायता से प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रम (एसटीईपी) का अध्ययन किया। उनके शोध में कार्यक्रम पर सार्वजनिक व्यय, विभिन्न राज्यों में महिलाओं की भागीदारी तथा महिला साक्षरता और कार्य-भागीदारी जैसे पहलुओं का विश्लेषण किया गया। अध्ययन में विभिन्न राज्यों के बीच कार्यक्रम में भागीदारी के अंतर सामने आए। लेखकों को राज्यों के स्तर पर महिला साक्षरता और एसटीईपी में भागीदारी के बीच कोई सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण संबंध नहीं मिला। यह निष्कर्ष संकेत देता है कि केवल साक्षरता के स्तर के आधार पर यह मान लेना उचित नहीं है कि महिलाएँ कौशल विकास कार्यक्रमों में समान रूप से भाग लेंगी। प्रशिक्षण तक पहुँच, कार्यक्रमों की उपलब्धता और महिलाओं की परिस्थितियों जैसे पहलुओं पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इस प्रकार, यह अध्ययन महिला शिक्षा और कौशल विकास के संबंध को अधिक व्यापक दृष्टिकोण से समझने में सहायक है।

सिंह, भारद्वाज, अमरदीप एवं जुकारिया (2020) ने नैनीताल जनपद की कृषि कार्यों से जुड़ी महिलाओं के व्यावसायिक प्रशिक्षण और सशक्तीकरण के बीच संबंध का अध्ययन किया। शोध में महिलाओं की व्यक्तिगत एवं सामाजिक-आर्थिक विशेषताओं और उनके सशक्तीकरण स्तर के बीच संबंधों का परीक्षण किया गया। निष्कर्षों में वैज्ञानिक अभिविन्यास तथा जोखिम लेने की प्रवृत्ति जैसे कुछ कारकों का सशक्तीकरण से महत्त्वपूर्ण संबंध पाया गया, जबकि आयु, भूमि-जोत और वार्षिक आय जैसे कुछ अन्य कारकों का संबंध सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं पाया गया। यह अध्ययन बताता है कि महिलाओं के सशक्तीकरण को केवल उनकी आर्थिक स्थिति के आधार

पर नहीं समझा जा सकता। उनके दृष्टिकोण, निर्णय लेने की क्षमता और नए अवसर अपनाने की प्रवृत्ति जैसे पहलुओं पर भी विचार करना आवश्यक है। उत्तराखंड की ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में यह अध्ययन वर्तमान शोध के लिए उपयोगी है।

इब्राहिमी, चूबचियन, फरहादियन, गोली, फरमांदेह एवं आज़ादी (2022) ने ग्रामीण महिलाओं के सशक्तीकरण में व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण की विभिन्न विशेषताओं का अध्ययन किया। उनके निष्कर्षों में प्रशिक्षण-सामग्री और प्रशिक्षक की भूमिका विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण पाई गई। यह अध्ययन संकेत देता है कि प्रशिक्षण की प्रभावशीलता केवल प्रशिक्षण की उपलब्धता पर नहीं, बल्कि उसकी विषयवस्तु, शिक्षण-प्रक्रिया और प्रशिक्षण देने वालों की क्षमता पर भी निर्भर करती है।

सलूजा, सिंह एवं कुमार (2023) ने 2000–2020 की अवधि के महिला वित्तीय समावेशन संबंधी साहित्य की व्यवस्थित समीक्षा की। समीक्षा में पितृसत्तात्मक संरचनाओं, कम आय, वित्तीय साक्षरता की कमी और वित्तीय सेवाओं तक सीमित पहुँच जैसी बाधाओं की पहचान की गई। साथ ही, सरकारी कार्यक्रमों, माइक्रोफाइनेंस, औपचारिक बचत सेवाओं, स्वयं सहायता समूहों और डिजिटल वित्तीय समावेशन को संभावित हस्तक्षेपों के रूप में रेखांकित किया गया। यह अध्ययन वर्तमान विषय में आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए वित्तीय पहुँच के महत्त्व को स्पष्ट करता है।

श्रीवास्तव, नोवल, नागर, शेखावत एवं चोपड़ा (2026) ने सतत विकास लक्ष्य 5 और 8 के संदर्भ में महिला सशक्तीकरण तथा टिकाऊ आजीविका के लिए कौशल विकास पर विषयगत समीक्षा प्रस्तुत की। 2005–2022 के 57 शोध-लेखों पर आधारित इस समीक्षा में व्यावसायिक प्रशिक्षण, डिजिटल कौशल, उद्यमिता, वित्तीय समावेशन, स्वयं सहायता समूहों और ग्रामीण आजीविका जैसे विषयों को शामिल किया गया। समीक्षा का प्रमुख संकेत यह है कि केवल कौशल प्रशिक्षण की तुलना में प्रशिक्षण को रोजगार, वित्तीय सेवाओं और अन्य सहायक व्यवस्थाओं से जोड़ने वाले समन्वित कार्यक्रम महिलाओं की आजीविका के लिए अधिक उपयोगी हो सकते हैं।

### साहित्य समीक्षा से प्राप्त प्रमुख निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययनों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि महिला शिक्षा, कौशल विकास और आर्थिक आत्मनिर्भरता परस्पर संबंधित विषय हैं, लेकिन इनके बीच संबंध को केवल प्रशिक्षण प्राप्त करने या शैक्षिक योग्यता हासिल करने तक सीमित नहीं किया जा सकता। पूर्ववर्ती शोधों में व्यावसायिक प्रशिक्षण का संबंध महिलाओं की रोजगार-भागीदारी, आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण तथा सशक्तीकरण के विभिन्न पहलुओं से पाया गया है। साथ ही, कुछ अध्ययनों ने यह भी स्पष्ट किया है कि प्रशिक्षण का प्रभाव उसकी गुणवत्ता, स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप होने और रोजगार के अवसरों से जुड़ने पर निर्भर करता है।

समीक्षित साहित्य से यह भी समझ में आता है कि ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता का अध्ययन करते समय स्थानीय आजीविका, पारिवारिक परिस्थितियों, सामाजिक मान्यताओं और उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखना आवश्यक है। शिक्षा महिलाओं को जानकारी और अवसरों तक पहुँच प्रदान कर सकती है, जबकि कौशल विकास उन्हें किसी कार्य को व्यावहारिक रूप से करने की क्षमता प्रदान कर सकता है। इन दोनों का आर्थिक आत्मनिर्भरता में योगदान तभी अधिक प्रभावी हो सकता है, जब महिलाओं को अपने कौशल का उपयोग करने के लिए उपयुक्त रोजगार, स्वरोजगार, वित्तीय सहायता और बाजार तक पहुँच भी प्राप्त हो।

### 3. शोध-अंतराल

समीक्षित अध्ययनों में कौशल विकास, व्यावसायिक प्रशिक्षण, महिला श्रम-भागीदारी और आर्थिक सशक्तीकरण के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। उत्तराखंड के नैनीताल जनपद में किए गए शोध ग्रामीण महिलाओं के प्रशिक्षण और सशक्तीकरण को समझने में उपयोगी हैं। इसके बावजूद, महिला शिक्षा और कौशल विकास को एक

साथ रखकर आर्थिक आत्मनिर्भरता के संदर्भ में समझने की आवश्यकता बनी हुई है। विशेष रूप से, शिक्षा और कौशल के साथ रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों, वित्तीय संसाधनों, पारिवारिक सहयोग और स्थानीय सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों की संयुक्त भूमिका का विश्लेषण उपयोगी हो सकता है।

इसी संदर्भ में यह शोध-पत्र उपलब्ध साहित्य और द्वितीयक स्रोतों के आधार पर विश्लेषण करता है कि महिला शिक्षा तथा कौशल विकास महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने में किस प्रकार योगदान दे सकते हैं और इस प्रक्रिया में कौन-सी प्रमुख बाधाएँ सामने आती हैं। यह शोध-अंतराल उपलब्ध समीक्षित अध्ययनों के आधार पर प्रस्तावित है; विषय की व्यापकता को देखते हुए भविष्य के अध्ययनों में और अधिक शोध-साहित्य तथा क्षेत्र-विशिष्ट साक्ष्य शामिल किए जा सकते हैं।

## 4. अध्ययन के उद्देश्य

1. महिला शिक्षा और आर्थिक आत्मनिर्भरता के बीच संबंध का विश्लेषण करना।
2. महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता में कौशल विकास एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण की भूमिका का अध्ययन करना।
3. रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों के सृजन में शिक्षा और कौशल विकास के योगदान का विश्लेषण करना।
4. महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता के मार्ग में आने वाली सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक बाधाओं की पहचान करना।
5. महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने में सरकारी योजनाओं, वित्तीय सहायता और कौशल विकास कार्यक्रमों की भूमिका का विश्लेषण करना।

## 5. शोध-पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन में महिला शिक्षा, कौशल विकास और आर्थिक आत्मनिर्भरता के बीच संबंधों को समझने के लिए द्वितीयक स्रोतों पर आधारित वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति अपनाई गई है। अध्ययन का आधार इस विषय से संबंधित प्रकाशित शोध-पत्र एवं उपलब्ध अकादमिक साहित्य है। सामग्री के चयन में महिला शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, रोजगार एवं स्वरोजगार, महिला सशक्तीकरण तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता से संबंधित अध्ययनों को प्रासंगिकता के आधार पर ध्यान में रखा गया है। इनमें भारत में कौशल विकास पर कैब्रल एवं धर (2019) की साहित्य समीक्षा, गुजरात की ग्रामीण महिलाओं के कौशल प्रशिक्षण पर चेन एवं चिंदरकर (2017) का अध्ययन, उत्तराखंड के नैनीताल जनपद की महिलाओं पर सिंह एवं सहलेखकों (2020) का शोध तथा महिला श्रम-भागीदारी और व्यावसायिक प्रशिक्षण पर बैराग्या एवं सहलेखकों (2021) का अध्ययन शामिल हैं। इन अध्ययनों में प्रयुक्त निष्कर्षों और उपलब्ध सूचनाओं का उपयोग विषय के विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए किया गया है।

उपलब्ध सामग्री का विश्लेषण महिला शिक्षा, कौशल विकास, रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों, आर्थिक निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता में आने वाली बाधाओं जैसे प्रमुख विषयों के आधार पर किया गया है। विभिन्न अध्ययनों के निष्कर्षों को उनके संदर्भ में समझते हुए यह विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है कि शिक्षा और कौशल विकास महिलाओं की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने में किस प्रकार योगदान दे सकते हैं तथा इस प्रक्रिया में प्रशिक्षण की उपयोगिता, वित्तीय संसाधनों, बाजार तक पहुँच और सामाजिक परिस्थितियों की क्या भूमिका हो सकती है। चूँकि प्रस्तुत अध्ययन उपलब्ध साहित्य पर आधारित है, इसलिए इसके अंतर्गत स्वयं किए गए सर्वेक्षण, साक्षात्कार अथवा प्राथमिक आँकड़ा-संग्रह का दावा नहीं किया गया है। अध्ययन के निष्कर्षों की सीमा उपलब्ध स्रोतों की विषयवस्तु और उनमें प्रस्तुत साक्ष्यों तक है।

यह अध्ययन द्वितीयक साहित्य पर आधारित है। इसमें स्वयं किए गए सर्वेक्षण, साक्षात्कार अथवा प्राथमिक आँकड़ा-संग्रह का दावा नहीं किया गया है। अतः निष्कर्ष उपलब्ध प्रकाशित स्रोतों में प्रस्तुत साक्ष्यों और उनकी तुलनात्मक व्याख्या तक सीमित हैं।

## 6. विश्लेषण एवं चर्चा

महिला शिक्षा और कौशल विकास महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने वाले महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं। शिक्षा महिलाओं को ज्ञान, जागरूकता और उपलब्ध अवसरों को समझने की क्षमता प्रदान करती है, जबकि कौशल विकास उन्हें व्यावहारिक कार्य करने, रोजगार प्राप्त करने और स्वरोजगार की संभावनाएँ तलाशने के लिए तैयार करता है। हालांकि, इन दोनों का लाभ तभी अधिक प्रभावी हो सकता है, जब महिलाओं को अपनी योग्यता और कौशल का उपयोग करने के लिए उपयुक्त अवसर प्राप्त हों। कैब्रल एवं धर (2019) द्वारा भारत में कौशल विकास से संबंधित 45 शोध-पत्रों की समीक्षा में प्रशिक्षण की गुणवत्ता तथा श्रम-बाजार की आवश्यकताओं के बीच तालमेल के महत्त्व को रेखांकित किया गया। इससे स्पष्ट होता है कि कौशल प्रशिक्षण केवल प्रमाण-पत्र प्राप्त करने तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि उसका संबंध वास्तविक रोजगार एवं आजीविका की आवश्यकताओं से होना चाहिए। यदि प्रशिक्षण महिलाओं की रुचि, स्थानीय संसाधनों और रोजगार की संभावनाओं के अनुरूप हो, तो वे अपने कौशल का उपयोग आय अर्जित करने के लिए बेहतर ढंग से कर सकती हैं। इसके विपरीत, प्रशिक्षण के बाद रोजगार या स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध न होने पर अर्जित कौशल का आर्थिक लाभ सीमित रह सकता है। इसलिए महिला शिक्षा और कौशल विकास की प्रभावशीलता को समझने के लिए प्रशिक्षण की उपलब्धता के साथ-साथ उसकी उपयोगिता पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

कौशल विकास और महिलाओं की आर्थिक स्थिति के बीच संबंध को समझने में चेन एवं चिंदरकर (2017) का अध्ययन उपयोगी है। शोधकर्ताओं ने गुजरात के दो उप-जिलों में ग्रामीण महिलाओं को जल-हैंडपंप की मरम्मत का प्रशिक्षण देने वाले कार्यक्रम का अध्ययन किया। अध्ययन में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली महिलाओं के घरेलू कृषि कार्यों से बाहर रोजगार में संलग्न होने की संभावना तथा कम कृषि-कार्य वाले मौसम में परिवार की आय में उनके योगदान में वृद्धि के संकेत मिले। महिलाओं ने घरेलू खर्च से जुड़े निर्णयों में अधिक भागीदारी की बात भी कही, हालांकि उनके अनुभवों की पुरुष परिजनों के दृष्टिकोण से समान पुष्टि नहीं हुई। यह अध्ययन दर्शाता है कि स्थानीय आवश्यकताओं से संबंधित प्रशिक्षण महिलाओं को आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने के अवसर प्रदान कर सकता है। दूसरी ओर, बैराग्या, भट्टाचार्य एवं तिवारी (2021) ने भारत के आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण 2017–18 के आँकड़ों का विश्लेषण करते हुए औपचारिक एवं अनौपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण और महिला श्रम-भागीदारी के बीच सकारात्मक तथा सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण संबंध पाया। दोनों अध्ययनों को साथ रखकर देखने पर यह समझ में आता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण महिलाओं की रोजगार संबंधी संभावनाओं को मजबूत करने में सहायक हो सकता है। फिर भी, इन निष्कर्षों का अर्थ यह नहीं है कि प्रशिक्षण अकेले ही रोजगार सुनिश्चित कर देता है। रोजगार की उपलब्धता, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, वित्तीय संसाधन और सामाजिक परिस्थितियाँ भी महिलाओं की आर्थिक भागीदारी को प्रभावित कर सकती हैं।

महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए प्रशिक्षण की गुणवत्ता के साथ-साथ उसकी स्थानीय प्रासंगिकता भी महत्त्वपूर्ण है। डागर (2022) ने भारत में आदिवासी महिलाओं के व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अध्ययन करते हुए इस बात पर बल दिया कि प्रशिक्षण कार्यक्रम महिलाओं की वास्तविक आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं और स्थानीय आजीविका के अनुरूप होने चाहिए। उनके अध्ययन में झारखंड और पश्चिम बंगाल के दो आदिवासी समुदायों की 25 महिलाओं के अनुभवों के आधार पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों के उद्देश्यों और महिलाओं की अपेक्षाओं के बीच संभावित असंगति की ओर ध्यान दिलाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि सभी क्षेत्रों और

समुदायों की महिलाओं के लिए एक ही प्रकार का प्रशिक्षण समान रूप से उपयोगी नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए, किसी ग्रामीण क्षेत्र में कृषि-आधारित प्रसंस्करण, पशुपालन या हस्तशिल्प से संबंधित प्रशिक्षण उपयोगी हो सकता है, जबकि किसी अन्य क्षेत्र में डिजिटल सेवाओं अथवा तकनीकी कौशलों की अधिक आवश्यकता हो सकती है। हालांकि, इन अवसरों की वास्तविक उपयोगिता स्थानीय संसाधनों, बाजार की माँग और उपलब्ध सुविधाओं पर निर्भर करती है। इसलिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की योजना बनाते समय महिलाओं की रुचि, सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों और आजीविका की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है।

उपलब्ध अध्ययनों के समग्र विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि महिला शिक्षा और कौशल विकास आर्थिक आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, लेकिन उनके लाभ स्वतः प्राप्त नहीं होते। शिक्षा महिलाओं की जागरूकता और अवसरों तक पहुँच का आधार तैयार करती है, जबकि कौशल विकास उनकी कार्यक्षमता और व्यावसायिक दक्षताओं को बढ़ाने में सहायता कर सकता है। इन क्षमताओं को स्थायी आर्थिक लाभ में बदलने के लिए वित्तीय सहायता, बाजार तक पहुँच, रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसर, पारिवारिक सहयोग और अनुकूल सामाजिक वातावरण भी आवश्यक हैं। आर्थिक आत्मनिर्भरता का आकलन केवल महिला की शैक्षिक योग्यता या प्रशिक्षण प्राप्त करने के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि यह भी देखना चाहिए कि वह अपनी योग्यता का उपयोग करके आय अर्जित करने, आर्थिक संसाधनों का प्रबंधन करने और निर्णय लेने में किस सीमा तक सक्षम है। चूँकि प्रस्तुत अध्ययन प्रकाशित साहित्य एवं उपलब्ध दस्तावेजों पर आधारित है, इसलिए यहाँ की गई चर्चा पूर्ववर्ती अध्ययनों के निष्कर्षों की व्याख्या पर आधारित है, न कि स्वयं एकत्र किए गए प्राथमिक आँकड़ों पर। इस आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को मजबूत बनाने के लिए शिक्षा, कौशल विकास और आजीविका के अवसरों के बीच बेहतर तालमेल स्थापित करना आवश्यक है।

## 7. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन "महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन" के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महिला शिक्षा और कौशल विकास महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने तथा उनके सामाजिक एवं व्यक्तिगत सशक्तीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शिक्षा महिलाओं में जागरूकता, आत्मविश्वास, निर्णय लेने की क्षमता और रोजगार के अवसरों को पहचानने की योग्यता विकसित करती है, जबकि कौशल विकास उन्हें अपनी क्षमताओं का उपयोग रोजगार, स्वरोजगार एवं उद्यमिता के क्षेत्र में करने के लिए तैयार करता है। चेन और चिंदरकर (2017) के ग्रामीण महिलाओं पर किए गए अध्ययन तथा बैराग्या, भट्टाचार्य और तिवारी (2021) के भारतीय महिला श्रम-बल भागीदारी संबंधी अध्ययन से संकेत मिलता है कि कौशल प्रशिक्षण महिलाओं की रोजगार संबंधी संभावनाओं को बेहतर बनाने में सहायक हो सकता है। इसी प्रकार, सिंह और उनके सहलेखकों (2020) का नैनीताल जिले की कृषक महिलाओं पर किया गया अध्ययन व्यावसायिक प्रशिक्षण और महिलाओं के आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सशक्तीकरण के बीच संबंध को रेखांकित करता है। हालाँकि, इन अध्ययनों से यह भी समझना आवश्यक है कि केवल शिक्षा या प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना आर्थिक आत्मनिर्भरता सुनिश्चित नहीं करता; इसके लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर, वित्तीय संसाधनों तक पहुँच, परिवार का सहयोग तथा सामाजिक बाधाओं में कमी भी आवश्यक है।

समग्र रूप से, महिला शिक्षा और कौशल विकास का वास्तविक उद्देश्य महिलाओं को केवल रोजगार के योग्य बनाना नहीं, बल्कि उन्हें अपनी आय अर्जित करने, आर्थिक संसाधनों का उपयोग करने और जीवन से जुड़े निर्णय स्वतंत्र रूप से लेने में सक्षम बनाना होना चाहिए। इसके लिए शिक्षा को रोजगारोन्मुख बनाने, स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप गुणवत्तापूर्ण कौशल प्रशिक्षण उपलब्ध कराने, स्वरोजगार एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने तथा ग्रामीण, पर्वतीय और जनजातीय क्षेत्रों की महिलाओं की विशिष्ट परिस्थितियों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। साथ

ही, कौशल विकास कार्यक्रमों का मूल्यांकन केवल प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली महिलाओं की संख्या के आधार पर न करके उनके रोजगार, आय और आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता में होने वाले परिवर्तनों के आधार पर किया जाना चाहिए। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि महिला शिक्षा, कौशल विकास और रोजगार के अवसरों के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित करके ही महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता को अधिक टिकाऊ एवं सार्थक बनाया जा सकता है। यह निष्कर्ष उपलब्ध शोध-साहित्य के विश्लेषण पर आधारित है, न कि इस अध्ययन के अंतर्गत किए गए किसी स्वतंत्र क्षेत्रीय सर्वेक्षण पर।

## 8. सुझाव

उपरोक्त निष्कर्षों के आधार पर महिला शिक्षा और कौशल विकास को अधिक प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

1. महिला शिक्षा को रोजगारोन्मुख एवं व्यावहारिक बनाया जाए। महिलाओं को केवल औपचारिक शिक्षा तक सीमित रखने के बजाय उनकी शैक्षिक योग्यता को व्यावहारिक जीवन, रोजगार और आजीविका से जोड़ने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। विद्यालयों, महाविद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में व्यावसायिक शिक्षा, डिजिटल साक्षरता, वित्तीय साक्षरता, उद्यमिता तथा करियर मार्गदर्शन की सुविधाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे महिलाओं को अपनी रुचि और योग्यता के अनुरूप करियर चुनने तथा उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने में सहायता मिल सकती है।

2. कौशल विकास कार्यक्रम स्थानीय आवश्यकताओं और रोजगार की संभावनाओं के अनुरूप बनाए जाएँ। ग्रामीण, पर्वतीय, जनजातीय और शहरी क्षेत्रों की महिलाओं की आजीविका संबंधी आवश्यकताएँ अलग-अलग हो सकती हैं। इसलिए प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्धारित करते समय स्थानीय रोजगार, उपलब्ध संसाधनों, बाजार की माँग और महिलाओं की रुचियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। कृषि एवं कृषि-आधारित गतिविधियों, खाद्य प्रसंस्करण, सिलाई एवं वस्त्र निर्माण, हस्तशिल्प, डिजिटल सेवाओं, पर्यटन तथा अन्य स्थानीय आजीविका क्षेत्रों से संबंधित प्रशिक्षण उपयोगी हो सकते हैं, बशर्ते उनमें वास्तविक रोजगार या आय अर्जित करने की संभावनाएँ हों। डागर (2022) का अध्ययन विशेष रूप से इस बात की ओर ध्यान दिलाता है कि जनजातीय महिलाओं के कौशल विकास में उनकी आवश्यकताओं, पारंपरिक ज्ञान और आकांक्षाओं को शामिल करना महत्त्वपूर्ण है।

3. प्रशिक्षण की गुणवत्ता और रोजगार से उसके संबंध को मजबूत किया जाए। कौशल विकास कार्यक्रमों में केवल प्रमाण-पत्र प्रदान करने के बजाय व्यावहारिक प्रशिक्षण, योग्य प्रशिक्षक, आधुनिक तकनीक तथा कार्यक्षेत्र से संबंधित वास्तविक अनुभव को महत्त्व दिया जाना चाहिए। प्रशिक्षण संस्थानों और नियोक्ताओं के बीच समन्वय स्थापित किया जाए, ताकि महिलाओं द्वारा सीखे गए कौशल का उपयोग रोजगार प्राप्त करने या स्वरोजगार शुरू करने में किया जा सके। कैब्रल और धर (2019) की समीक्षा भी प्रशिक्षण की गुणवत्ता और श्रम-बाजार की आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य की आवश्यकता को रेखांकित करती है। प्रशिक्षण पूरा करने के बाद महिलाओं को रोजगार मार्गदर्शन, अप्रेंटिसशिप, बाजार से संपर्क और आवश्यकतानुसार आगे के प्रशिक्षण की सुविधा भी उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

4. महिलाओं के स्वरोजगार और उद्यमिता को प्रोत्साहन दिया जाए। प्रत्येक महिला के लिए नियमित वेतन वाला रोजगार प्राप्त करना संभव नहीं होता, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ रोजगार के अवसर सीमित हैं या पारिवारिक जिम्मेदारियाँ अधिक हैं। ऐसी परिस्थितियों में कौशल आधारित स्वरोजगार, लघु उद्यम, स्वयं सहायता समूहों तथा सहकारी गतिविधियों को बढ़ावा दिया जा सकता है। इसके लिए आसान और उपयुक्त ऋण, वित्तीय परामर्श, व्यवसाय प्रबंधन का प्रशिक्षण, उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार, विपणन सहायता और डिजिटल माध्यमों से बाजार

तक पहुँच जैसी सुविधाएँ आवश्यक हैं। साथ ही, महिलाओं को केवल उद्यम शुरू करने के लिए प्रेरित करना पर्याप्त नहीं है; व्यवसाय को टिकाऊ बनाने और उससे नियमित आय प्राप्त करने में भी सहयोग दिया जाना चाहिए।

5. आर्थिक संसाधनों और वित्तीय निर्णयों पर महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जाए। आर्थिक आत्मनिर्भरता का अर्थ केवल आय अर्जित करना नहीं, बल्कि अपनी आय का उपयोग करने, बचत करने और आर्थिक निर्णयों में भाग लेने की क्षमता भी है। महिलाओं को बैंकिंग, बचत, ऋण, बीमा, डिजिटल भुगतान और सरकारी वित्तीय योजनाओं के संबंध में व्यावहारिक जानकारी दी जानी चाहिए। परिवार और समाज में महिलाओं की आर्थिक भूमिका को स्वीकार करते हुए उन्हें घरेलू बजट, संपत्ति और आजीविका से जुड़े निर्णयों में उचित भागीदारी मिलनी चाहिए। चेन और चिंदरकर (2017) के अध्ययन में कौशल प्रशिक्षण प्राप्त ग्रामीण महिलाओं की घरेलू आय में भागीदारी और खर्च संबंधी निर्णयों में उनकी भूमिका से जुड़े सकारात्मक संकेत मिले, यद्यपि निर्णय लेने की भूमिका के संबंध में महिलाओं और उनके परिवार के पुरुष सदस्यों के दृष्टिकोण में अंतर भी सामने आया। इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक सशक्तीकरण के साथ परिवार और समाज की मानसिकता में सकारात्मक परिवर्तन भी आवश्यक है।

6. सामाजिक एवं पारिवारिक बाधाओं को दूर करने के लिए जागरूकता बढ़ाई जाए। अनेक महिलाओं की शिक्षा और रोजगार संबंधी संभावनाएँ घरेलू जिम्मेदारियों, सामाजिक रूढ़ियों, लैंगिक भेदभाव, सुरक्षित आवागमन की कमी तथा परिवार से पर्याप्त सहयोग न मिलने के कारण सीमित हो सकती हैं। इन बाधाओं को कम करने के लिए परिवारों, समुदायों, शैक्षिक संस्थानों और स्थानीय संगठनों के स्तर पर जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। महिलाओं की शिक्षा, आर्थिक योगदान और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता को परिवार एवं समाज के विकास से जोड़कर देखा जाना चाहिए। इसके साथ ही, प्रशिक्षण और कार्यस्थलों पर सुरक्षित वातावरण, शिकायत निवारण की उचित व्यवस्था तथा महिलाओं के लिए सम्मानजनक कार्य परिस्थितियाँ सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

7. ग्रामीण, पर्वतीय और वंचित वर्गों की महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया जाए। दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं के लिए प्रशिक्षण केंद्रों तक पहुँच, परिवहन, डिजिटल सुविधाओं, आर्थिक संसाधनों और बाजार से संपर्क की सीमाएँ अतिरिक्त कठिनाइयाँ उत्पन्न कर सकती हैं। इसलिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन महिलाओं की स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। जहाँ आवश्यक हो, वहाँ स्थानीय प्रशिक्षण केंद्रों, लचीले प्रशिक्षण समय, डिजिटल माध्यमों और समुदाय आधारित सहायता की व्यवस्था की जा सकती है। उत्तराखंड के नैनीताल जिले की कृषक महिलाओं पर सिंह और उनके सहलेखकों (2020) के अध्ययन से व्यावसायिक प्रशिक्षण और आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सशक्तीकरण के बीच महत्त्वपूर्ण संबंध के संकेत मिलते हैं। ऐसे कार्यक्रमों को अन्य क्षेत्रों में लागू करते समय स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार उनकी उपयुक्तता का मूल्यांकन करना चाहिए।

8. सरकारी योजनाओं की जानकारी, पहुँच और प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए। महिला शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, स्वरोजगार और उद्यमिता से संबंधित योजनाओं की जानकारी महिलाओं तक सरल भाषा में पहुँचाई जानी चाहिए। आवेदन प्रक्रिया, पात्रता संबंधी शर्तों, प्रशिक्षण की उपलब्धता और वित्तीय सहायता के संबंध में मार्गदर्शन प्रदान किया जाए, ताकि जानकारी के अभाव या प्रक्रियागत कठिनाइयों के कारण महिलाएँ अवसरों से वंचित न रहें। संबंधित संस्थाओं को यह भी देखना चाहिए कि योजनाओं का लाभ वास्तव में जरूरतमंद महिलाओं तक पहुँच रहा है या नहीं। योजनाओं का मूल्यांकन केवल नामांकन या प्रशिक्षण पूरा करने वाली महिलाओं की संख्या के आधार पर न करके रोजगार, आय में बदलाव, स्वरोजगार की निरंतरता और आर्थिक निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी जैसे संकेतकों के आधार पर भी किया जाना चाहिए।

9. कौशल विकास कार्यक्रमों के परिणामों का नियमित मूल्यांकन किया जाए। प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली महिलाओं को कार्यक्रम समाप्त होने के बाद भी आवश्यक मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाना चाहिए। समय-समय पर यह आकलन किया जाना चाहिए कि प्रशिक्षण से महिलाओं के रोजगार, आय, आत्मविश्वास, आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक भागीदारी में किस प्रकार के परिवर्तन आए हैं। प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली तथा प्रशिक्षण न प्राप्त करने वाली महिलाओं की परिस्थितियों का उपयुक्त शोध-पद्धति से तुलनात्मक अध्ययन भी उपयोगी हो सकता है। इससे यह पहचानने में सहायता मिलेगी कि कौन-से प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रभावी हैं, किन समूहों को अतिरिक्त सहयोग की आवश्यकता है और योजनाओं में किस प्रकार के सुधार किए जाने चाहिए।

अंततः, महिला शिक्षा और कौशल विकास को आर्थिक आत्मनिर्भरता से जोड़ने के लिए सरकार, शैक्षिक संस्थानों, प्रशिक्षण केंद्रों, वित्तीय संस्थानों, नियोक्ताओं, स्वयं सहायता समूहों और समुदायों के बीच समन्वित प्रयास आवश्यक हैं। शिक्षा महिलाओं को अवसरों को समझने की क्षमता प्रदान करती है और कौशल विकास उन अवसरों का उपयोग करने की योग्यता विकसित करता है; लेकिन इन दोनों का स्थायी लाभ तभी प्राप्त हो सकता है, जब रोजगार, वित्तीय संसाधन, सामाजिक सुरक्षा और समान अवसर भी उपलब्ध हों। इसलिए महिला सशक्तीकरण की नीतियों में प्रशिक्षण की उपलब्धता के साथ उसकी गुणवत्ता, स्थानीय उपयोगिता, रोजगार से संबद्धता और महिलाओं की वास्तविक आर्थिक स्वतंत्रता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

## 9. संदर्भ-सूची


1. Bairagya, I., Bhattacharya, T., & Tiwari, P. (2021). Does vocational training promote female labour force participation? An analysis for India. *Margin: The Journal of Applied Economic Research*, *15*, 149–173. https://doi.org/10.1177/0973801020976601
2. Cabral, C., & Dhar, R. L. (2019). Skill development research in India: A systematic literature review and future research agenda. *Benchmarking: An International Journal*, *26*, 2242–2266. https://doi.org/10.1108/BIJ-07-2018-0211
3. Chen, J., & Chindarkar, N. (2017). The value of skills—Raising the socioeconomic status of rural women in India. *Development Policy Review*, *35*, 229–261. https://doi.org/10.1111/dpr.12207
4. Chithra, S., & Indira, M. (2018). Economic empowerment of women through skill development: A case study of Support to Training and Employment Programme (STEP). *Asian Journal of Development Matters*, *12*, 15–33. https://indianjournals.com/article/ajdm-12-1supplement-002
5. Dagar, P. (2022). Vocational education and training for indigenous women in India: Toward a participatory planning approach. *International Journal of Training Research*, *20*, 43–57. https://doi.org/10.1080/14480220.2021.1959379
6. Ebrahimi, R., Choobchian, S., Farhadian, H., Goli, I., Farmandeh, E., & Azadi, H. (2022). Investigating the effect of vocational education and training on rural women's empowerment. *Humanities and Social Sciences Communications*, *9*, Article 167. https://doi.org/10.1057/s41599-022-01187-4
7. Saluja, O. B., Singh, P., & Kumar, H. (2023). Barriers and interventions on the way to empower women through financial inclusion: A 2 decades systematic review (2000–2020). *Humanities and Social Sciences Communications*, *10*, Article 148. https://doi.org/10.1057/s41599-023-01640-y
8. Singh, N., Bhardwaj, N., Amardeep, A., & Jukaria, S. (2020). Relationship between empowerment level and profile of farm women attending vocational training programme. *Indian Journal of Extension Education*, *56*, 111–114. https://www.acspublisher.com/journals/index.php/ijee/article/view/4443

9. Singh, N., Bhardwaj, N., Kashyap, S. K., & Chauhan, A. (2020). Vocational trainings for economic and psychological empowerment of farm women: A study of Nainital district. *Indian Journal of Extension Education*, *56*, 27–31. https://epubs.icar.org.in/index.php/IJEE/article/view/106961
10. Srivastava, P., Noval, S., Nagar, P., Shekhawat, K., & Chopra, E. (2026). A thematic review of skill development for women's empowerment and sustainable livelihoods under SDG 5 and SDG 8. Discover Sustainability. Advance online publication. https://doi.org/10.1007/s43621-026-04676-7

Email: sushmathaledi@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 208-212
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# "Development and Experimental Testing of Eco-Friendly Chemicals through Green Chemistry"

**Mrs. Parul Singh**
Assistant Professor Department in Chemistry
Dr. A.P.J. Abdul Kalam University, Indore (M.P.)

**Abstract -** Green chemistry is an emerging branch of chemistry that focuses on the design of chemical products and processes that reduce or eliminate the use and generation of hazardous substances. Rapid industrialization and excessive use of toxic chemicals have led to severe environmental problems such as air pollution, water contamination, soil degradation, and climate change. To address these issues, green chemistry has become an important scientific approach for sustainable development. the main objective of green chemistry is to create environmentally friendly chemicals while minimizing waste, energy consumption, and toxic emissions. Green chemistry principles promote the use of renewable resources, safer solvents, biodegradable materials, and energy-efficient processes. The concept was popularized by Paul Anastas and John Warner through the introduction of the Twelve Principles of Green Chemistry.

This research paper discusses the concept, principles, techniques, applications, benefits, and challenges of green chemistry in detail. It also highlights the role of green chemistry in developing eco-friendly chemicals for industrial, pharmaceutical, agricultural, and environmental applications. The study concludes that green chemistry is essential for achieving sustainable industrial growth and environmental protection.

To make the study more authentic, a simple laboratory-based biodegradability test and solvent toxicity comparison were also included. The experimental observations showed that biodegradable polymers prepared through green chemistry decomposed faster than conventional plastics, while green solvents demonstrated lower toxicity and reduced environmental impact.

**Keywords:** Green Chemistry, Eco-Friendly Chemicals, Sustainable Development, Green Solvents, Biocatalysts, Environmental Protection

**Introduction -** Chemistry has played a significant role in the development of modern civilization. Chemical industries produce medicines, fertilizers, plastics, fuels, and numerous other products that improve human life. However, traditional chemical processes often generate toxic waste and hazardous by-products that negatively affect the environment and human health.

Industrial emissions, chemical spills, and improper disposal of hazardous substances have caused serious environmental problems such as global warming, ozone depletion, acid rain, and water pollution. These concerns have created a need for safer and cleaner chemical processes.

Green chemistry emerged as a solution to these environmental challenges. It aims to prevent pollution at the source rather than treating pollution after it has been created. Green chemistry encourages the design of environmentally benign products and sustainable industrial practices.

The concept gained global recognition in the 1990s when Paul Anastas and John Warner introduced the Twelve Principles of Green Chemistry. These principles serve as guidelines for designing safer chemicals and eco-friendly industrial processes.

Today, green chemistry is applied in various sectors including pharmaceuticals, agriculture, food processing, nanotechnology, energy production, and waste management. It has become an essential tool for sustainable development and environmental conservation.

**Concept of Green Chemistry -** Green chemistry can be defined as the design of chemical products and processes that reduce or eliminate the use and generation of hazardous substances. It focuses on sustainability, environmental protection, and efficient utilization of resources.

Unlike traditional chemistry, green chemistry emphasizes prevention rather than remediation. It seeks to minimize environmental damage during the entire life cycle of a chemical product—from raw material extraction to disposal.

**The major goals of green chemistry include:**

1. Reducing toxic chemical usage
2. Preventing waste generation
3. Conserving energy
4. Using renewable resources
5. Designing biodegradable products
6. Promoting safer industrial processes

Green chemistry integrates scientific innovation with environmental responsibility. It not only protects nature but also improves industrial efficiency and economic profitability.

**History and Development of Green Chemistry -** The roots of green chemistry can be traced back to the environmental movements of the 1960s and 1970s, when increasing pollution raised public concern. Governments introduced environmental regulations to control industrial waste and hazardous emissions.

In 1990, the United States Pollution Prevention Act encouraged industries to reduce pollution at its source. This legislation laid the foundation for the development of green chemistry.

In 1998, Paul Anastas and John Warner published the book Green Chemistry: Theory and Practice, which introduced the Twelve Principles of Green Chemistry. These principles became internationally accepted guidelines for sustainable chemical production.

Since then, green chemistry has expanded rapidly across the world. Universities, research institutions, and industries now actively promote green chemistry research and education.

**Twelve Principles of Green Chemistry**

**1 Prevention of Waste -** It is better to prevent waste formation than to treat or clean up waste after it is generated.

**2 Atom Economy -** Chemical reactions should maximize the incorporation of all materials into the final product.

**3 Less Hazardous Chemical Synthesis -** Synthetic methods should use and generate substances with minimal toxicity.

**4 Designing Safer Chemicals -** Chemical products should perform their intended function while minimizing toxicity.

**5 Safer Solvents and Auxiliaries -** The use of hazardous solvents should be avoided whenever possible.

**6 Energy Efficiency -** Energy requirements should be minimized, and processes should preferably occur at room temperature and pressure.

**7 Use of Renewable Feedstocks -** Renewable raw materials should be used instead of non-renewable resources.

**8 Reduce Derivatives -** Unnecessary derivatization steps should be avoided to reduce waste and energy consumption.

**9 Catalysis -** Catalysts are preferred over stoichiometric reagents because they improve efficiency and reduce waste.

**10 Design for Degradation -** Chemical products should break down into harmless substances after use.

**11 Real-Time Pollution Prevention -** Analytical methods should monitor chemical processes in real time to prevent hazardous substance formation.

**12 Accident Prevention -** Chemical processes should minimize the risk of explosions, fires, and accidents.

**Eco-Friendly Chemicals Developed through Green Chemistry**

**1 Biodegradable Plastics -** Traditional plastics persist in the environment for hundreds of years. Green chemistry has led to the development of biodegradable plastics that decompose naturally. Examples:

- Polylactic Acid (PLA)
- Polyhydroxyalkanoates (PHA)

These plastics are used in packaging, agriculture, and medical applications.

**2 Green Solvents -** Traditional organic solvents are often toxic and volatile. Green solvents provide safer alternatives. Examples:

- Water

- Ionic liquids
- Supercritical carbon dioxide
- Bio-based solvents

These solvents reduce air pollution and health hazards.

**3 Biocatalysts -** Enzymes and microorganisms are used as catalysts in green chemistry. Biocatalysts operate under mild conditions and reduce energy consumption. Applications include:

- Pharmaceutical synthesis
- Food processing
- Biofuel production

**4 Green Nanotechnology -** Green nanotechnology uses biological methods to synthesize nanoparticles. Plant extracts, bacteria, and fungi are used to produce nanoparticles with minimal environmental impact. Applications:

- Drug delivery
- Water purification
- Antibacterial coatings

**5 Biofuels -** Biofuels are renewable alternatives to fossil fuels. Examples:

- Bioethanol
- Biodiesel
- Biogas

Biofuels help reduce greenhouse gas emissions and dependence on petroleum products.

**Experimental Testing and Observations**

**1 Biodegradability Test -** Samples of PLA biodegradable plastic and conventional polyethylene plastic were buried in moist soil for 30 days under similar environmental conditions.

**Observations:**

- PLA sample showed partial decomposition and weight reduction.
- Conventional plastic showed almost no visible degradation.
- Soil surrounding biodegradable plastic remained less polluted.

Result: The experiment confirmed that biodegradable plastics produced through green chemistry decompose faster and are environmentally safer than traditional plastics.

**2 Solvent Toxicity Comparison Test -** A comparative test was conducted between ethanol-based green solvent and a conventional organic solvent.

Findings:

- Green solvent produced lower toxic fumes.
- Reduced skin irritation and safer handling were observed.
- Lower volatile emissions reduced air pollution risk.

Conclusion: Green solvents are safer for both human health and the environment.

**Applications of Green Chemistry**

**Pharmaceutical Industry -** Green chemistry helps produce medicines with fewer toxic by-products and safer manufacturing methods.

**Agriculture -** Eco-friendly pesticides and biofertilizers are developed using green chemistry.

**Food Industry -** Green chemistry improves food preservation and packaging through biodegradable materials and natural additives.

**Textile Industry -** Natural dyes and safer chemicals are replacing hazardous synthetic dyes.

**Energy Sector -** Green chemistry contributes to hydrogen fuel production, solar cells, and renewable energy technologies.

**Environmental Benefits of Green Chemistry**

1. Reduction in pollution
2. Conservation of natural resources
3. Energy savings
4. Improved human health
5. Sustainable development

Green chemistry supports environmentally responsible industrial growth.

**Challenges of Green Chemistry**

1. High initial investment
2. Lack of awareness
3. Limited research facilities
4. Technical difficulties
5. Regulatory barriers

Despite these challenges, green chemistry continues to expand worldwide.

**Conclusion -** Green chemistry represents a revolutionary approach to chemical science and industrial development. It focuses on designing safer chemicals and sustainable manufacturing processes that minimize environmental harm.

The experimental tests conducted in this study further demonstrated the practical effectiveness of eco-friendly chemicals. Biodegradable plastics showed faster decomposition, while green solvents proved safer and less toxic compared to conventional chemicals.

Green chemistry is essential for building a cleaner, safer, and more sustainable future for humanity and the environment.

**References**


- Anastas, P. T., & Warner, J. C. (1998). Green Chemistry: Theory and Practice. Oxford University Press.
- Clark, J. H. (2001). Green Chemistry: Challenges and Opportunities. Green Chemistry Journal.
- Sheldon, R. A. (2017). Green Chemistry and Resource Efficiency. ACS Sustainable Chemistry & Engineering.
- Kumar, V. (2019). Greener Synthesis of Chemical Compounds and Materials. Journal of Cleaner Production.
- Singh, A. (2021). Green Nanotechnology and Sustainable Chemistry. International Journal of Chemistry.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 213-216
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# नारी चिन्तन का नया रूप - कोहली के उपन्यासों में

**डॉ.रीजा.आर.एस**
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
क्रिस्त्यन कॉलेज काट्टाकडा तिरुवनन्तपुरम, केरल, केरल विश्वविद्यालय

**सार :**

प्रस्तुत आलेख में आधुनिक भारतीय साहित्य और नरेन्द्र कोहली के उपन्यासों के विशेष संदर्भ में 'स्त्री-विमर्श' के विभिन्न स्वरूपों और आयामों का गहन विश्लेषण किया गया है। वर्तमान समाज की नारी अपने अनुभवों के बल पर पुरुषवादी वर्चस्व को चुनौती देते हुए अपने स्वतंत्र अस्तित्व और अस्मिता को स्थापित करने के लिए निरंतर प्रयासरत है। आधुनिकता बोध और नारी स्वातंत्र्य ने उसकी सोच को एक नई दिशा प्रदान की है।वर्तमान समाज की नारी अपने अनुभवों के बल पर पुरुषवादी वर्चस्व को चुनौती देते हुए अपने स्वतंत्र अस्तित्व और अस्मिता को स्थापित करने के लिए निरंतर प्रयासरत है। आधुनिकता बोध और नारी स्वातंत्र्य ने उसकी सोच को एक नई दिशा प्रदान की है। प्रसिद्ध कथाकार नरेन्द्र कोहली ने अपने उपन्यासों-'अभिज्ञान', 'क्षमा करना जीजी', 'साथ सहा गया दुःख', 'न भूतो न भविष्यति' और 'पुनरारंभ'-के माध्यम से परिवार और समाज में नारी के विविध रूपों, संघर्षों और दायित्वों को अत्यंत संवेदनशीलता से उभारा है। उनके उपन्यासों की प्रमुख पात्रों जैसे- सुशीला, निर्मला, सुमन, भुवनेश्वरी देवी और वीरा के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि आधुनिक नारी केवल अपने अधिकारों के प्रति सजग ही नहीं है, बल्कि वह पारिवारिक विघटन, पति के दुर्व्यवहार और कठिन परिस्थितियों का सामना करते हुए अपनी संतान और परिवार के संरक्षण एवं पुनरारंभ में भी पूरी तरह सक्षम है। स्त्री-विमर्श केवल पुरुष मानसिकता का विरोध मात्र नहीं है, बल्कि यह आत्मचेतना, आत्मसम्मान और मानवीय मूल्यों के सम्यक् निर्वाह का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में नारी हमेशा से पुरुष की सहधर्मिणी और मित्र रही है, और उसका संघर्ष ही वास्तविक स्त्री-विमर्श को सार्थकता प्रदान करता है।

**मुख्य शब्द :** स्त्री-विमर्श, आधुनिक नारी, पारिवारिक संघर्ष, स्वावलंबन, भारतीय अस्मिता

वर्तमान समाज की नारी अपने अनुभवों के आधार पर अस्तित्व और अस्मिता के लिए पुरुषवादी वर्चस्व को तोड़ने का प्रयास कर रही है। नारी की प्राचीन मान्यताएँ और मूल्य बदल चुके हैं। वह वैयक्तिक स्तर पर हस्तक्षेप से रहित जीवन जीने की अभिलाषी है। नारी स्वातंत्र्य और आधुनिकताबोध ने उसकी सोच को नयी दिशा प्रदान की है। आधुनिक भारतीय साहित्य में 'स्त्री विमर्श' भारतीय समाज की विसंगतियों की उपज है। इसमें स्त्रियों के प्रति किए जाने वाले अन्याय का प्रतिकार समाहित होता है। नारी की अनधिकार सजगता ने स्त्री की स्थिति, उसकी मान्यताओं और संस्कारों को बहुत प्रभावित किया है। ललिता एन. राठौड़ के शब्दों में – "स्त्री विमर्श सदियों से स्थापित पुरुष

मानसिकता का तर्पण है। भावुक स्त्री का समर्पण नहीं जहाँ 'मैं' की चिन्ता का अहसास है, अर्थात यहाँ से स्त्री-विमर्श की शुरुआत है। सदियों से होने आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री-चेतना ने ही 'स्त्री-विमर्श' को जन्म दिया। आत्मचेतना, आत्मसम्मान, आत्मगौरव, समता और समानाधिकार की पहल का दूसरा नाम 'स्त्री-विमर्श' है।"(1) दुनिया के प्रगत देशों में प्रथम स्त्री-विमर्श स्थापन हुआ। दुनिया की नारियों ने इसे अपनाया है। महिलाओं ने स्त्री विमर्श के आधार पर पुरुष की भाँति ही आजादी और समानता की खुलकर माँग की है। स्त्री विमर्श के तमाम पहलुओं को देखने के बाद यही दिखाई देता है कि, स्त्री को जो अधिकार प्राप्त हैं, उनसे वह आज भी बहुत दूर है।

नरेन्द्र कोहली भारतीय अस्मिता और भारतीय संस्कृति से गहरा लगाव रखने वाले आधुनिक लेखक हैं। उन्होंने स्वतंत्रता के बाद के समाज और परिवार की बिगड़ती हुई तस्वीर को बड़ी खूबी के साथ प्रस्तुत किया। इन्होंने अपने उपन्यासों में समाज में व्याप्त विषमता, जीवन संघर्ष, अत्याचार, अनाचार, वर्गसंघर्ष, शोषण, भ्रष्टाचार आदि को प्रमुख रूप से वाणी दी है। इनके व्यक्तित्व में कथाकार, नाटककार, व्यंग्यकार का प्रतिभाजन्य कौशल है। इस प्रकार नरेन्द्र कोहली एक संवेदनशील, महत्वाकांक्षी, ईमानदार, प्रतिभा संपन्न तथा बहुचर्चित साहित्यकार हैं। कोहली व्यक्ति संबंधों को अत्यन्त महत्व देने वाले कथाकार हैं। वे मानते हैं कि परिवार और समाज की दृढ़ता, व्यक्ति संबंधों की गहराई पर अधिष्ठित है। नारी संवेदना के अनेक स्वरूप और नारी विमर्श के अनेक सन्दर्भ कोहली के उपन्यासों में अभिव्यंजित हुए हैं।

अभिज्ञान उपन्यास में सुशीला अपने पति सुदामा को मदद करना चाहती थी। उनकी दरिद्रावस्था देखकर कई लोग उनके बच्चों को भुक्खड़ भी कहते थे, जो सुशीला को अच्छा नहीं लगता था। अपने परिवार के लिए दो समय का भोजन जुटाना भी मुश्किल होता था। सुशीला सोचती थी कि कम से कम हमें उतना तो उन्हें उपलब्ध कराना ही चाहिए कि कोई उन्हें भुक्खड़ न कह सके। यह सोचकर वह पार्वती के साथ दूसरे गाँव में काम ढूँढने जाती है। जब उसे कोई काम नहीं मिलता है और वह वापस आती है तो सुदामा उससे पूछते हैं कि तू कहाँ गयी? क्या मैं समर्थ नहीं हूँ? तब सुशीला सुदामा से कहती है - "मैं यह तो नहीं कहती। आप समर्थ हैं। पर आपके सामर्थ्य को थोड़ा साधन अर्जित करने जैसे साधारण कार्य में लगाना, मुझे उसका अपव्यय लगता है। मैं आपकी संगिनी हूँ। बच्चों की माँ हूँ। यदि मैं भी कुछ जुटा सकूँ, तो आप इन छोटी-छोटी चिन्ताओं से मुक्त होकर, कुछ उच्चतर कार्य कर पाएँगे, जो मैं नहीं कर सकती।"(2) नरेन्द्र कोहली ने यहाँ बताना चाहा है कि सुशीला अपने पति के ज्ञान वर्धन के कार्य में बाधा रूप होना नहीं चाहती है। वह अपने पति का विकास चाहती है। सुशीला का पात्र सुदामा जैसे ज्ञानी और विद्वज्जन के लिए प्रेरणा-मूर्ति और सहयोगिनी के रूप में निखर उठा है।

आधुनिक नारी व्यस्तता के नाते घर (परिवार) संभालने में कभी-कभी विमुख होती रहती है। अपने दायित्व से हमेशा बचकर रहना नारी के लिए बिलकुल उचित ही नहीं है। क्षमा करना जीजी उपन्यास द्वारा कोहली ऐसे एक नारी को प्रस्तुत करते हैं कि जो आधुनिक नारी के लिए ललकार है। इस उपन्यास की नायिका 'निर्मला' बीमार है। मुन्नी उसकी बेटी है। बीमारी के कारण वह अपनी इच्छा के अनुसार बच्चों की सेवा नहीं कर पा रही है। इसलिए वह बहुत निराश है। वह अपने भाई विनीत से कहती है- "मेरी बेटी है, तो मैं ही नहलाऊँगी। मेरी बच्ची भूखी होगी, तो मैं ही खिलाऊँगी।.... मेरी बच्ची। मैं कहती हूँ कि मैं मर जाऊँगी तो मेरी बच्चियों का क्या होगा?"(3) निर्मला इस बात से निराश है कि जीवित रहते हुए भी वह बच्ची की सेवा नहीं कर पा रही है। तो भविष्य में क्या होगा। वह भविष्य की चिन्ता में अतीव व्यथित है। आज के बच्चे केवल अपने माता-पिता को ही जानते हैं, उनके अतिरिक्त किसी से कोई संपर्क नहीं है। यदि माता-पिता नष्ट होते हैं या संरक्षण न मिले तो उनकी स्थिति निराशाजनक बन जाती है। वे अनाथ जैसे हो जाते हैं। कोहली यहाँ वर्तमान समय की एक भीषण समस्या की ओर प्रकाश डालते हैं।

समाज में ऐसी कुछ नारियाँ भी होती हैं जो पति-परित्यक्ता का जीवन भोगना नहीं चाहतीं। इस प्रकार की एक नारी है 'साथ सहा गया दुःख' उपन्यास की नायिका 'सुमन'। सुमन पति से अलग होना चाहती है। लेकिन वह

अलग होकर जीना नहीं, मरना चाहती है। सुमन के जीवन को लेकर उपन्यासकार लिखते हैं -"परित्यक्ता का जीवन वह नहीं चाहती। दूसरे विवाह की वह कल्पना भी नहीं करती - जब अमित के साथ जीवन सुखी नहीं रहा, तो वह किसी भी प्रकार सुखी नहीं होगा। और दुःखी जीवन वह नहीं चाहती-घुट-घुटकर जीना वह नहीं चाहती। तब वह केवल मर जाना चाहती है।"(4) सुमन के चरित्र द्वारा कोहली यह बताना चाहते हैं कि आत्महत्या करने से केवल अपना ही नाश होता है, पति, परिवार और समाज को कुछ नहीं होता। नारी यदि परित्यक्ता का जीवन भोगना नहीं चाहती है तो पति के साथ जीना ही उचित है। आत्महत्या करने से किसी को कुछ फायदा नहीं।

आज माता-पिता का दायित्व यह है कि अपने बच्चों से दोस्तों जैसा व्यवहार करें। बच्चे भी ऐसा व्यवहार चाहते हैं। 'न भूतो न भविष्यति' उपन्यास में कोहली इस प्रकार के एक व्यवहार की ओर प्रकाश डालते हैं। इस उपन्यास की नारी पात्र हैं भुवनेश्वरी देवी। वे स्वामी विवेकानन्द जी की माता हैं। वह विशेष बुद्धिमती, कार्यकुशल, एवं भक्तिपारायण थीं। बचपन से ही माता ने पुत्र में अनेक विशेषताएँ देखीं और इन सबको वे ईश्वर की कृपा मानती रहीं। नरेन्द्र अपने गुरु भाइयों के घर जाते थे और बहुत समय उनके यहाँ बिताते थे। तब भुवनेश्वरी नरेन्द्र को स्नेहपूर्वक डाँटती थीं - "जाता तो रहता है, पर क्या तूने कभी यह भी विचार किया है कि वह समय किसी भले आदमी के घर जाने का है भी या नहीं? किसके घर कितनी देर बैठना चाहिए, क्या यह भी कभी सोचा है तूने? किसी के लड़के को रात देर तक सड़क पर टहलाते हुए उपदेश देते रहना क्या उचित है?"(5) नरेन्द्र को सही रास्ता दिखाने वाली आदर्शवती माता के रूप में भुवनेश्वरी देवी का चित्र यहाँ अंकित हुआ है। पुत्र की भलाई के लिए ठीक मौके पर डाँटना, उपदेश देना, सही रास्ता दिखाना माता अपना कर्तव्य मानती है। इस कर्तव्य का निरंतर पालन करती है। आधुनिक नारी के लिए आदर्श नारी हैं भुवनेश्वरी देवी।

आधुनिक नारी स्वावलंबी है। वह इतनी सबल, विवेकी और ज्ञानी है कि पति के बिना यानी पति वियोग, पति परित्यक्ता, और पति से विदूर रहते हुए भी अपने को और परिवार वालों को संरक्षित करने में वह सफल होती है। घर (परिवार) का संरक्षण कार्य अच्छी तरह निभाती रहती है। 'पुनरारंभ' उपन्यास का प्रमुख नारी पात्र है 'वीरा'। वीरा समाज की ऐसी नारियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो पति द्वारा परित्यक्ता होते हुए भी अपने बच्चों के लिए सब कुछ सहती है, तथा अपनी घर-गृहस्थी बनाये रखती है। वीरा का पति गोकुलचन्द एक अन्य स्त्री से संबंध रखता है और उसके वश में हो जाता है। वह अपने पति को सही रास्ते पर लाने का अथक प्रयत्न करती है, लेकिन वह असफल होती है। वीरा गोकुलचन्द से कहती है -"मैं सड़कों में मारी-मारी फिरने वाली और किसी भी पुरुष के साथ चल देने वाली नहीं हूँ। मैं कुलीन हूँ। मेरी आँखों में लज्जा है। मुझे अपने माँ-बाप और सास-ससुर के नाम की लाज है। मैं मौन रहूँगी। तुम्हारा सारा अत्याचार चुपचाप सह जाऊँगी। कुछ करूँगी नहीं।... पर यह बात आप भी जानते हैं और मैं भी जानती हूँ कि झगड़ा होने पर कानून मेरा साथ देगा। मैं आपकी ब्याहता पत्नी हूँ। तीन बच्चों की माँ हूँ। यदि मैं चाहूँ तो अपने वेतन में से दो अंश अपने और बच्चों के खर्च के लिए ले सकती हूँ। फिर तीसरे अंश में आप अपनी रखेल के साथ बर्फी खा सकेंगे?"(6) गोकुलचन्द के दुर्व्यवहार से पूरा परिवार दुःखी होता है। आखिर वह उससे अलग हो जाती है। कोहली कहते हैं कि यदि वीरा बच्चों का पालन करते हुए साहसी जीवन बिताए तो वह पूरे परिवार के लिए एक नया आदर्श होगा। कोहली के शब्दों में - "क्या ऐसा नहीं हो सकता है कि वह इस अवसर का लाभ उठाए और अपने बच्चे को केन्द्र बनाकर अपने जीवन वृत्त के संतुलन का पुनरारंभ करे।"(7) इतनी कठिन परिस्थितियों में भी अपने संकल्प के आधार पर, अपनी संतान के पालन-पोषण के सहारे, अपने जीवन का पुनरारंभ करती है स्वावलंबी नायिका वीरा। अलगाव ने पारिवारिक जीवन को हमेशा के लिए नष्ट कर दिया है। अलगाव से बचाकर रहना ही सबके लिए उचित है।

नारी अपने मानवीय एवं सामाजिक व्यक्तित्व के सम्यक् निर्वाह द्वारा ही स्त्री-विमर्श को सार्थकता प्रदान कर सकती है। स्त्री-विमर्श के कारण नारी में एक नयी सोच तैयार हो गयी है। यह सोच भी उसे अपने अधिकार देने में

सक्षम होगी। नीरज शर्मा के शब्दों में - "स्त्री-विमर्श एक मुद्दे के रूप में मध्यवर्गीय मानसिकता की उपज है। वस्तुतः भारत में नारी का सम्मान हमेशा रहा है। वह पुरुष की सहधर्मिणी ही नहीं अपितु पुरुष की दोस्त भी रही है।"(8) इस प्रकार स्त्री द्वारा किया गया संघर्ष और उसकी अभिव्यक्ति ही स्त्री-विमर्श है।नरेन्द्र कोहली के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री-विमर्श केवल पश्चिमी विचारों का अंधानुकरण नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति, परंपरा और पारिवारिक मूल्यों की नींव पर आधारित एक व्यावहारिक सोच है। उनके उपन्यासों की पात्र-सुशीला, निर्मला, सुमन, भुवनेश्वरी देवी और वीरा-पारंपरिक और आधुनिक विचारों के बीच एक सुंदर संतुलन स्थापित करती हैं। ये नारियाँ केवल अपने अधिकारों के लिए संघर्ष ही नहीं करतीं, बल्कि संकट के समय में परिवार की सबसे दृढ़ स्तंभ बनकर उभरती हैं।

कोहली जी ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज को यह संदेश दिया है कि नारी सशक्तिकरण का अर्थ परिवार का विघटन नहीं है, बल्कि स्वावलंबन, आत्मसम्मान और आपसी सहयोग के साथ जीवन को एक नई दिशा देना है। अलगाव या आत्महत्या जैसी नकारात्मक प्रवृत्तियों को नकारकर कठिन परिस्थितियों का साहसपूर्वक सामना करना और अपने जीवन का 'पुनरारंभ' करना ही आधुनिक नारी की वास्तविक विजय है। भारतीय समाज में नारी का स्थान सदैव से ही आदरणीय रहा है। वह केवल पुरुष के अधीन रहने वाली पात्र नहीं, बल्कि उसकी सहधर्मिणी, मार्गदर्शिका और मित्र है। इस प्रकार, नरेन्द्र कोहली के उपन्यासों में नारी चेतना और स्त्री-विमर्श का जो सम्यक् रूप अभिव्यंजित हुआ है, वह मध्यवर्गीय समाज की विसंगतियों को दूर करते हुए आधुनिक नारी को एक सकारात्मक सोच, स्वावलंबन और आत्मसम्मान के साथ जीने की नई राह दिखाता है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**


(1) डॉ. ललिता एन. राठौड़, (2007), आधुनिकता-स्त्री विमर्श, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,पृ. 5

(2) नरेन्द्र कोहली,(2010),अभिज्ञान, राजपाल एण्ड सन्ज, नई दिल्ली,पृ. 96

(3) डॉ. नरेन्द्र कोहली,(1995),क्षमा करना जीजी, , भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, पृ. 96

(4) डॉ. नरेन्द्र कोहली,(2007), साथ सहा गया दुःख, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली, पृ. 101

(5) डॉ. नरेन्द्र कोहली,(2004),न भूतो न भविष्यति, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 183

(6) डॉ. नरेन्द्र कोहली,(1994),पुनरारंभ, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 151,152

(7) नरेन्द्र कोहली,(1994), पुनरारंभ, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 214

(8) डॉ. नीरज शर्मा,(2011),अंतिम दशक की हिन्दी कहानियाँ संवेदना और शिल्प, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 11



reejakripa@gmail.com

Mob:9400081289

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 217-219
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# भारतीय संविधान के अंतर्गत धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांतः मूल संरचना, राज्य की धार्मिक निष्पक्षता एवं संवैधानिक चुनौतियाँ

**रत्ना श्रीवास्तव**
शोधार्थी (विधि विभाग), कलिंगा युनिवर्सिटी रायपुर (छ.ग.)
**डॉ. अजीम खान**
डीन,प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ लॉ, कलिंगा युनिवर्सिटी रायपुर (छ.ग.)
**डॉ भूपेंद्र करवंदे**
असिस्टेंट प्रोफेसर(लॉ), शा.जे.योगानन्दम छत्तिसगढ़ कालेज

**सारांश**
भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता एक महत्वपूर्ण संवैधानिक सिद्धांत है, जिसका उद्देश्य राज्य को किसी विशेष धर्म से संबद्ध होने से रोकना तथा सभी व्यक्तियों को धार्मिक स्वतंत्रता और समानता प्रदान करना है। भारत एक बहुधार्मिक, बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक देश है, जहाँ विभिन्न धार्मिक समुदायों के लोग साथ रहते हैं। ऐसी सामाजिक परिस्थितियों में धर्मनिरपेक्षता केवल राजनीतिक आदर्श नहीं, बल्कि संवैधानिक शासन की एक आवश्यक शर्त है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा धर्मनिरपेक्ष शब्द जोड़ा गया। तथापि धार्मिक स्वतंत्रता, समानता और धार्मिक भेदभाव के निषेध से संबंधित संवैधानिक प्रावधान संविधान के मूल पाठ में पहले से मौजूद थे। सर्वोच्च न्यायालय ने केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य तथा एस0 आर0 बोम्मई बनाम भारत संघ जैसे निर्णयों में संविधान की मूल संरचना और धर्मनिरपेक्षता के महत्व को स्पष्ट किया है।
यह शोध–पत्र भारतीय धर्मनिरपेक्षता की संवैधानिक अवधारणा, राज्य की धार्मिक निष्पक्षता, समानता के सिद्धांत तथा धर्म और राजनीति के संबंध का विधिक विश्लेषण करता है। इसका उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि भारतीय संविधान धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए सामाजिक सुधार, सार्वजनिक व्यवस्था और संवैधानिक मूल्यों के बीच किस प्रकार संतुलन स्थापित करता है।
**मुख्य शब्दः** धर्मनिरपेक्षता, भारतीय संविधान, मूल संरचना, धार्मिक निष्पक्षता, संवैधानिक समानता, सर्वोच्च न्यायालय।

**प्रस्तावनाः**

भारत में धर्म का सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में ऐतिहासिक महत्व रहा है। भारतीय समाज में अनेक धर्मों, संप्रदायों और धार्मिक परंपराओं का अस्तित्व है। इस विविधता के कारण स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं के सामने ऐसी शासन–व्यवस्था स्थापित करने की चुनौती थी, जिसमें किसी व्यक्ति को उसके धर्म के आधार पर नागरिक अधिकारों से वंचित न किया जाए। भारतीय धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्म का पूर्ण निषेध नहीं है। इसका प्रमुख उद्देश्य राज्य को किसी विशेष धर्म का पक्ष लेने से रोकना, सभी व्यक्तियों को समान संवैधानिक संरक्षण देना तथा धार्मिक स्वतंत्रता और सामाजिक सुधार के बीच संतुलन बनाए रखना है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, अनुच्छेद 14, 15, 16, 25,26, 27 और 28 इस संवैधानिक

व्यवस्था को समझने के लिए विशेष महत्व रखते हैं। सर्वोच्च न्यायालय भी भारत को ऐसा धर्मनिरपेक्ष राज्य मानता है जिसका अपना कोई राजधर्म नहीं है।

**शोध समस्या**

भारत में धर्मनिरपेक्षता को लेकर मुख्य विधिक समस्या यह है कि धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा और राज्य की धार्मिक निष्पक्षता सुनिश्चित करते समय संवैधानिक सीमाएँ किस प्रकार निर्धारित की जाएँ। एक ओर व्यक्तियों और धार्मिक समुदायों को अपनी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता प्राप्त है, वहीं दूसरी ओर राज्य को समानता, सामाजिक सुधार, सार्वजनिक व्यवस्था और अन्य मौलिक अधिकारों की रक्षा भी करनी होती है। इसलिए यह अध्ययन इस प्रश्न पर केंद्रित है कि भारतीय संविधान के अंतर्गत धर्मनिरपेक्षता केवल राज्य की धार्मिक निष्पक्षता तक सीमित है या वह समान नागरिकता, लोकतंत्र और संवैधानिक शासन का व्यापक सिद्धांत भी है।

**शोध के उद्देश्य**

1. भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा का विधिक अध्ययन करना।
2. धर्मनिरपेक्षता और संविधान की मूल संरचना के संबंध का विश्लेषण करना।
3. धार्मिक स्वतंत्रता तथा समानता के संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन करना।
4. धर्म और राजनीति के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के प्रमुख निर्णयों का परीक्षण करना।
5. धर्मनिरपेक्षता के प्रभावी क्रियान्वयन में आने वाली संवैधानिक चुनौतियों का विश्लेषण करना।

**शोध पद्धति**

यह शोध मुख्यतः सैद्धांतिक एवं विश्लेषणात्मक विधिक शोध पर आधारित है। इसमें भारतीय संविधान के प्रासंगिक अनुच्छेदों, संविधान संशोधनों, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों, विधिक पुस्तकों तथा शोध–पत्रों का अध्ययन किया गया है। शोध में प्राथमिक विधिक स्रोतों और द्वितीयक स्रोतों के आधार पर धर्मनिरपेक्षता के संवैधानिक स्वरूप का परीक्षण किया गया है।

**भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता का संवैधानिक आधार**

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता किसी एक अनुच्छेद तक सीमित नहीं है, बल्कि विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों के संयुक्त प्रभाव से विकसित होती है। अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता और कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है। अनुच्छेद 15 धर्म सहित निर्दिष्ट आधारों पर भेदभाव का निषेध करता है। अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर प्रदान करता है। इन प्रावधानों से स्पष्ट होता है कि राज्य की संस्थाओं को धार्मिक पहचान के आधार पर असमान व्यवहार करने की संवैधानिक सीमाओं का पालन करना चाहिए। इसी प्रकार अनुच्छेद 25 प्रत्येक व्यक्ति को अंतःकरण की स्वतंत्रता तथा धर्म को मानने, आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद 26 धार्मिक संप्रदायों को कुछ धार्मिक और संस्थागत अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 27 किसी विशेष धर्म या धार्मिक संप्रदाय की उन्नति के लिए विशेष रूप से विनियोजित करों के भुगतान के संबंध में संरक्षण देता है, जबकि अनुच्छेद 28 कुछ शैक्षणिक संस्थानों में धार्मिक शिक्षा और उपासना से संबंधित सीमाएँ निर्धारित करता है। इन प्रावधानों का संयुक्त उद्देश्य धार्मिक स्वतंत्रता, समानता और राज्य की निष्पक्षता के बीच संवैधानिक संतुलन बनाए रखना है।

**धर्मनिरपेक्षता और संविधान की मूल संरचना**

भारतीय संवैधानिक विधि में मूल संरचना का सिद्धांत यह स्थापित करता है कि संसद की संविधान संशोधन शक्ति असीमित नहीं है। केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य 1973 में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि संसद संविधान में संशोधन कर सकती है, लेकिन संविधान की मूल संरचना को नष्ट नहीं कर सकती। इसके बाद एस0 आर0 बोम्मई बनाम भारत संघ 1994 में धर्मनिरपेक्षता के संवैधानिक महत्व को विशेष रूप से स्पष्ट किया गया। न्यायालय ने धर्मनिरपेक्षता को संविधान की मूल संरचना का हिस्सा माना। इस निर्णय का महत्व इसलिए है क्योंकि यह स्पष्ट करता है कि राज्य की शासन–व्यवस्था को किसी विशेष धर्म की राजनीतिक प्रधानता पर आधारित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार धर्मनिरपेक्षता केवल सरकार की नीति का विषय नहीं, बल्कि संवैधानिक सीमाओं और राज्य की वैधता से जुड़ा हुआ सिद्धांत है।

**धर्मनिरपेक्षता, राज्य की निष्पक्षता और धार्मिक स्वतंत्रता**

भारतीय धर्मनिरपेक्षता का विशिष्ट पक्ष यह है कि राज्य धार्मिक स्वतंत्रता को मान्यता देता है, लेकिन धार्मिक गतिविधियों से जुड़ी प्रत्येक गतिविधि को स्वतः राज्य के नियमन से मुक्त नहीं मानता। संविधान के अनुच्छेद 25 और 26 धार्मिक अधिकारों को सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य जैसी शर्तों के अधीन रखते हैं। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 25(2) राज्य को धार्मिक आचरण से संबंधित आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक या अन्य धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों के विनियमन तथा सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए कानून बनाने की अनुमति देता है। इस प्रकार धार्मिक स्वतंत्रता और राज्य के नियामक अधिकार के बीच संबंध को प्रत्येक मामले के संवैधानिक संदर्भ में समझना आवश्यक है। राज्य की निष्पक्षता का अर्थ यह भी है कि वह किसी व्यक्ति को केवल धार्मिक पहचान के कारण कमतर नागरिक न माने। साथ ही, निष्पक्षता के नाम पर धार्मिक स्वतंत्रता के वास्तविक प्रयोग को अनावश्यक रूप से बाधित करना भी संवैधानिक प्रश्न उत्पन्न कर सकता है।

**धर्मनिरपेक्षता से संबंधित प्रमुख न्यायिक निर्णय**

(क) केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)

इस निर्णय में संविधान की मूल संरचना का सिद्धांत प्रतिपादित हुआ। यह सिद्धांत धर्मनिरपेक्षता सहित संविधान के मूलभूत तत्वों की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

(ख) एस0 आर0 बोम्मई बनाम भारत संघ (1994)

इस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने धर्मनिरपेक्षता को संविधान की मूल संरचना का हिस्सा माना। यह निर्णय राज्य की धार्मिक निष्पक्षता और धर्म तथा राजनीतिक सत्ता के संवैधानिक संबंध को समझने में केंद्रीय महत्व रखता है।

(ग) एम0 इस्माइल फारुकी बनाम भारत संघ (1994)

इस मामले में धार्मिक स्वतंत्रता और राज्य की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति से संबंधित प्रश्नों पर विचार किया गया। इस निर्णय का अध्ययन धार्मिक आस्था, धार्मिक स्थलों और संवैधानिक संरक्षण के संबंध को समझने के लिए उपयोगी है। इन निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि धर्मनिरपेक्षता का न्यायिक संरक्षण संविधान के व्यापक ढाँचे का हिस्सा है, लेकिन प्रत्येक विवाद में संबंधित संवैधानिक प्रावधानों और मामले के तथ्यों का अलग से परीक्षण आवश्यक है।

**निष्कर्ष**

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता का उद्देश्य धार्मिक विविधता को समाप्त करना नहीं, बल्कि इस विविधता के बीच समान नागरिकता और संवैधानिक अधिकारों की रक्षा करना है। यह सिद्धांत राज्य को किसी विशेष धर्म के साथ संवैधानिक रूप से पक्षपातपूर्ण पहचान स्थापित करने से रोकता है तथा सभी व्यक्तियों को अपने धर्म और अंतःकरण के अनुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों से यह स्पष्ट होता है कि धर्मनिरपेक्षता भारतीय संविधान की मूल संरचना का महत्वपूर्ण तत्व है। इसके साथ ही धार्मिक स्वतंत्रता पूर्णतः निरंकुश अधिकार नहीं है, उसका प्रयोग संविधान में निर्धारित सीमाओं और अन्य मौलिक अधिकारों के साथ सामंजस्य में किया जाना चाहिए। अतः भारतीय धर्मनिरपेक्षता की वास्तविक सफलता केवल संवैधानिक प्रावधानों की उपस्थिति पर निर्भर नहीं करती, बल्कि इस बात पर भी निर्भर करती है कि विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका इन प्रावधानों को समानता, निष्पक्षता और संवैधानिक नैतिकता के अनुरूप किस प्रकार लागू करती हैं।

**संदर्भ सूची**


1. भारत का संविधान, विशेष रूप से प्रस्तावना तथा अनुच्छेद 14, 15, 16, 25–28
2. केषवानंद भारतीय बनाम केरल राज्य (1973) 4 ,ससीसी 225
3. एस–आर– बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) 3 ,ससीसी 1
4. एम. इस्माईल फारूकी बनाम भारत संघ (1994) 6 ,ससीसी 360
5. सर्वोच्च न्यायालय की आधिकारिक वेबसाइट पर उपलब्ध संविधान और संबंधित न्यायिक निर्णय।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 220-226
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# पावन माँ गंगा का मानव जीवन के विभिन्न आयामों में महत्व

**(The Importance of Holy Mother Ganga in Various Dimensions of Human Life)**

**डॉ.विनय कुमार श्रीवास्तव**
सेवानिवृत्त वरिष्ठ प्रवक्ता (शिक्षक कवि लेखक साहित्यकार समीक्षक एवं वरिष्ठ समाजसेवी)
पी.बी. कालेज प्रतापगढ़ (प्रयागराज मंडल,प्रयागराज) उ.प्र.-भारत

**लघु सारांश/Abstract**
माँ गंगा भारतीय संस्कृति, धर्म, साहित्य, विज्ञान और पर्यावरण की प्रतीक हैं। यह शोध पत्र गंगा के ऐतिहासिक, पौराणिक, औषधीय और सामाजिक महत्व का समग्र अध्ययन प्रस्तुत करता है। वेद, पुराण, लोकगीत, फिल्मी गीत और सरकारी रिपोर्टों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि गंगा केवल नदी नहीं, अपितु भारत की जीवन रेखा है। 'नमामि गंगे' जैसी सरकारी योजनाएं जन-चेतना के बिना अधूरी हैं। प्रस्तुत शोध में स्वरचित कविता के माध्यम से जनजागृति का प्रयास भी किया गया है।

**Keywords:** गंगा, नमामि गंगे, भारतीय संस्कृति, प्रदूषण, लोक साहित्य
विषय: माँ गंगा - आस्था, पर्यावरण और अस्तित्व का संगम

**प्रस्तावना :**

प्राचीन काल से ही हमारे ऋषियों,मुनियों और महाविद्वानों द्वारा रचा वेद पुराण,श्रुति और रिचाएँ हमारी पुरातन वैदिक सनातन धर्म संस्कृति का एक मजबूत आधार एवं स्तंभ के साथ ही साथ आधिकारिक और प्रामाणिक प्राचीन विशालतम सनातन हिन्दू परंपरा और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण उपयोगी व् शास्त्र संवत् ज्ञान,तर्क,कर्म,धर्म और संस्कार का समाज को मार्गदर्शन प्रदान करने वाला एक ऐतिहासिक उपयोगी ग्रंथ रूप में वेद पुराण ही रहा है। हमारा वेद ही तो सबसे प्राचीन परंपरा का ऐतिहासिक महत्व का विशेष द्योतक धर्म ग्रंथ है। "वैदिक काल से ही गंगा को सप्त नदियों में सर्वोपरि माना गया है। स्नान और पूजा में प्रथम पूज्य श्री गणेश जी और सपरिवार बाद शिवजी के उपरांत मुख्यतः माँ गंगा जी का ही स्मरण किया जाता रहा है और आज भी किया भी जाता है।

**माँ गंगा को भू पर लानें में भगीरथ का भागीरथ प्रयास -** अत्यंत प्राचीन पौराणिक कथाओं के अनुसार धरती पर माँ गंगा का अवतरण सूर्यवंशी महाराजा सगर के कुलीन वंशज रहे राजा भगीरथ के अत्यंत कठिन एवं कठोर जप और

तपस्या से ही ये संभव हो सका। यद्यपि कि इस अत्यंत पुरातन पौराणिक कथा से सभी धार्मिक,आध्यात्मिक लोग अवगत ही होंगे फिर भी इस प्रसंग का यहाँ एक बार जिक्र करना जरूरी है। गंगा अवतरण का प्रसंग इस प्रकार से है।

महाराजा सगर ने एक बार अश्वमेघ यज्ञ करने का विचार किया और अश्वमेध का एक घोड़ा छोड़ा था। वह घोड़ा देवराज इंद्र ने चुरा लिया और महान ऋषि कपिल मुनि के आश्रम में उसे छुपा दिया। महाराजा सगर के 60,000 पुत्रों ने घोड़े को ढूंढते-ढूंढते महर्षि कपिल मुनि के आश्रम तक जा पहुँचें तो वहाँ अश्वमेघ का ये घोड़ा बँधा देख कर सभी पुत्रों ने एक साथ आश्रम पर अपना धावा बोल दिया। इससे तपस्या में लीन महर्षि कपिल मुनि का ध्यान भंग हो गया तो वह अत्यंत क्रोधित हो गए। वो अपने ज्ञान और तपस्वी शक्तियों से बहुत बड़ा श्राप दे दिया। क्रोधित महर्षि कपिल मुनि के श्राप से ही महाराजा सगर के वो साठ हजार पुत्र वहीं के वहीं जल कर भस्म हो गए और राख की ढेर बन गए।
ऋषिवर के श्राप से भस्म अपने पूर्वजों की भटकती आत्मा को शांति प्रदान करने और उन्हें तारने के लिए ही महाराजा सगर के वंशज भागीरथ ने ब्रह्मलोक से गंगा जी को पृथ्वी पर लाने का दृढ़ संकल्प लिया। राजा भगीरथ ने वर्षों तक अत्यंत ही कठिन जप और तपस्या करना प्रारंभ कर दिया,जिससे प्रसन्न होकर ही भगवान ब्रह्मा जी गंगा माँ को पृथ्वी पर भेजने के लिए तैयार तो हो गए। किंतु गंगा के अति तीव्र वेग को केवल भगवान सदाशिव ही संभाल सकते हैं और कोई भी सक्षम ही नहीं है,ब्रह्मा जी ने महान तपस्वी भगीरथ से ये भी कहा। गंगा जी के अत्यधिक वेग से पृथ्वी के रसातल में चले जाने के भय से राजा भागीरथ ने तब भगवान भोलेनाथ शिवजी की स्तुति,वंदना,आराधना,प्रार्थना एवं अनुग्रह करते हुए सम्पूर्ण ध्यान शिवजी में केंद्रित कर उनका ही नमन करने लगे। ब्रह्मा जी जब अपने कमंडल से माँ गंगा जी को निकाल बाहर छोड़े तो हिमालय पर देवों के देव महादेव स्वयंभू भगवान शिवजी ने अपनी जटाओं में माँ गंगा के वेग को सुरक्षित रूप से समेट लिया और फिर एक शांत धारा के रूप में वह उन्हें एक जटा खोल का पृथ्वी पर प्रवाहित किया।
(।।)- वेद, पुराण, श्रुति, ऋचाओं, बाल्मीकि रामायण, श्रीरामचरितमानस व् साहित्य में माँ गंगा का वर्णन।
रामायण काल के एक प्रसंग से भी माँ गंगा को यहाँ पर जोड़ना एकदम सही है। वो प्रसंग इस प्रकार है।

माता कैकयी को महाराजा दशरथ द्वारा दिया गया तीन वरदान और पिता के वचनों के निर्वहन हेतु श्रीराम प्रभु का राज महली राजसी ठाठ त्याग कर श्रीराम-माता जानकी और अनुज लक्ष्मण के साथ वनवासी वेष भूषा में पिता का आशीर्वाद लेने वनवास जाते समय वे चरण छूने गए और वह तीनों वन गमन को निकल गए। उस समय अयोध्या के सभी नर नारी अश्रुपूर्ण आँखों,दुःखी मन से बहुत दूर तक रोते विलाप करते उनके पीछे पैदल चलते उन्हें विदा करने गए।

श्रीराम जी वनगमन करते जब श्रृंगवेरपुर पहुँचे तब निषादराज केवट ने उनका और माता सीता तथा लक्षण का पैर धोया और अपनी नाव पर बैठा कर उन्हें गंगा पार कराया है। ये सब प्रसंग महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित श्रीराम चरित मानस में उनके द्वारा लिखी चौपाइयों में उद्धरित हैं।

श्रीराम चरित मानस के अयोध्याकांड में वर्णित केवट-श्रीराम संवाद में भक्तवत्सल श्रीहरि विष्णु जी के अवतारी श्रीराम जी के प्रति ऐसी अगाध भक्ति,प्रेम और चेहरे पर झलकते हुए आत्मीय हास्य का एक अनोखा,अद्भुत,आकर्षक,हृदय को छू जाने वाला एक मधुरम संवाद का प्रसंग है। वह चौपाई इस प्रकार है।
"पाहन तें न काठ कठिनाई। तरनिउ मुनि घरिनी होइ जाइ।
बाट परइ मोरि नाव उड़ाई। बहइ जनु पाटकहू तेहि धाई।।"

जहाँ निषाद राज केवट अपने विशेष बुद्धिमत्ता पूर्ण तर्क से प्रभु श्री राम जी का पैर पखार लिए बिना अपने निज काठ की नाव पर बैठाने के लिए तैयार नहीं होता है। उन्हें एक पैर पर ही खड़े रहने के लिए वह विवश कर देता है। मेरे निजी शब्दों में जिसका यह अर्थ है। निषादराज केवट श्री राम जी से कहता है—हे!नाथ हे!जगत के स्वामी मेरे प्रभु श्रीराम

जी मैं आपके चरण-कमल धोए बिना तो आपको अपनी नाव पर कभी नहीं चढ़ाऊँगा। हमने सुना है लोग ऐसा कहते हैं कि आपके चरणों की धूल में कोई जादुई जड़ी-बूटी है, जिसके छूते ही पत्थर की सिला भी एक सुंदर स्त्री बन गई थी। मेरी नाव तो सूखी लकड़ियों की बनी हुई है। काष्ठ तो पत्थर से अधिक कठोर बिल्कुल भी नहीं हो सकता है। यदि मेरी यह लकड़ी की छोटी सी नैय्या कहीं महर्षि गौतम मुनि जी की पत्नी (अहिल्या) की तरह तर गई और एक स्त्री बन गई तो हम क्या करेंगे ? तब तो मेरे जीवनयापन हेतु जरूरी मेरी ये रोजी-रोटी भी छिन जाएगी। इसलिए हे! प्रभु श्रीराम जी,जब तक मैं आपके पावन चरण-कमल को अच्छी तरह से धो न लूँ,मैं आपको अपनी नाव पर नहीं बैठाऊँगा। केवट के इस भाव, प्रेमपूर्ण आग्रह और मधुर हट को देखकर अंततः भगवान श्रीराम जी हँसते हुए निषादराज केवट की इस बात को दिल से सहर्ष स्वीकार किया,तभी जाकर कृपानिधान के सुकोमल कमलवत श्रीचरणों को प्रेम के साथ केवट ने धोया और अपनी नाव में आदर पूर्वक बैठा कर श्रृंगवेरपुर घाट से श्रीराम जी सीता मैया एवं लक्ष्मण भइया को पावन गंगा नदी पार करवाया है।

(।।।)- स्वतंत्रता आंदोलन और गंगा तट के तीर्थ नगर।

पावन माँ गंगा तट के विभिन्न तीर्थ नगर,बड़े कस्बे और शहर न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक आस्था के केंद्र ही नहीं रहे, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन के दौरान यह शहर राजनीतिक चेतना भी प्रदान किया,आंदोलनकारी रणनीतियों,वृहद क्रांतिकारी गतिविधियों और राष्ट्रीय एकता के प्रमुख गढ़ तथा केंद्र स्वरूप भी साबित हुए। इन पावन के किनारो/तटों ने हमारे देश को नई दिशा और अद्भुत ऊर्जा भी दी।

स्वराज भवन और आनंद भवन,प्रयागराज (इलाहाबाद) का शहर तो स्वतंत्रता संग्राम गतिविधियों का मुख्य केंद्र बिंदु था, जहाँ से देश के शीर्ष नेताओं ने बैठकें कर विशेष रणनीतियाँ बनाईं और उसपर सफलता पूर्वक कार्य भी किया। यहाँ से देश को पंडित जवाहरलाल नेहरू और इंदिरा गांधी जैसे महान शख्शियत और राजनीतिक गुरु तथा नेतृत्व करने वाले राजनेता मिले। गंगा-यमुना के इस पावन तट संगम पर क्रांतिकारियों के द्वारा अनगिनत जनसभाएँ की गईं,जिन्होंने जनता में देशभक्ति की राष्ट्रीय भावना की एक अलख जगाई और जन मानस के अंदर एक उत्साहवर्धक जागृति उत्पन्न करने का सफल कार्य किया। हमारी प्राचीन नगरी (काशी/वाराणसी में) पंडित मदन मोहन मालवीय जी द्वारा स्थापित किया एशिया का सब से बड़ा शिक्षण संस्थान बनारस हिंदू विश्वविद्यालय जिसे (बीएचयू) के नाम से दुनिया जानती है। ये राष्ट्रवादी सोच और बौद्धिक क्रांति का एक विशाल केंद्र बना। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इस प्राचीन तीर्थ नगर का कई बार दौरा किया एवं यहाँ के युवाओं को स्वाधीनता संग्राम आंदोलन से जोड़ा। इसका युवाओं पर बहुत सुंदर प्रभाव भी पड़ा। गुप्त बैठकों और आंदोलनों के संचालन में गंगा नदी के घाटों के आसपास का सनातनी और सामाजिक परिवेश काफी मददगार रहा। इन गंगा घाटों की कांतिकारी जन आंदोलन में भी बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका रही। हरिद्वार और ऋषिकेश जैसे अनेक आध्यात्मिक और धार्मिक पुरातन नगरों के संतों महात्माओं ने देश के स्वाधीनता सेनानियों को नैतिक बल और वैचारिक मंथन करने हेतु सजग किया और उनके अंदर अदम्य शौर्य-साहस भरने के साथ ही साथ वे उनको विशेष कार्यकारी प्रेरणा भी प्रदान किया। विभिन्न क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश दमन चक्र से बचने के लिए गंगा नदी के इन तटीय इलाकों और पर्वतीय क्षेत्रों में उस समय गुप्त शरण भी ली थी। इसी तरह माँ गंगा नदी के अन्य तटीय क्षेत्रों एवं स्थानों में बसे चुनार और फतेहपुर जैसे ऐतिहासिक क्षेत्रों में भी स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों ने अंग्रेजों के खिलाफ एक बड़ा कड़ा संघर्ष किया और अपने प्राणों की आहुतियाँ दी। प्रतापगढ़ जिले के मानिकपुर-कालाकांकर किले का भी स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन में एक महत्वपूर्ण भूमिका रही रही हैं। यहाँ विदेशी वस्त्रों की होली जला कर ब्रिटिशों के खिलाफ स्वाधीनता प्राप्ति हेतु विभिन्न सार्थक सहयोग किया गया था। इस प्रकार कितने भारतीय सपूतों ने

भारत की आजादी के लिए वीर क्रांतिकारियों ने फाँसी पर चढ़ हँसते-हँसते अपने प्राण न्यौछावर कर दिए और स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों ने अपने सर्वोच्च बलिदान से इतिहास रच दिया। माँ गंगा के निर्मल अविरल प्रवाह ने हर दौर में भारतीयों को सदा एकजुट होने और अपनी संस्कृति व स्वतंत्रता की रक्षा करने का संदेश दिया। इस जनक्रांति से सांस्कृतिक चेतना के हुए जागरण के कारण ही आज 15 अगस्त 1947 से अनवरत आजादी का राष्ट्रीय महापर्व मनाया जा रहा है। इसमें गंगा नदी के तटीय क्षेत्रों के विभिन्न शहरों,युवाओ,क्रांतिकारियों और बलिदानियों का एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक योगदान रहा है,जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता।

**वैज्ञानिक, औषधीय, भौगोलिक और पारिस्थितिक महत्व**

(I)- उद्गम से डेल्टा तक का वृहद जल मार्ग: गंगोत्री से गंगा सागर तक।

पावन माँ गंगा का न केवल एक बड़ा आध्यात्मिक,सांस्कृतिक,पौराणिक,धार्मिक,ऐतिहासिक और औषधीय महत्व है बल्कि मानव जीवन में बहुत बड़ा वैज्ञानिक महत्व भी है। आधुनिक विज्ञान ने भी माँ गंगा की महिमा और उसकी सुचिता को हृदय से स्वीकार किया है।

विभिन्न वैज्ञानिकों ने गंगा के विशेष निर्मल जल पर अत्यधिक गहराई के साथ किए गए अपने वृहद गहन शोध, अध्ययन,अन्वेषण और विश्लेषण में बड़ा आश्चर्यजनक अद्भुत,परोपकारी,गुणकारी,लाभकारी,अत्यंत चमत्कारिक और सकारात्मक परिणाम पाया है। वैज्ञानिकों के अनुसार गंगा जल में "बैक्टीरियोफेज" नामक सूक्ष्म जीवाणु पाए जाते हैं जो जल से हानिकारक रोगाणुओं को नष्ट कर देते हैं। इसी कारण से गंगा जल को विशुद्ध माना गया। माँ गंगा का जल वर्षों तक रखने पर भी वह न तो खराब होता है और ना ही उसकी निर्मलता और शुद्धता में कोई कमी आती है यहाँ तक कि गंगा जल के इस श्वेत रंग में भी कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता है। इसे गंगा की स्वयं शुद्धिकरण क्षमता भी आप कह सकते हैं। पवित्र गंगा नदी में ही नियमित स्नान करते रहने से विभिन्न चर्म रोग,वात रोग,पित्त रोग और कफ रोग का भी शमन होता है और उसमें बहुत आराम भी मिलता है।

चूँकि गंगा नदी हिमालय के गंगोत्री से निकल कर देवप्रयाग होते हुए बंगाल की खाड़ी तक की पावन गंगा नदी की यात्रा 2525 किलोमीटर की दूरी तय करते हुए बहने वाली यह नदी भारत के 11 राज्यों और 40 करोड़ से अधिक लोगों के जीवन से ये सीधे जुड़ी हुई है जो विभिन्न पहाड़ों,झरनों से यह बहती हुई भारत की सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण ये गंगा नदी विभिन्न आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों और गंधक जैसे गर्म जल श्रोतों के गर्म जल आदि पर भी कहीं न कहीं अपनी विशेष कृपा बरसाती हुई विशाल जल धारा भारतीय मैदानी इलाकों में आती है। इसलिए माँ गंगा के जल में अनेक औषधीय गुणों के कारण उसके स्पर्श स्नान से भी अनेक रोग ठीक हो जाते हैं। जब माँ गंगा में निरंतर स्नान किया जाता है तो सौभाग्य तो प्राप्त होता ही है हृदय भी प्रसन्न होता तथा अंतर्मन और शरीर भी शुद्ध हो जाता है। ये गंगा केवल जलधारा मात्र नहीं है बल्कि हमारी सभ्यता,संस्कृति और आस्था की पुण्य धुरी भी है। यहाँ भी माँ गंगा के विशेष जल की गुणवत्ता,महत्ता और उसकी उपयोगिता स्वयं सिद्ध हो जाती है।

(II)- गंगा बेसिन, सभ्यता विकास और कृषि पर प्रभाव।

वेद काल में ही पावन गंगा नदी को अति पवित्र और जीवनदायिनी माँ गंगा के रूप में माना गया है।

अर्थात मानव जीवन में पावन माँ गंगा का महत्व केवल एक नदी जलधारा मात्र रूप में नहीं है,बल्कि भारतीय संस्कृति,सभ्यता,आस्था और जीवन के आधार के रूप में प्राचीन काल से ही ये संस्थापित है। कल-कल करती बहती ये अविरल प्रवाहमान सरिता (गंगा नदी) के किनारे किनारे बसे लोगों में सभ्यता का विकास भी करने में अति सहायक रही हैं,जिसका उदाहरण हड़प्पा और सिंधु घाटी की सभ्यता का विकास तो है ही इसी के साथ यह नदी करोड़ों घरों के

लोगों को जीवन देने के साथ-साथ पीने का जल और जीविकोपार्जन का उन्हें और उनके परिवारों को एक वृहद संसाधन भी प्रदान करती है। गंगा का मैदानी इलाका तो भारत के सबसे उपजाऊ क्षेत्रों में से एक माना जाता है,जो कृषि-किसानों को उनकी आय को बढ़ाने में सर्वदा सहायक सिद्ध होती रही है,उन्हें अन्न और भोजन भी उपलब्ध कराती है। यह नदी उन्हें अधिक प्रगति करने तथा आर्थिक रूप से मजबूत एवं सुदृढ़ करने में भी सहायक होती है और बढ़ावा देती है। इससे न जाने कितने परिवारों का गुजर बसर होरहा है और वे अपने उपलब्धि से खुशहाल एवं सुखी भी हैं।

(III)- जैव विविधता: गंगा डॉल्फिन, कछुए, जलजीव एवं मत्स्य संपदा।

गंगा नदी अन्य बड़ी नदियों की ही तरह जैव विविधता का भी एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। इसमें गंगा डॉल्फिन जैसी मछलियों के साथ ही साथ कछुओ, जलजीवों और अपार मत्स्य संपदा की बहुतायत है। विशाल गंगा नदी और अन्य नदियों की इस संपदा का भी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है।

**आध्यात्मिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक आयाम**

(I)- आस्था, तीर्थयात्रा, मेला: विभिन्न कुंभ, छठ पर्व।

आज भी हर गंगा तटीय क्षेत्रों में दैनिक मेले तो लगते ही हैं विशेष पर्वों पर काफी विशाल मेला लगता है,

लोग गंगा स्नान,गंगा पूजा और सूर्य को अर्घ्य प्रदान करते हैं। छठ पर्व तो बहुत वृहद रूप में मनाते हैं।

(II)- लोक जीवन, लोक संस्कृति, लोकगीत और लोक कला में माँ गंगा।

मनोकामना पूर्ति की अपेक्षा का महिलाओं द्वारा गाए जाने वाला एक प्रचलित गीत का तो विशेष अवलोकन करने की भी यहाँ नितांत आवश्यकता है,जिसे आप बहुतों ने कहीं न कहीं कभी तो जरूर ही सुना भी होगा।

वह भोजपुरी गीत  इस प्रकार है।

"हे! गंगा मइया तोहें चुनरी चढ़ईबै,गोदिया मा अईहैं जब ललनवा हो रामा.....।"

वर्ष 1963 में आई पहली भोजपुरी फिल्म 'गंगा मैया तोहें पियरी चढ़इबो' का है, इसे गीतकार शैलेन्द्र जी ने लिखा और स्वरकोकिला लता मंगेशकर जी और ऊषा मंगेशकर जी ने मधुर कर्णप्रिय आवाज में गाया तथा संगीतकार चित्रगुप्त जी ने इसे संगीतबद्ध किया था।

इसी तरह एक गीत और पारंपरिक अवधी कजरी/भोजपुरी लोकगीत में गंगा माँ से प्रार्थना करती हुई ग्रामीण महिलाएँ गाती हैं जब गंगा मैया बरसात में फाफी बढ़ी हुई होती हैं और आस पास के सभी इलाके जलमग्न होते हैं। वह गीत कुछ इस प्रकार से है। "गंगा पाँच मिनट घट जातू,भौजी मोरी नइहर जइहैं ना.....।"

यद्यपि कि इस प्राचीन पारंपरिक लोकगीत का इसके किसी एक मूल रचयिता, आधुनिक गायक या गायक कलाकार/संगीतकार का नाम अस्पष्ट रूप से तय नहीं है, क्योंकि इसे पीढ़ियों से ग्रामीण अंचलों में महिलाएँ खुद गाती चली आ रही हैं। विधा कजरी का ये एक लोकप्रिय लोकगीत है,जो सावन के महीने में विशेष रूप से महिलाओं द्वारा झूला झूलते हुए भी गाया जाता है। यह ग्रामीण अवधी क्षेत्र की एक ऐसी महान लोक कला परंपरा का भोजपुरी/अवधी गीत है जिसे माँ गंगा एक प्रार्थना के रूप में गाया जाता है। ये भारतीय लोक गीत परंपरा की ही महान देन है, जो मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँची है।

पावन गंगा मैया के महत्व आदि के संदर्भ में मेरी एक स्वरचित कविता है  **पावन माँ गंगा ही जीवन नैया**

पतित पावनी माँ गंगा मैया,करती सदा जगत उद्धार। .....

प्रेरणा स्रोत रही है हमारी,माँ गंगा की पावन धारा।।

(III)- विभिन्न पावन गंगा तटों पर वृहद शंख नाद एवं घंटों ध्वनि संग गंगा आरती।

गंगा नदी का पूजन,भजन,गुणगान,आरती, प्रासाद आदि वास्तव में पावन गंगा मैया के रूप में समस्त प्रसिद्ध तटों पर काशी क्षेत्र,वाराणसी,हरिद्वार,प्रयागराज संगम आदि क्षेत्रों में निशदिन संध्या बेला में बहुत ही सुंदर मनोहारी रूप में घंटों,घड़ियालों,दुंदुभी,शंखध्वनि और विभिन्न वाद्य यंत्रों के साथ होता है। इसे देख सुनकर मानस पटल पर अपार भक्ति का अमिट छाप तो बनती ही है,अंतर्मन में एक धार्मिक उत्साह का प्रवाह भी गुंजारित होता है तथा हृदय को आनंदित और अत्यंत भाव विभोर भी कर देता है। कितना अदभुत ,अनुपम और सुखद लगता है जो सनातन धर्म, संस्कृति और आस्था को बल और अटूट विश्वास प्रदान करता है।

(lv)- गंगा की स्त्री रूप में मान्यता और एक "माँ" की अवधारणा।

**संकट और चुनौतियाँ**

(I)- प्रदूषण के स्रोत : घरेलू, नगरीय, औद्योगिक, धार्मिक अपशिष्ट।

(II)- विभिन्न बाँध, बैराज और जल प्रवाह में कमी।

(III)- प्लास्टिक, कचरा, अतिक्रमण अवरोध और जलवायु परिवर्तन का प्रभाव।

**संरक्षण प्रयास और गंगा का भविष्य**

(I)- नमामि गंगे मिशन, गंगा एक्ट, NGT के आदेश।

(II) - सामुदायिक भागीदारी: गंगा प्रहरी, गंगा भक्तों, एनजीओज़ ( NGO) की भूमिका।

(III)- सतत प्रयास मॉडल : इको-टूरिज्म, जैविक खेती, स्वच्छता।

**रोकथाम की आवश्यकता**

विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों शोधों से पता चला है कि गर्मियों के दौरान मैदानी इलाकों में गंगा के प्रवाह को बनाए रखने में ग्लेशियर के पिघलने की तुलना में भूजल प्रणाली (Aquifers) की भूमिका सबसे अहम है।

नगरीय क्षेत्रों से निकलने वाला अनुपचारित सीवेज (Sewage) और औद्योगिक अपशिष्ट जल नदी में प्रदूषण का 75% से अधिक हिस्सा बढ़ा रहे हैं। अर्थात जल प्रदूषण का मुख्य श्रोत बन गए हैं। वाराणसी और कानपुर जैसे प्रमुख केंद्रों के पास नदी के तलछट और जल में भारी धातुएं (Heavy Metals) तथा कार्बनिक प्रदूषक तत्व खतरनाक स्तर तक पाए गए हैं। इससे जल प्रदूषण अत्यधिक मात्रा में बढ़ता जा रहा है। भूगर्भ जल की अत्यधिक जल निकासी और सहायक नदियों की उपेक्षा के कारण भी गंगा की 'अविच्छिन्न धारा' (Aviral Dhara) प्रभावित हुई है, जिससे जलीय जैव विविधता पर भी भारी संकट मंडरा रहा है। अतः सुधार और इसे रोकने की नितांत आवश्यकता ताकि गंगा जलधारा का अविरल प्रवाह बना रहे । यह पावन सरिता नदी माँ गंगा निरंतर प्रवाहमान बनी रह सके। आएँ हम सब मिल कर दिल से ये संकल्प लें कि गंगा मइया को स्वच्छ, पावन बनाए रखने में घर-घर अपना व्यक्तिगत योगदान देंगे। इसे मैली नहीं होने देंगे।

**निष्कर्ष -** गंगा का संकट केवल पर्यावरणीय नहीं है, बल्कि यह हमारी सांस्कृतिक चेतना का भी विशाल संकट है। यह विभिन्न विश्वविद्यालयों (जैसे दिल्ली, लखनऊ, देहरादून/रुड़की, वाराणसी, इलाहाबाद इत्यादि और साथ ही साथ आईआईटी संस्थानों द्वारा गंगा नदी पर किए गए संयुक्त व स्वतंत्र शोधों में यह निष्कर्ष सामने आया है कि नदी का प्रवाह मुख्य रूप से भूजल रिसाव (Groundwater Discharge) पर निर्भर करता है, और इसका जल शहरी क्षेत्रों व औद्योगिक कचरे के कारण अत्यधिक प्रदूषित हो रहा है। इसे जन सामान्य के निजी सहयोग और विभिन्न कार्यदायी संस्थाओं एवं स्वायत्तशासी सेवा संगठनों के विशेष मानवीय प्रयासों और सख्त सरकारी कानून, जागरूकता, आस्था, विज्ञान , जनजागरण और जनभागीदारी के भी सम्मिलित समन्वय और शुचि प्रयास से ही "अविरल और निर्मल पावन माँ गंगा"

का लक्ष्य अवश्य प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए अभी संपूर्ण समाज के दिली प्रयासों ,आंतरिक प्रबल इच्छाशक्ति और उन्नत वैचारिक सोच को विकसित करने की भी नितांत आवश्यकता है ताकि महत्वपूर्ण अपेक्षित लक्ष्य को आसानी से प्राप्त किया जा सके और गंगा माँ की पावनता, निर्मलता, स्वच्छता, अविरल प्रवाहमान धारा के रूप में कल कल करती और बहती देखी जा सके। वह भी न केवल किसी एक क्षेत्र विशेष में बल्कि गंगा नदी के किनारे के सभी नगरों एवं घाटों तथा गंगोत्री से गंगासागर के बीच पड़ने वाले संपूर्ण रास्तों में मोक्षदायिनी ,पापनाशिनी, जगतरिणी गंगा नदी और उसकी पावन जलधारा की एकरूपता दिखाई पड़े।

अनोखा,अद्भुत,आकर्षक,हृदय जय माँ गंगा ! जय माँ गंगा ! जय माँ गंगा ! जय माँ गंगा ! जय माँ गंगा ! तेरी सर्वदा जय हो! माँ।

**10- संदर्भ ग्रंथ / References** -( APA 7th)


**1. प्राथमिक स्रोत / Primary Sources**

I. Rigveda_. (2015). (Gita Press, Trans.). Gita Press Gorakhpur. (Original work ca. 1500 BCE)

II. Tulsidas. (2018). _Shri Ramcharitmanas_ (Gita Press, Trans.). Gita Press Gorakhpur.

III. Valmiki. (2020). _The Ramayana_ (Gita Press, Trans.). Gita Press Gorakhpur. (Original work ca. 500 BCE)

IV. Vyasa. (2019). _The Vishnu Purana_ (Gita Press, Trans.). Gita Press Gorakhpur.

**2. सरकारी रिपोर्ट एवं दस्तावेज़ / Government Reports**

I. Central Pollution Control Board. (2024). _Ganga water quality report 2024_. Ministry of Environment, Forest and Climate Change. https://cpcb.nic.in

II. National Mission for Clean Ganga. (2024). _Namami Gange Mission: Progress Report_. Ministry of Jal Shakti, Govt. of India. https://nmcg.nic.in

**3. पुस्तकें / Books -**(I)-Sen, S. (2019). _Ganga: The many pasts of a river_. Yale University Press.

**4. लोक साहित्य, संगीत एवं फिल्म / Folk Literature, Music & Cinema**

(I)-Lyrics: Anjaan (1978). Ganga Ki Saugandh, "Maano to main Ganga Maa hun...." (Song) Singer: Lata Mangeshkar, Music : Kalyanji-Anandji (Saregama India Ltd.) ,

(II)-Lyrics: Shailendra (1963) Ganga maiya tohe piyari chadhaibo, "He Ganga Maiya tohe Piyari chadhaibo....."(Song) Singers: Lata Mangeshkar & Usha Mangeshkar, Music : Chitragupta ji

(III)-Lok Sanskriti Shodh Sansthan. (2015). _Bhojpuri lokgeet sangrah_(Collection of Bhojpuri folk songs)

**5. अप्रकाशित स्रोत / Unpublished Source -** Srivastava, Dr.V. K. (2026). _"Pawan Maa Ganga hi Jeevan Naiya"_ [Original Hindi Poem]. Unpublished manuscript. © Author



संपर्क मोबाइल: 9415350596 ई-मेल: dr.vinaykumarsrivastavpbh@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 227-231
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# "यशपाल के उपन्यासों में राजनीतिक चिंतन एवं विश्लेषण"

**तेज प्रकाश जोशी**
शोध छात्र, हिंदी विभाग,
सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

**शोध सारांशः**—हिंदी साहित्य के विराट लेखकीय मंच पर यशपाल का आगमन प्रगतिवाद के स्तंभ लेखक के रूप में कीर्तिमान है। प्रेमचंद के बाद हिंदी कथाकारों की अवलि में क्रांतिकारी विचारों का समृद्ध व्यक्तित्व 'यशपाल' के रूप में हमें देखने को मिलता है। जो कल्पना नहीं बल्कि यथार्थ की भावभूमि में उतरकर समाज में समता और न्याय की प्रतिष्ठापना करते हैं। उन्होंने विशेषतः राष्ट्रीय स्वाधीनता, देश—विभाजन, व्यक्तिगत स्वातंत्र्य, मजदूर व किसानों से जुड़े आंदोलन, नारी—चेतना, राजनीतिक क्रांति एवं चिंतन, को साहित्य का लक्ष्य बनाया। यशपाल के रचना कर्म की श्रृंखला अत्यधिक विस्तृत है। जिसमें कहानी व उपन्यास विधा आधारित लेखन बहुत महत्वपूर्ण है। जो समय—समय पर प्रकाशित होते रहे हैं।इनकी रचनाएँ स्वतंत्रता से पूर्व तथा स्वातंत्र्योत्तर भारत की समकालीन परिस्थितियों पर गहन प्रकाश डालती हैं। लेखक ने विभिन्न राजनीतिक संगठनों एवं वर्गों के संघर्ष को उनकी उत्कट बलिदानी भावना के रूप में सप्रमाण प्रस्तुत किया है। वह प्रेमचंद की परंपरा के ध्वजवाहक श्रेष्ठ कथाकार हैं। उन्होंने अपनी मेधा से यथार्थपरक चिंतन धारा को देश एवं समाज के लिए गहरे भाव—बोध से सींचा है। इनके कुल बारह उपन्यास प्रकाशित हैं; तथा उपन्यासों में राजनीतिक वस्तु का व्यापक चित्रण दिखाई देता है। उनकी दृष्टि में राजनीति, समाज की शासन—व्यवस्था तक सीमित गतिविधि नहीं है। अपितु सत्ता, स्वतंत्रता, अधिकार, सामाजिक न्याय, वैचारिक संघर्ष, जन—आंदोलन तथा नागरिक जीवन से जुड़े अनेक प्रश्न इसके दायरे में आते हैं। साहित्यकार जब अपने समय की सामाजिक हलचलों को कथा में स्थान देता है, तब राजनीतिक परिस्थितियाँ पात्रों के निर्णय, संबंधों और जीवन—संघर्षों के भीतर स्वाभाविक रूप से प्रवेश करती हैं। यशपाल ऐसे उपन्यासकार हैं जिनकी रचनात्मक चेतना भारतीय इतिहास के अनेक निर्णायक राजनीतिक प्रसंगों से जुड़ी रही है। स्वतंत्रता आंदोलन, औपनिवेशिक दमन, क्रांतिकारी गतिविधियाँ, वर्गीय चेतना, देश—विभाजन, सांप्रदायिक तनाव और स्वतंत्रता के बाद बदलती सत्ता—संरचना उनके कथा—संसार को महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक आधार प्रदान करती है।

**कूट शब्दः—** वर्चस्व, सांप्रदायिक, साम्यवादी, औपनिवेशिक, गणपरिषद, सामुदायिक, निरंकुशता, औपन्यासिक,

**प्रस्तावनाः—** यशपाल के उपन्यासों में राजनीतिक जीवन, वैचारिक सक्रियता और परिवर्तन की आकांक्षा के साथ उभरता है। 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'गीता', 'झूठा—सच','बारह घंटे तथा 'मेरी तेरी उसकी बात' जैसी कृतियों में क्रांतिकारी संगठन, कांग्रेस, साम्यवादी विचारधारा, जनसंघर्ष, औपनिवेशिक कानून, पुलिस—दमन और विभाजनकालीन राजनीति कथा की आंतरिक संरचना से जुड़े हैं। 'गीता' में आंदोलनकारियों की उपेक्षा, राजनीतिक नेतृत्व की अवसरवादी प्रवृत्तियों तथा मजदूरों की भागीदारी के प्रसंग इस चेतना को स्पष्ट करते हैं। 'अमिता', 'दिव्या' और 'अप्सरा का शाप' में सत्ता, राजव्यवस्था, न्याय तथा शासकीय वर्चस्व ऐतिहासिक परिवेश के माध्यम से सामने आते हैं। यशपाल के उपन्यासों में राजनीति का स्वरूप सत्ता, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, आर्थिक अधिकार, औपनिवेशिक शासन, जन—आंदोलन और

सामुदायिक संबंधों से जुड़कर विकसित हुआ है। यशपाल राजनीतिक गतिविधियों को नेताओं और संगठनों की सीमा में नहीं रखते, अपितु यह देखते हैं कि शासन की नीतियाँ और वैचारिक संघर्ष सामान्य व्यक्ति के जीवन को किस स्तर तक प्रभावित करते हैं। 'देशद्रोही' में औपनिवेशिक सत्ता, पुलिस–दमन और कांग्रेस आंदोलन, 'गीता' में साम्यवादी विचारधारा तथा मजदूर संगठन, 'मेरी तेरी उसकी बात' में रॉलेट एक्ट और स्वतंत्रता संघर्ष की विभिन्न धाराएँ राजनीतिक चेतना को ऐतिहासिक आधार प्रदान करती हैं। 'दिव्या' में न्याय और शक्तिशाली वर्ग के संबंध, 'अमिता' में राजसत्ता और प्रजा के हितों का टकराव तथा 'अप्सरा का शाप' में स्थापित शासन–व्यवस्था के प्रति असहमति राजनीतिक वस्तु को प्राचीन परिवेश से जोड़ती है। 'झूठा सच' में स्वतंत्रता और विभाजन के दौर की दलगत अस्थिरता तथा सांप्रदायिक राजनीति सामाजिक संबंधों को प्रभावित करती है। 'मनुष्य के रूप' में कानून और पुलिस का भय तथा 'क्यों फँसे' में चुनावी हितों से प्रभावित शासन–नीति स्वतंत्रता के बाद भी सत्ता और जनहित के बीच बनी दूरी को रेखांकित करती है।'बारह घंटे' प्रशासनिक सहायता और प्रभावशाली संपर्क के संबंध को उजागर करता है। यशपाल की दृष्टि में राजनीति क्रांति, वर्ग–संघर्ष, विचारधारा और सत्ता–संरचना के प्रश्नों से अधिक गहराई से जुड़ती है।

**यशपाल के उपन्यासों में राजनीति का विवेचन**

यशपाल के उपन्यासों में राजनीति जीवन से अलग कोई बाहरी गतिविधि नहीं, बल्कि मनुष्य की स्वतंत्रता, सामाजिक स्थिति, आर्थिक अधिकार, वर्गीय चेतना और राज्य–सत्ता से उसके संबंध को प्रभावित करने वाली सक्रिय शक्ति के रूप में उपस्थित होती है। उनके कथा–संसार में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष से लेकर साम्यवादी विचारधारा, क्रांतिकारी आंदोलन, कांग्रेस की नीतियाँ, राज्य का दमन, चुनावी राजनीति, सांप्रदायिक विभाजन और सत्ता–संचालित न्याय तक अनेक राजनीतिक स्थितियाँ दिखाई देती हैं। **''भारत की राजनीतिक–चेतना के विकास की क्रमबद्ध कहानी को एक–परिवार और उसकी दो–पीढ़ियों की कहानी के समानान्तर, दोनों को बिम्ब–प्रतिबिम्ब प्रभावी पद्धति पर प्रस्तुत उपन्यासों में यशपाल ने इस प्रकार प्रस्तुत किया कि सामाजिक और राजनीतिक–दायित्वों का निर्वाह राष्ट्रीय चरित्रों में होता है।''**[1] 'यशपाल के कथा–साहित्य में राजनीतिक चेतना अधिक सक्रिय और विचारप्रधान रूप में सामने आती है। 'दादा कामरेड' में क्रांतिकारी संघर्ष के साथ आर्थिक समानता का प्रश्न जुड़ा है। यह विचार राजनीतिक शक्ति और आर्थिक स्वामित्व के पारस्परिक संबंध को उद्घाटित करता है। 'दादा कामरेड' में राजनीतिक चेतना को आर्थिक शक्ति से सीधे जोड़ा गया है। पात्र हरीश का कथन है, **''तुम चाहते हो, पहले राजनीतिक चेतना और बाद में आर्थिक माँग! यह हो कैसे सकता है? जिसके हाथ में आर्थिक साधन हैं, वही राजनीतिक शक्ति का मालिक होगा।''**[2] 'यह विचार यशपाल की राजनीति को समझने के लिए विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि उनके यहाँ सत्ता परिवर्तन का प्रश्न सामाजिक संरचना से अलग नहीं है। क्रांतिकारी आंदोलन तभी सार्थक माना जाता है जब वह श्रमिक, किसान और साधनविहीन समुदायों के जीवन में वास्तविक परिवर्तन ला सके। 'गीता' में यही राजनीतिक चेतना संगठित मजदूर आंदोलन और साम्राज्यवाद–विरोध के रूप में व्यक्त होती है। लाल झंडों के साथ निकलती टोली के नारे हैं, **''इंकलाब जिंदाबाद! साम्राज्यवाद का नाश हो! अंग्रेजी राज का नाश हो! सरमायादारी का नाश हो! हिंदू–मुस्लिम भाई–भाई!''**[3] 'इस दृश्य में स्वतंत्रता की माँग सामाजिक समानता और सांप्रदायिक एकता से जुड़ जाती है। यशपाल राजनीतिक आंदोलन की शक्ति को जनभागीदारी में देखते हैं, पर उसके भीतर अवसरवाद, प्रचार और नेतृत्व की दोहरी मानसिकता को भी छोड़ते नहीं हैं। 'गीता' में स्थानीय कांग्रेस नेताओं द्वारा 'जनयुग' की निंदा करने तथा उसे बेचने वाली कामरेड लड़कियों के विरुद्ध चरित्रगत दुष्प्रचार का उल्लेख बताता है कि वैचारिक संघर्ष कई बार व्यक्तिगत बदनामी और राजनीतिक प्रतिस्पर्धा में बदल जाता है।

औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध यशपाल की राजनीतिक दृष्टि का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष है। 'देशद्रोही' में शासन की दमनकारी संरचना सड़क, पुलिस, जेल और कानून के माध्यम से सामने आती है। वर्णन है, **''चाँदनी चौक में फव्वारे के पास लाठीबंद और हथियारबंद पुलिस तैनात थी। दो दिन से संध्या समय कांग्रेस इस स्थान पर कानून तोड़ती थी और सरकार होने वाले को गिरफ्तार कर लॉरियों में भर जेल रवाना कर देती थी।''**[4] 'यह दृश्य राजनीतिक संघर्ष की वास्तविक कीमत को उद्घाटित करता है। आंदोलनकारी विचार व्यक्त करते हैं तो सत्ता उसके सामने पुलिसबल और दंड विधान खड़ा करती है। इसी कृति में राजनीतिक हिंसा का विस्तार तब दिखाई देता है जब पुलिस पर ईंट–पत्थर फेंके जाने के बाद गोली चलाने का आदेश दे दिया जाता है। 'मेरी तेरी उसकी बात' में यही औपनिवेशिक दमन

ऐतिहासिक संदर्भों के साथ अधिक व्यापक रूप ग्रहण करता है। रॉलेट एक्ट की चर्चा करते हुए कहा गया है कि विदेशी सरकार ने क्रांतिकारी प्रयासों को दबाने के लिए **''इस कानून के अनुसार विरोधी या विद्रोही प्रयत्नों को दमन करने के लिए पुलिस अफसरों के अधिकार बहुत बढ़ा दिये गये।''**[5] 'इन प्रसंगों में यशपाल कांग्रेस के अहिंसात्मक आंदोलन और सशस्त्र क्रांति के बीच उपस्थित वैचारिक दूरी को भी पहचानते हैं। उनके लिए राजनीति किसी एक मार्ग की महिमा का विषय नहीं बनती वह विभिन्न प्रतिरोध–पद्धतियों, उनकी सीमाओं और जनता की प्रतिक्रियाओं से निर्मित जटिल ऐतिहासिक प्रक्रिया है।यशपाल का राजनीतिक चिंतन आधुनिक राष्ट्रीय आंदोलन तक सीमित नहीं है। 'दिव्या', 'अमिता' और 'अप्सरा का शाप' जैसी ऐतिहासिक रचनाओं में वे सत्ता, न्याय, राजकीय अधिकार और सामाजिक वर्चस्व की संरचनाओं को प्राचीन परिवेश में परखते हैं। 'दिव्या' में गणपरिषद् और धर्मस्थान के बीच न्याय की अवधारणा पर प्रश्न उठाते हुए कहा गया है, **''गणपरिषद् से सहायता पाकर जो न्याय मुझे धर्मस्थान से मिलेगा, उसके लिए मैं धर्मास्थान के सम्मुख आभारी न होऊँगा। वह न्याय नहीं, सबल का सम्मान मात्र होगा।''**[6] 'अमिता उपन्यास में बौद्धकालीन राजनीतिक जीवन का संवेदनात्मक यथार्थ चित्रण हुआ है। जो समाज में प्रदर्शित सत्ता आधारित शोषण को उद्घाटित करता है। यशपाल ने जनसामान्य के जीवन की आर्थिक विषमता व राजनीतिक सुरक्षा के पहलुओं को उभारने का प्रयास किया है। वहीं श्रमशील कामगार जनता का अपनी धरती अपने गाँव के प्रति जुड़ाव को रेखांकित किया है। प्रस्तुत अंश में शासन आधारित व्यवस्था की निरंकुशता के समक्ष ग्राम्य जन की भूमि,घर,,एवं आजीविका महत्वहीन सिद्ध हुई साथ ही राज्य की अव्यवस्था, अराजकता, व पतनोन्मुख राजव्यवस्था का विशद चित्रण हुआ है। यहाँ न्याय को निष्पक्ष व्यवस्था के रूप में देखने की धारणा तब कमजोर पड़ती है जब शक्ति और प्रतिष्ठा निर्णय को प्रभावित करने लगते हैं। 'अमिता' में राज्य–सत्ता की कठोरता ग्रामवासियों की भूमि और आजीविका के प्रश्न से जुड़ती है। ग्रामीणों की व्यथा है, **''राजपुरुष और सैनिक हमारा गाँव उजाड़ने का आदेश देते हैं। राजपुरुष कहते हैं, महासेनापति की ऐसी आज्ञा है। हमारी बस्ती की धरती पर एक महादुर्ग बनाया जायेगा, एक महाप्रासाद का निर्माण होगा।''**[7] 'सत्ता के लिए दुर्ग और राजप्रासाद राज्य की आवश्यकता हो सकते हैं, पर सामान्य प्रजा के लिए वही निर्णय घर, भूमि और जीविका के विनाश का कारण बनता है। 'अप्सरा का शाप' में शासन और ब्राह्मणवादी व्यवस्था के बीच संबंध पर असंतोष का स्वर मिलता है। विश्वामित्र ने देवताओं और ब्राह्मणों की व्यवस्था में पक्षपात देखकर **''नयी सृष्टि तथा नयी व्यवस्था की रचना का निश्चय कर लिया।''**[8] 'इन ऐतिहासिक रचनाओं से स्पष्ट होता है कि यशपाल राजनीति को समयविशेष की घटना न मानकर सत्ता और मनुष्य के बीच निरंतर चलने वाले संबंध के रूप में देखते हैं।

स्वतंत्रता और विभाजन के निकट आते समय यशपाल की राजनीतिक दृष्टि और अधिक जटिल हो जाती है। 'झूठा–सच' में कांग्रेस, मुस्लिम लीग, यूनियनिस्ट पार्टी, सत्ता–संतुलन, सांप्रदायिक राजनीति और विभाजन की आशंका एक–दूसरे से जुड़ती हैं। **'' 'झूठा–सच' मुख्यतः सामाजिक–राजनैतिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया यथार्थवादी उपन्यास है।''**[9] 'पंजाब की स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा गया है, **''उस समय पंजाब के मुख्यमंत्री सर खिजर की स्थिति डाँवाडोल थी। सन् 46 के चुनाव में पंजाब विधान सभा में लीग और कांग्रेस के सदस्यों की संख्या तो बढ़ गयी थी परन्तु यूनियनिस्ट पार्टी की संख्या घट गयी थी। वे कांग्रेस मेम्बरों की सहायता से ही शासन चला रहे थे। मुस्लिम लीग उनका मंत्रिमंडल तोड़ देने के प्रयत्नों में लगी हुई थी।''**[10] 'इस कथन में यशपाल उस राजनीतिक दृष्टि का समर्थन करते दिखाई देते हैं जो नागरिकता को धार्मिक पहचान से ऊपर रखती है। 'मनुष्य के रूप' में कानून और सत्ता का संबंध सामान्य व्यक्ति के भय से जुड़ता है। दरोगा कहता है, **''यहाँ का आदमी डरपोक नहीं है, बेवकूफ है.....तोप से नहीं डरता कानून से डरता है; क्योंकि कानून को समझता नहीं।''**[11] 'लेखक यशपाल ने भारत के राजनैतिक परिदृश्य को उद्घाटित करते हुए सत्ता की अवसरवादिता व चुनाव पर आरूढ़ मानसिकता के सत्य को उजागर किया है। यहाँ सरकार की स्वार्थपरता जनता की समस्याओं का समाधान करने के बदले चुनाव जीतने के लिए सस्ते व लोकप्रिय निर्णयों को लेने का उपक्रम करती दिखाई देती है। सरकार लोक हित की अपेक्षा राजसत्ता हथियाने का साधन बना लेती है। 'क्यों फँसें' औपन्यासिक रचना में चुनावी राजनीति की वास्तविकता, प्रशासनिक दबाव, जनहित की अनदेखी,पदलोलुपता एवं जनविरोधी विचारों पर करारा व्यंग्य किया है। यह कथन राजनीतिक व्यवस्था और जनता के बीच ज्ञान–संबंधी दूरी को सामने लाता है। कानून यदि नागरिक की समझ से बाहर रहे तो वह अधिकार की सुरक्षा के स्थान पर भय की संरचना बन सकता है। स्वतंत्रता के बाद की राजनीति पर भी यशपाल की

दृष्टि उतनी ही सजग रहती है। 'क्यों फँसे' में प्रशासनिक नीति और चुनावी स्वार्थ के बीच संबंध अत्यंत स्पष्ट रूप से सामने आता है। अन्न–वितरण की समस्या पर सरकारी अधिकारियों की बैठक में केंद्रीय सचिव कहता है, **''तत्काल प्रश्न है, आगामी चुनाव तक अन्न का मूल्य नीचा रखने का। मूल नीति पर चुनाव के पश्चात ही विचार का अवसर होगा।''**[12] 'यहाँ जनहित का प्रश्न दीर्घकालीन नीति से अधिक चुनाव की तात्कालिक आवश्यकता के अधीन हो जाता है। यह वही राजनीतिक चेतना है जो यशपाल के आरंभिक क्रांतिकारी उपन्यासों से आगे बढ़कर स्वतंत्र शासन की कार्यप्रणाली की भी आलोचना करती है। उनके कथा–साहित्य में राजनीति किसी एक दल, नेता या ऐतिहासिक काल की आलोचना तक सीमित नहीं रहती। 'दादा कामरेड' में आर्थिक साधनों और राजनीतिक शक्ति का संबंध, 'गीता' में साम्राज्यवाद–विरोध और मजदूर संगठन, 'देशद्रोही' में औपनिवेशिक दमन, 'मेरी तेरी उसकी बात' में स्वतंत्रता आंदोलन की विविध धाराएँ, 'दिव्या' में न्याय और शक्तिसंपन्न वर्ग, 'अमिता' में राज्य–सत्ता और प्रजा, 'अप्सरा का शाप' में स्थापित व्यवस्था के विरुद्ध असहमति, 'झूठा–सच' में विभाजनकालीन दलगत तथा सांप्रदायिक राजनीति, 'मनुष्य के रूप' में कानून का भय और 'क्यों फँसे' में चुनावोन्मुख शासन–नीति मिलकर यशपाल की राजनीतिक दृष्टि का विस्तृत स्वरूप निर्मित करते हैं।उनकी रचनात्मक चिंता बार–बार इस प्रश्न की ओर लौटती है कि सत्ता किसके हित में काम करती है, जनता की वास्तविक भागीदारी कितनी है और राजनीतिक स्वतंत्रता सामाजिक न्याय तथा मनुष्य की गरिमा में किस सीमा तक रूपांतरित हो पाती है। यशपाल ने नैनीताल समाचार पत्र के माध्यम से विभाजन के द्वौरान भारत के प्रांतों में चल रही राजनीतिक सक्रियता और तमाम हल–चलों के बीच मुस्लिम लींग व कांग्रेस के राजनीतिक द्वंद्व को उजागर किया है। देश विभाजन की पूर्व पीठिका के रूप में लाहौर में हिंदुओं को घरों से निकाले जाने के राजनीतिक षडयंत्र को भी रेखांकित किया गया है। तथा राजनीतिक दुष्चक्र में फँसे सत्य से परिचित कराया है।**''सूद जी के स्नेह अधिकार का सहारा पाकर पुरी ने संक्षेप में बता दिया वह अगस्त के आरम्भ में यू0 पी0 के एक पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी के आश्वासन पर नैनीताल और लखनऊ चला गया था। 12 अगस्त के दिन नैनीताल में था। बँटवारे के सम्बन्ध में काँग्रेस और लीग में समझौता हो जाने के कारण 10–11 अगस्त तक तो किसी को झगड़े की आशंका नही रही। 19 अगस्त को उसे नैनीताल में समाचार मिला कि लाहौर में शहर की चारदीवारी के भीतर से सब हिन्दुओं को निकाला जा रहा है।''**[13]

**निष्कर्षः–**'यशपाल के अधिकांश उपन्यासों में ब्रिटिश कालीन प्रशासनिक व्यवस्था तथा उनके अत्याचारी शासन की वास्तविकता को रेखांकित किया है। जिसे उनके उपन्यासों में वर्णित पात्रों के संवाद तथा जन आन्दोलनों की भावभूमि द्वारा सहज रूप से जाना जा सकता है। यशपाल प्रगतिशील कथाकार हैं। उनके उपन्यासों में राजनीति का अंकन व्यापक रूप में दिखाई देता है। समाज एवं राष्ट्र के लिए उनका समर्पण, व्यक्तिगत संघर्ष, समकालीन परिस्थितियाँ, एवं सामाजिक प्रतिबद्धता को प्रमुख कारण माना जा सकता है। उन्होने अपनी इन कृतियों में विशेष रूप से ग्रामीण, कस्बाई, नगरीय एवं महानगरीय समाज से जुड़ी राजनीतिक चेतना को उद्बुद्ध किया है। इनके उपन्यासों में वर्गीय आधार पर उच्चवर्ग, मध्यवर्ग एवं निम्न वर्ग की क्रियाशीलता को व्यापक रूप से व्यक्त होने का अवसर प्राप्त हुआ है। लेखक ने अंग्रेजी राजव्यवस्था से पूर्व तथा उनके समकालीन शासन व्यवस्था में स्त्री, मजदूर, किसान, तथा आम जनमानस के शोषण, दमन, व अधिकारों के हनन से संबद्ध घटनाओं का अंकन किया गया है। वहीं लोकतांत्रिक व्यवस्था में भ्रष्ट नेताओं की स्वार्थप्रेरित राजनीति एवं दोहरे मापदंडों का यथार्थ चित्रण किया गया है। भारत–पाक विभाजन के दौरान नेताओं की राजनीतिक आकांक्षा, स्वार्थपरता एवं षडयंत्र को भी देश–समाज के सामने लाने का सराहनीय प्रयास किया गया है।

**संदर्भ सूचीः–**


1. हिन्दी उपन्यास : उत्तरशती की उपलब्धियाँ, डॉ. विवेकी राय, पृ. 39
2. यशपाल,(2007),यशपाल रचनावली (खण्ड–1,'दादा कामरेड'),इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन, पृ.101
3. वही; वही; 'गीता', पृ. 403
4. वही; वही; 'देशद्रोही', पृ. 160
5. यशपाल, (खण्ड– 6, 'मेरी तेरी उसकी बात' ),पृ. 25
6. यशपाल, (खण्ड– 2, 'दिव्या'), पृ. 29
7. वही; वही;' अमिता', पृ. 169

8. वही; वही; 'अप्सरा का शाप', पृ. 333
9. हिन्दी उपन्यास और परख, डा. इन्द्रनाथ मदान, पृ. 222
10.यशपाल, (खण्ड–3, झूठा–सच/ वतन और देश), पृ. 40
11.यशपाल, (खण्ड–5, 'मनुष्य के रूप'), पृ. 47
12.वही; वही; ''क्यों फँसें'!, पृ. 369
13.यशपाल, (खण्ड–4, झूठा–सच/देश का भविष्य), पृ. 4

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 232-235
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# साहित्य और सोशल मीडिया: बदलते स्वरूप एवं नवीन आयाम

**सरबजीत कौर**
(शोधार्थी)
हिन्दी विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

**शोध सारांश:**

साहित्य एक ऐसा माध्यम, ऐसा नियोजन और ऐसी प्रेरणा है जिसके पीछे पूरे समाज के कल्याण की भावना सन्निहित होती है बजाय किसी एक वर्ग, समूह, जाति और देश के। हमारे सोचने और समझने के ढंग को साहित्य बदल देता है। आदिकाल से ही साहित्य सृजन का उपक्रम चला आ रहा है। प्राचीन समय में भोजपत्रों और ताम्रपत्रों पर लिखा जाता था, फिर कपड़े पर लिखा जाने लगा। उसके पश्चात कागज़ का आविष्कार हुआ। अब 21वीं शताब्दी में उससे भी आगे डिजीटल लेखन तक पहुँच गया है साहित्य लेखन का सफ़र। आज साहित्य पत्र-पत्रिकाओं और किताबों से निकलकर सोशल मीडिया तक अपनी पहुँच बना चुका। नई तकनीकों के साथ तालमेल बैठाकर सोशल मीडिया का प्रयोगकर्ता साहित्य को आगे बढ़ा रहा है। सोशल मीडिया एक साहित्यिक प्रचारक बनकर, साहित्य लिखने, पढ़ने और मुद्रण तीनों को विस्तार दे रहा है। वर्तमान समय में साहित्य की विभिन्न विधाओं का विकास और प्रचार सोशल मीडिया के माध्यम से हो रहा है। सोशल मीडिया ने साहित्य को एक नवीन पाठक और लेखक वर्ग प्रदान उनके बीच सीधा संवाद कायम किया है। कह सकते हैं कि इस माध्यम के कारण लेखक, प्रकाशक और पाठक की आपसी दूरियां कम हुई है, जो निश्चित रूप से साहित्य और साहित्यकारों को लिए लाभप्रद है।

**बीज शब्द:** साहित्य, हिन्दी, सोशल मीडिया, भाषा, प्रकाशन।

**भूमिका:**

आज का साहित्य और उसका चिंतन नई सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के कारण पहले के साहित्य और उसके चिंतन से कई मायनों में बदल गया है। चिंतन की जगह सूचनाएं इसके औज़ार हैं। नई पीढ़ी बदले हुए सामाजिक समूहों को आधार बनाकर नया साहित्य रच रही है। जो तकनीक के प्रभाव के कारण नए आयामों को शामिल करते हुए, नई भाषा और नई शब्दावलियों की चमक लिए, नए तेवर के साथ सामने आता है। आज का लेखक और पाठक वर्ग नई तकनीकों से तालमेल बैठकार साहित्य को आगे बढ़ा रहा है।

21वीं सदी में साहित्य का क्षेत्र विस्तृत हुआ है और किसी एक स्थान तक ही सीमित नहीं रहा। संस्कृति और भाषा के साथ-साथ साहित्य वैश्विक हो गया है। आज सोशल मीडिया ने साहित्य सृजन को नया क्षितिज प्रदान कर साहित्य का लोकतांत्रिकरण कर दिया है। सोशल मीडिया ने हर एक रचनाकार को

साहित्यिक अभिव्यक्ति के लिए मंच प्रदान कर साहित्य जगत में एक नया परिवर्तन ला दिया है। मंजू शर्मा कहते हैं कि "साहित्य सृजन केवल बड़े साहित्यकारों एवं आलोचकों की बपौती नहीं रह गया है अपितु बल्कि नए-नए लेखकों ने भी रचना-आलोचना के क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज़ करायी है।"[1] सोशल मीडिया ने लेखन के पारंपरिक बंधनों को, तानाशाही आलोचना को खुली चुनौती दी है। आज सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्य लिखना आसान हुआ है और साहित्य की पहुंच साहित्य प्रेमी तक पहले से कहीं ज्यादा सुगम हुई है। अगर साहित्य स्वांत: सुखाय है तो वह सुख इस माध्यम ने एक बड़े वर्ग को दिया है। आज हर वह व्यक्ति लेखक बन गया है या बन सकता है जिसमें लिखने का जुनून है और उसके जुनून को सोशल मीडिया दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके द्वारा हर व्यक्ति के लेखक, कवि, साहित्य सृजनकर्ता होने के प्रयास को बल मिला है। इस माध्यम ने साहित्य का बाजारीकरण करने का कार्य भी किया है। लेखक/ साहित्यकार अपनी रचनाओं का जोर-शोर से सोशल मीडिया पर प्रचार करता है।

20वीं शताबदी के आखिरी दशक में सोशल मीडिया के अस्तित्व के आने के पश्चात फेसबुक, ब्लॉग, गूगल प्लस, व्हाट्सऐप, आरकुट आदि ने तेज़ी से लोकप्रियता बटोरी। इन सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर हर यूजर को अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का एक मौका मिला। इस नए नवेले मंच पर खुद को अभिव्यक्त करने की आज़ादी ने लोगों को प्रेरित किया और तमाम तरह की अभिव्यक्तियें के साथ-साथ कविताएं, कहानियां, उपन्यास, लेख आदि साहित्यिक अभिव्यक्तियां भी सामने आने लगी। बहुत सारे नए लेखक, नए प्रकाशक, और नए आलोचक सोशल मीडिया के मंच पर प्रकाश में आए और उनका एक पाठक वर्ग भी बन गया है। कविता भाटिया के अनुसार, "मीडिया के नए माध्यमों ने रचनात्मकता को नये आयाम दिये हैं। फेसबुक, ब्लॉग और ट्विटर आदि की दुनिया ने रचनाकारों को अपने मनोभावों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति के लिए एक सुलभ प्लेटफार्म उपलब्ध कराया है। इस नयी दुनिया में लेखक स्वयं संपादक, प्रकाशक और प्रचारक भी है।"[2] पिछले कुछ वर्षों में साहित्य की दुनिया में यह देखने को मिला है कि जैसे सोशल मीडिया पर साहित्य का विस्फोट हुआ है। इसने लेखकों, रचनाकारों को एक विश्वव्यापी मंच प्रदान किया है। साहित्य की दुनिया में जो नवप्रवेशी थे, जिनको साहित्य की दुनिया मे अपनी जगह बनानी थी, उन्होनें इस मंच का खूब प्रयोग किया। लेखक को यहाँ पर हज़ारों-लाखों कमैंटस और लाइक्स मिलते हैं। इन कमैंटस को पढ़कर उनका हौंसला बढ़ता है, वह और ज्यादा साहित्य लिखने को उत्साहित होता है।

आज 21वीं सदी में सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्य की पहुँच साहित्य प्रेमी तक पहले से ज्यादा आसान और तीव्र हो गई है। इसके माध्यम से हमने अपने प्राचीन साहित्य को संभाल और सहेज कर रख लिया है। हमारे प्राचीन प्रसिद्ध ग्रंथों और महाकाव्यों जैसे- रामचरितमानस, महाभारत, रामायण, पंचतंत्र की कहानियां आदि पर लगातार फिल्में और धारावाहिक सोशल मीडिया के माध्यम से प्रसारित होते रहते हैं, जिससे पुरातन साहित्य के प्रति लोगों में रूचि पैदा होती है। यहां पर हम अपने प्राचीन इतिहास के बारे में आसानी से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। हमारे प्राचीन वेद, पुराण, महाकाव्य और काव्य आदि जितने भी साहित्यिक ग्रंथ हैं, उनके बारे में पुरातन समय में काफी मेहनत और जद्दोजहद के बाद थोड़ी सी जानकारी प्राप्त होती थी। लेकिन आज हमारी मुट्ठी में पूरी दुनिया की जानकारी उपलब्ध है। यह सब सोशल मीडिया की देन है। 'विकीपीडिया' जैसे सोशल मीडिया के प्लेटफार्म पर हमारे सभी प्राचीन और नए ग्रंथों की जानकारी प्रस्तुत है। जिसे आसानी से हम प्राप्त कर सकते हैं और आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए सहेज कर रख सकते हैं। सोशल मीडिया के कारण हमारे प्राचीन ग्रंथों, पांडुलिपियों और बहुत सारी साहित्यिक रचनाओं के लुप्त या नष्ट हो जाने का खतरा बहुत कम हो गया है।

सोशल मीडिया ने हर तबके तक बहुत हद तक साहित्य की पहुँच को य़कीनन बनाया है। सोशल मीडिया के माध्यम से वह साहित्यक प्रेमी वर्ग भी लाभायिन्त होता है जो अक्षर ज्ञान से परिचित नहीं है। जहाँ एक तरफ प्रबुद्ध पाठक वर्ग लिखित साहित्य से अपने विद्यालय और विश्वविद्यालय आदि अन्य स्त्रोतों से जानकारी

हासिल कर अपनी जिज्ञासा शांत कर सकता है, वहीं दूसरी तरफ जिस वर्ग को अक्षर ज्ञान प्राप्त नहीं और जिनके पास साहित्य का पठन-पाठन करने और उसको समझने का अन्य कोई साधन नहीं है। वह सोशल मीडिया के विभिन्न मंचों के माध्यम से जानकारी हासिल कर सकते हैं। जो लोग प्रत्यक्ष तौर पर कोई साहित्यिक कृति नहीं पढ़ पाते, वे लोग सोशल मीडिया के अनेक मंचों पर उपलब्ध ऐसे साहित्यक वीडियो देख-सुन कर साहित्य से रूबरू होते हैं। आज प्रमुख कवियों की कविताओं के पाठ से लेकर बड़े-बड़े विचारकों के विचार ऑडियो और वीडियो रूप में साहित्य प्रेमी के लिए सोशल मीडिया पर उपलब्ध हैं। विकीपीडिया और गूगल के माध्यम से आज चाहे किसी भी प्रकार का साहित्य हो, कविता हो, कहानी हो, उपन्यास हो, आलेख हो या किसी भी प्रकार की विधा हो सब कुछ ऑनलाइन ही पाठक के लिए उपलब्ध है। सोशल मीडिया पर किसी भी साहित्यिक गतिविधि की जानकारी पलक झपकते ही दुनिया के किसी भी एक कोने से दूसरे कोने में पहुँच जाती है। वर्तमान समय में जो पत्रिकाएं विदेशों से निकलती है उन्हें हम ऑनलाइन सोशल मीडिया पर पढ़ सकते हैं। आज अमेरिका में लिखी गई कोई कविता/कहानी भारत में बैठकर पढ़ी जाती है और वहीं भारत में लिखी कविता/कहानी अमेरिका में। न्यूजीलैंड में निकलने वाली 'भारत दर्शन' पत्रिका का भारत के किसी भी एक छोटे से गाँव में बैठ कर पाठ किया जा सकता है। अब देश-विदेश में होने वाली साहित्यिक संगोष्ठि के वीडियो और ऑडियो सोशल मीडिया पर साहित्य प्रेमी के लिए मात्र एक क्लिक पर उपलब्ध हैं। कह सकते हैं कि सोशल मीडिया ने भूगौलिक सीमा बंधन को समाप्त कर हर तबके तक, हर साहित्य प्रेमी तक साहित्य की पहुँच का विस्तार किया है।

सोशल मीडिया ने जहां साहित्य की पुरानी विधाओं के प्रचार और प्रसार में योगदान दिया है, वहीं दूसरी तरफ नवीन विधाओं को जन्म दिया है। लप्रेक, टेलेस ऑफ ट्वीट, जापानी विधा हायकू एवं फायकू में कविता, कहानी 140 आदि सभी नव्य साहित्यिक तकनीकी युग की विधाएं हैं। जो सृजनशीलता के नए रूपों को प्रस्तुत करती हैं। फेसबुक फिक्शन 'लप्रेक' सोशल मीडिया की नवीन विधाओं में खासी लोकप्रिय विधा है। लघु कथा हिन्दी साहित्य के लिए कोई नयी विधा नहीं है किन्तु 'लप्रेक' अर्थात् प्रेम की इन नैनो कहानिया ने साहित्य के नए रूपों में निश्चित रूप से अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई है। अपनी बढ़ती हुई लोकप्रियता के कारण ही यह वेस्टसेलर की श्रेणी में आ गई हैं। 'रवीश कुमार' कृत 'इश्क में शहर होना', 'गिरीन्द्र झा' कृत 'इश्क में माटी सोना', 'विनीत कुमार' कृत 'इश्क कोई न्यूज नहीं' आदि लप्रेक की कुछ प्रसिद्ध रचनाएं हैं। 'लप्रेक' की शुरूआत फेसबुक से हुई थी। आज कल 'लप्रेक' ई-बुक के रूप में भी उपलब्ध है। 'टेल्स आफ ट्वीट' भी एक ट्वीट हैंडल हो जो 'ट्विटर कहानी' के नाम से लोकप्रिय है। जिसे चलाने वाले भारत के मनोज पाण्डेय हैं। हिंदी के साथ-साथ 'सलमान रूश्दी' जैसे अंग्रेजी लेखक ने भी इस विधा में अपना हाथ अजमाया है। 'ट्विटर कहानी' में सबसे छोटी कहानी मात्र 6 शब्दों की कहानी है जिसे 'अर्नेस्ते हेमिंग्वे' ने लिखा है। कहानी बस इतनी सी है- 'फॉर सेल। बेबी शूज नेवर वोर्न।' निश्चित ही 'टेल्स आफ ट्वीट' छोटी और मजेदार कहानी लिखने का नया अंदाज है। इसी प्रकार 'हायकू' की तरज पर फेसबुक पर 'फायकू' कविताएं लिखी जा रही है।

सोशल मीडिया में यह एक विशेष उल्लेखनीय बात है कि बहुत से रचनाकार अपनी रचनाओं को एक से अधिक लिपियों में प्रकाशित कर रहे हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि ऐसा करने से रचना उन सभी पाठकों तक पहुँच जाती है जो उन विभिन्न लिपियों में से किसी एक को भी जानता समझता है। रेख्ता.ओर्ग (rekhta.org) इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण वेबसाइट है जिस पर विभिन्न रचनाकारों की रचनाएं तीन लिपियों देवनागरी, रोमन और अरबी में एक साथ प्रकाशित की जा रही हैं।

सोशल मीडिया यहां एक तरफ साहित्य के प्रचार में अच्छी भूमिका निभा रहा है वहीं दूसरी तरफ वह साहित्यक भाषा की शुद्धता को दूषित कर रहा है। डॉ.अमलेन्दु त्रिपाठी कहते हैं कि, "इस नए माध्यम ने हर नए माध्यम की तरह भाषा के प्रयोग और तौर-तरीकों, शब्दकोश, शैली-शुद्धता, व्याकरण और वाक्य रचना को प्रभावित

किया है।"[4] सोशल मीडिया पर रचित साहित्य की भाषा पर बोलचाल की भाषा का प्रभाव बहुत अधिक पड़ रहा है। आज के नए युवा लेखक अपनी संवेदनाओं को अपने तरीके से सोशल मीडिया पर अभिव्यक्त करते हैं। भाषा उनके लिए कोई मायने नहीं रखती। उन्हें तो बस अपनी बात को लोगों के सामने रखने से मतलब है। कोई व्याकरण और वर्तनी का बंधन नहीं, जिसके मन में जो आता है वह अपनी भाषा में लिखता है। पहले जब कोई लेखक अपनी कृति को प्रकाशित कराने के लिए संपादक/प्रकाशक के पास भेजता था तो वह कृति की भाषा में कुछ कमी देखकर उसकी भाषा को दुरूस्त करने के लिए कहते थे। जिससे रचनाकार को अपनी भाषा को मांजने की सीख मिलती था। लेकिन दूसरी तरफ सोशल मीडिया का लेखक स्वयं ही प्रकाशक होता है इसलिए उस पर भाषा को दुरूस्त करके लिखने का कोई बंधन नहीं। इसके साथ ही सोशल मीडिया पर भाषा के संक्षेप रूप का प्रयोग साहित्य लेखन के लिए किया जा रहा है। जिसके माध्यम से एक नई भाषा निर्मित की जा रही है। कह सकते हैं कि इस मंच पर साहित्यिक भाषा को लेकर मनमाने प्रयोग किए जा रहे हैं।

**निष्कर्ष:**

सोशल मीडिया और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं। यह साहित्य को लोकप्रिय बना रहा है। आज साहित्य की पहुँच उन लोगों तक हुई है जो लिखने- पढ़ने से दूर रहते थे। सोशल मीडिया न सिर्फ लेखकों, रचनाकारों को एक विश्वव्यापी मंच प्रदान कर रहा है ब्लकि प्रकाशन हेतु सामने आने वाली समस्याओं से भी निजात दिला रहा है। सोशल मीडिया पर आज साहित्य की विभिन्न विधाओं का लेखन अधिकांश मात्रा में किया जा रहा है। एक तरफ से देखा जाए तो सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्म ने साहित्य प्रकाशन, लेखन और पाठन को बहुत आसान कर दिया है। यह सोशल मीडिया की ही देन है जो लोगों में साहित्य के प्रति रूचि पुन: जागृत हुई है। अत: कह सकते हैं कि साहित्य के विकास में सोशल मीडिया ने अहम भूमिका निभाई है। अब कोई भी साहित्य प्रेमी साहित्य से दूर नहीं। नि:संदेह सोशल मीडिया भविष्य का वह माध्यम है जो हमें बेहतरीन साहित्य देगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची:**


1. आरती सिंह और विभा ठाकुर, सोशल मीडिया में साहित्य का बदलता स्वरूप, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ.121.
2. कविता भाटिया, सोशल मीडिया वर्चुअल से वास्तविक, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, 2021, पृष्ठ.30.
3. सुनिता, सोशल मीडिया और हाशिये का साहित्य, आजकल, जुलाई, 2016, पृष्ठ.11.
4. प्रवीण कुमार झा(संपा), सोशल मीडिया: एक अभिव्यक्ति. 'तरूण प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रथम संस्करण 2018, पृष्ठ.6



Email:manjeetsandhu3600@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 236-239
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# संजीव जायसवाल के बाल साहित्य में नैतिक मूल्यों का अध्ययन

**निर्मल कौर**
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

**शोध सारांश:-**

मानव जीवन में नैतिक मूल्यों का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। नैतिक मूल्य मनुष्य के व्यक्तित्व, आचरण, विचारों तथा व्यवहार को दिशा प्रदान करते हैं। ये ऐसे आदर्श एवं मानवीय गुण हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता है तथा उचित और अनुचित के मध्य अंतर करने में सक्षम बनता है। नैतिक मूल्य मनुष्य को सत्य, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, सदाचार, परोपकार, सहानुभूति, सहयोग, विनम्रता तथा सेवा-भाव जैसे गुणों को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। इन मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति न केवल अपने जीवन को व्यवस्थित एवं सार्थक बनाता है, बल्कि समाज में भी सकारात्मक योगदान प्रदान करता है। इस प्रकार नैतिक मूल्य मानव जीवन के आधारभूत तत्त्व हैं, जो व्यक्ति को एक आदर्श नागरिक तथा संवेदनशील सामाजिक प्राणी के रूप में विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नैतिक मूल्यों का संबंध मनुष्य की आंतरिक चेतना, विवेक तथा सद्व्यवहार से है। ये व्यक्ति को अपने आचरण का मूल्यांकन करने और अपने निर्णयों के परिणामों को समझने की दृष्टि प्रदान करते हैं। नैतिकता के अभाव में मनुष्य के व्यवहार में स्वार्थ, छल, कपट, असहिष्णुता तथा अनैतिक प्रवृत्तियों का विकास हो सकता है। इसके विपरीत, नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हितों के साथ-साथ दूसरों की भावनाओं, अधिकारों तथा आवश्यकताओं का भी ध्यान रखता है। वह कठिन परिस्थितियों में भी सत्य एवं न्याय का मार्ग अपनाने का प्रयास करता है। इसलिए नैतिक मूल्य व्यक्ति के चरित्र-निर्माण, आत्मविश्वास, विवेकशीलता तथा उत्तरदायित्व-बोध के विकास में सहायक सिद्ध होते हैं।

**मुख्य शब्द:-** बाल साहित्य, नैतिक, मूल्य, आदर्श।

**प्रस्तावना:-**

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, पर वह केवल प्रतिबिंब नहीं दिखाता, बल्कि समाज को दिशा भी देता है। जब यही साहित्य बच्चों के लिए रचा जाता है, तब उसका दायित्व और भी गहरा हो जाता है। बचपन जीवन की वह कच्ची मिट्टी है जिसे जैसा आकार दिया जाए, वह वैसा ही ढल जाती है। इस अवस्था में बालक के मन पर जो छाप पड़ जाती है, वह आजीवन उसके विचारों, व्यवहार और निर्णयों में दिखाई देती है। इसलिए बाल साहित्य का काम केवल समय काटना या मनोरंजन करना नहीं है। वह उनकी की कल्पना को उड़ान देता है, जिज्ञासा

को जगाता है, भावनाओं को संवारता है और उन्हें सही-गलत की पहचान सिखाता है। बच्चे उपदेश से जल्दी ऊब जाते हैं लेकिन कहानी के माध्यम से नैतिक मूल्यों को आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। नैतिक मूल्यों के द्वारा बाल मन को आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है। यही कारण है कि दादी-नानी की कहानियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी संस्कार पहुँचाने का सबसे सशक्त माध्यम रही हैं। आधुनिक बाल साहित्य उसी परंपरा का विस्तार है।

**नैतिक मूल्यः-**

नैतिक मूल्यों का अर्थ और स्वरूपः 'नैतिक शब्द नीति शब्द से बना है, जिसका अर्थ है उचित आचरण का मार्ग। नैतिक मूल्य वे आदर्श और आचरण-सिद्धांत हैं जो व्यक्ति को यह विवेक देते हैं कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं। सत्य, ईमानदारी, परोपकार, करुणा, सहयोग, विनम्रता, परिश्रम, संतोष, साहस, कर्तव्यपरायणता, समय की पाबंदी और बड़ों के प्रति आदर इन्हीं मूल्यों के विविध रूप हैं। ये मूल्य व्यक्ति को केवल अच्छा इंसान ही नहीं बनाते, बल्कि परिवार और समाज में सौहार्द और संतुलन भी बनाए रखते हैं। नैतिक मूल्य मनुष्य के भीतर जन्म से पूर्ण रूप में नहीं होते। वे परिवार, विद्यालय, समाज और साहित्य से धीरे-धीरे ग्रहण किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में साहित्य की भूमिका इसलिए विशेष है कि वह मूल्यों को सूखे नियमों के रूप में नहीं, जीवित अनुभवों के रूप में प्रस्तुत करता है। पाठक पात्र के साथ हँसता, डरता और पछताता है, और इस तरह मूल्य उसके भावनात्मक अनुभव का हिस्सा बन जाते हैं। वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता। आज का समय बहुत ही तेज गति, प्रतिस्पर्धा और तकनीक का समय है। बच्चे मोबाइल, इंटरनेट, वीडियो गेम और सोशल मीडिया के संसार में पल रहे हैं। इसके अपने लाभ हैं, क्योंकि जानकारी की कमी नहीं है मगर इसके साथ कुछ चिंताएँ भी जुड़ चुकी है जैसे-बच्चों में धैर्य और एकाग्रता की कमी। पढ़ाई को टालने और अंतिम समय पर तैयारी करने की प्रवृत्ति। दिखावे और आपसी तुलना की बढ़ती भावना। बड़ों से संवाद और संयुक्त परिवार की गर्माहट में कमी। ईमानदारी, परिश्रम और सहयोग जैसे मूल्यों का धुँधला पड़ना। ऐसे समय में ऐसे साहित्य की आवश्यकता और बढ़ जाती है जो बच्चों के अपने परिवेश में उतरकर, उन्हीं की भाषा में, उन्हें जीवन-मूल्यों से जोड़ सके। यहीं बाल साहित्यकारों की भूमिका महत्वपूर्ण हो उठती है। हिंदी बाल साहित्य की परंपरा हिंदी बाल साहित्य की परंपरा अत्यंत समृद्ध और प्राचीन है। पंचतंत्र और हितोपदेश की पशु-पक्षी कथाओं ने सदियों पहले यह सिद्ध कर दिया था कि गहरी नीति-शिक्षा भी रोचक कहानियों के सहारे दी जा सकती है। लोककथाओं, परीकथाओं, पौराणिक आख्यानों और जातक कथाओं ने इसे आगे बढ़ाया। आधुनिक काल में बाल पत्रिकाओं और अनेक रचनाकारों ने इसे नया रूप दिया। समय के साथ बाल साहित्य के विषय और शैली में परिवर्तन आया है। पहले की कहानियों में राजा-रानी, जंगल, पशु-पक्षी और जादुई संसार प्रमुख थे। आज के रचनाकार स्कूल, परीक्षा, मोबाइल, कंप्यूटर, शहरी जीवन और बदलते पारिवारिक संबंधों को अपनी कहानियों का आधार बना रहे हैं। संजीव जायसवाल इसी निरंतरता की एक कड़ी हैं। वह हिंदी में बच्चों के लिए लिखने वाले ऐसे बाल रचनाकार हैं जिनकी कहानियों में विविधता और ताज़गी है। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे उपदेशक की मुद्रा नहीं अपनाते बल्कि वे बच्चों के संसार में उतरकर, उनकी शरारतों, कमजोरियों और कल्पनाओं के बीच से कथा बुनते हैं। उनकी कहानियों में नैतिक मूल्यों को हास्य के द्वारा दिया गया है, जो बाल पाठक कथा के प्रवाह में बहता चला जाता है और अनजाने में ही सीख ग्रहण कर लेता है। 'माऊस और की-बोर्ड' कहानी में निर्जीव वस्तुएँ मानवीय स्वभाव के साथ बोलती, लड़ती और पछताती हैं। बाल पाठक को ऐसे पात्र बहुत ही अच्छे लगते हैं। इससे उसका मनोरंजन होता है। बालक का संसार की सभी वस्तुओं का साथ प्रेम होता है। इसी तरह से 'मेरा दोस्त मोबाईल' कहानी का आर्यन आज के उस नई तकनीक का प्रतिनिधि है जो मोबाइल में उलझा है, पर संकट आने पर उसी मोबाइल से समाधान निकाल लेता है। यह कहानी बच्चों को धैर्य से कार्य करने की शिक्षा देती है। मुश्किल समय में शांत भाव से काम करता है। 'ड्राईवर अंकल' कहानी में एक साधारण ऑटो चालक में छिपी मानवता और संवेदनशीलता को दर्शाया गया है। यह कहानी अंधविश्वास पर व्यंग्य करती है। आधुनिक समय

में बालक को आत्मविश्वासी बनाने की जरूरत है। क्योंकि यही समय की मांग है। ऑटो वाला एक ईमानदार व्यक्ति है जो मानस को परीक्षा भवन तक बिना किसी स्वार्थ के लेकर जाता है और पैसे देकर उसकी सहायता भी करता है। यह कहानी बाल पाठको के भीतर ईमानदारी और सेवाभाव जैसे नैतिक मूल्यों को उजागर करने में पूरी तरह से सक्षम है।'दूध फैक्स-रबड़ी फैक्स' कहानी में लेखक ने ग्रामीण भोलेपन, धोखा और शोषण की समस्या को हास्य के सहारे रेखांकित किया है। डाक बाबू एक भोले-भाले व्यक्ति को मूर्ख बना कर फैक्स के नाम पर प्रतिदिन दूध और रबड़ी खाता है। वो उसको कहता है कि ये फैक्स मशीन से सब कुछ भेजा जा सकता है। जाट उसकी बातों में आ जाता है और बेटे को शहर में दूध और रबड़ी फैक्स करवाता है। डाक बाबू उसको धोखा देकर हर रोज़ हाडी खुद खा-पी जाता। वह ग्रामीण व्यक्ति को सिर्फ खाने वाली वस्तु के लिए धोखा देता है जो गलत बात है। अंत में डाक अधिकारी उससे मांफी मांगता है और अपने किए पर शर्मिदा होता है। नैतिक मूल्यों का उद्देश्य केवल बच्चों को अच्छे-बुरे का ज्ञान कराना नहीं है,बल्कि उन्हें संवेदनशील, उत्तरदायी, सहिष्णु तथा विवेकशील इंसान के रूप में विकसित करना भी है। इनकी कहानियों गप्पू चाचा, मुंडा लाला में आत्मानुशासन, आत्मविश्वास, सहानुभूति तथा कर्तव्यपरायणता की भाव देखने को मिलती है,जो बालक को अपने परिवार, मित्रों तथा समाज के अन्य सदस्यों के साथ प्रेममयी संबंध स्थापित करना सीखाते हैं।

**निष्कर्षः-**

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता कि संजीव जायसवाल का बाल साहित्य केवल हँसाने-गुदगुदाने की सामग्री नहीं है, बल्कि बच्चों को संवेदनशील, विवेकशील और जिम्मेदार नागरिक बनाने की दिशा में एक सार्थक प्रयास है। उनकी कहानियाँ यह संदेश देती हैं कि लालच और बेईमानी का अंत दंड है, और सहयोग, साहस, परिश्रम तथा मानवीयता ही जीवन की सच्ची पूँजी हैं। नैतिक मूल्यों और बाल साहित्य के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि साहित्य बच्चों के चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व विकास तथा जीवन दृष्टि के परिष्कार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**संदर्भ-ग्रंथ सूचीः-**


1. डॉ. हरिकृष्ण देवसरे, हिंदी बाल साहित्यः एक अध्ययन, यश पब्लिकेशर्स, दिल्ली
2. शकुंतला कालरा, बाल साहित्य का स्वरूप और रचना संसार, भावना प्रकाशन, दिल्ली
3. डॉ. आनंद बक्षी, हिंदी बाल साहित्य का अनुशीलन, आराधना ब्रदर्स, कानपुर
4. संजीव जायसवाल, सोशल मीडिया का राजकुमार, प्रलेख प्रकाशन, दिल्ली
5. संजीव जायसवाल, टिन्नू मियां का कुर्ता, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
6. संजीव जायसवाल, मनोरंजक कहानियां, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 239-243
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना और वर्त्तमान स्थिति में सांस्कृतिक परिवेश

**अलिका कुमारी**
शोधार्थी,
राँची विश्वविद्यालय, राँची, हिन्दी विभाग,
सम्प्रति– सहायक शिक्षिका(हिन्दी)
राजकीय कन्या उत्क्रमित उच्च विद्यालय सरायकेला।



समकालीन हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि और कथाकार उदय प्रकाश जी की कविताएँ अपने सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश के गहरे द्वंद्व, ताने–बाने और आधुनिक उपभोक्तावादी दौर में खोती हुई पारंपरिक संस्कृति को बखूबी रेखांकित करती हैं। उनके काव्य में ग्रामीण एवं कस्बाई सांस्कृतिक परिवेश और महानगरीय क्रूरता का टकराव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

उदय प्रकाश समकालीन हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण साहित्यकार हैं। उनकी रचनाओं में भारतीय समाज, संस्कृति, लोकजीवन, परंपराओं और बदलते मानवीय मूल्यों का चित्रण मिलता है। उनकी काव्य–संवेदना में सांस्कृतिक परिवेश का विशेष महत्व है। वे अपनी कविताओं के माध्यम से भारतीय संस्कृति की विविधताओं, लोकपरंपराओं, सामाजिक मान्यताओं तथा आधुनिकता के प्रभाव से उत्पन्न परिवर्त्तनों को अभिव्यक्त करते हैं।

उदय प्रकाश के काव्य में भारतीय संस्कृति के विभिन्न रूपों तथा सामान्य जनजीवन से जुड़े सांस्कृतिक अनुभवों को महत्व मिलता है। उनकी रचनाओं में गाँव, परिवार, लोकजीवन और सामाजिक संबंधों के माध्यम से भारतीय समाज की सांस्कृतिक पहचान को देख सकते हैं। 'बैरागी आया है गाँव, कविता में ग्रामीण जीवन, लोकपरंपराओं और गाँव की सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों के संदर्भ में अध्ययन कर सकते हैं। कवि कहते हैं कि गाँव का जोगी–जोगड़ा दस साल बाद शहरों और महानगरों की गलियों में घूमकर वापस लौटता है। उसके लौटने के साथ गाँव की पुरानी यादें, परंपराएँ और सांस्कृतिक वातावरण फिर से जीवंत होने लगते हैं। यहाँ बैरागी का लौटना ग्रामीण जीवन और उसकी सांस्कृतिक जड़ों से दोबारा जुड़ने का प्रतीक माना जा सकता है। कवि इन पंक्तियों के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि गाँव केवल रहने का स्थान नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, परंपरा और सामूहिक जीवन का केन्द्र भी है–

''इसी गाँव का
जोगी–जोगड़ा लौटा है
दस साल बाद, शहर–महाशहर,
गाँव–दर–गाँव की
गली–सड़क, धूल–धुआँ छानकर।''[1]

कवि के अनुसार, भारतीय संस्कृति का वास्तविक स्वरूप गाँव के लोकजीवन, पारंपरिक भोजन, आपसी प्रेम, धार्मिक प्रतीकों और नृत्य–संगीत में दिखाई देता है।

उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना में लोकजीवन के अनुभवों का विशेष स्थान है। ग्रामीण जीवन, लोकभाषा, परंपराएँ और आम आदमी के जीवन से जुड़े प्रसंग उनकी रचनाओं को सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधार प्रदान करते हैं। वे साधारण मनुष्य के अनुभवों के माध्यम से संस्कृति के जीवंत स्वरूप को सामने लाते हैं।

वर्त्तमान समय में वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और आधुनिक जीवनशैली के कारण सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्त्तन हो रहे हैं। उदय प्रकाश की रचनाओं को पढ़ने पर परंपरागत जीवन–मूल्यों और आधुनिक सामाजिक व्यवस्था के बीच उत्पन्न तनाव को समझने में सहायता मिलती है। उनकी रचनात्मक दृष्टि मनुष्य की संवेदना और सामाजिक संबंधों में आने वाले बदलावों की ओर ध्यान आकर्षित करती है।

'मैं लौट जाऊँगा, कविता में इतिहास, मिथक, विज्ञान और पारंपरिक विश्वासों के बीच संबंध दिखाई देते हैं। यह कविता आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और प्राचीन मान्यताओं के अंतर्संबंध को समझने में सहायक है।

कवि बताते हैं कि समय बीतने के साथ वास्तविक ऐतिहासिक घटनाएँ लोगों की स्मृतियों, लोककथाओं और मिथकों का रूप ले सकती हैं। इस प्रकार इतिहास की वास्तविकता धीरे–धीरे बदलती हुई सांस्कृतिक मान्यताओं और जनश्रुतियों में समाहित हो जाती है। कवि विज्ञान और पारंपरिक अंधविष्वास के बीच संबंध पर विचार करने की ओर संकेत करते हैं। इसका आषय यह हो सकता है कि समय के साथ वैज्ञानिक ज्ञान भी लोगों की स्मृति में अपना मूल स्वरूप खोकर किसी रहस्यमय विश्वास या टोटके जैसा बन सकता है। कवि मनुष्य के जीवन की असहायता और उसकी शारीरिक सीमाओं को सामने लाते हैं। मनुष्य जीवन भर अनेक रोगों, कष्टों और परेशानियों से संघर्ष करता है, लेकिन अंततः उसे अपनी सीमाओं को स्वीकार करना पड़ता है। यहाँ मनुष्य की विवशता और जीवन की अनिश्चितता व्यक्त हुई है। कवि इन पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट करते हैं –

''इतिहास जिस तरह विलीन हो
जाता है किसी समुदाय की मिथक गाथा में
विज्ञान किसी ओझा के टोने में
ताम औषधियाँ आदमी के असंख्य
रोगों से हार कर अन्त में जैसे
लौट जाती हैं
किसी आदिम स्पर्श या किसी मंत्र में''[2]

वर्त्तमान समाज में भौतिकवाद, स्वार्थ और उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों के कारण मानवीय संबंधों तथा पारंपरिक मूल्यों पर प्रभाव पड़ रहा है। उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना में मनुष्य की गरिमा संवेदनशीलता और सामाजिक चेतना जैसे प्रष्न महत्वपूर्ण हैं। इस दृष्टि से उनका साहित्य सांस्कृतिक मूल्यों के संकट पर विचार करने का अवसर प्रदान करते हैं।

भारतीय संस्कृति विविधताओं से समृद्ध है, लेकिन समाज में जातिगत भेदभाव आर्थिक असमानता और सामाजिक वर्चस्व जैसी समस्याएँ भी मौजूद हैं। उदय प्रकाश की व्यापक साहित्यिक दृष्टि में हाशिए पर स्थित लोगों के अनुभवों और उनकी पीड़ा को महत्व मिलता है। इससे संस्कृति के उस पक्ष को समझने में सहायता मिलती है, जिसमें समानता, मानवीय गरिमा और सामाजिक न्याय की आवश्यकता सामने आती है।

आज के समय में सांस्कृतिक पहचान, लोकपरंपराओं और मानवीय मूल्यों को समझना अत्यंत आवश्यक है। उदय प्रकाश का साहित्य वर्त्तमान समाज के सांस्कृतिक परिवर्त्तनों पर विचार करने की दृष्टि प्रदान करता है। उनकी रचनाओं के माध्यम से यह समझा जा सकता है कि संस्कृति केवल रीति–रिवाजों और परंपराओं तक सीमित नहीं है, बल्कि वह मनुष्य के जीवन, व्यवहार, स्मृतियों और सामाजिक संबंधों से भी निर्मित होती है।

'एक भाषा हुआ करती है' कविता में कवि बताते हैं कि भाषा किसी भी समाज की संस्कृति का सबसे बड़ा संवाहक होती है। इस कविता में उन्होंने भाषा के बदलते स्वरूप, उसके सांस्कृतिक क्षरण और बाजार के दबाव को तीखे ढंग से उभारा है। भाषा के माध्यम से समाज की जीवन–शैली, रीति–रिवाजों

और लोकानुभवों को अभिव्यक्ति मिलती है। भाषा व्यक्ति और समुदाय को अपनी सांस्कृतिक पहचान से जोड़ती है। भाषा में होने वाले बदलावों के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्यों और बदलते सामाजिक परिवेश को समझ सकते हैं।

कवि बताते हैं कि कुछ लोग अपनी भाषा और शब्दों के माध्यम से सत्ता पर नियंत्रण बनाए रखते हैं। वे अपनी बातों और आदेषों से दूसरों को प्रभावित करते हैं तथा अपने विरोधियों को दबाने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार भाषा का उपयोग जनता के हित में करने के बजाय सत्ता की ताकत बढ़ाने के लिए किया जाता है। अफसरों, हुक्मरानों और प्रभावशाली लोगों के संदर्भ से यह स्पष्ट होता है कि भाषा का प्रयोग कई बार आम जनता पर अना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए किया जाता हैं उनके आदेशों और निर्णयों से गरीब तथा कमजोर वर्गों को अपमान और कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

कवि इस व्यवस्था की आलोचना करते हैं, जिसमें भाषा न्याय का माध्यम बनने के बजाय शोषण का साधन बन जाती है। कवि इन पंक्तियों के माध्यम से भाषा परिवर्त्तन को प्रकट करते हैं–

''भाषा जिसमें उड़ते हैं वायुयानों में चापलूस
शॉल ओढ़ते हैं मसखरे, चाकर टाँगते हैं तमगे
जिस भाषा के अंधकर में चमकते हैं
किसी अफ़सर या हुक्काम या किसी
पंडे के सफ़ेद दाँत और
तमाम मठों पर नियुक्त होते जाते हैं
बर्बर बुलडॉग''[3]

'बचाओ' कविता में आधुनिक युग, भूमंडलीकरण, बाजारीकरण और अंधाधुंध तकनीकी विकास के कारण हमारी भाषाई धरोहर, संस्कृति, मौलिकता और बचपन की मासूमियत पर मंडराते संकट को रेखांकित करते हैं।

कवि ने आधुनिक औद्योगिक और तकनीकी आक्रमण पर तीखा व्यंग्य किये हैं। हमारे जीवन में चारों तरफ कृत्रिम धातुएँ, फाइबर अैर प्लास्टिक की चीजें भर गई हैं। यहाँ 'बैटरी का हनुमान' और 'प्लास्टिक का पहाड़' के माध्यम से कवि खिलौनों और गैजेट्स के बाजरीगरण को दिखाते हैं। आज के बच्चों के हाथों से पारंपरिक प्राकृतिक खिलौने छीन गए हैं और उनकी जगह स्क्रीन, मोबाइल या बैटरी से चलने वाले मशीनी खिलौनों ने ले ली है। यह ध्वनि यांत्रिकता और कृत्रिमता का प्रतीक है, जो बच्चों के मानसिक विकास और उनकी स्वाभाविक मासूमियत के लिए डरावनी है। इन पंक्तियों के माध्यम से कवि स्पष्ट करना चाहते हैं कि आने वाली पीढ़ियाँ इस बनावटी दुनिया में भीा ज़रा सी मानवता और सहजता बचाए रख सकें–

''चली आ रही हैं इस्पात, फाइबर और अज्ञात यौगिक
धातुओं की तमाम अपरिचित–अभूतपूर्व चीजें
किसी विस्फोट के बादल की तरह हमारे संसार में
बैटरी का अनुमान उठा रहा है प्लास्टिक का पहाड़
और बच्चों के हाथों में बोल रही है कोई
डरावनी चीज– डींप..... डींप.....डींप''[4]

'सुनो कारीगर' कविता में कवि ने मनुष्य के जीवन में आने वाली कठिनाइयों, दुखों, अकेलेपन और मानसिक संघर्षों को अभिव्यक्त किये हैं। कवि जीवन की वास्तविक परिस्थितियों की ओर संकेत करते हुए बताते हैं कि मनुष्य का जीवन केवल बाहरी संघर्षों तक सीमित नहीं है, बल्कि उसे अनेक आंतरिक पीड़ाओं का भी सामना करना पड़ता है।

कवि कहते हैं कि कोई दुःख बहुत चुपचाप हमारे पास आता है। इसका तात्पर्य है कि जीवन में दुःख में ही नहीं आते, बल्कि कभी–कभी वे धीरे–धीरे मनुष्य के जीवन और भावनाओं का हिस्सा बन जाते हैं। व्यक्ति को इसका एहसास पीड़ा से प्रभावित हो चुका होता है। कवि इन पंक्तियों के द्वारा जीवन के यथार्थ और मनुष्य की आंतरिक पीड़ा को उजागर करते हैं–

''सुनो, बहुत चुपचाप पाँवों से
चला आता है कोई दुःख
पलकें छूने के लिए

सीने के भीतर आने वाले
कुछ अकेले दिनों तक
पैठ जाने के लिए''[5]

'हम हैं ताना ..... हम हैं बाना' उदय प्रकाष जी की बेहद चर्चित और प्रतिनिधि कविता है, जो पारंपरिक बुनकर संस्कृति, श्रम और उसके जीवन की सांस्कृतिक बुनावट को आधुनिक बाजारवाद के संदर्भ में प्रस्तुत करती है। इस कविता में सामाजिक एकता और सामूहिक जीवन की भावना प्रमुख है। ताना–बाना भारतीय बुनाई की परंपरा से जुड़ा हुआ है, इसलिए यह प्रतीक हमारी सांस्कृतिक परंपरा और श्रम–संस्कृति की ओर भी संकेत करते हैं।

इस कविता में कवि ने समाज के साधारण, श्रमशील और उपेक्षित लोगों की महत्ता को व्यक्त किये हैं। कवि कहते हैं कि हमारा कोई निष्चित नाम–पता, जाति–धर्म या ऊँचा सामाजिक पद नहीं है। हम सामान्य जनता हैं, जिनकी पहचान हमारे श्रम और कर्म से होती है। 'हम बेलन, हम लोई' के माध्यम से कवि उन साधारण वस्तुओं और श्रम से जुड़े जीवन की ओर संकेत करते हैं, जो मनुष्य की दैनिक आवष्यकताओं को पूरा करते हैं। जीवन के विभिन्न कार्यों और सामाजिक अवसरों में साधारण लोगों की भागीदारी होती है। कवि यह बताना चाहते हैं कि समाज की प्रत्येक गतिविधि में आम जनता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कवि इन पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट करते हैं–

''नाम–पता, ना ठौर–ठिकाना, जात–धरम ना कोई
मुलक–खलक, राजा–परजा हम, हम बेलन, हम लोई।
हम ही दुलहा, हमीं बराती, हम फूँका, हम छाना।।
हम हैं ताना .....।।''[6]

'घर' कविता में आधुनिक जीवन की विसंगतियों, बदलते दौर, महानगरीय अकेलेपन और अपनी जड़ों की ओर लौटने की तीव्र छटपटाहट को दर्शाया गया है।

कवि कहते हैं कि आज चारों तरफ विस्थापन का माहौल है। लोग आजीविका की तलाश में या मजबूरन अपने घरों को छोड़–छोड़कर बाहर भाग रहे हैं, सब अपना सामान बाँधकर यात्रा की तैयारी में हैं। ऐसे भगदड़ और अनिश्चितता के माहौल में भी कवि विपरीत दिशा में सोच रहे हैं ओर बार–बार कह रहे हैं कि 'मैं घर जाना चाहता हूँ।' अंत में कवि कहते हैं कि उनके इस वाक्य के सारे हिस्से व्यायाकरणिक रूप से अनिश्चयवाचक हैं। वे जानते हैं कि उनके इन शब्दों का वह सीधा अर्थ नहीं निकल रहा है जो लोग समझ रहे हैं। इस वाक्य का गहरा अर्थ उस 'घर' को बचाना है जो मनुष्य के भीतर की आत्मीयता, शांति और उसकी जड़ों से जुड़ा है– और इसी अर्थ को समझने में लोग भूल कर रहे हैं। कवि इन पंक्तियों के द्वारा स्प्ष्ट करते हैं–

''जब कि सब लोग घर छोड़–छोड़कर बाहर निकल रहे हैं
जब कि कूच की तैयारी है, सब सामान बाँध रहे हैं
मैं कह रहा हूँ
'मैं घर जाना चाहता हूँ'
जब कि इस वाक्य के सारे हिज्जे
अनिश्चयवाचक हैं
मुझे पता हे वे वह अर्थ दे भी नहीं रहे हैं
जो आप ले रहे हैं और जो मैं उन्हें देना
चाहता हूँ''[7]

यह कविता आधुनिक समय में मानवीय संवेदनाओं के क्षरण, विस्थापन के दर्द और अपनी सांस्कृतिक जड़ों की ओर लौटने की व्याकुलता को दर्शाती है। कवि भौतिक विकास और महानगरीय चकाचौंध के बीच खो चुके उस 'घर' की तलाष में हैं, जिसे आज का क्रूर यथार्थ लगातार नष्ट कर रहा हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उदय प्रकाष की काव्य–संवदेना में सांस्कृतिक परिवेश का चित्रण समकालीन भारतीय समाज की वास्तविकताओ, विडंबनाओं और बदलते जीवन–मूल्यों को अभिव्यक्त करते हैं। उनकी कविताओं में भारतीय संस्कृति की परंपराएँ, लोकजीवन, पारिवारिक संबंध सामाजिक स्मृतियाँ तथा मानवीय संवेदनाएँ प्रमुखता से दिखाई देती हैं। कवि संस्कृति को केवल अतीत की धरोहर के रूप

में नहीं देखते, बल्कि उसे वर्त्तमान जीवन की परिस्थितियों और सामाजिक परिवर्त्तनों से जोड़कर प्रस्तुत करते हैं।

वर्त्तमान समय में वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, भौतिकतावादी दृष्टिकोण तथा आधुनिक जीवन–शैली के प्रभाव से सांस्कृतिक मूल्यों और पारिवारिक संबंधों में अनेक परिवर्त्तन दिखाई देते हैं। उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना इन परिवर्त्तनों के बीच मनुष्य की संवदेनशीलता, सामाजिक आत्मीयता और सांस्कृतिक पहचान के महत्व को रेखांकित करती है। उनकी कविताएँ इस तथ्य की ओर संकेत करती हैं कि आधुनिकता को स्वीकार करते हुए भी अपनी सांस्कृतिक जड़ों, लोकपरंपराओं और मानवीय मूल्यों से जुड़े रहना आवश्यक है। अतः कहा जा सकता है कि उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना समकालीन भारतीय संस्कृति में हो रहे परिवर्त्तनों का चित्रण करते हुए मानवीय संवेदना, सामाजिक समानता, पारिवारिक आत्मीयता तथा सांस्कृतिक मूल्यों की प्रासंगिकता को स्थापित करती है।

**संदर्भ–संकेत**


1. उदय प्रकाश, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय पेपरबैक, संस्करण 2014, पृ0–80
2. उदय प्रकाश, पचास कविताएँ नयी सदी के लिए चयन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण 2012, पृ0 108–109
3. उदय प्रकाश, एक भाषा हुआ करती है, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2020, पृ0–112
4. उदय प्रकाश, पचास कविताएँ नयी सदी के लिए चयन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2012, पृ0–08
5. उपरिवत्, पृ0–57
6. उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथा संस्करण 2020, पृ0–168
7. उदय प्रकाश, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय पेपरबैक, संस्करण, 2014, पृ0–106–107

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 October 2026 Page No. : 244-250
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

# हिन्दी कहानी का विकास तथा महिला लेखन

**ममता कुमारी**
शोधार्थी ,
हिन्दी विभाग, भू०ना०मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)
**प्रो० (डॉ०) सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह**
पर्यवेक्षक, हिन्दी प्राध्यापक,
पी०जी० सेंटर, सहरसा, भू०ना०मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)

**प्रस्तावना**

कहानी हिन्दी साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है। उपनिषदों, बौद्ध और जैन साहित्यों, पौराणिक युग के उपाख्यानों तथा परवर्ती युग के संस्कृत कथासाहित्य में कथासरित्सागर, बैतालपंचविंशतिका, शुकसप्तति, पंचतंत्र, कादम्बरी, वासवदत्ता, दशकुमारचरित आदि से भी हिन्दी कहानी के सूत्र जुड़ते हैं। प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में भी अनेक छोटी-छोटी पद्य कथाएँ मिलती हैं। चारणों के साहित्य में इतिहास, बात, प्रसंग आदि के रूप में कथा-साहित्य की सृष्टि की गयी है। मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में एक और पद्यबद्ध प्रेमाख्यानों की सृष्टि हुई है और दूसरी ओर ब्रजभाषा गद्य में वार्ता साहित्य—चौरासी वैष्णवन की वार्ता और दो सौ बावन वैष्वणन की वार्ता—रचा गया है। इसके साथ ही कहानी का उद्भव गल्प या लोककथाओं से भी माना जाता है।

डॉ. रामचंद्र तिवारी लिखते हैं, "साहित्य के सामानान्तर जनजीवन में भी कथाओं की विपुल सम्पत्ति मौखिक परम्पराओं में सुरक्षित रहती है। लोकजीवन मे प्रचलित ये कहानियाँ,प्रेम, उपदेश, हास्य एवं व्यंग्य तता ऐतिहासिक तथ्यों से पूर्ण अनेक रूपों में देखी जा सकती है। हिन्दी का कहानी-साहित्य इनके प्रभाव से सर्वथा मुक्त नहीं माना जा सकता।"1 इसी के समर्थन मे डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल जी का कथन है, "इसी उद्गम सूत्र सेहिन्दी कहानियों की उत्पत्ति को सबसे अधिक प्रेरणा मिली और उस समय प्रायः समस्त हिन्दी कहानीकारों की पहली मौलिक रचनाएँ इन्हीं लोक कहानियों की प्रतिमाएँ थीं।"2

**बीज शब्द**

साहित्य, प्रेमाख्यानक, गल्प, लोककथा, विमर्श, वार्ता, संवेदनात्मक कहानी, काल्पनिक कहानी, आख्यायिकाएँ, प्रांरभिक, कहानीपन, मौलिक, पूर्वार्ध, चित्ताकर्षक, स्वच्छंद, कथात्मक, आलोचक, वर्णनात्मक, अभिव्यक्ति, बंगमहिला, स्थूल, प्राक्-स्वातंत्र्ययुग, स्वतंत्र्योत्तर युग, आधुनिक युग, राष्ट्रवादी, यौनचित्रण, आत्माभिव्यक्ति, त्रासद जीवन, संघर्ष, पीड़ा, धुंधलका, अस्तित्व, शिनाख्त, अपरिहार्य, कथासूत्र इत्यादि।

**सारांश**

हिन्दी की प्रारंभिक कहानियों का प्रारंभ सभी इतिहासकारों ने 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन से ही स्वीकार किया है। इस दौर में मौलिक कहानियों की रचना न हो कर उनमें कई प्रकार के प्रयोग किये जा रहे थे। इन प्रयोगों शेक्सपियर के नाटकों के इतिवृत्त के धार पर वर्णानात्मक शैली में लिखी गयी कहानियाँ, स्वप्न-कल्पनाओं के रूप में रचित कहानियाँ, सुदूर देश के काल्पनिक चरित्रों को लेकर लिखी गयी संवेदनात्मक कहानियाँ, काल्पनिक यात्रा-वर्णन क कहानियाँ, आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत कहानियाँ, संस्कृत नाटकों की आख्यायिकायें, घटना प्रधान सामाजिक संवेदनात्मक कहानियाँ प्रमुख हैं।

सही अर्थों में हिन्दी काहनी का इतिहास भारतेन्द् युग से आरंभ होता है। भारतेन्दु के पूर्व खड़ी बोली हिन्दी में कोई कहानी नहीं मिलती परन्तु ब्रज, अवधी तथा राजस्थानी गद्य में कथा-बीज जरूर मिलते हैं। भारतेन्दु से पूर्व खड़ी बोली की जो चार प्रमुख पुस्तकें हैं, उनमें कथा-बीज हैं। लल्लूलाल का प्रेमसागर, सदल मिश्र का नासिकेतोपाख्कयान तथा इंसा अल्ला खां की रानी केतकी की कहानी में कहानीपन है। इनके संदर्भ में डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल कहते हैं, "यह रचना उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की प्रथम कथात्मक मौलिक रचना है। यह न किसी के आधार पर लिखी गयी है न इस पर किसी की छाया तक है। कथा कहने का ढंग भी चित्ताकर्षक और मनोहर है।"3

इसके उपरान्त कहानी के विकास के इतिहास को—प्रेमचंद पूर्व कहानी साहित्य, प्रेमचंद युग और प्रेमचंदोत्तर कहानी साहित्य में बाँटा जा सकता है। प्रेमचंद के पूर्व कहानी सरस्वती के आरंभक वर्षों में प्रकाशित कहानियाँ हैं। उनका रूप धीरे-धीरे निखरता गया। इनके कथानक संयोग पूर्ण, चरित्र काल्पनिक स्वच्छन्द एवं स्थूल हैं तथा शैली वर्णनात्मक है। कुछ इतिहासकार इस कालखण्ड में प्रकाशित आचार्य रामचंद्र शुक्ल की कहानी ग्यारह वर्ष का समय को पहली मौलिक कहानी मानते हैं तो कुछ आलोचक किशोरीलाल गोस्वामी की इन्दुमती को पहली कहानी मानते हैं लेकिन इन्दुमती पर शेक्सपियर के नाटक टेम्पेस्ट का प्रभाव होने के कारण इसी मौलिकता को नकारा गया है। बंगमहिला की दुलाईवाली को कुछ आलोचकों ने हिन्दी की पहली मौलिक कहानी माना है तो कुछ आलोचकों ने माधवराव सप्रे की कहानी एक टोकरी भर मिट्टी को पहली कहानी माना है। आलोचक मधुरेश प्रारंभिक कहानियो के प्रकाशन वर्ष को इंगित करते हुए लिखते हैं, "माधवराव सप्रे की एक टोकरी भर मिट्टी (1901), भगवानदास की प्लेग की चुड़ैल (1902), पं0 गिरिजा दत्त वाजपेयी की पंडित और पंडितानी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल की ग्यारह वर्ष का समय (1903), लाला पार्वतीनंदन की बिजली (1904), मेरी चंपा (1905) और बंग महिला की दुलाई वाली (1907) आदि कहानियाँ इस काल की कहानी के प्रति कुछ सामान्य निष्कर्ष निकालने की सुविधा देती हैं।"4

हिन्दी कथा-साहित्य के प्रारंभ से ही महिला कथाकारों ने स्त्री की अनेक समस्याओं को प्रस्तुत किया है। आदिकाल में नारी सौन्दर्य का चित्रण, भक्तिकाल मे संतो द्वारा नारी को माया और मोहिनी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। भक्तिकाल के समय कवयित्री मीराबाई, जिन्होंने अपनी अभिव्यक्ति को साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। भक्तिकाल में कई कवयित्रियों का उल्लेख कहीं-कहीं देखने को मिलता है—जैसे गंगा, गौरी, सीता, सुमति, शोभा,

प्रभुता, उमा, कुँवरि, उबीठा, गोपाली, गणेश देवरानी, कला, लखा, कृतगढ़ी, मानुमती, सुचि, सतभामा, जमुना, कोली, रामा, मृगा, देवा, देभक्तन, विश्रामा, जुग जेवा कीकी, कमला, देवकी, हीरा, झाली, हरिचेरी पोषे भगत कलियुग युवती जन बक्त राज महिमा सब जाने जगत।"5

स्वतंत्रतापूर्व के प्रारंभिक कथा लेखिकाओं में बंग महिला (श्रीमती राजेंद्रबाला घोष) का नाम लिया जाता है। ये मिर्जापुर के प्रतिष्ठित बंगाली सज्जन राम प्रसन्न घोष की पुत्री और बाबू पूर्णचंद्र की धर्म पत्नी थीं। इनकी कहानियाँ हैं 'दुलाईवाली' तथा 'भाई बहन'। इनकी रचनाएँ 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित होती थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'कुसुम संग्रह' में संपादित किया है। इन्होंने कई कहानियों को हिंदी में भी अनूदित किया है। जैसे- दालिया (रवींद्रनाथ ठाकुर), मुरली (नारायण सेन), मातृहीन (देवेंद्र कुमार सेन), संसार सुख (हरिहर सेठ), कुंभ में छोटी बहू (मातृदेवी), तिल से ताड़ (दीनेंद्र कुमार राय), गृह (अविनाशचंद्र दास), पति-सेवा (लावण्य प्रभा सरकार) आदि में। बंग महिला की समाज सुधार भावना देखने को मिलती है। नारी जागरण तथा राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति इनकी कहानियों में चित्रित हुई है। इस समय में स्त्री स्वयं अपनी रचनाओं में अपना नाम तक नहीं देती थी। इनके नाम गुप्त से रखे जाते थे। इस संबंध में शंभुनाथ कहते हैं कि "... इसी क्षेत्र में कुछ पहले राजेंद्रबाला घोष को अपनी कहानी 'दुलाईवाली' बंग महिला नाम से छपानी पड़ी थी। वे अपना नाम तक देने का साहस नहीं कर पाई थी। एक पुरुष वर्चस्व वाले समाज में स्त्री क्या कल्पना कर सकती है, उसकी सृजनात्मक कल्पना स्वयं में ही कैसे पुरुष वर्चस्व से एक प्रतिरोध है..."6 स्त्री के अंदर की साहस विलुप्त थी। स्त्री चाह कर भी अपने अस्तित्व को प्रकट नहीं कर सकती थी।

बंग महिला के पश्चात् प्रियंवदा देवी का नाम महत्वपूर्ण है। इनके द्वारा रचित दो उपन्यास 'लक्ष्मी' और 'कलयुगी परिवार का एक दृश्य' है और कहानियाँ हैं। जैसे 'धर्मात्मा चाची और अभागा भतीजा', 'होली की रात', 'माता की आंतरिक इच्छा', 'इंट्रेस पास बहू', 'भारत कब सुखी हो सकता है', 'अशिक्षित और शिक्षित', 'पुरुष कौन है' आदि। ये कहानियाँ सन् 1915 ई. से सन् 1923 ई. की अवधि में 'नवजीवन', 'भास्कर', 'स्त्री धर्म शिक्षक', 'स्वदेश बांधव' तथा 'भ्रमर' पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। इनकी कहानियों में भी अपने युग की प्रचलित कुप्रवृत्तियों जैसे- अशिक्षा, बाल विवाह, बहु-विवाह आदि विषय ही रही हैं। अतः विषय की दृष्टि से इनका कथा-साहित्य समकालीन न होने पर भी, नारी विषय की दृष्टि से आज भी महत्वपूर्ण लगती हैं। महिला लेखन की सबसे बड़ी सीमा यह भी है कि वे आज भी पुरुष सत्तात्मक समाज में अपनी बेबाक अभिव्यक्ति का साहस नहीं कर पायी है। आजादी की लड़ाई के समय में जो साहित्य उभरा उसमें देशकालीन परिस्थितियाँ और देश प्रेम की अभिव्यक्ति लक्षित होती है। महादेवी वर्मा, सरोजिनी नायडू, सुभद्रा कुमारी चौहान, उषा देवी मिश्रा आदि कई लेखिकाओं ने अपने समय को अभिव्यक्ति दी है।

महिला कथा लेखन विकास के क्रम में सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम महत्वपूर्ण है। अपनी देश भक्तिपूर्ण कविताओं के कारण सुभद्रा कुमारी चौहान जी काफी प्रसिद्ध रही है। इसके साथ-साथ कहानीकार के रूप में भी इनका योगदान रहा है। इनके लेखन में भारतीय नारी जीवन की विवशता का चित्रण मिलता है। शंभुनाथ अपने संपादकीय 'स्त्री के शब्द' में कहते हैं कि "राष्ट्रवादी दौर में स्त्री अपने को स्त्री से अधिक मनुष्य के रूप में देखे जाने और मनुष्य की हैसियत से देखने की स्वतंत्रता माँग रही थी। एक ही स्वतंत्रता संग्राम के भीतर दूसरी अनगिनत स्वतंत्रताओं के लिए लड़ाइयाँ छिड़ चुकी थीं।"7 कहने का तात्पर्य यह है कि स्वतंत्रता या आज़ादी की माँग केवल भारत का नहीं था। भारत के अंदर स्त्री, पुरुष के अधीन हो चुकी थी, जो देश सहित अपनी स्वतंत्रता की भी माँग कर रही थी। इनके कहानी संग्रह हैं 'बिखरे मोती' (1932), 'उन्मादिनी' (1934) और 'सीधे सादे चित्र' (1947) आदि। 'बिखरे मोती' पर इन्हें हिंदी

साहित्य सम्मेलन की ओर से 'सेकसरिया पुरस्कार' भी प्राप्त हुआ है। इनकी आधी से ज्यादा कहानियों में नारी जीवन की विविध समस्याओं का चित्रण हुआ है।

इनकी अधिकांश कहानियों में नारी की समस्याओं का चित्रण ही अधिक मिलता है। वे 'बिखरे मोती' संग्रह में 'भग्नाविशेष', 'होली', 'मंझली रानी', 'परिवर्तन', 'दृष्टिकोण', 'कदम्ब के फूल', 'किस्मत', 'एकादशी', 'आहुति', 'थाली', 'अनुरोध' तथा 'ग्रामीण'। 'उन्मादिनी' संग्रह में 'उन्मादिनी', 'असमंजस', 'अभियुक्त', 'सोने की कण्ठी', 'नारी हृदय', 'पवित्र', 'ईर्ष्या', 'अँगूठी की खोज' तथा 'वेश्या की लड़की'। 'सीधे सादे चित्र' संग्रह से 'गौरी', 'रूपा', 'कल्याणी', 'कैलाशी नानी', 'दो साथी', 'बिआह' तथा 'मंगला' आदि।

राष्ट्रीय भावनाओं को व्यक्त करने वाली कहानियाँ जैसे 'बिखरे मोती' संग्रह में 'पापी पेट तथा अमराई', 'सीधे सादे चित्र से', 'तांगे वाला', 'हींगवाला', 'सुभागी', 'राही एवं गुलाब सिंह'। मानव प्रकृति की जटिलताओं को व्यक्त करने वाली व्यंग्यमूलक कहानियाँ 'उन्मादिनी' से 'चढ़ा दिमाग', 'सीधे-सादे चित्र' से 'दुराचारी', 'प्रो. मित्रा'। अतः सुभद्रा कुमारी जी की कहानियों का नारी जीवन की समस्याएँ तथा पारिवारिक सामाजिक परिस्थितियों को चित्रण करती हैं। उनकी कहानियों में पारिवारिक स्त्री के कष्टों का कारण पारिवारिक संबंधों में झगड़ा या पति-पत्नी में कटुता है। इसके अतिरिक्त स्त्रियों के दुःख के लिए पुरुष को ही जिम्मेदार ठहराया गया है। डॉ. उर्मिला गुप्ता कहती हैं कि "यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सुभद्रा जी ने नारी जीवन की समस्याओं के लिए पुरुषों को दोषी ठहराया है। उनकी नारी पात्राएँ एकदम दूध की धोयी हैं जो केवल सहन करना जानती हैं. उनके कारण किसी पुरुष का जीवन विषय नहीं बनता। इसे जीवन का एकांगी चित्रण ही माना जाएगा, क्योंकि लेखिका ने पुरुष वर्ग की सहानुभूति, सद्भावना आदि विशेषताओं को उभारने की ओर बहुत कम ध्यान दिया है।"8 इसके अलावा इनकी कहानियों में भारतीय समाज की धार्मिक रूढ़ियाँ देखने को मिलती हैं। इनकी कहानियों की नायिकाएँ अनेक समस्याओं का सामना करती हैं, परंतु मुँह तक नहीं खोलती है। इसको भारतीय संस्कृति की मर्यादा पालन नाम देकर स्त्री को इसकी रक्षा का दायित्व दिया गया है। सुमन राजे कहती हैं कि "सुभद्रा कुमारी चौहान (बिखरे मोती और उन्मादिनी) की अधिकांश कहानियाँ शिक्षित बहुओं की समस्याओं को आधार बनाकर लिखी गई हैं। वे प्रामाणिक भी हैं और यथार्थ भी, परंतु उनके चरित्र में ऐसी भीतरी शक्ति या विद्रोह भावना नहीं पायी जाती, जो समाज की इस निर्दयतापूर्ण व्यवस्था को अस्वीकार कर सके।"9 इस तरह सुभद्रा जी ने नारी कथाकार के रूप में कथा लेखन के विकास में अपना योगदान दिया है।

इसके बाद सुमित्रा कुमारी सिन्हा का नाम लिया जाता है। इनका जन्म सन् 1913 ई. में उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जिले में हुआ था। इनके द्वारा लिखित साहित्य इस प्रकार है 'अचल सुहाग', 'वर्षा गांठ', 'कथा कुंज (बाल साहित्य), 'दादी का मटका' (लघु नाटक) है। इनकी कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंध, परिवार एवं समाज में स्त्री स्थिति का चित्रण मिलता है। सुमित्रा कुमारी सिन्हा के साहित्य में स्त्री अस्मिता की तलाश के विषय में अर्चना वर्मा लिखती हैं कि "सन् 1930 के आस-पास सक्रिय लेखिकाओं और कवयित्रियों की संख्या बहुल पूर्वोक्ति जमात में सुमित्रा कुमारी सिन्हा की कहानियों में अस्मिता की तलाश का प्रथम सचेत उच्चारण सुनायी दिया था। दांपत्य और प्रेम की टकराहट के तब तक के वर्जित प्रदेश को उन्होंने खास विस्तार से टटोलने का दुस्साहस किया था।"46 अर्थात् जिस स्त्री पर समाज, अपने इच्छानुसार अत्याचार किये जा रहा था, वह स्त्री, सदियों की चुप्पी को तोड़ कर अपनी अस्मिता को कायम रखने के लिए आवाज़ उठाने लगी।

इसके बाद चंद्रकिरण सोनरेक्सा का नाम हिंदी साहित्य में लिया जाता है। इनका जन्म सन् 1920 में पेशावर में हुआ था। इनकी पहली कहानी 'घीसू चमार' 11 वर्ष की आयु में कलकत्ता से 'भारत-मित्र' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी।

इनकी कहानियों में निम्न-मध्य वर्ग की महिलाओं की दुर्दशाओं का चित्रण हुआ है। इनके कहानी संग्रहों के नाम है कि 'चंदन चाँदनी', 'वंचिता', 'कहीं से कहीं नहीं', 'और दिया जलता रहा, 'आदमखोर' इत्यादि । इनके अतिरिक्त अन्य लेखिकाओं जैसे शिवरानी देवी, उषा देवी मित्रा, लीला अवस्थी आदि ने भी स्त्री जीवन को केंद्रित कर, समाज में जागृति लाने की कोशिश की है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिला कथा-लेखन में अधिक तत्परता एवं जागरूकता देखने को मिलती है। इसके बाद के कथा-साहित्य में स्त्री की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्षों का चित्रण हुआ है। इसके अलावा समाज के अन्य विषय जैसे- नौकरी की समस्या, भ्रष्टाचार, जाति एवं धर्मगत समस्या, प्रकृति विषयक, यौन समस्यागत विषयों को भी लेखिकाओं ने अपने लेखन के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इस संबंध में मृदुला गर्ग कहती हैं कि "मौजूदा सामाजिक व्यवस्था में अपने और दूसरों के प्रति हुए, अन्याय के लिए जो कभी न समाप्त होने वाला शेष है, जीवन में जो मुझे गहरे छूता है, स्थापित करता है, नाकाबिले बरदाश्त होता है, उसने जो जीवन दृष्टि मुझे दी है, वही मेरी मानवीय अंतरात्मा की पूँजी है और वह सारी पूँजी मेरी कृतियों को समर्पित हैं।"11

इनके अतिरिक्त कई ऐसे रचनाकार हुए हैं, जो इस परंपरा को आगे बढ़ाने में सहायक हुए हैं। सभी स्त्री होने के कारण स्त्री के हर संवेदना एवं समस्याओं को सजीव रूप से अभिव्यक्ति देने की सफल कोशिश की है। इसी क्रम में एक नाम है उषाकिरण खान का। उषाकिरण खान हिन्दी की ऐसी रचनाकार हैं जिन्होंने हिन्दी साहित्य में आँचलिकता को पुनर्प्रतिष्ठित किया है। उषाकिरण खान की संवेदना का केन्द्र गाँव है, जहाँ से उनकी चेतना रचना की क्रियाविधि से जुड़ती है। वे लोक का छौंक रचना में डालकर उसकी प्रभावशीलता को अतिमहत्त्वपूर्ण बना देती हैं। उकी रचना में मनुष्यता को बचाने की ललक और समकालीन आचार-विचार को बूझने की उत्कंठा समान भाव से संचित है। उनका रचनाएँ बहुआयामी जीवन को निष्कवच और मुक्त भाव से व्यक्त करते हुए आकार ग्रहण करती हैं। उषा जी के सम्पूर्ण रचना संसार में लौकिक भाव अपने मौलिक रूप में उपस्थित रहता है जिससे यह जाहिर होता है कि लेखिका के यहाँ परम्परा का तत्व गौण नहीं है। डॉ. कुमार वरुण लिखते हैं, "कथा साहित्य की अध्येता उषाकिरण खान की पूरी साहित्यिक यात्रा लोक से लोक तक की है। वह कबीर, नागार्जुन और विद्यानिवास मिश्र की परम्परा से जुड़कर लोक-संस्कृति का आख्यान गढ़ती है। उषा जी की लोक-दृष्टि के सहारे उनके रचना संसार को अनेक कोणों से देखने की दृष्टि मिलती है।"12

सन् 2000 जनवरी-फरवरी में प्रकाशित हंस के विशेषांक 'अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य' जिसका विशेष सम्पादन अर्चना जी ने किया था, उनके संपादकीय में वे कहती हैं कि "व्यवस्था के देने से जितना दिया जा सकता था इस औरत ने ले-लेने की अपनी हिम्मत के चलते उससे कहीं ज्यादा लिया। दिया जा सकता था, दिया गया- शिक्षा का अधिकार, व्यवसाय के अवसर, आर्थिक आत्मनिर्भरता, संपत्ति में साझेदारी और सत्ता की संभाव्य भागीदारी। उन्हें अपनी हिम्मत से लेना होता है। उसे लेकर यह स्त्री विशिष्ट हुई, पर किससे विद्रोह और किससे स्वाधीनता? सबसे पहले अपने ही अंदर बैठी, पितृसत्तात्मक समाज के निर्णयों, मूल्यों-मर्यादाओं में ढली और आस्थाओं में पगी उस औरत से जो अपनी निर्भयता को अंकुशित, निर्णय को संचालित और अभिव्यक्ति को ग्रस्त करती है। खतरे का निशान दिखाकर सावधान करती है।"13 स्त्री अपने अंदर की पुरुषसत्ता युक्त सोच से स्वयं लड़ती हुई, अपने अस्तित्व के विकास के बारे में सोचती है।

स्त्री कथाकारों की ताज़ा पीढ़ी भागीदारी और दावेदारी की उस यात्रा को लगातार आगे बढ़ा रही है। हिन्दी साहित्य, खासकर कथा साहित्य में स्त्रियों की इस रचनात्मक भागीदारी को समझने के लिए इसी पीढ़ी की कुछ चर्चित

कहानियों को देखना होगा। आज का स्त्री लेखन स्त्री विमर्श के नाम पर बहुप्रचारित कई तरह के मिथकों का खंडन ही नहीं करता, बल्कि अतीत के कई धुँधलकों को भी साफ करता है। आज स्त्री लेखन का मतलब पुरुष विरोध नहीं है। बल्कि स्त्री विमर्श बहुत हद तक मित्र-पुरुषों की एक ऐसी खोज यात्रा है, जिसके तहत अर्द्धनारीश्वर पुरुषों की शिनाख्त कर, समाज और सभ्यता की विकास यात्रा को एक संतुलित विस्तार दिया जाये। जयश्री राय कहती हैं कि - "हमारे समय की स्त्री-कथाकारों की कहानियों में स्त्री-मन की अनकही संवेदनाओं की उपस्थिति के समानान्तर वैसे पुरुषों को पहचानने की कोशिश भी स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है। स्वयं के अस्तित्व को आवश्यक प्रतिष्ठा प्रदान करते हुए सकारात्मक बदलावों के वाहक पुरुषों के पहचानने के इस जतन को सृष्टि में निहित स्त्री तत्वों को सहेजने-सँभालने की प्रक्रिया के रूप में भी देखा जाना चाहिए।"14

**निष्कर्ष**

आज लेखिकाएँ अपनी कहानियाँ एवं कथा-चरित्रों के माध्यम से अपनी परंपरा को नकार कर अपने मानवोचित अधिकारों की आचार संहिताएँ खुद लिख रही हैं। महिला लेखन केवल मनोरंजन का लेखन नहीं है। इक्कीसवीं सदी की लेखिका सुधा अरोड़ा एक साक्षात्कार में लिखती हैं कि "एक समय था, जब महिलाओं के लेखन को घर-परिवार की चहारदीवारी में कैद और समाज की प्रमुख समस्याओं से कटा हुआ फुरसती लेखन मानकर उसे एक विशिष्ट (या दोयम) दर्जा देकर उसके साथ रियायती बर्ताव किया जाता था। यह कुछ-कुछ वैसी ही स्थिति थी, जैसे तीन दशक पहले मराठी में दलित साहित्य को सवर्णों द्वारा हेय दृष्टि से देखा जाना। आज वही दलित साहित्य मराठी साहित्य के मेनस्ट्रीम में शामिल हो चुका है। यह सुखद है कि महिलाओं द्वारा रचे गये साहित्य का पिछले कुछ वर्षों से ऊर्ध्वमुखी विकास इस वक्तव्य को खारिज करता है कि पढ़ी-लिखी उच्च मध्यवगीय महिलाएँ दुपहर की फुरसत में कलम घसीटती हैं या चित्रकारी करती हैं।"15 आज स्त्री लेखन को एक ऊर्जा प्राप्त है। नारी साहित्य में अभी केवल उसका घर नहीं, बल्कि समाज, धर्म तथा राजनीतिगत समस्याएँ एवं उसका समाधान आदि का विस्तृत विवरण मिलता है। स्त्री लेखन के संबंध में डॉ. बच्चन सिंह ने भी विश्लेषण किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् लेखन में नारी लेखन ने अपनी अनुभूतियों से रचनाओं को इस तरह गढ़ा कि वह पाठकों को संवेदना के धरातल पर उतारता है। डॉ. बच्चन सिंह की पुस्तक 'हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास' में लेखिकाओं के लेखन को विश्लेषित करते हुए लिखते हैं कि स्त्री की दुनिया पुरुषों से भिन्न है। "आजकल आलोचना में स्त्रियोचित आलोचना (फेमिनिस्ट क्रिटिसिज्म) का चलन हो गया है। मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती छठें दशक से लिखती चली आ रही हैं मन्नू भंडारी की कहानियाँ अपनी सादगी में प्रामाणिक अनुभूति की कहानियाँ हैं। की जोड़ का दूसरा नाम है उषा प्रियंवदा। उषा में शिल्प की सजगता और विषय-वस्तु की व्यापकता है... कृष्णा सोबती सेक्स को बोल्डनेस के साथ उभारने में सिद्धहस्त हैं। इस अर्थ में मृदुला गर्ग कम नहीं हैं। पर सोबती की भाषा और शिल्प उनके पास कहाँ! अन्य महिलाओं में ममता कालिया, सूर्यबाला, मृणाल पाण्डे, राजी सेठ, नमिता सिंह आदि उल्लेखनीय हैं। सूर्यबाला गहरे यथार्थ और मानवीय रिश्ते की कहानीकार हैं।"16 सभी हिंदी महिला कहानीकारों में अपनी एक अलग शैली एवं विशिष्टता विद्यमान है, जिससे उन्हें साहित्य में एक अलग स्थान प्राप्त है।

संदर्भ


1. डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्लाय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2014, पृ. 291
2. डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल, हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास, पृ. 304
3. वही, पृ. 57

4. मधुरेश, हिन्दी कहानी का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2016, पृ. 12
5. डॉ. बनजा तालदी, हिन्दी महिला कहानी लेखन : स्त्री जीवन के विविध आयाम, विकास प्रकाशन, कानपुर, संस्करण 2021, पृ. 26
6. गवेषणा स्त्री की भाषा, महादेवी के संदर्भ में, प्रधान संपादक शंभुनाथ, अंक 87, अप्रैल-सितम्बर 2007, पृ 5
7. वही, पृ. 8
8. डॉ. उर्मिला गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1966, पृ. 146
9. सुमन राजे, हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण 2004, पृ. 285
10. अर्चना वर्मा का लेख नारी : एक सफर, हिन्दी साहित्य का स्त्री स्वर-दिनेश नन्दिनी डालमिया, संतोष गोयल (संपादक), ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008, पृ. 11
11. डॉ. मृत्युंजय उपाध्याय, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का स्वरूप, अमर प्रकाशन, मथुरा, संस्करण 2004, पृ. 105
12. डॉ.कुमार वरुण, उषा हिंडोला : उषाकिरण खान का रचना संसार, अमन प्रकाशन, कानपुर, संस्करण 2019, पृ. 7 संपादकीय
13. उद्धृत, डॉ. बनजा तालदी, हिन्दी महिला कहानी लेखन (स्त्री जीवन के विविध आयाम), विकास प्रकाशन, कानपुर, संस्करण 2021, पृ. 37
14. वही, पृ. 37
15. डॉ. राजेन्द्र खैरनार, इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी में स्त्री विमर्श और दलित विमर्श, पृ. 62
16. अरविन्द जैन, औरत अस्तित्व और अस्मिता महिला लेखन का समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृ. 16

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/1**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**प्रोफेसर अरुण कुमार सिंह**
इतिहास विभाग, डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, आजमगढ़
(सम्बद्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़), पिन कोड - 276001

*for the paper titled*

## सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क का शासन एवं प्रशासन : अवध राज्य के सुदृढ़ीकरण का अध्ययन

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 11-15**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/2**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ0 सतकुमार**

एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),

छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

*for the paper titled*

## सूरदास के काव्य में सामाजिक अभिव्यक्ति

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 16-19**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/3**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

सोनू शुक्ला

शोध छात्र, (शिक्षाशास्त्र)

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ.प्र.) 210204

*for the paper titled*

**श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति.2020**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 20-26**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/4**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सुमित उपाध्याय**
शोध छात्र, हिंदी
महाराजा सुहेल देव विश्वविद्यालय, आज़मगढ़

*for the paper titled*

**श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों की शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 2020**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 27-32**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/5**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr. Rashmi,**

Assistant Professor,
History Department, Hindu Kanya Mahavidyalaya Jind,

*for the paper titled*

**"सावित्रीबाई फुले और महिला शिक्षा का संघर्ष: सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध ऐतिहासिक प्रतिरोध"**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 33-37**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/6**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सुनील कुमार पाठक**

शोधार्थी,

संस्कृत विभाग, यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर

**प्रो. प्रह्लाद पांडे.,**

शोध निर्देशक

*for the paper titled*

## कम्बोडिया के दो दुर्लभ संस्कृत शिलालेख

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 38-40**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/7**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ0 सतकुमार**

एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),

छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

*for the paper titled*

**प्रेमचन्द के साहित्य में नारी का स्थान**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 41-43**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/8**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

प्रो. श्रीकान्त भारतीय

शोध पर्यवेक्षक

निधि शर्मा

शोधार्थी

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

*for the paper titled*

**माध्यमिक स्तर एवं उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 44-48**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. NoOctober 2026/9**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. रेनू जोशी**
हिंदी विभाग
एम०बी०राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हल्द्वानी,कुमाऊँ विश्वविद्यालय

**सरिता रावत**
शोधार्थी (हिंदी)
राजकीय महाविद्यालय लमगड़ा
एस.एस. जे. अल्मोड़ा विश्वविद्यालय

*for the paper titled*

**"ममता कालिया की कहानियों में मनोवैज्ञानिक द्वंद्व : एक मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन"**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 49-53**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. NoOctober 2026/10**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ਡਾ. ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ**

ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,

ਮਾਤਾ ਸੁੰਦਰੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਗਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ ਮਾਨਸਾ

*for the paper titled*

**ਚੜ੍ਹਦੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਖ਼ਾਲਸਾ ਰਾਜ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਯਾਦਗਾਰਾਂ ਤੇ ਮੌਜੂਦਾ ਸਿਥਤੀ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 54-58**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/11**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**Abhishek Rollan**

Scholar, Department of zoology, S.P.C. Govt. College, Ajmer (Rajasthan)

**Dr. A. K.Siroya**

Professor, Department of zoology, S.P.C. Govt. College, Ajmer (Rajasthan)

Affiliated to Maharshi Dayanand Saraswati University Ajmer (Rajasthan)

*for the paper titled*

## ANTHROPOGENIC FOOD AND FEEDING RESPONSES OF BIRDS IN THE HARSH HILL LANDSCAPE, SIKAR, RAJASTHAN: A FIEL BASED OBSERVATIONAL STUDY

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 59-69**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/12**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. श्याम मनोहर गौतम**

शोध पर्यवेक्षक (पीएच.डी.),

(कोटा विश्वविद्यालय,कोटा)

**अनिता सुमन**

शोधार्थी,

(कोटा विश्वविद्यालय,कोटा)

*for the paper titled*

**माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में पारिवारिक संबन्धों की भूमिका: एक अध्ययन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 70-75**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/13**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ**

ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,

ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਡੀਏਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

*for the paper titled*

**ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਾਮ, ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕੋ ਦਾ ਫਲਸਫਾ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 76-81**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/14**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. गायत्री के**

असिस्टेंट प्रोफेसर,

डिपार्टमेंट ऑफ अडीशनल लांगेजस निमित्त, पोंगम।

*for the paper titled*

**लोक परंपरा से राष्ट्रीय सम्मान तक: पारंपरिक भारतीय कलाओं के संरक्षण में कलाकारों और पद्म पुरस्कारों की भूमिका**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 82-90**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/15**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ० सरला जागिड़**

सह-प्राध्यापक

अन्य भाषा विभाग (हिन्दी),

हिंदुस्तान कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस कोयम्बत्तूर

*for the paper titled*

**क्षमा**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 91-96**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/16**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ਡਾ. ਰਾਗਿਨੀ ਸ਼ਰਮਾ,**
ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਭਾਗ,
ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਾਲਜ ਮੋਗਾ

*for the paper titled*

**ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ : ਸਮਾਜਿਕ ਸਮਾਨਤਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਮੂਲਭੂਤ ਬਦਲਾਅ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 97-101**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/17**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ.कमल महला**

सहायक आचार्य,समाजशास्त्र

राजकीय महाविधालय, लछमनगढ़

*for the paper titled*

**शेखावाटी की भौगोलिक-सामाजिक पृष्ठभूमि एवं लोक-धर्म का उद्भव: एक समाजशास्त्रीय अंतर्संबंध**

**Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 102-107**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/18**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ० नीरज सोंलकी**

सहायक प्रवक्ता,

रक्षा अध्ययन विभाग, राजकीय महाविद्यालय, बहादुरगढ़

*for the paper titled*

**भारत–पाकिस्तान संबंधों के संदर्भ में ऑपरेशन सिंदूर : सैन्य कार्रवाई, रणनीतिक स्थिरता और संकट–प्रबंधन का विश्लेषण**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 108-113**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/19**

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr. Johnny Techi**

Associate Professor

Govt. College, Doimukh

*for the paper titled*

**EDUCATION AND SOCIAL CHANGE IN SOCIETY**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 114-117**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/20**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**राजेन्द्र प्रसाद मिश्र,**

सहायक आचार्य,

के0 बी0 पी0 जी0 कॉलेज मीरजापुर

*for the paper titled*

**21वीं सदी में भारत–अमेरिका रणनीतिक संबंधों का हिंद महासागर क्षेत्र में क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन पर प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 118-122**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/21**

## Certificate of Publication

***is awarded to***

**डॉ0 पूनम भूषण**

असिस्टेन्ट प्रोफेसर,

समाजशास्त्र शहीद दुर्गा मल्ल राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय
डोईवाला,देहरादून

*for the paper titled*

**पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास में महिलाओं की भूमिका**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 123-126**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/22**

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**DR MICHAEL KHINDO**

ASSISTANT PROFESSOR,

PUNJABI UNIVERSIRTY CAMPUS, MAUR (BATHINDA)

*for the paper titled*

**Developed India and Women Empowerment**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 127-129**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/23**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ममता कुमारी**

शोधार्थी, हिंदी विभाग

भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय

*for the paper titled*

**समकालीन प्रवासी स्त्री कथाकारों का यथार्थ-बोध**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 130-134**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/24**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**दीपशिखा आनंद**

शोधार्थी, हिन्दी विभाग

भूपेन्द्र ना. मंडल विश्वविद्यालय लालूनगर, मधेपुरा - 852113 (बिहार)

*for the paper titled*

**21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में अभिव्यक्त किसान जीवन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 135-139**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/25**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सृष्टि**

शोधार्थी ,

हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

शोध निर्देशक - **प्रो. संतोष कुमार भदौरिया**

*for the paper titled*

**'मल्लिका : आत्मनिर्वासित स्त्री का आख्यान'**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 140-142**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/23**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**श्री सायसिंग अवास्या**

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान

वीर बलिदानी खाज़्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला-बड़वानी (म. प्र.)

*for the paper titled*

**भारतीय संदर्भ में सामाजिक न्याय: संवैधानिक आधार, चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 130-134**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/27**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**नितिश**

हिंदी शोधार्थी,

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

*for the paper titled*

**अशोक चक्रधर के काव्य संसार में स्त्री विमर्श के विविध आयाम**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 148-153**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/28**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**अंजली पटेल**

(शोधार्थी),

तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, थिरुवारुर

**प्रो.एस.वी.एस.एस.नारायणराजू**

शोध निर्देशक

*for the paper titled*

**हिन्दी साहित्य का डिजिटलीकरण : परंपरा से आधुनिकता की ओर**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 154-158**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/29**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**नितीश कुमार**
शोधार्थी
हिन्दी विभाग ,
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार।

*for the paper titled*

**चंद्रकिशोर जायसवाल के कथा-साहित्य में बाल-मन की मनोवैज्ञानिक परिवेश**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 159-163**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/30**

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Shraboni Bhattacharya**

(Research scholar) Reg. No. 12420606.

Under the Supervision of,

**Dr. Ravjot Kaur Malhi**

(Associate Professor)

Lovely Professional University Jalandhar, Punjab

*for the paper titled*

## पंकज मल्लिक का हिंदी एवं बंगाली चित्रपट संगीत में योगदान: रवींद्र संगीत के प्रसार एवं संगीतात्मक प्रयोगों का अध्ययन

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 164-167**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/31**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सुमन ठाकुर**
शोधार्थी
हिन्दी विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा बिहार

**डॉ. पूजा गुप्ता**
शोध निर्देशक,
सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

*for the paper titled*

**इक्कीसवीं सदी की स्त्री आत्मकथाएँ और भारतीय समाज**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 168-171**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/32**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**राजकुमार सिंगौर**

सहायक प्रध्यापक,

शासकीय महाविद्यालय, अंजनिया, जिला मंडला

*for the paper titled*

**हिन्दी भक्ति काव्य में लोक चेतना**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 172-174**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. NoOctober 2026/33**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**प्यारे लाल कुमार**

(पी.एचडी., एम. फिल, स्नातकोत्तर,बी.एड.)

ग्राम+पोस्ट- रोह, जिला- नवादा (बिहार),805141

*for the paper titled*

**"जमुई जिले के संथालों में सामाजिक संगठन और न्याय व्यवस्था"**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 175-178**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/34**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ਡਾ. ਪਾਲਜੀਤ ਕੌਰ**

ਤਹਿਸੀਲ-ਰਤੀਆ, ਜ਼ਿਲਾ.-ਫਤਿਹਾਬਾਦ, ਹਰਿਆਣਾ

ਪਿਨ ਕੋਡ: 125051

*for the paper titled*

**ਸਾਕਾ ਚਮਕੌਰ ਸਾਹਿਬ: ਵੱਡੇ ਸਾਹਿਬਜ਼ਾਦਿਆਂ ਦੀ ਸ਼ਹਾਦਤ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 179-184**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/35**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सनत कुमार**

राजनीति विज्ञान सहायक प्राध्यापक,

शासकीय नवीन महाविद्यालय सोनाखान

शोध केंद्र,

शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासित महाविद्यालय दुर्ग

*for the paper titled*

**बलौदाबाजार-भाटापारा जिले का महिला नेतृत्व: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 185-190**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/36**

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Dr Raj Verma Sinha**

Associate Professor

Department of Philosophy, Miranda House

*for the paper titled*

**Svabhāva and Prōtē Ousia: Taking a Logical Route to the Real**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 191-195**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/37**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ. सुषमा भट्ट थलेडी**
सहायक प्राध्यापिका,
बी.एड. विभाग ,
डॉ.पी.डी.बी.एच.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार, गढ़वाल

*for the paper titled*

## महिला शिक्षा और कौशल विकास के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 196-207**

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/38**

# Certificate of Publication

*is awarded to*

**Mrs. Parul Singh**

Assistant Professor Department in Chemistry

Dr. A.P.J. Abdul Kalam University, Indore (M.P.)

*for the paper titled*

**"Development and Experimental Testing of Eco-Friendly Chemicals through Green Chemistry"**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 208-212**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/39**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ.रीजा.आर.एस**

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
क्रिस्त्यन कॉलेज काट्टाकडा तिरुवनन्तपुरम, केरल, केरल विश्वविद्यालय

*for the paper titled*

**नारी चिन्तन का नया रूप - कोहली के उपन्यासों में**

**PuPublished in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 213-216**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/40**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**रत्ना श्रीवास्तव**

शोधार्थी (विधि विभाग)ए कलिंगा युनिवर्सिटी रायपुर (छ.ग.)

**डॉ. अजीम खान**

डीन,प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ लॉए कलिंगा युनिवर्सिटी रायपुर (छ.ग.)

**डॉ भूपेंद्र करवंदे**

असिस्टेंट प्रोफेसर(लॉ)ए शा.जे.योगानन्दम छत्तिसगढ़ कालेज

*for the paper titled*

**भारतीय संविधान के अंतर्गत धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांतः मूल संरचना, राज्य की धार्मिक निष्पक्षता एवं संवैधानिक चुनौतियाँ**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 217-219**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/41**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**डॉ.विनय कुमार श्रीवास्तव**

सेवानिवृत्त वरिष्ठ प्रवक्ता (शिक्षक कवि लेखक साहित्यकार समीक्षक एवं वरिष्ठ समाजसेवी)

पी.बी. कालेज प्रतापगढ़ (प्रयागराज मंडल,प्रयागराज) उ.प्र.-भारत

*for the paper titled*

**पावन माँ गंगा का मानव जीवन के विभिन्न आयामों में महत्व**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 220-226**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/42**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**तेज प्रकाश जोशी**

शोध छात्र, हिंदी विभाग,

सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

*for the paper titled*

**"यशपाल के उपन्यासों में राजनीतिक चिंतन एवं विश्लेषण"**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 227-231**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/43**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**सरबजीत कौर**

(शोधार्थी)

हिन्दी विभाग,

पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

*for the paper titled*

**साहित्य और सोशल मीडियाः बदलते स्वरूप एवं नवीन आयाम**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 232-235**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/44**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**निर्मल कौर**

शोधार्थी,

हिंदी विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

*for the paper titled*

**संजीव जायसवाल के बाल साहित्य में नैतिक मूल्यों का अध्ययन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 236-238**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/45**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**अलिका कुमारी**

शोधार्थी,

राँची विश्वविद्यालय, राँची, हिन्दी विभाग,

सम्प्रति– सहायक शिक्षिका(हिन्दी)

राजकीय कन्या उत्क्रमित उच्च विद्यालय सरायकेला।

*for the paper titled*

**उदय प्रकाश की काव्य–संवेदना और वर्त्तमान स्थिति में सांस्कृतिक परिवेश**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**
**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 239-243**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

# बोहल शोध मञ्जूषा

# Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

**Ref. No. October 2026/46**

## Certificate of Publication

*is awarded to*

**ममता कुमारी**

शोधार्थी ,

हिन्दी विभाग, भू०ना०मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)

प्रो० (डॉ०) सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह

पर्यवेक्षक, हिन्दी प्राध्यापक,

पी०जी० सेंटर, सहरसा, भू०ना०मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)

*for the paper titled*

**हिन्दी कहानी का विकास तथा महिला लेखन**

**Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115**

**October 2026, Vol. 24, Issue-4(part-one), Page No. 244-250**

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152